ISSN : 2321-0443
UGC Care Listed Journal

सत्यमेव जयते

आज़ादी का अमृत महोत्सव

ज्ञान गरिमा सिंधु

(त्रैमासिक पत्रिका)

अंक – 68

(अक्तूबर - दिसंबर 2020)

भारतीय विदेश नीति विशेषांक

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
शिक्षा मंत्रालय
(उच्चतर शिक्षा विभाग)
भारत सरकार

COMMISSION FOR SCIENTIFIC AND TECHNICAL TERMINOLOGY
MINISTRY OF EDUCATION
(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)
GOVERNMENT OF INDIA

ज्ञान गरिमा सिंधु

(त्रैमासिक पत्रिका)

अंक- 68

अक्टूबर-दिसंबर 2020

(भारतीय विदेश नीति विशेषांक)

सत्यमेव जयते

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

शिक्षा मंत्रालय

(उच्चतर शिक्षा विभाग)

भारत सरकार

COMMISSION FOR SCIENTIFIC AND TECHNICAL TERMINOLOGY

MINISTRY OF EDUCATION

(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)

GOVERNMENT OF INDIA

ISSN: 2321-0443

ज्ञान गरिमा सिंधु "मानविकी और सामाजिक विज्ञान" की एक त्रैमासिक पत्रिका है। पत्रिका का उद्देश्य है- हिंदी माध्यम से विश्वविद्यालयी एवं अन्य छात्रों के लिए मानविकी और सामाजिक विज्ञान संबंधी उपयोगी एवं अद्यतन पाठ्य-पुस्तकीय तथा संपूरक साहित्य की प्रस्तुति। इसमें वैज्ञानिक लेख, शोधालेख, तकनीकी निबंध, शब्द संग्रह, शब्दावली-चर्चा, पुस्तक समीक्षा आदि का समावेश होता है।

लेखक के लिए निर्देश-

1. लेख की सामग्री मौलिक, अप्रकाशित तथा प्रमाणिक होनी चाहिए।
2. लेख का विषय मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान के विषयों से संबंधित होना चाहिए।
3. लेख सरल हो ताकि विद्यालय/ महाविद्यालय के छात्र आसानी से समझ सकें ।
4. लेख लगभग 2000 से 3000 शब्दों का हो। कृपया टाइप किया हुआ लेख भेजें जिसके दोनों तरफ हाशिया भी छोड़े।
5. प्रकाशन हेतु भेजे गए लेख के साथ उसका सार भी हिंदी में अवश्य भेजें। लेख में आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली का प्रयोग करें तथा प्रयुक्त तकनीकी/ वैज्ञानिक हिंदी शब्द का मूल अंग्रेजी पर्याय भी आवश्यकतानुसार कोष्ठक में दें।
6. श्वेत-श्याम या रंगीन फोटोग्राफ स्वीकार्य है।
7. लेख के प्रकाशन के संबंध में संपादक का निर्णय ही अंतिम होगा।
8. लेखों की स्वीकृति के संबंध में पत्र-व्यवहार का कोई प्रावधान नहीं है। अस्वीकृत लेख वापस नहीं भेजे जाएंगे। अतः लेखक कृपया टिकट लगा लिफाफा साथ न भेजें।
9. प्रकाशित लेखों के लिए प्रोत्साहन के तौर पर आयोग के नियमानुसार मानदेय दिया जाएगा। भुगतान लेख के प्रकाशन के बाद ही किया जाएगा।
10. कृपया लेख की दो प्रतियां निम्न पते पर भेजें:

संपादक, ज्ञान गरिमा सिंधु,
वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग
पश्चिमी खंड -7, रामकृष्ण पुरम, नई दिल्ली- 110066.

11. समीक्षा हेतु कृपया पुस्तक/ पत्रिका की दो प्रतियां भेजें।

पत्रिका का शुल्क	भारतीय मुद्रा	विदेशी मुद्रा
सामान्य ग्राहकों / संस्थाओ के लिए प्रति अंक	रु. 14.00	पौंड 1.64 डॉलर 4.84
वार्षिक चंदा	रु. 50.00	पौंड 5.83 डॉलर 18
विद्यार्थियों के लिए प्रति अंक	रु. 8.00	पौंड 0.93 डॉलर 10.80
वार्षिक चंदा	रु. 30	पौंड 3.50 डॉलर 2.88

वेबसाइट: http://www.cstt.education.gov.in कॉपीराइट: 2021 प्रकाशक: वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग, शिक्षा मंत्रालय,भारत सरकार, पश्चिमी खंड-7, रामकृष्णपुरम नई दिल्ली - 110066	बिक्री हेतु पत्र व्यवहार का पता: प्रभारी अधिकारी, बिक्री एकक वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग, पश्चिमी खंड 7, रामकृष्ण पुरम नई दिल्ली - 110066 टेलीफोन 011- 20867172	बिक्री स्थान: प्रकाशन नियंत्रक, प्रकाशन विभाग भारत सरकार, सिविल लाइंस, दिल्ली- 1100054 फेक्स : 011 - 26105211/246

पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। संपादक-मंडल की इनसे सहमति आवश्यक नहीं है।

अध्यक्ष की कलम से....

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग विभिन्न वैज्ञानिक, तकनीकी, उच्चतर शिक्षा एवं मानविकी आदि से संबद्ध क्षेत्रों में तैयार की गई शब्दावली का समुचित प्रयोग सुनिश्चित करने के उद्देश्य से तथा वैज्ञानिक एवं तकनीकी लेखन को प्रोत्साहित करने हेतु `ज्ञान गरिमा सिंधु' पत्रिका का प्रकाशन करता आया है । आयोग द्वारा समय-समय पर इस पत्रिका के कुछ विषय-केंद्रित विशेषांकों का प्रकाशन किया जाता रहा है । इसी श्रृंखला में अंक-68 अक्टूबर-दिसंबर 2020 का 'भारतीय विदेश नीति' विशेषांक सुधी पाठकों एवं लेखकों को उपलब्ध कराते हुए मुझे अपार हर्ष की अनुभूति हो रही है । यह अंक भारत की विदेश नीति के विभिन्न आयामों का विश्लेषण करते हुए देश के नीतिगत चिंतन, दर्शन और समसामयिक विश्व-मानचित्र पर इसकी सशक्त उपस्थिति पर केंद्रित है ।

पत्र-पत्रिकाएँ न केवल संस्था-विशेष के ज्ञान एवं वैशिष्ट्य का परिचायक होती हैं बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर अलग-अलग क्षेत्रों में हो रहे महत्वपूर्ण नीति-निर्माण, अनुसंधानों तथा शोध-कार्यों का एक समेकित व जनोपयोगी सार्थक मंच भी प्रस्तुत करती हैं । अन्य वैज्ञानिक पत्रिकाओं के समानांतर ही `ज्ञान गरिमा सिंधु' का उद्देश्य भी मूलतः हिंदी में मानविकी विषयक लेखन को प्रचारित-प्रसारित करना है, जिसका कार्यान्वयन व अनुपालन पत्रिका अपने प्रत्येक अंक में करती रही है । ऐसे विशेषांकों के कारण एक ही विषय पर वैविध्यपूर्ण जानकारी प्रस्तुत कर पाठकों को संबधित क्षेत्रों में हो रहे नवीनतम नीति-नियमन, अनुसंधानों एवं शोध की अद्यतन जानकारी एक ही स्थल पर उनकी भाषा में उपलब्ध हो जाती है । पत्रिका का यह अंक कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण व संग्रहणीय है । देश भर से भारतीय विदेश नीति पर चिंतन-मनन करने वाले विभिन्न मनीषियों के विविध-विषयक सारगर्भित आलेख प्रस्तुत अंक में संकलित हैं।

यह महत्वपूर्ण अंक आपको समर्पित करते हुए मैं देश के प्रतिनिधि विश्वविद्यालयों, तकनीकी, वैज्ञानिक एवं अन्य संस्थानों के अध्यापकों, वैज्ञानिकों एवं अधिकारियों से अपेक्षा करता हूँ कि वे आयोग के विशेषज्ञ विद्वानों के सहयोग से तैयार की गई प्रामाणिक व मानक शब्दावली के अधिकाधिक प्रयोग के माध्यम से इसे सर्वजन-सुलभ बनाने में अपना सार्थक योगदान देंगे ।

प्राप्त आलेखों को संपादित कर प्रकाशन योग्य बनाने का उत्तरदायित्व डॉ.शाहजाद अहमद अंसारी ने बड़े सौजन्य और मनोयोग से निभाया है । मैं इस पत्रिका के परामर्श एवं संपादन-समिति के प्रत्येक विशेषज्ञ तथा संपादक डॉ. शाहजाद अहमद अंसारी के प्रति धन्यवाद व्यक्त करते हुए इस विशेषांक के लेखकों को भी साधुवाद देता हूँ । सुधी पाठकों के अमूल्य सुझावों एवं सहयोग की प्रतीक्षा रहेगी ।

प्रो. गिरीशनाथ झा

अध्यक्ष एवं प्रधान संपादक

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

संपादकीय

`ज्ञान गरिमा सिंधु' का 68 वां अंक आप सबके समक्ष प्रस्तुत है । यह अंक भारतीय विदेश नीति पर आधारित है । भारतभूमि के सुदीर्घ एवं गौरवशाली इतिहास का अवलोकन करते हुए हम विश्व के अन्य राष्ट्र-राज्यों से इसके सघन संबंधों का परिचय पाते हैं । 'वसुधैव कुटुम्बकम' की संकल्पना में विश्वास रखने वाला हमारा देश चिरकाल से ही राजनीतिक, सामरिक, कूटनीतिक एवं आर्थिक मंचों पर अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराता आया है । प्रस्तुत अंक 'भारतीय विदेश नीति' पर आधारित विशेषांक है, जिसमें भारत की विदेश नीति पर सम्यक प्रकाश डालने के उद्देश्य से बहुविषयक आलेखों को समाहित किया गया है ।

विशेषांक हेतु चयनित आलेखों को विषयानुसार पांच खंडों में विभाजित किया गया है । प्रथम खंड में भारतीय विदेश नीति के बदलते आयामों से संबंधित आलेख रखे गए हैं । द्वितीय खंड के आलेखों में भारत के पड़ोसी देशों से संबंधों की चर्चा है । तृतीय खंड में संकलित आलेखों में भारत के ईरान, वियतनाम, अफ्रीका, मंगोलिया आदि देशों के साथ विदेश नीति विषयक विश्लेषण किया गया है । चतुर्थ खंड में भारत और विविध अंतर्राष्ट्रीय संगठनों से संबंधित आलेख हैं तथा पंचम खंड में भारत की विदेश नीति के विभिन्न आयामों की पड़ताल की गई है । विद्वानों द्वारा प्राप्त भारतीय विदेश नीति के अनेकानेक पहलुओं को उजागर करने वाले सारगर्भित शोधालेख इस अंक हेतु चुने गए हैं ।

अध्यक्ष महोदय के निर्देशानुसार 'ज्ञान गरिमा सिन्धु के 'भारतीय विदेश नीति' अंक हेतु प्राप्त आलेखों के मूल्यांकन-कार्य का संयोजन किया गया एवं इसके सम्पादन का अवसर मिला । यद्यपि बहुत कम समय में इसका मूल्यांकन तथा सम्पादन वास्तव में कठिन कार्य था, तथापि नित्यप्रति के प्रयासों और विशेषज्ञ-समिति के सहयोग से आलेखों का मूल्यांकन, सम्पादन एवं प्रूफ-शोधन प्रारंभ हुआ । इस अंक हेतु हमें इक्यावन आलेख प्राप्त हुए, जिनमें से संपादित एवं चयनित कर कुल पैंतीस आलेख विषयानुसार क्रमवार रखे गए हैं ताकि विषय की समेकित समझ बन सके ।

मैं सभी लेखकों एवं परामर्श-संपादन समिति के सदस्यों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

मैं माननीय अध्यक्ष महोदय के प्रति कृतज्ञ हूँ, जिनके मार्गदर्शन व प्रोत्साहन से यह कार्य नियत समय पर निष्पादित हो सका । मुझे पूर्ण विश्वास है कि `भारतीय विदेश नीति' पर आधारित 'ज्ञान गरिमा सिन्धु' का प्रस्तुत अंक पाठकों के लिए लाभदायक एवं उपयोगी साबित होगा । विद्वत समाज और सुधी पाठकों के सुझाव की प्रतीक्षा रहेगी।

डॉ. शाहजाद अहमद अंसारी
सहायक निदेशक (विषय)
वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग

परामर्श एवं संपादन मंडल

प्रधान संपादक

प्रो. गिरीशनाथ झा

अध्यक्ष

संपादक

डॉ. शाहजाद अहमद अंसारी

सहायक निदेशक (विषय)

संपादन समिति

प्रो. कुमुद शर्मा, विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. पवन कुमार शर्मा, राजनीति विज्ञान विभाग, चौ. चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

प्रो. नावेद जमाल, राजनीति विज्ञान विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

प्रो. राजेन्द्र कुमार पाण्डेय, राजनीति विज्ञान विभाग, चौ.चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उ.प्र.)

प्रो. शांतेश कुमार सिंह, राजनीति विज्ञान विभाग, हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, महेंद्रगढ़

डॉ. शिवानी जॉर्ज, एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला महाविद्यालय

डॉ. अमित कुमार सिंह, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, सिक्किम विश्वविद्यालय

प्रूफ़ शोधन

नीतीश कुमार, शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

देवेन्द्र कुमार, शोध छात्र, संस्कृत एवं प्राच्यविद्या अध्ययन संस्थान, जे.एन.यू., नई दिल्ली

शाईस्ता, शोध छात्रा, राजनीति विज्ञान विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	आलेख शीर्षक	लेखक	पृ.सं.
	खण्ड : एक **भारतीय विदेश नीति - बदलते आयाम**		
01.	कौटिल्यीय अर्थशास्त्र के आलोक में मोदी राजनय: एक विश्लेषण	प्रो पवन कुमार शर्मा	01
02.	भारतीय विदेश नीति संबंधी सामरिक चिंतन: एक विवेचन	डॉ. अमित कुमार गुप्ता डॉ. शिवानी जॉर्ज	11
03.	भारत की विदेश नीति: उभरते आयाम	डॉ. रमेश कुमार	18
04.	भारतीय विदेश नीति: उपलब्धियां एवं चुनौतियां	डॉ. प्रमोद कुमार	25
05.	भारत की विदेश नीति में सांस्कृतिक सम्बन्धों का महत्व	डॉ. उमेश कुमार	31
06	समकालीन विश्व में प्रयुक्त रक्षा एवं सामरिक शब्दावलियों का अध्ययनः प्राचीन प्राच्य साहित्य के विशेष संदर्भ में	स्वाति सुचरिता नंदा	39
	खण्ड : दो **भारत के पड़ोसी देशों से संबंध**		
07.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत नेपाल सम्बन्ध: चुनौतियां एवं विकल्प	डॉ. शांतेश कुमार सिंह डॉ. राकेश कुमार मीना	54
08.	भारत-भूटान संबंध	डॉ. नीलम शर्मा	60
09	म्यांमार के साथ भारत के उभरते संबंध: चुनौतियां और संभावनाएं	डॉ. आशुतोष पांडेय	70
10.	वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में भारत नेपाल सम्बन्ध	प्रो. रीना पाठक	78
11.	भारत-मालद्वीव संबंधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन	डॉ. एन के सोमानी	88
12.	भारत-बांग्लादेश संबंधों के बदलते आयाम	डॉ. एस. एस. नंदा विपिन कुमार गुप्ता	96

13.	भारत-चीन सीमा विवाद एवं वर्तमान संबंध	डॉ. राजेश कुमार शर्मा डॉ. संगीता शर्मा	110
14.	भारत-चीन संबंधों की चुनौतियाँ और संभावनाएं	डॉ. मीना रानी डॉ. विनय कौड़ा	118
	खण्ड: तीन **भारत और अन्य देश**		
15.	भारत-ईरान संबंधों के कारक के रूप में अमेरिका: समकालीन परिदृश्य	डॉ. मृदुला शर्मा	126
16.	भारत-वियतनाम संबंध: एक विवेचन	गरिमा कुमावत प्रकाश जांगिड़	135
17.	बदलते दौर में भारत-अफ्रीका संबंध	प्रवीण कुमार झा	143
18.	भारत-अफ्रीका संबंध: अतीत और वर्तमान	प्रतीक कुमार सिंह डॉ. राघवेन्द्र प्रताप सिंह	151
19.	तालिबान 2.0 शासन में भारत-अफ़ग़ान संबंधों का भविष्य	डॉ. मोहन लाल जाखड़	159
20.	भारत-मंगोलियाँ संबंध: सहयोग के प्रमुख द्विपक्षीय मुद्दे	बृजेश चंद्र श्रीवास्तव	169
21.	भारत-अमेरिका संबंध: उत्पत्ति और विकास	भानु प्रताप सिंह	178
22.	भारत-इजरायल संबंधों के नवीनतम आयाम	डॉ. भरत प्रताप सिंह	189
	खण्ड : चार **भारत और अंतर्राष्ट्रीय संबंध**		
23.	भारत-यूरोपीय संघ संबंधः यूरोज़ोन संकट के संदर्भ में	सोहन लाल डॉ. राजीव कुमार सिंह	197
24.	संयुक्त राष्ट्र के शांति अभियानों में भारत का योगदान	डॉ. नियाज़ अहमद अन्सारी व अजय कुमार	208
	खण्ड : पाँच **भारतीय विदेश नीति के विविध आयाम**		
25.	भारतीय जलवायु परिवर्तन नीति पर संयुक्त राष्ट्र संघ की समझौता-वार्ताओं के संदर्भ में एक अवलोकन	डॉ. संजय शर्मा	216
26.	भारत की परमाणु नीति: निरंतरता और परिवर्तन	डॉ. सुमन मौर्य	229

27.	भारतीय परमाणु नीति के परिवर्तन में आंतरिक कारकों की भूमिका	डॉ. अभय कुमार डॉ. शालिनी प्रसाद	238
28.	भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा और मोदी सरकार की रणनीति	डॉ. अशोक कुमार	246
29.	भारत और यूरोपीय संघ के संबंध: बहुआयामी परिप्रेक्ष्य	शाईस्ता आबिदा बानो	254
30.	चीन की हिन्द महासागर रणनीति तथा भारतीय प्रतिक्रिया	क्षिप्रा शर्मा	266
31.	दक्षिण एशिया में भारतीय विदेश नीति के आधारभूत आयाम	प्रो. नावेद जमाल नीतीश कुमार	275
32.	भारतीय विदेश नीति के सामयिक आयाम	डॉ. अखलाख अहमद	288
33.	लुक ईस्ट से एक्ट ईस्ट पॉलिसी: वर्तमान सन्दर्भ में भारतीय विदेश नीति	डॉ. विजय प्रताप सिंह	293
34.	कोरोना काल में भारत की विदेश नीति	डॉ॰ सुरेन्द्र प्रसाद सिंह	301
35.	हरित शासन और भारत की विदेश नीति का विश्लेषण	प्रो. नावेद जमाल मो. मुकर्रम बदर खान	309

अध्याय 1

कौटिल्यीय अर्थशास्त्र के आलोक में मोदी राजनय : एक विश्लेषण

प्रो. पवन कुमार शर्मा
आचार्य एवं अध्यक्ष
राजनीति विज्ञान विभाग
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय

किसी भी राष्ट्र की संपन्नता और विपन्नता उसकी सक्रियता पर निर्भर करती है और सक्रियता संसाधनों पर। संसाधनों का निर्धारण दो प्रकार से किया जा सकता है; एकः- उनका राष्ट्रहित में उपयोग करने से, दूसरे उनके प्रति उदासीन भाव को प्राप्त करके। इसके अतरिक्त आन्तरिक नीति के बल पर भी राष्ट्र की संपन्नता का नियामक निर्धारित किया जा सकता है। यथा किसी वर्ग विशेष को अतिरिक्त लाभ देकर उसकी ओर से उदासीन होकर या फिर सर्व समावेशी भाव के बल पर सभी के साथ समान भावी व्यवहार करके। आन्तरिक नीति के बल पर ही राष्ट्र हित/अहित के दृष्टिकोण से विदेश नीति का निर्धारण होता है। जो राष्ट्र उपर्युक्त बातों को दृष्टिगत रखकर स्वयं की विदेश नीति का निर्धारण करते हैं वे समृद्धि के शिखर को प्राप्त करके विश्व गुरूत्व को प्राप्त करते हुए विश्व का नेतृत्व करते हैं, शेष इस प्रकार के राष्ट्रों का अनुसरण करते हैं। 18वीं सदी तक भारत आर्थिक दृष्टिकोण से और 8वीं सदी तक भारत सैन्य दृष्टिकोण से राष्ट्र हित को दृष्टिगत रखकर व्यवहार करता था। आज से 2600 वर्ष पूर्व तक भारत की विदेश नीति का निर्धारण राष्ट्रहित को केन्द्र में रखकर ही किया जाता था। परिणामतः भारत न केवल आर्थिक, सांस्कृतिक, सैन्य दृष्टिकोण से विश्व का प्रेरक था बल्कि वह शेष विश्व को नियन्त्रित भी करता था। किन्तु, बौद्ध काल के बाद भगवान बुद्ध के सप्तशील सिद्धान्त को त्यागने के कारण भारत विश्वगुरूत्व के स्थान से स्खलित हुआ और स्वयं की भूमिका को छोड़ने लगा। 2200 वर्ष पूर्व पुनः उसने यह स्थान प्राप्त किया जब संवाद शैली को अपनाया। इस प्रकार से भारत की विदेश नीति निर्धारण के दृष्टिकोण से काल विभाजन को पांच वर्गों में रखा जा सकता है। भगवान बुद्ध के पूर्व, उनके बाद से 8वीं सदी तक, 8वीं सदी से 18वीं सदी तक, 18वीं सदी से 2014 तक तथा 2014 के बाद से सतत। अतएव, भारतीय विदेश नीति को देश काल परिस्थितियों के अनुकूल स्वयं को बदलते रहना चाहिए। वी॰पी॰ दत्त स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि प्रत्येक देश की विदेश नीति का निर्धारण उस काल से होता है जिसमें इसे लागू किया जाता है। इस पर प्रकार इतिहास और इसकी भौगोलिक स्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। देश की अवचेतन स्थिति को इसके हाल का अतीत प्रभावित करता है। दुनिया के साथ संवाद में जिस प्रकार आप

 ISSN: 2321-0443

अपनी स्थिति को देखते हैं, उसी तरह इसका भारी अंतर पड़ता है कि आप मानचित्र में कहाँ हैं। या यूँ कहा जाए कि विदेश नीति के विकास में भू-राजनीति एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इसके अतिरिक्त समय विशेष पर किसी देश की अपनी विशेष आवश्यकताएं होती हैं जिनको अनदेखा नहीं किया जा सकता।[1] वी॰पी॰ दत्त ने विदेश नीति के निर्धारण तत्वों का उचित वर्णन किया है। देश-काल परिस्थितियाँ महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वहन करती हैं और ऐतिहासिक तथ्य भी। फलतः कोई भी विदेश नीति गतिशील होती है, जड़ नही। किन्तु भारतीय विदेश नीति के संचालन में 2014 से पूर्व के नीति नियन्ताओं ने भारत के ऐतिहासिक तथ्यों और देश-काल परिस्थितियों को दृष्टि ओझल किया और इतिहास को भी मात्र अंग्रेजी शासन तक सीमित करके ही आंकलन किया। परिणाम स्वरूप भारत की मौलिकता प्रभावित हुई और जो विदेशनीति निर्धारित हुई उसमें 'स्व' का अभाव रहा। फलतः भारत की विदेश नीति गतिशील न बन पाई। 2014 के बाद इस ओर दृष्टिपात हुआ और तदनुरूप् काम भी प्रारंभ हुआ ।

संस्कृत वांगमय में भारत की विदेश नीति के निर्धारक तत्त्व सूत्र रूप में और व्याख्या के रूप में बहुतायत में उपलब्ध हैं। प्रमुखतः महाभारत, पंचतन्त्र, हितोपदेश, सूत्र एवं नीति ग्रन्थ आदि। इन्हीं नीति ग्रन्थों में से एक है कौटिल्यीय अर्थशास्त्र। इस ग्रन्थ में विदेश नीति के ऊपर पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है किन्तु आज (स्वातन्त्र्योत्तर काल) किसी भी सरकार ने उसको केन्द्र में रखकर भारत की विदेश नीति का निर्धारण नहीं किया। यदि किया होता तो भारत स्वयं के खोए हुए स्थान को प्राप्त कर लिया होता। किन्तु 2014 के बाद की विदेशनीति के आधार के रूप में कौटिल्यीय अर्थशास्त्र में वर्णित मण्डल सिद्धान्त और षाड्गुण्य नीति को स्पष्टतः देखा जा सकता है। परिणामतः आज भारत की भूमिका परिवर्तनशील अवस्था में आने लगी है। भारत मण्डल सिद्धान्त में वर्णित विजिगीषु राजा की स्थिति को प्राप्त होकर दिग-दिगन्त में स्वयं की उपस्थिति अनुभव करा रहा है। 2014 के पूर्व भी यह काम हो सकता था किन्तु भारत और भारतीयता के दृष्टिकोण से चिन्तन का स्वभाव न होने के कारण ऐसा संभव न हो सका। भारत की विदेश नीति निर्धारण के संबन्ध में जो साहित्य रचा गया, उस पर भी उपनिवेशी छाप स्पष्टतः परिलक्षित होती है। फलतः भारत नेतृत्व की अवस्था में न आकर अनुसरणक ही बना रहा। 2014 के बाद परिदृश्य बदला है। इसमें भारत और भारतीयता का पक्ष स्पष्टतः न केवल प्रस्तुत किया जा रहा है बल्कि उसका अनुप्रयोग करके उसकी उपयोगिता को प्रमाणित भी किया जा रहा है। इस शोध पत्र का भी उद्देश्य यही है कि अध्येता कौटिल्यीय अर्थशास्त्र में वर्णित मण्डल एवं षाड्गुण्य-सिद्धान्त से न केवल परिचित हों बल्कि उसके अनुप्रयोगीय व्यवहार से मोदी सरकार की विदेश नीति किस प्रकार प्रभावित है इसका विश्लेषण भी कर सकें।

जैसा कि हमें विदित है कि श्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में एन॰डी॰ए॰ द्वितीय ने 26 मई 2014 को सरकार का गठन किया था। इस अवसर पर इंग्लैण्ड के लोकप्रिय समाचार पत्र द गार्जियन ने अपने 19

मई 2014 के अंक के एक स्तंभ में लिखा था कि अन्ततः ब्रिटिशर्स ने भारत को छोड़ दिया। ये पंक्तियाँ आलेख के प्रारंभ में थीं और फिर इसके बाद उन्होनें श्री मोदी के विषय में अन्यान्य बातों का उल्लेख किया था और इसके समापन पर उन्होंने लिखा था कि अब मोदी को स्वयं को सिद्ध करना होगा। द गार्जियन के इस आलेख ने 2014 से पूर्ववर्ती सरकारों को यह अहसास करा दिया कि आप स्वयं को कितना भी भारत की सरकार कहते रहे हों किन्तु आपके क्रियाकलापों पर छाप ब्रिटिशर्स की ही रही है। और जब 2014 में एन॰डी॰ए॰ की सरकार जिसका नेतृत्व श्री नरेन्द्र मोदी की अगुवाई में भा॰ज॰पा॰ कर रही थी, वह स्वयं 282 स्थानों पर विजयी होकर 340 से अधिक स्थानों को एन॰डी॰ए॰ के पक्ष में करने में सफल रही थी। परिणामत: द गार्जियन को यह अनुभव हो गया कि अब भारत में ब्रिटिशर्स की व्यवस्था के स्थान पर भारतीय चितंन को प्रश्रय मिलेगा और इसलिए ही उसने अन्त में लक्षणा में लिखा कि अब मोदी को स्वयं को सिद्ध करना होगा; क्योकि आज (2014) से पहले भारत में भारतीयता की बात कहने का प्रचलन ही नहीं था। श्री मोदी ने इसे एक चुनौती के रूप में स्वीकारा और भारतीय वृतान्त को गढ़ना प्रारंभ कर दिया। सर्वप्रथम उन्होंने अपने शपथ ग्रहण समारोह में सार्क देशों (कुल 8) को ससम्मान आमन्त्रित किया। यहीं से श्री मोदी ने अन्तर्राष्ट्रीय संम्बन्धों के निर्धारण में संस्कृत वाङ्गमय विशेषकर कौटिल्यीय अर्थशास्त्र को आधार बनाना प्रारंभ किया। कौटिल्य यहाँ पर राजा जिसके केन्द्र में रखकर सिद्धान्त का विकास होता है को विजिगीषु राजा कहता है। विजिगीषु से अभिप्राय विजय की अभिलाषा वाला राजा। विजिगीषु वह राजा होता है जोकि आत्मसंपन्न, अमात्य आदि द्रव्य प्रकृति संपन्न और नीति अवलम्बित होता है।[2] मैं विषय को आगे बढ़ाऊँ, उसके पूर्व विजिगीषु राजा स्वयं की विजय अभिलाषा को पूर्ण कैसे करते हैं के विषय में जो मण्डल सिद्धान्त, कौटिल्य के द्वारा निरूपित किया गया है को स्पष्ट कर देता हूँ। तदोपरान्त विषय को आगे विस्तृत करेंगे।

कौटिल्य कहते हैं कि विजिगीषु राजा मण्डल के केन्द्र में होता है। उसके सीमा से लगा हुआ राजा अरि होता है। अरि की सीमा से लगा हुआ राजा विजिगीषु का मित्र होता है। मित्र की सीमा से लगा हुआ राज्य अरि-मित्र होता है और अरि-मित्र की सीमा से लगा हुआ राज्य प्रायः विजिगीषु के मित्र का मित्र होता है जिसे वह मित्र-मित्र के नाम से संबोधित करता है। और इसके बाद पुनः अरि के मित्र के मित्र का राज्य आता है जिसे उसने अरि-मित्र-मित्र के नाम से वर्णित किया है। ये सभी पाँच राज्य विजिगीषु की विजयी होने की यात्रा में आगे के क्रम में आते हैं। जैसा क्रम आगे की ओर का है वैसा ही क्रम विजिगीषु राज्य के पीछे की ओर भी होता है। बस भेद है तो नाम का। यथा विजिगीषु राज्य के पीछे की ओर अवस्थित राज्य को पार्ष्णिग्राह कहते हैं जो कि सामान्यतः विजिगीषु के पृष्ठ यानि पीछे होने के कारण पार्ष्णिग्राह कहलाता है और विजिगीषु के साथ द्वैषपूर्ण संबन्धों का निर्वहन करने वाला होता है। पार्ष्णिग्राह से लगा हुआ राज्य आक्रान्द यानि विजिगीषु के साथ सौहार्दपूर्ण संबन्धों वाला होता है। फिर इसके बाद का राज्य पार्ष्णिग्राह का मित्र होने के कारण पार्ष्णिग्राह सार के नाम से जाना जाता है। और अन्त में पार्ष्णिग्राह सार की सीमा

से लगा हुआ राज्य आक्रान्द सार कहलाता है; जो कि विजिगीषु के मित्र का मित्र होता है। इस प्रकार से विजिगीषु राज्य स्वयं के आगे 5 प्रकार के राज्यों से और पीछे चार प्रकार के राज्यों से घिरा होता है। ये विजिगीषु सहित कुल 10 राज्य होते हैं।[3] इसके अतिरिक्त कौटिल्य दो और राज्यों का उल्लेख मण्डल सिद्धान्त में मण्डल को पूर्ण करने के लिए करते है। वे लिखते हैं कि विजिगीषु राज्य की संधि में संधि और विग्रहों में विग्रहों का समर्थन करने वाला राज्य मध्यम कहलाता है।[4] वी॰पी॰ वर्मा लिखते हैं कि मध्यम से अभिप्राय उस राज्य या राजा से है जो कि तटस्थ हो और जिसकी सीमाएं विजिगीषु तथा अरि दोनों से ही सटी हों। तथा यह दोनों कि अपेक्षा शक्ति में अधिक हो[5] तभी तो वह तटस्थ रह सकेगा। किन्तु, यदि कौटिल्य के वाक्य पर ध्यान दें तो स्पष्ट होता है कि वह विजिगीषु और अरि की संधि और विग्रह दोनों में वह उनके साथ खड़ा है तो तटस्थ कैसे हो सकता है। तटस्थ से अभिप्राय: तो दोनों ही अवस्थाओं में दोनों में से किसी का भी साथ न देने से होता है। अस्तु। आगे वे दूसरी प्रकार के राज्य या राजा की भी स्थिति स्पष्ट करते हैं और उसे नाम देते हैं उदासीन। यानि वह राज्य या राजा जोकि अरि, विजिगीषु और मध्यम की प्रकृतियों के अतिरिक्त शक्तिशाली, मध्यम राजा से भी बलवान, अरि, विजिगीषु और मध्यम की सन्धि में सन्धि और विग्रह में विग्रह का समर्थक रहे।[6] वी॰पी॰ वर्मा इसकी व्याख्या कुछ यों करते हैं कि उदासीन, मध्यम की भांति दूसरा तटस्थ राज्य है जोकि विजिगीषु, अरि और मध्यम तीनों से अधिक शक्ति संपन्न हैं तथा इसका प्रदेश तीनों राज्यों से दूर है।[7] यहाँ पर भी तटस्थता की स्थिति भ्रमकारी है। किन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि उदासीन निश्चित ही विजिगीषु, अरि और मध्यम से अधिक शक्तिशाली है और आवश्यकता पड़ने पर वह सभी पर नियन्त्रण भी करता है। इसलिए विजिगीषु राज्य या राजा को स्वयं सहित अन्य के साथ उनकी मूल प्रकृति जिनको कौटिल्य द्रव्य प्रकृतियाँ कहते हैं, सहित सम्बधों की स्थापना करना चाहिए।

अरि-मित्र-मित्र
मित्र-मित्र
अरि-मित्र → मध्यम
मित्र
अरि
विजिगीषु

पार्ष्णिग्राह
आक्रान्द → उदासीन
पार्ष्णिग्राह सार
आक्रान्द सार

कौटिल्य मण्डल सिद्धान्त के निरूपण में सहजशत्रु, कृत्रिमशत्रु और सहजमित्र और कृत्रिममित्र को भी सम्मिलित करते हैं। इनमें जो भेद वे करते हैं वह इस प्रकार है कि विजिगीषु राजा की सीमा से लगा हुआ शत्रु और विजिगीषु के वंश में ही पैदा हुआ दायभागी विजिगीषु के सहज शत्रु होगें। इसी प्रकार जो राजा स्वयं से ही विजिगीषु का विरोधी हो जाए या अन्य को भी विरोधी बनाने वाला हो को कृत्रिमशत्रु कहा है। इस प्रकार शत्रुओं के दो प्रकार का निरूपण उनके द्वारा किया गया है।[8]

अब मित्रों के प्रकार पर प्रकाश डालते हैं। उपर्युक्तानुसार मित्र भी दो ही प्रकार के उनके द्वारा बताए गए हैं। 1. सहजमित्र यानि विजिगीषु के राज्य से लगे राज्य की सीमा से लगा हुआ राज्य और विजिगीषु का ममेरा या फुफेरा भाई। धन या जीवन, जीविका के लिए आश्रय लेने वाला कृत्रिममित्र कहलाता है। सरल रूप में समझने के लिए महाभारत में भगवान श्री कृष्ण पाण्डवों के सहजमित्र थे क्योंकि उन दोनों में ममेरे और फुफेरे भाई का संबन्ध था और कर्ण कौरवों का कृत्रिम मित्र था क्योंकि उस मित्रता का मूल हेतु जीविका का आश्रय था।

मण्डल सिद्धान्त के विस्तार के लिए कौटिल्य आगे विस्तार से समझाते हैं कि विजिगीषु, मित्र और मित्र-मित्र ये तीन प्रकृतियाँ और हैं तथा तीनों ही राज्यों की पांच द्रव्य प्रकृतियाँ और हैं यथा अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, राष्ट्र।[9] इस प्रकार एक राज्य या राजा यथा विजिगीषु (मूल प्रकृति) और उसकी पांच अन्य प्रकृतियाँ, कुल हुई छः। इसी प्रकार मित्र की भी और मित्र-मित्र की भी छः छः प्रकृतियाँ मिलकर कुल हो गईं 18।[10] इस प्रकार 18 प्रकृतियों का मिलकर एक मण्डल बना। यही क्रम अरि राज्यों के मण्डल निर्माण में प्रयुक्त होगा, यही मध्यम और उदासीन के मण्डल निर्माणों में। इस प्रकार से चार मण्डलों का गठन हुआ। एक मण्डल में 18 प्रकृतियाँ तो चार मण्डलों में 18x4=72 प्रकृतियाँ हुईं ।[11]

इसको सारणी के माध्यम से कुछ यों दर्शाया जा सकता है:-

विजिगीषु			**अरि**			**मध्यम**			**उदासीन**		
विजिगीषु + मित्र+ मित्र-मित्र			**अरि+अरिमित्र +अरिमित्र-मित्र**			**मध्यम + मित्र+ मित्र-मित्र**			**उदासीन+ मित्र+ मित्र-मित्र**		
अमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग कोष	अमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग कोष	अमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग कोष दण्ड	अमात्य जनपद दुर्ग कोष

 ISSN: 2321-0443

		दण्ड						दण्ड			दण्ड
6 + 6 + 6			6 + 6 + 6			6 + 6 + 6			6 + 6 + 6		
कुल = 18 एक मण्डल			कुल = 18 दूसरा मण्डल			कुल = 18 तीसरा मण्डल			कुल = 18 चतुर्थ मण्डल		

इस प्रकार 12 राजपद्धतियाँ एवं 60 अमात्य आदि द्रव्य प्रकृतियां मिलकर कुल 72 प्रकृतियों का एक बृहद मण्डल बनता है।

अब विजिगीषु और शत्रु राजाओं के गुणों का विवेचन करते हैं।

वे कहते हैं कि अगर संपन्न राजा (शत्रु को इसमें सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि शत्रु राजा होने से स्वयं स्वामी प्रकृति की श्रेणी का है।) शेष सात प्रकृतियाँ यानि, स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड, और मित्र हैं। इन सभी का व्यवस्थित क्रिया संपन्न होना, राजा का आत्म संपन्न होना, या राजसंपत्ति कही गई है।[12] आत्म संपन्न राजा जोकि स्वयं स्वामी प्रकृति है, वह अपने स्वभाव से गुणहीन प्रकृतियों को भी गुणवान बना लेता है महाभारत के हमारे सम्मुख है। शत्रु राजा जो कि स्वयं स्वामी प्रकृति है, वह अपने स्वभाव से ना केवल स्वयं को हानि पहुँचाता है बल्कि अपने राज्य सहित अपनी समस्त प्रकृतियों को भी नष्ट कर लेता है।[13]

मण्डल सिद्धान्त की परिणति को वे शक्ति (बल) और सिद्धि (सुख) के रूप में प्रकट करते हैं यानि विजिगीषु राजा की शक्ति और सिद्धि का परिणाम बल और सुख के रूप में प्राप्त होता है।[14] वे प्रकारांतर से शक्ति और सुख दोनों के तीन-तीन भेद बताते हैं। यानि शक्ति को वे ज्ञानशक्ति, कोषशक्ति और विक्रमशक्ति में विभाजित करते हैं वहीं सिद्धि को मंत्रसिद्धि, प्रभुसिद्धि और उत्साह सिद्धि के रूप में प्रस्तुत करते हैं।[15] इन हानियों से संपन्न राजा को श्रेष्ठ, रहित को अधम एवं समान शक्ति वाला राजा मध्यम कहलाता है।[16] इसलिए राजा को सदैव ही स्वयं शक्ति और सिद्धि का विस्तार करते रहना चहिए। यदि राजा यह कार्य स्वयं न कर सके तो उसे ये कार्य स्वयं की अमात्य आदि द्रव्य प्रकृतियों के द्वारा करवाने चाहिए। इस प्रकार विजिगीषु राजा स्वयं की शक्ति विस्तार में न केवल स्वयं सक्रिय रहे बल्कि शत्रु की शक्ति को क्षीण करने के भी समस्त उपाय करता रहे। और इन उपायों के लिए विशेष परिस्थितियों की प्रतीक्षा करे।[17]

कौटिल्य विजिगीषु राजा की और उसके सहयोगियों की तुलना चक्र के रूप में करते हुए उनकी स्थिति की व्याख्या कुछ यों करते हैं। वे कहते हैं कि विजिगीषु चक्र में स्वयं नाभि, मित्र को अरा और मित्र-मित्र को नेमि के रूप में माने।[18] इसको हम निम्न आकृति से सुगमता से समझ सकते हैं।

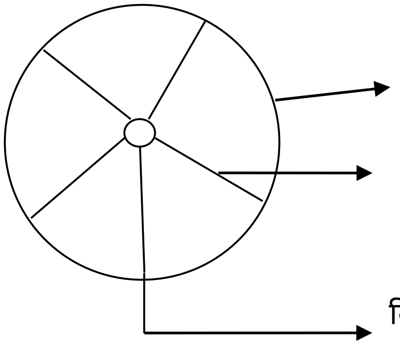

वे आगे कहते हैं कि जो बलवान शत्रु विजिगीषु और मित्र के मध्य आ जावे वह या तो जीत लिया जाए या सदैव संतप्त रहे।[19] इस प्रकार मण्डल सिद्धान्त के व्यवहारिक क्रियान्वयन से विजिगीषु राजा निश्चित ही यशस्वी होता है।

मण्डल सिद्धान्त में यों तो षाड्गुण्य सिद्धान्त की भी महती भूमिका है किन्तु इसमें सर्वाधिक प्रभावी भूमिका सन्धि और विग्रह की है। उसका विवेचन भी यहाँ पर समीचीन प्रतीत होता है। कौटिल्य इसे स्पष्ट रूप से स्वीकारते हैं कि सात प्रकृतियाँ (स्वामी, अमात्य, जनपद, दुर्ग, कोष, दण्ड (सेना), मित्र) और बारह राज मण्डल (विजिगीषु, अरि, मित्र, अरि मित्र, मित्र-मित्र, अरि-मित्र-मित्र, पार्ष्णिग्राह आक्रन्द, पार्ष्णिग्राह सार, आक्रान्द सार, मध्यम और उदासीन) ही षाड्गुण्य नीति का मुख्य आधार हैं।[20] ये हैं - सन्धि, विग्रह, यान, आसन, संश्रय एवं द्वैधीभाव।[21] यों तो ये छः ही पूर्ण हैं किन्तु कौटिल्य ने मण्डल सिद्धान्त के निरूपण में दो (सन्धि एवं विग्रह) पर अधिक बल दिया है,[22] इसलिए इन्हीं का विवेचन यहाँ पर प्रस्तुत करेंगे।

कौटिल्य लिखते हैं कि दो राजाओं के मध्य कुछ शर्तों पर मेल हो जाना सन्धि कहलाता है और शत्रु पर कोई अपकार करना विग्रह कहलाता है।[23] वे आगे सन्धि का आधार बताते हैं कि शत्रु की तुलना में स्वयं को निर्बल समझने पर यह गुण व्यवहृत होता है और यदि स्वयं बलवान हों तो विग्रह का उपयोग करना चाहिए।

कौटिल्य विजिगीषु को निर्देशित करते हैं कि यदि सन्धि और विग्रह की अवस्था में एक समान लाभ की अवस्था हो तो विजिगीषु सन्धि ही करे क्योंकि विग्रह से प्रजा की हानि की संभावना प्रबल हो

जाती है।[24] वे आगे यह भी बताते हैं कि सामर्थ्यानुसार सन्धि विग्रह को व्यवहार में लावें। इसके लिए यह अनिवार्य है कि वह समान या शक्तिशाली के साथ सन्धि तथा कमजोर के साथ विग्रह करके स्वयं के प्रभाव की वृद्धि करे।[25] वे आगे कहते हैं कि यदि शक्तिशाली राजा सन्धि के लिए तत्पर न हो तो विजिगीषु को चाहिए कि वह अपने शत्रु राजा को नानाविध दूतकर्म, मन्त्र युद्ध, सेनापतियों का वध करके राजमण्डल की सहायता ले, शत्रु आदि तथा रसों का गूढ़ प्रयोग, वीवध (धान्य) आसार (मित्र सेना) और प्रसार (घास एवं लक ड़ी) को हानि पहुँचावे।[26] कपट उपायों का प्रयोग करे और दण्ड और आक्रमण को व्यवहार में लावे। इन सबसे या तो बलवान राजा सन्धि के लिए तत्पर हो जावेगा या फिर संघर्षरत रहकर दुर्बलता को प्राप्त होगा। कौटिल्य नानाविध सन्धियों के प्रकारों का उल्लेख करते हैं और विग्रह पर भी विस्तार से प्रकाश डालते हैं। इस प्रकार से वे मण्डल सिद्धान्त को व्यवहारिक रूप से लागू करने में सन्धि की भूमिका को महत्त्वपूर्ण मानते हैं और यदि विग्रह अपरिहार्य हो तभी उसके उपयोग की बात करते हैं। सम्पूर्ण विषय के अध्ययन के बाद यह स्पष्ट् होता है कि कौटिल्य राष्ट्रहित के लिए किसी भी व्यवहार को अनुचित नहीं मानते। मात्र राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानकर अपनी नीतियों के क्रियान्वयन का पक्ष स्पष्ट करते हैं। वी॰पी॰ वर्मा कौटिल्य के मण्डल सिद्धान्त के व्यवहारिक स्वरूप को दृष्टिगत रखकर ही उन्हें भारतीय राजनीतिक चिन्तकों में यथार्थवादी चिन्तक के रूप में प्रतिष्ठापित करते हैं।[27] क्योंकि जहाँ एक ओर कौटिल्य ने विजिगीषु को संप्रभु साम्राज्य स्थापित करने के लिए उपक्रम प्रस्तुत किए हैं वहीं वे मण्डल के विभिन्न राजाओं के मध्य संतुलन स्थापित करने हेतु विषयों का प्रतिपादन भी करते हैं। सन्धि, विग्रह, आसन, यान, संश्रय एवं द्वैधीभाव ये छः गुण इसी दृष्टिकोण से प्रतिष्ठापित किए गए गुण हैं।

2014 से श्री नरेन्द्र मोदी ने जिन देशों कि यात्राएँ की हैं उन यात्राओं के माध्यम से हम कौटिल्य के मण्डल सिद्धान्त में सम्मिलित चारों मण्डलों (विजिगीषु, अरि, मध्यम, और उदासीन) को समकालीन देशों के साथ रख कर श्री नरेन्द्र मोदी द्वारा व्यवहृत विदेशनीति को मण्डल सिद्धान्त की कसौटी पर कसने का प्रयत्न करेंगे।

म्यांमार एवं नेपाल यों तो सहज मित्र की श्रेणी के राज्यों में आते हैं किन्तु वैचारिक दृष्टिकोण से यहाँ पर कृत्रिम मित्र की गतिविधियों के संचालन के चलते ये अरि राज्य के अनुसार व्यवहृत होते हैं। यानि कम्युनिस्ट पार्टी की सरकार के चलते ये अपनी जीविका हेतु चीन पर निर्भर करते हैं। वहीं अफगानिस्तान, भूटान आदि सहज मित्र के रूप में व्यवहृत होते हैं। सांस्कृतिक भारत का व्याप मध्य एशिया तक जाता है। 2014 के बाद उनमें से भी अधिकांश राज्य या तो सहज मित्र की श्रेणी के अनुसार व्यवहृत हो रहे हैं या कृत्रिम मित्र का आचरण कर हैं। पाकिस्तान अरि की श्रेणी का राज्य है और चीन अरि-मित्र की भूमिका का निर्वहन करता है। तथा इसके साथ वह मध्यम श्रेणी के मण्डल का भी प्रतिनिधि राज्य है। और वह भारत की ओर से विजिगीषु राज्य के रूप में अपना आचरण नहीं करता है। वह सदैव भारत के अरि-मित्र

के रूप में ही व्यवहृत होता है। यद्यपि रूस की भुमिका भारत के मित्र की श्रेणी के अनुसार व्यवहृत होती है। यौंतो इस प्रकार श्री नरेन्द्र मोदी ने 2014 के बाद जिन देशों की यात्राएँ की हैं उन्हें हम भारत की अधिकारिक वेबसाइट पर उपलब्ध आंकड़ो के अनुसार सुगमता से समझ सकते हैं क्योंकि श्री नरेन्द्र मोदी ने 2014 के बाद से ये सतत प्रयास किए हैं कि भारत के सहज मित्र या कृत्रिम मित्रों की संख्या में वृद्धि हो। भारतीय सेना के विंग कमांडर अभिनन्दन की यथाशीध्र वापसी इस बात का प्रमाण है की भारत भी विदेश नीति पाश्चात्य प्रभाव या सिद्धान्तों से बाहर निकल कर राष्ट्रहित के अनुसार आचरण करने लगी है। 2014 से पूर्व की विदेश नीति जिसे जे०एस०मिल नपुंसक के रूप में निरूपित करते हैं।[28] किन्तु ये ध्यातव्य है कि 2014 के बाद की विदेश नीति जिस पर मण्डल सिद्धान्त की छाप स्पष्टतः देखी जा सकती है, ने अपने अतीत की छाया (1947-2014) से बाहर निकलना प्रारंभ कर दिया है। भारत के विषय में पश्चिम की जो समझ बन गई थी और उस समझ के अनुसार ही भारत का सर्वत्र मूल्यांकन होता था को अब बदला जाने लगा है । क्योंकि पाश्चात्य राजनयों ने भारत के विषय में जो दावे किए थे यथा उनका चरित्र भावुकता के कारण कमजोर हो जाता है जिसमें मूल्यों के प्रति उनकी समझ कभी-कभी नष्ट हो जाती है।[29] अब भारत भावुकता के संरक्षण संवर्धन के साथ-साथ यथार्थ चिन्तन का भी अनुगामी हो गया है। राष्ट्रहित उसके लिए सर्वोपरि है चाहे उसके लिए उसे कोई भी कीमत क्यों न चुकानी पड़े।

2014 के बाद की विदेश नीति की दशा-दिशा ने यह सिद्ध करना प्रारंभ कर दिया है। और इसके परिणाम भी दृष्टिगोचर होने लगे है। द गार्जियन के 19 मई के अंक में छपे स्तंभ की अंतिम पंक्तियाँ कि श्री मोदी को स्वयं को सिद्ध करना होगा। मुझे लगता है कि वह सिद्ध करने कि प्रक्रिया शुरू हो गई है। श्री मोदी उस पर खरे उतरने लगे है। और इस आधार पर न केवल भारत की विदेश नीति में परिवर्तन हो रहा है बल्कि आंतरिक नीति के परिवर्तन के चलते दोनों एक दूसरे के पूरक सिद्ध होकर भारत को प्रतिष्ठापित कर रही है।

सन्दर्भ

1. दत्त ,वी॰पी॰, (2009), स्वतन्त्र भारत की विदेशनीति, नेशनल बुक ट्रस्ट, इण्डिया, पृ०1
2.कौटिल्य अर्थशास्त्र, (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी, पृ० 446
3. तदैव
4. तदैव, पृ० 447
5. वर्मा , वी॰पी॰, (2010-11), आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा पृ० 888
6. कौटिल्य अर्थशास्त्र, (2009), चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी, पृ० 447
7. वर्मा, वी॰पी॰, (2010-11) , आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, लक्ष्मीनारायाण अग्रवाल, आगरा, पृ० 888
8. कौटिल्य अर्थशास्त्र, (2009) चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, वाराणसी, पृ० 446

9. तदैव, पृ० 447
10. तदैव
11. तदैव
12. तदैव, पृ० 444
13. तदैव
14. तदैव, पृ० 447
15. तदैव, पृ० 448
16. तदैव
17. तदैव
18. तदैव, पृ० 449
19. तदैव, पृ० 449
20. तदैव, पृ० 443
21. तदैव
22. तदैव, पृ० 447 एवं पृ० 453
23. तदैव, पृ० 453
24. तदैव
25. तदैव, पृ० 454
26. तदैव
27. वर्मा,वी॰पी॰, (2010-11), आधुनिक भारतीय राजनीतिक चिन्तन, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, आगरा पृ० 887
28. रॉटर, ए॰जे॰, (2000), कामरेड्स एट औड्स: द यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड इंडिया 1947-1964, कारनेल यूनिवर्सिटी प्रेस, ल न्दन, 192
29. तदैव, पृ० 194

अध्याय 2

भारतीय विदेश नीति संबंधी सामरिक चिंतन: एक विवेचन

डॉ. अमित कुमार गुप्ता
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
सिक्किम विश्वविद्यालय गंगटोक

डॉ. शिवानी जॉर्ज
एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग
श्यामा प्रसाद मुखर्जी महिला
महाविद्यालय, दिल्ली

भारत की विदेश नीति ने स्वयं को परिवर्तित होती परिस्थितियों के अनुकूल ढाला है तथा एक उदीयमान एवं दायित्वबोध युक्त राष्ट्र के रूप में ख्याति भी अर्जित की है| इसके उदय के प्राथमिक कारणों के रूप में आर्थिक विकास (कोविड-१९ पूर्व) एवं सूचना-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आई प्रगति को चिह्नित किया जा सकता है| संयुक्त राज्य अमेरिका के सामरिक चिंतन केंद्र 'नेशनल इंटेलिजेंस काउंसिल' का अनुमान है कि वर्ष 2025 तक भारत विश्व की चौथी सबसे बड़ी आर्थिक शक्ति के रूप में उभरेगा| बहरहाल, यहां प्रश्न यह है कि क्या केवल अपने आर्थिक अभियान के बल पर भारत को विश्व समुदाय में अपना उचित स्थान हासिल हो पाएगा या 'तीसरी दुनिया' के देश की छवि से ऊपर उठने में इसकी सैनिक क्षमता भी बड़ी भूमिका निभाएगी?

भारत को अपनी विदेश नीति के संदर्भ में चहुंमुखी दृष्टिकोण अपनाते हुए आर्थिक, सैन्य, राजनय तथा मृदु शक्ति के संतुलित समन्वय पर दृष्टि केंद्रित करनी होगी| इस विषय में कई घटनाक्रमों का उल्लेख करते हुए जनरल वी.पी मलिक टिपण्णी करते हैं कि सामरिक मुकाम पर भारत कई बार मनचाहा फल हासिल नहीं कर सका| वे लिखते हैं कि युद्ध जीत जाने पर भी जम्मू-कश्मीर के मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में बिना 'क्विड प्रो को' (जम्मू-कश्मीर संबंधी भारत-पाक विवाद की ही तरह) के जाने, 1950 के दशक में चीन को तिब्बत प्रदान करने, 1962 में बिना सैन्य तैयारी के चीन-भारत सीमा पर अग्रगामी सैन्य नियुक्ति, 1965 के युद्ध के उपरांत सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हाजी पीर दर्रा पाकिस्तान को लौटाने, जम्मू कश्मीर के मसले का स्थाई हल ढूंढे बगैर 1971 के युद्ध में 90,000 बंदियों को पाक को लौटाने तथा 1974 में परमाणु परीक्षण एवं 1998 में नाभिकीय आयुध प्राप्ति के मध्य 24 वर्षों के ढीले-ढाले रवैये आदि प्रसंगों से भारत की सामरिक उपेक्षा परिलक्षित होती है|(मलिक, 2010)

भारत की ओर से इस त्रुटि को दूर करने के हर संभव प्रयास किये जा रहे हैं| अमरीकी-भारतीय सामरिक संस्थान नीति (U.S – India Institute for Strategic Policy) के माध्यम से भारत-अमरीकी मौजूदा

 ISSN: 2321-0443

सामरिक जुड़ाव को और भी अधिक मजबूती मिली है, जिसका अघोषित लक्ष्य चीन पर काबू रखना है |(अहमद, 2003)

भारत उस परिचर्चा का अंग भी रहा, जिसकी परिणति क्वाड्रीलेटरल सिक्योरिटी डायलॉग अलायंस (QUAD) के रूप में हुई| इसमें भारत, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, फ्रांस एवं जापान हिंद महासागर क्षेत्र में महती भूमिका पाना चाहते हैं| इससे भी अधिक ये सभी देश इस क्षेत्र-विशेष में चीन की बढ़ती सैन्य उपस्थिति के प्रत्युत्तर के रूप में स्वयं को स्थापित करना चाहते हैं| ध्यातव्य है कि इस समझौते को अभी सभी प्रतिभागियों की औपचारिक मान्यता मिलना शेष है|

श्री एरियल शेरोन (इजरायल के तत्कालीन प्रधानमंत्री) की भारत यात्रा से यह भी प्रतीत होता है कि भारत-इसराइल एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य एक सामरिक त्रयी की बुनियाद रखी जा रही है| यह अब तक के किसी भी इजराइली राज्य-प्रमुख की प्रथम भारत यात्रा थी| ठीक इसी तरह 2015 में संपन्न युद्धाभ्यास, जिसमें अमेरिका, भारत एवं जापान की नौसेना शामिल थी, एक ऐसा साझा कदम माना जा सकता है जिसे देख चीन की त्योरियों पर बल पड़ गए| अमेरिका द्वारा अंडमान निकोबार द्वीप समूह में अवस्थित भारत कि सुदूर पूर्वी नौसैनिक कमांड (FENC) के निर्माण हेतु वित्तीय सहयोग भी प्राप्त हो रहा है। ऐसा विश्वास है कि निर्माण संपन्न होने के उपरांत यह अत्याधुनिक सैनिक युद्ध प्रणाली के रूप उभरेगा जो पुराने Subic Bay base से काफी विशाल होगा एवं जो सामरिक दृष्टि से भारत के लिए वरदान साबित होगा| (Vanaik 2008,Gupta 2012)

वर्ष 2017 में जापान के सहयोग से भारत ने एशिया-अफ्रीका विकास गलियारे (एशिया-अफ्रीका ग्रोथ कॉरिडोर) का आरंभ किया जिसे चीन की बेल्ट एवं रोड पहल (BRI) की समुचित प्रतिक्रिया के रूप में देखा जा रहा है| एशिया-अफ्रीका विकास गलियारे में मूलतः 4 प्रकरण सम्मिलित है- विकास एवं सहकारी परियोजनाएं, अवसंरचना एवं संस्थागत संपर्क, क्षमता एवं कौशल विकास तथा जनभागीदारी (पीपल टू पीपल पार्टनरशिप),(चौधरी 2017) | इस साझा पहल के माध्यम से भारत एवं जापान संयुक्त रूप से एशिया तथा अफ़्रीका में उत्थान एवं चौमुखी विकास को बढ़ावा देना चाहते हैं |

अपने पड़ोसियों से उत्पन्न खतरों के संदर्भ में भारत की सशक्त सैन्य जवाबी कार्यवाही देश की बदलती कूटनीति का परिचायक है| वर्ष 2016 का सर्जिकल स्ट्राइक एवं 2019 का पाकिस्तान स्थित बालाकोट हवाई हमला, 2017 के डोकलाम प्रसंग, 2020 के गलवान घाटी मामले एवं 2020 ही के पैन्गोंग-त्सो विवादों को सुलझाने हेतु उठाए गए कदमों से भारत की बहुआयामी सामरिक क्षमता के दर्शन होते हैं|

भारत कई बहुपक्षीय संस्थाओं में सक्रिय भागीदारी के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय पटल पर अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कर रहा है| ब्रिक्स, (ब्राजील, रूस, भारत, चीन एवं दक्षिण अफ्रीका सरीखे नवीन औद्योगिक राष्ट्रों का संगठन) G8 + 5 (अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, फ्रांस, जापान, जर्मनी, रूस एवं इटली) एवं प्लस 5 (भारत, दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील तथा मेक्सिको) G4 देशों का समूह, जो संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में एक

दूसरे की स्थाई सदस्यता के दावे का समर्थन करते हैं; बिम्सटेक, दक्षिण एशिया तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों का समूह, जिसमें बांग्लादेश, म्यांमार, भारत, थाईलैंड, भूटान, नेपाल एवं श्रीलंका शामिल हैं| मेकॉन्ग गंगा कॉर्पोरेशन (एमजीसी) संस्था में भारत, म्यांमार, थाईलैंड, लाओस, कंबोडिया एवं वियतनाम शामिल हैं| दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (दक्षेस) 8 दक्षिण एशियाई देशों : भारत ,पाकिस्तान, अफगानिस्तान, मालदीव, श्रीलंका, बांग्लादेश, नेपाल एवं भूटान का संगठन; एशिया कॉर्पोरेशन डायलॉग (दक्षेस का अखिल एशियाई संगठन); दक्षिण एशियाई देशों का संगठन एवं खाड़ी सहयोग परिषद; जी 20 (आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण 20 देशों : भारत, ब्राज़ील, अर्जेंटीना, अमेरिका, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, चीन, कनाडा, यूरोपियन संघ, जर्मनी, जापान, मेक्सिको, इटली, सऊदी अरब, दक्षिण अफ्रीका, दक्षिण कोरिया, तुर्की, इंडोनेशिया, कनाडा तथा फ्रांस; संयुक्त राष्ट्र; राष्ट्रमंडल (कॉमनवेल्थ) संगठन (अतीत में ब्रिटेन के उपनिवेश रह चुके 53 वर्तमान संप्रभु देशों का समूह); हिंद महासागर रिम संगठन (हिंद महासागर के तटवर्ती 21 देशों का संगठन) एवं गुटनिरपेक्ष आंदोलन (एन.ए.एम-120 देशों का संगठन)| इनके अतिरिक्त भी भारत कई ऐसे संगठनों का सहयोगी सदस्य है जिनका प्रत्यक्ष तौर पर वह हिस्सा नहीं है| यथा : एशिया प्रशांत आर्थिक सहयोग (ए.पी.ई.सी), जी 8, आसियान, शंघाई कोऑपरेशन संगठन (SCO) तथा खाड़ी कोऑपरेशन संगठन (GCC) आदि| भारत ने कई अंतरराष्ट्रीय फोरम एवं शिखर वार्ताओं में सक्रिय प्रतिभागिता भी निभाई है, जैसे - IBSA संवाद फोरम, (भारत-ब्राजील तथा दक्षिण अफ्रीका का त्रिपक्षीय समूह), एशिया यूरोप बैठक, पूर्वी एशिया शिखर वार्ता, वैचारिक आदान-प्रदान तथा विश्वास निर्माण प्रक्रिया संबंधी एशियाई संगोष्ठी कॉन्फ्रेंस ऑन इंटरेक्शन एंड कॉन्फिडेंस बिल्डिंग मेजरस इन एशिया आदि|

इसके अतिरिक्त भारत की सामरिक क्षमता पर टिप्पणी करने वाले आलोचकों को समुचित उत्तर देने के उपक्रम में मार्च 2012 में देश के नीति निर्माताओं में गुटनिरपेक्ष 2.0 शीर्षक से एक रिपोर्ट जारी की| इस रिपोर्ट का बल औपचारिक रूप से उन आधारभूत सिद्धांतों की पहचान करना है जो 21 वीं सदी के भारत के विदेश एवं कूटनीति का मार्गदर्शन करेंगे इसमें भारत के सामरिक अवसरों का विश्लेषण है, देश के समक्ष उपस्थित संभावित चुनौतियों एवं खतरों की पहचान करते हुए गुटनिरपेक्षता के नवीन संस्करण की रूपरेखा तय करने की बात है| इसके संदर्भ में कहा गया कि भारत को इस अनिश्चित विश्व में अपनी सामरिक स्वायत्तता के विकास हेतु इसे अंगीकार करना चाहिए; हालांकि रिपोर्ट के विषय में धारणा यह है कि यह यथार्थ से अधिक आदर्श के करीब है| फिर भी कहा जा सकता है कि यह रिपोर्ट भारतीय कूटनीति विषयक क्षेत्रों में बढ़त की ओर उठा अगला कदम है|(Tellis et.al 2012,Gupta, 2012)

भारत के भावी सामरिक क्षेत्रों पर चर्चा करते हुए कहा जा सकता है कि किसी संप्रभु राष्ट्र की अथवा किसी संस्कृति की कूटनीति के तहत केवल उसके सैन्य एवं आर्थिक आयाम ही शामिल नहीं होते, वरन यह अनेकानेक प्रभावों का एक अद्भुत सम्मिश्रण है, जिसमें संस्कृति, सभ्यता, विकासक्रमिकता तथा नागरिक समाजों की राज्य के भीतर एवं बाहर की गतिविधियों के समर्थन सम्बन्धी विवरण हों| (Singh, 1999) संक्षेप में कहें तो नरम शक्ति (सॉफ्ट पावर) भी अंतरराष्ट्रीय फलक पर किसी राष्ट्र की क्षमता तय करने

के संदर्भ में एक अत्यंत महत्वपूर्ण पैमाने की भूमिका निभाता है| अतः भारत को अपनी सॉफ्ट पावर के प्रति गंभीर होना चाहिए(गुप्ता 2012)।

वर्तमान में भारतीय विदेश नीति के पंचम सिद्धांत के तौर पर संस्कृति को अपनाते हुए भारत ने उन देशों के साथ अपने सांस्कृतिक एवं सभ्यतागत सूत्रों को प्रगाढ़ करने का शुभारंभ कर दिया है जिनके साथ उसके घनिष्ठ ऐतिहासिक संपर्क रहे हैं| जापान, मंगोलिया एवं आसियान देशों में भारत का बौद्ध धर्म संबंधी राजनय इसका सुंदर उदाहरण है| वस्तुतः भारतीय नरम शक्तियों की प्रशस्ति बहुआयामी है, बहुस्तरीय है| एसॉटेरिक के रूप में परिभाषित इसके सांस्कृतिक वैभव एवं एग्जॉटिसिजम ने अनगिनत कवियों, मनीषियों, वैज्ञानिकों एवं दार्शनिकों की कल्पना को आकर्षित किया है| केवल उन्हीं को आकृष्ट नहीं किया, जिनके लिए यह कुछ मायने रखता है; बल्कि विश्वभर के बुद्धिजीवी एवं साधारण जन भी इससे समान रूप से प्रभावित हुए हैं| भारत की 'सामान्य' से कहीं अधिक प्रदान करने की क्षमता ने प्रत्येक विचारशील संज्ञान को उद्वेलित किया है| (गुप्ता 2013) इस एसॉटेरिक संस्कृति का वांग्मय और ऐश्वर्य घबराहट भी पैदा करते हैं और अभिभूत भी करते हैं| और यह सब उस समृद्ध सम्मिश्रण का नतीजा है जिसमें भाषाओं एवं बोलियों का वैविध्य, देवी-देवताओं, मूल्यों-विश्वासों ,रीति-रिवाजों, भोग और मुक्ति का संतुलन आदि शामिल है|(सिंह 1998)

बी.पी सिंह के अनुसार साहित्य के क्षेत्र में 1990 के नोबेल प्राप्त रचनाकार ओक्टेविया पॉज़ भारतीय इतिहास को निम्नांकित कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करते हैं - भारतीय मनीषा एक साथ सूक्ष्म एवं स्थूल के प्रति प्रेम का परिचायक है| कभी यह समृद्ध है तो कभी सामान्य| यह हमें अभिभूत करता है, हमें वशीभूत कर लेता है| इसमें सर्वाधिक तरल एवं अनुभूति मूलक कला का सृजन किया है यह अमूर्त है और यथार्थवादी भी|

भारत की नरम शक्तियों के शीर्ष पर है अध्यात्म| यही है वह भारत, जिसने अध्यात्म को फलने-फूलने और पनपने का अनुकूल अवसर दिया| भारत देवताओं के आशीष का देश रहा है| यह भूमि विश्व के महत्त्वपूर्ण धर्मों - हिंदू धर्म, बौद्ध धर्म, जैन मत , सिख धर्म आदि की जननी है| ईसाई मत यहां रोम एवं यूरोप से भी पहले पहुंचा| इस्लाम भी यहां अपने संपूर्ण सौंदर्य के साथ उपस्थित है| इस महानता में चार चांद इस बात से लग जाते हैं कि भारत ने इन सभी धर्मों को समन्वित रूप से अंगीकार किया है| इन सब के अनुयाई यहां परस्पर सौहार्द के साथ निवास करते हैं| इस बात ने यहां की सांस्कृतिक समृद्धि में योगदान दिया है| यह अनेकता में एकता का सुष्ठु प्रतिनिधित्व करती हुई धारणा है| यही वह तंतु है जिसने तिब्बत के बौद्ध धर्म गुरु दलाई लामा को यह कहने पर विवश कर दिया कि भारत की धार्मिक सहिष्णुता शेष विश्व के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत करती है(लामा 2008)।

भारत की नरम शक्तियों की सूची में द्वितीय स्थान पर है : भारतीय जीवन पद्धति| भारतीय संस्कृति के दर्शन यहाँ के निवासियों के रहन-सहन के तौर-तरीकों में प्रतिबिंबित होती है| आध्यात्मिकता का उदय

और विकास भी भारतीय परंपरागत जीवन शैली की उपज है| हर भारतीय से अपेक्षा की जाती है कि वह प्रात:काल सर्वप्रथम सर्वशक्तिमान ईश्वर का स्मरण करें, उसके सम्मुख नतमस्तक हो, योग एवं ध्यान का अभ्यास करे, समृद्धि प्राप्ति हेतु जीवन के उद्देश्य से कदापि समझौता न करें, परिजनों एवं रिश्तेदारों से प्रगाढ़ संबंध का निर्वाह करें, महत्वपूर्ण निर्णयों में बड़े-बुजुर्गों की राय ले, अतिथि सत्कार करें, आयु में छोटे सम्मान के प्रतीक रूप में अपने से बड़ों के चरण-स्पर्श करें, धूम्रपान एवं मदिरा सेवन न करें.... यह सूची अत्यंत विस्तृत है|

भारतीय जीवनशैली का एक बेहद मजबूत पक्ष पारिवारिक मूल्यों एवं प्रगाढ़ संबंधों से विनिर्मित है| यह पक्ष ही एक भारतीय को अपने पश्चिमी बंधु-बांधवों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक संतोषी एवं प्रसन्न जीवन हेतु तैयार करता है| विदेशी लोग भारतीय परिवारों के सघन एवं सुमधुर संबंधों से चकित होते हैं| इस प्रकार भारतीय जीवन शैली को भी देश की नरम शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है|

दक्षिण एशियाई देशों एवं मध्य पूर्व में अपनी क्षमता संवर्धन हेतु भारत अपने धार्मिक एवं सांस्कृतिक वैभव को रेखांकित कर इन देशों के अधिक समीप होने का प्रयास कर रहा है| सुधा रामचंद्रन के आलेख से यह स्पष्ट है भारत पूर्व एवं दक्षिण पूर्व एशियाई देशों पर अपने प्रभाव को बढ़ाने, विशेषत: चीन के द्वारा भारत को इस क्षेत्र में 'बाहरी' कहने के प्रत्युत्तर के रूप में बौद्ध धर्म से अपने जुड़ाव पर बल दे रहा है (रामचंद्रन 2007)।

ठीक इसी तरह मध्यपूर्व एवं अन्य इस्लामिक देशों में भारत अपनी सघन मुस्लिम आबादी के उल्लेख का हर संभव प्रयास करता है क्योंकि भारत में दुनिया भर में मुसलमानों की आबादी दूसरे नंबर पर है| इसके साथ ही भारत यह सुनिश्चित करने का उद्यम करता है कि सभी इस्लामी देशों में उसके द्वारा नियुक्त राजनयिक अधिकारी इस्लाम के अनुयायी हों| इन प्रयासों से भारत इस्लामी विश्व से अपना सामीपता प्रदर्शन का यत्न करता है|

अफ्रीका एवं लातिन अमेरिकी संदर्भ में भारत को अब उस तरह की प्रेरक अथवा दिग्दर्शक की भूमिका हासिल नहीं है जो नेहरू युग में थी; हालांकि इन देशों के साथ अपना व्यापार इसने बढ़ाया है |भारतीय निवेश एवं व्यापार का तरीका चीन से काफी अलग है| इंदिरा बागची अपने आलेख में कहती हैं- कौन विश्व की सर्वश्रेष्ठ नरम शक्ति (सुपर सॉफ्ट पवार) होगा? चीन का संसाधन प्रधान निवेश अथवा भारत का क्षमता संवर्धन प्रेरित निवेश?(बागची 2007)

इन सब के साथ भारतीय प्रवासी जन अपने विशिष्टताओं एवं छोटी-छोटी बातों और गुणों से दुनिया का दिल जीत रहा है श्रीराम चौलिया अपने आलेख' द ग्रेट इंडियन डायसपोरा' में संकेत करते हैं कि एक सामान्य अमेरिकी, कनाडियन और डच भारतीय प्रवासी को राष्ट्रीय सुरक्षा अथवा आर्थिक खतरे के रूप में नहीं देखता| यह उनकी विनम्रता लचीलापन एवं सहिष्णुता के गुणों के कारण ही है (चौलिया 2006)। एक भारतीय को प्रेम शांति एवं भाईचारे के गुणों के कारण पहचाना जाता है| गौतम बुद्ध, महावीर जैन, अशोक

एवं महात्मा गांधी इन गुणों के प्रत्यक्ष प्रमाण है| सी. राजा मोहन के अनुसार श्री सिन्हा रेखांकित करते हैं कि -भारतीय मूल के लोग जिन देशों में निवास करते हैं, वहां अपने प्रभाव और सम्मान के कारण वे भारत सरकार की नीतियों के कार्यान्वयन में अत्यंत महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान करते हैं| देश के विकास में विदेशों में बसे भारतीय समुदाय की भूमिका और योगदान का आदर करते हुए भारत सरकार हर दो वर्ष में एक बार प्रवासी भारतीय दिवस का आयोजन करती है|

इन सबके अतिरिक्त भारत की अद्भुत खोज- 'योग के विषय में कथित है कि इसमें सभी व्याधियों के उपचार की क्षमता है|| ध्यान से सांसारिक चिंताओं के परित्याग में सहायता मिलती है| आयुर्वेद एवं मालिश (पंचकर्म) चिकित्सा द्वारा बिना किसी दुष्परिणाम के रोग निवारण संभव है| यह सब एवं अन्य अनेक नरम शक्तियां भारत की झोली में है|

अपने पूर्वजों के उपरोक्त अतुलनीय दाय के साथ ही पैर पसारती गरीबी, मानव विकास की खराब रिपोर्ट, जाति व्यवस्था और दहेज सरीखी इसकी सामाजिक कुरीतियां भारतीय समाज के वैभव और ऐश्वर्य का प्रतिपक्ष प्रस्तुत करते हैं| जैसा कि कृष्ण एस राम कहते हैं- इसके भू-भागीय विस्तार, वैविध्य एवं इसके निवासियों के मध्य अनूठे वैषम्य को देखते हुए यह कहना गलत न होगा कि इस देश के बारे में जो कुछ भी कहा जाए उसमें कुछ न कुछ सत्य निहितहोगा (राणा 2008)।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि भारतीय सामरिक नीति में अधिसंख्य रणनीतिक पहलू सम्मिलित हैं| इनका सम्यक एवं दूरदर्शी प्रयोग विश्व मंच पर भारत को एक बार पुनः स्थापित कर सकता है, उसके विस्मृत वैभव का परचम पुनः लहरा सकता है|

REFERENCES

1. Bagchi Indrani. July 1, 2007. 'Who'll be the Global Soft Super Power?', Sunday Times of India.
2. Chaudhury, Dipanjan Roy. 26 May, 2017. "India, Japan Come up with AAGC to Counter China's OBOR," *The Economic Times*.
3. C. Raja Mohan. January 06, 2003. "India Diaspora and Soft Power", *The Hindu*.
4. Dalai Lama's speech at 'The International Conference on terrorism', in New Delhi, June 1, 2008.
5. Faruqui, Ahmad. 2003. "The Strategic Culture of India,"*Media Monitors Network*, accessed 07 November, 2018,http://www.mediamonitors.net/ahmadfaruqui16.html
6. Gupta, Amit Kumar. 2012. "India's Foreign Policy: An Adherence to Change, Pre Independence to Post Pokhran II," *Asian Profile*, Vol 40, No 3, pp.197-212.

7. Gupta, Amit Kumar. 2013. “Soft Power of the United States, China and India: A Comparative Analysis,” *Indian Journal of Asian Affairs*, Vol 26, No 1, pp.37-57.
8. Malik, V.P.. 2010. “India’s Strategic Culture and Security Challenges.”*ORF Discourse* Vol. 5, No. 1, New Delhi: Observer Research Foundation, p. 3.
9. Rana, Kishan S.. 2000. *Inside Diplomacy*, New Delhi: Manas Publication.
10. Singh, B. P.. 1998. *India’s Culture: The State, the Arts and Beyond,* Delhi: Oxford University Press.
11. Singh, Jaswant. 1999. *Defending India*, Bangalore: Macmillan India Ltd.
12. Sreeram Chaulia. February 2006. “The Great Indian Diaspora”, Overseas Indian: connecting India with its Diaspora, is an official e-zine of ministry of Overseas Indian Affairs, at http://www.overseasindian.in/2006/feb/news/opinion24.html
13. Sudha Ramchandran. 2007. “India has its own ‘Soft Power’- Buddhism”, *Asia Times Online Ltd.*
14. Tellis, Ashley J; Dhume, Sadanand; Fontaine, Richard; Schaffer, Teresita. 2012. “Nonalignment 2.0: A Foreign and Strategic Policy for India in the Twenty First Century,” Washington D.C., Carnegie Endowment for International Peace, accessed 06 August, 2018, https://carnegieendowment.org/2012/03/12/nonalignment-2.0-foreign-and-strategic-policy-for-india-in-twenty-first-century-event-3587
15. Vanaik, Achin. 2008. “Post Cold War Indian Foreign Policy.” Paper presented at the India 2007 a symposium on the year that was, January, 2008, accessed 25 March, 2009, http://www.india-seminar.com/2008/581/581_achin_vanaik.htm

अध्याय 03

भारत की विदेश नीति: उभरते आयाम

डॉ. रमेश कुमार
ऐसोसिएट प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
कार्यवाहक प्रिंसिपल, श्यामलाल कॉलेज
(सांय)
दिल्ली विश्वविद्यालय

भारत विश्व का सदा से ही महत्त्वपूर्ण आर्थिक, बौद्धिक और सामरिक शक्ति रहा है। वैदिक काल से वर्तमान कोविड-19 यानी कोरोना काल तक इसने दुनिया का मार्गदर्शन किया है और समस्याओं का समाधान दिया है। आज भी कोरोना जैसी महामारी से लड़ने और इसकी औषधि अनुसंधान में अग्रणी भूमिका निभा रहा है। देश में भी स्वदेश निर्मित टीकाकरण हो रहा है और दूसरे कोरोना पीड़ित देशों को भी टीका निर्यात कर मदद की जा रही है। रोगनिरोधक जड़ी-बूटी और औषधीय गुणयुक्त काढ़ा तथा निरोग रहने के लिए योग- साधना का मन्त्र दुनिया को बताया जा चुका है । इससे काफी लोग कोरोना काल में लाभान्वित हुए हैं और हो रहे हैं। यही तो भारत की प्राचीन 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की वैश्विक सोच है। सामरिक सामर्थ्य के बावजूद अनाक्रमण, शांति, सहयोग और संधि हमारे पंचशील का अभिन्न अंग हैं। लेकिन शान्ति और सहयोग जैसे आदर्शवादी सिद्धान्त के साथ-साथ अति यथार्थवादी सामरिक-शस्त्र और शक्तिमूलक अंतर्राष्ट्रीय संबंध की राजनीति से भी परहेज नहीं है। आदर्श और व्यवहारिक सन्दर्भ साथ-साथ हैं। इसके अतिरिक्त हमारी विदेश नीति निंरतरता और परिवर्तनशीलता का अनूठा उदाहरण है। भगवान बुद्ध, महावीर और गांधी जी के साथ कौटिल्य भी हमारे प्रेरणा स्रोत है। प्रगतिशीलता भी भारत की विदेश नीति की विशेषता है। संक्षेप में हमारी विदेश नीति अंतराष्ट्रीय राजनीति के सिद्धान्त और व्यवहार का मिश्रण है।

भारत की विदेशी नीति परंपरागत निर्गुट नीति को त्यागे बगैर बहुगुटीय राजनीति और उससे आगे निकल चुका है। यही हमारी निरंतरता और परिस्थिति मूलक परिर्वतनशीलता का उदाहरण है। आज के शीतयुद्धोत्तर बहुध्रुवीय वैश्विक परिवेश में बहुगुटीय राजनीति एक यथार्थ हैं। सैनिक, आर्थिक और तकनीकी सहयोग के गुट ज्यादा है। इसी को स्वीकारते हुए आज भारत अनेक गुटों का सदस्य बन चुका है। इनमें पड़ोसी दक्षिणी एशियाई देश, एशिया महाद्वीपीय देश, हिन्द प्रशांत, यूरोप, अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया है। उदाहरण के तौर पर भारत 'पड़ोसी प्रथम' नीति के तहत पड़ोसी देशों के साथ सही, शांतिपूर्ण और सहयोग का सम्बन्ध रखता और रखने का प्रयास करता है। पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, नेपाल और भूटान जैसे पड़ोसी दक्षिण एशियाई देशो के साथ दक्षेस संगठन से भारत जुड़ा है। आपसी परस्पर छोटे-बडे विवादों के बावजूद हमारे सम्बन्ध ज्यादातर मधुर हैं। दक्षिण-पूर्व

 ISSN: 2321-0443

एशियाई देशों के साथ भारत आसियान के माध्यम से जुड़ा है और 'लुक ईस्ट तथा एक्ट ईस्ट' की नीति ने भी इसे नया बल प्रदान किया हैं। इस क्षेत्र के विकसित एशियन टाइगर के साथ संघाई कोऑपरेशन आर्गेनाईजेशन का भारत भी सदस्य हैं।

बंगाल की खाड़ी यानी वे ऑफ बंगाल में स्थित राष्ट्रों के साथ बहुआयामी आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग के लिए बिंसटेक का गठन है जिसके साथ भारत का शुरू से सम्बन्ध है। व्यापक क्षेत्रीय सहयोग के लिए संपूर्ण RCEP का भी भारत सदस्य हैं। दक्षिण चीन सागर के तनाव को कम करने और चीन के विस्तारवादी नीति के विरूद्ध गोलबंदी में भारत, अमेरिका, जापान तथा आस्ट्रेलिया के साथ मिलकर QUAD यानी चौराष्ट्र के मोर्चा में भी भारत शामिल है। हिन्द महासागर में शांति बनाये रखने के लिए हिन्द महासागर शांति IOZP की पुरानी पहल है। भारत इस क्षेत्र में शांति के लिए प्रतिबद्ध है। पांच देशों के आपसी सहयोग के लिए ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका, रूस, चीन और भारत ने मिलकर ब्रिक्स (BRICS) नामक संगठन बनाया है। इसके अलावा भारत विकसित देशों के समूह का भी सदस्य है जिनमे G-20 का नाम प्रमुख हैं। इन समूहों के अतिरिक्त भारत अफ्रीका के साथ एशिया को जोड़ने के लिए एशिया अफ्रीका ग्रोथ कॉरिडोर के गठन का प्रयास किया है और इसका सदस्य भी है। इन तमाम संगठनों के अलावा भारत दुनिया के सभी अथवा ज्यादातर देशों के साथ द्वि-पक्षीय सम्बन्ध भी बनाकर रखता है। लेकिन इन संगठनो के साथ जुड़ने का मतलब यह नहीं कि भारत ने निर्गुट या गुट निर्पेक्षता की नीति का पूर्णतया परित्याग कर दिया अथवा किसी गुट का सदस्य हो गया या तटस्थता छोड़ दिया। आज भी भारत एक स्वतंत्र-संप्रभु राष्ट्र है और एक निष्पक्ष-निरपेक्ष विदेश नीति का पालन करता है। बहुत सारे गुटों और समूहों से जुड़ना बदलती अन्तर्राष्ट्रीयपरिस्थिति के अनुसार आवश्यक है। यह राष्ट्र हित के लिए अत्यन्त जरूरी है। यही विदेश नीति का सनातन सिद्धान्त और व्यवहार है।

भारतीय विदेश नीति का ऐतिहासिक संदर्भ

राष्ट्रहित की पूर्ति विदेश नीति का सनातन लक्ष्य है। राष्ट्रहित की पूर्ति ही सफलता-असफलता का मापदण्ड मानी जाती है। लेकिन विदेश नीति शून्य से नहीं उपजती। देश का इतिहास, भूगोल, दर्शन एवं अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति का इस पर गहरा प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के तौर पर भारत आधुनिक काल में यूरोप की औपनिवेशिक और साम्राज्यवादी ताकतों का शिकार रहा। उपनिवेश, साम्राज्य और नव साम्राज्यवाद का विरोध भारत की विदेश नीति का अभिन्न अंग है। सभी प्रकार के शोषण का विरोध और खंडन भारत की विदेश नीति का मूल मंत्र है। हमारे इतिहास का हमारी विदेश नीति पर प्रभाव यहा स्पष्ट देखा जा सकता है। भौगोलिक स्थिति का भी हमारे या किसी भी देश की विदेश नीति सम्बन्धित राजनीति पर असर अकसर अवश्य पड़ता है। इसे भौगोलिक राजनीति के नाम से जाना जाता है। इस सिद्धान्त के प्रतिपादक मानते है कि देश की विदेश नीति के निर्धारण में उस देश की भौगोलिक स्थिति का भी प्रभाव पड़ता है। खुले समुद्र के किनारे और बडे भूभाग वाले देश ही ताकतवर राष्ट्र बनने का क्षमता रखते है। पड़ोसी देशों के आकार और भौगोलिक स्थिति भी विदेश नीति को तय करने में सहायक होता है। पड़ोसी राष्ट्र से विवाद सदा बना रहता है। भारतीय राजनीतिक चिन्तक कौटिल्य के अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के मंडल सिद्धांत के अनुसार पड़ोसी राष्ट्र स्थाई अरि यानि शत्रु होता

है। चीन-रूस, भारत-चीन, भारत-पाकिस्तान या फिर ब्रिटेन- फ्रांस के बीच ऐतिहासिक दुश्मनी कौटिल्य के सिद्धान्त की सच्चाई की पुष्टि करते हैं। पाकिस्तान और चीन द्वारा भारत की सीमा में अतिक्रमण, अनावश्यक आक्रमण, आतंक और घुसपैठ आजतक जारी है। अरि के अरि यानी शत्रु के शत्रु के साथ मित्रता की कड़ी ही कौटिल्य के मंडल चक्र का मूल मंत्र है जो आज भी पूर्णतः प्रासंगिक है। अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में साम, दाम, दंड और भेद जैसी भारतीय परम्परा के सन्दर्भ का विश्व के विद्वान आज भी कायल है और संभवतः रहेंगें।

वर्तमान काल में भू आर्थिक ने भू राजनीति का स्थान लेने का प्रयास किया है। आजकल आर्थिक ताकत को लोहा माना जाता है और यही कारण है कि जापान, सिंगापुर और दूसरे आर्थिक रूप से विकसित एशियाईदेशों को तवज्जो मिल रही है। इनके अतिरिक्त अति यथार्थवादी सामरिक शक्ति को ही अन्तर्राष्ट्रीयराजनीति का केन्द्रबिंदु माना जाता है। मानना यह है कि शस्त्र पर वैश्विक दबदबा बनता और बना रहता है। युद्ध और शांति, यही सामरिक ताकत तय करता है। अंततः शक्ति का संतुलन मतलब भय का सन्तुलन से शांति बनती है और कायम रहती है। भू कूटनीति भी विदेश नीति का नया आयाम है। शांति के समर्थक और आदर्शवादी इस सिद्धान्त को सिरे से नकार देते है। इन लोगों को कूटनीति और परस्पर बातचीत पर पूरा विश्वास है। लेकिन मेरा मानना है कि विदेश नीति एक गूढ़, गंभीर और पेचीदा विधा है। इसे एक परिधि में बांधना उचित नही है। यह तो उपरोक्त सभी सिद्धान्तों और व्यवहारों का सम्मिश्रण है। आदर्श, अर्थ, भौगोलिक स्थिति, शस्त्र और संवाद सभी को साथ-साथ मिलाकर ही एक कामयाब विदेश नीति शास्त्र की कल्पना सम्भव है। यही सही और सनातन है। भारत की विदेश नीति भी इसका अनूठा उदाहरण है और विश्व के लिए सामान्यतः अनुकरणीय भी।

भारत की विदेश नीति

भारत मूलतः एक शांति प्रिय देश है। अपनी विदेश नीति में विश्व में शांति और सद्भावना को प्राथमिकता प्रदान करता है। हमारे भारत के संविधान की धारा 51 संधि और पारस्परिक मित्रता पर बल देता है। संवाद, बात-चीत और कूटनीति को समस्या समाधान का जरिया मानता है। अंहिसा और अनाक्रमण पर बल देता है। सभी छोटे-बडे देशों की सम्प्रभुता को सम्मान करता है। उपनिवेशवाद, साम्राजवाद, नव साम्राज्यवाद, सैनिक तानाशाही और SEATO, NATO जैसे सैनिक गुटबंदी का विरोध करता है। शीत युद्धकालीन दो- ध्रुवीय दुनिया में इन गुटों से दूर रहकर अलग निर्गुट नीति का निर्माण कर अधिकतर विकासशील देशों को इससे जोड़ता है और जोडकर निर्गुट आन्दोलन की अगुआई करता है। सभी शांति प्रयासों और संगठनों जैसे संयुक्त राष्ट्र संगठन इत्यादि का समर्थन करता है। इतना ही नही सभी कठिनाइयों के बावजुद इन सिद्धांतो पर कमोवेश आजादी के सात दशक से अब तक इन्हीं सिद्धांतो पर कायम हैं।

लेकिन सभी जानते है की विश्व की राजनीति और विदेश नीति किसी एक देश के सिद्धान्त से नही चलती है। यह तो एक व्यवहारिक और परिस्थितिमूलक विधा हैं। इन परिस्थितियों में बदलाव के मुताबिक सभी देशों को सामंजस्य करना पड़ता है और तभी वो अपनी सीमा को सुरक्षित रख सकता हैं और अपने राष्ट्र हित को साध सकता है। उदाहरण के तौर पर भारत के लाख अनाक्रमण सिद्धान्त

के बावजूद पडोसी पाकिस्तान ने 1948, 1966, 1971 और 1999 इत्यादि में बेवजह भारत पर आक्रमण किया और भारत को इसका जवाब देना पड़ा। आज भी पाकिस्तान ने जम्मू-कश्मीर की जमीन पर कब्जा कर रखा है जो भारत की है। 1971 में भी भारत का हस्तक्षेप बंगाली-बहुल पूर्वी पाकिस्तान के लोगों द्वारा मदद मांगने के आग्रह पर हुआ था और स्वतंत्र बांग्लादेश बना था। लेकिन पाकिस्तान भारत को उसका दोषी मानकर आज भी आतंकवाद को न केवल बढ़ावा दे रहा है, बल्कि जम्मू-कश्मीर में प्रतिदिन तबाही मचा रहा हैं। पाकिस्तान जम्मू-कश्मीर में धारा 370 समाप्ति को लेकर लोगों को गुमराह कर रहा है और भारत के आंतरिक मामलों का अन्तर्राष्ट्रीयकरण कर रहा है। बालाकोट और पूंछ में सैनिकों पर छुप कर हमला कर रहा है और देश द्रोहियों की सहायता कर रहा है। संक्षेप में, पाकिस्तान आज आतंकियों का पनाहगार और अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर आतंकवाद का पर्याय बन गया है। भारत से खतरों के नाम पर पारम्परिक और आधुनिक आणविक और न्यूक्लियर हथियार और मिसाइल एकत्रि कर भारत को दुनिया में बदनाम कर दक्षिण एशिया मे शस्त्रीकरण को बढावा दे रहा है। दूसरा हमारे उत्तरी-पूर्वी सीमा पर बसा पड़ोसी देश चीन है जो आज विश्व की उभरती तीसरी आर्थिक और सामरिक शक्ति है। भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री विश्व राजनीति में शान्ति सहअस्तित्व के पुरोधा और पंचशील के प्रतिपादक पंडित जवाहर लाल नेहरू के हिन्दी चीनी भाई-भाई की लगातार पुकार के बावजूद 1962 में भारत पर अकारण आक्रमण कर हमारे 43000 स्कवायर किलोमीटर भूभाग पर कब्जा कर लिया जो अब तक है। लालच पर लगाम नहीं है। 2017 में डोकलाम में भी चीन बवाल मचा चुका है। चीन के बुहान शहर से निकली कोविड-19 की महामारी जब दुनिया में तबाही मचा रही थी और चीन दुनिया की नफरत के निशाने पर था उसी समय इसने भारत के पूर्वी लद्दाख में खिंची भारत-चीन सीमा की लकीर का अतिक्रमण किया। सैन्य अभ्यास के नाम पर भारत की सीमा में गलवान घाटी की फिंगर 8 से आगे चीनी सैनिक बढ़ गये। चीन की सेना पैंगोंग-त्सो झील तक पहुँच कर गश्त करने लगी। भारत और चीन की सीमा पर तनातनी बढ़ गयी। अनेकों बार दोनों देश के सैनिकों के बीच झडपें हुईं। दोनों देशों के आला सैनिक अधिकारियों के बीच वार्ता की गयी। सराकार के विदेश सचिव, विदेश मंत्री और राज्य मन्त्रियों में बात हुई और चल रही है। अब 2021 के फरवरी के बजट सत्र के दौरान रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह दावा कर रहे हैं कि नौ बार बात-चीत के बाद चीनी सैनिक पीछे लौट रही हैं। 10वें दौर में भी वार्तालाप के दौरान दोसांग, दैमचौक, गोगरा और हॉट-स्प्रिंग को लेकर गतिरोध जारी है। हमारे किसी भू-भाग पर चीन का कोई कब्जा नही है। पूरी सरकार और प्रधानमंत्री मोदी जी का भी यही मानना है। लेकिन विरोधी दल इस दलील और सरकार के इस दावे को नकार रही है। सच्चाई जो भी हो भारत-चीन के बीच विवाद और विवादग्रस्त मुद्दे हैं। सिक्किम में, उत्तराखंड में और अरूणाचल प्रदेश में चीन का दावा विवादास्पद विषय है। अरूणाचल से सटे क्षेत्र में गाँव बसाना, नेपाल और पाकिस्तान को भारत के विरोध में उकसाना तथा अक्साई चीन में एक बेल्ट, एक रोड इत्यादि रंजिश के मुद्दे हैं। चीन और पाकिस्तान के इसी भारत विरोधी रवैये और भूराजनीति और भू कूटनीति कारणों से राष्ट्रीय हित और सीमा सुरक्षा के लिए हथियार निर्माण, आयात और शस्त्रीकरण की नीति अपनानी पडी। विकास और हिफाजत के लिए ही आण्विक और नाभकीय परीक्षण भी किया गया। दुनिया की नाराजगी मोल लेनी पडी और आर्थिक प्रतिबन्ध भी झेलना पड़ा। यह परीक्षण चाहे इंदिरा जी के द्वारा हो या अटल जी के द्वारा लक्ष्य एक ही था। बोर्फोस हो या राफेल अथवा अर्जुन, लक्ष्य वही है

अपनी सीमा की रक्षा। अनाक्रमण आज भी भारत का अटल सिद्धान्त है। सरकार द्वारा स्पष्ट कर दिया गया है कि युद्ध और शस्त्र का भारत द्वारा पहल एवं प्रयोग कदाचित नही होगा। भारत तो परमाणु अप्रसार संधि और CTBT पर भी हस्ताक्षर करने को तैयार है बर्शते यह भेदभाव पूर्ण न हो और विश्व के नाभकीय हथियार सम्पन्न राष्ट्र इन हथियारों को नष्ट कर निःशस्त्रीकरण को तैयार हों। राजीव गाँधी जी और अटल जी ने तो विशेष प्रयास भी किया था। भारत पारंपरिक एवं नाभकीय नि:शस्त्रीकरण की वकालत करता है और नेहरू जी से नरेन्द्र मोदी जी तक इस पर कायम है। यदि ऐसा संभव नही है तो भारत क्या करे? भारत पश्चिम में नाभकीय शक्ति संपन्न शत्रु पाकिस्तान और उत्तर-पूर्व में सभी प्रकार के शस्त्रों से सुसज्जित चीन से घिरा है। दोनों भारत विरोधी हैं। वे एक साथ भारत की खिलाफत सीमा और अन्तर्राष्ट्रीय मंचो पर एक स्वर में करते हैं। भारत की सरकार तो सम्पूर्ण नि:शस्त्रीकरण, संपूर्ण शांति और विवादों को शांतिपूर्ण निपटारों में सदा से विश्वास करता आया है। सभी प्रकार के आक्रमण, हिंसा और आतंकवाद का विरोध करता है। भारत ने तो विश्व शांति के नाम पर राजीव गाँधी और आतंकवाद के नाम पर इंदिरा गाँधी को खोया भी है। इसके बावजूद हमारे प्रधानमंत्री माननीय मोदी जी दुनिया के सभी मंचो से निर्भीक होकर खुले तौर पर आतंकवाद और विस्तारवाद को समाप्त करने की पुरजोर और लगातार वकालत करते रहते है। भारत तभी तो नई विश्व व्यवस्था एवं संयुक्त राष्ट्र संघ और सुरक्षा परिषद के लोकतांत्रिकरण की मांग करता है। एक शांत समानतामूलक और समृद्ध विश्व भारत की कामना है और इसके प्रति सभी सरकरों की प्रतिबद्धता है और रहेगी। क्योंकि यह हमारे विदेश नीति के सिद्धान्त का अभिन्न अंग है।

भारतीय विदेश नीति की चुनौतियाँ

विदेश नीतिकारों का मानना है कि विदेश नीति निर्धारण एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। सर्वप्रथम तो इसका कोई सनातन सिद्धान्त नही है। यह सदा परिर्वतनशील है। दूसरा यह कि कोई देश स्वयं तय नही कर सकता क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय परस्थितियों के अनुसार इस नीति को ढालना पड़ता है। सबसे बड़ी चुनौती देश का आर्थिक विकास है। 200 वर्ष के ब्रिटिश शासन के दौरान भारत का भरपूर शोषण हुआ और हमारी हालत खराब हो गयी। आजादी के समय दुनिया दो राजनीतिक खेमे में बंट गयी और हमारे देश के विकास वास्ते दोनों का मदद जरूरी था। इसी को मद्देनजर में रखकर नेहरूजी ने नासीर और मार्शल टीटू से मिलकर निर्गुट नीति का निजात किया। अफ्रीका, ऐशिया, दक्षिणी अमेरिका के विकासशील देशों को इससे जोडा। जुड़ने से एक बडे निर्गुट आन्दोलन का जन्म हुआ। अब न तो शीत युद्ध है और न हीं है गुट और न ही है निर्गुट आन्दोलन की तब वाली प्रासंगिकता। लेकिन निर्गुट नीति लम्बे समय तक काम आयी। भारत के बुनियादी ढांचो और औद्योगिक विकास में दोनो यानी सोवियत यूनियन और अमेरिका ने सहायता की। भारत सैनिक संधियों से दूर रहा। हलांकि अमेरिका के प्रो पाकिस्तान रवैया के कारण सोवियत यूनियन के साथ हमारा सम्बन्ध ज्यादा मित्रवत और मधुर रहा। दोनों ताकतों से संतुलन और इनसे सदा सहायता लेते रहना एक बड़ी चुनौती रही। खेमों के खात्मा और सोवियत संघ के विघटन से निकले अनेकों देश से नया सम्बन्ध बनाना तथा एकध्रुवीय अमरीकी प्रभुत्व वाली विश्व राजनीति के अनुकूल विदेश नीति को ढालना नयी चुनौती बनी। इस समय पी0 वी0 नरसिम्हाराव ने देश की विदेश नीति को नया रूप दिया। इसे पश्चिमी पूंजीवादी राष्ट्रों खासकर

यूरोप अमेरिकन मुखी बनाया। सोवियत यूनियन से निकले नए नए देश और नया रूस के साथ रिश्ता स्थापित किया। एशिया खासकर पूर्वीएशियाई देशों के साथ नयी पूरब की ओर देखो बनायी जो आगे जाकर ज्यादा ऊर्जा और सक्रियता के साथ मोदी जी के प्रधानमंत्रित्त्व काल में अब एक्ट ईस्ट का रूप ले लिया है। पाकिस्तान और चीन, सोवियत संघ के हटने से भारत पर हावी होने लगे तो अटल जी ने 1998 में नाभकीय परीक्षण से दोनों शत्रु राष्ट्रों को अपनी ताकत का अहसास कराया। आर्थिक प्रतिबंध के आगे न झुक कर अमेरिका और अन्य पश्चिमी देशों को भारत को कमतर आंकने की गलतफ़हमी से दूर रहने का सन्देश दिया। कारगिल की लडाई में भारत ने टाइगर हिल से पाकिस्तानियों को खदेड़ कर सुरक्षा में सक्षम भारत का परचम लहराया। इन तमाम चुनौतियों का सामना किया गया। 2008 यानी इक्कीसवीं सदी में वैश्विक आर्थिक मंदी एक विकराल नयी समस्या बन कर सामने आया। इस समय डा0 मनमोहन सिंह प्रधानमंत्री थे। अपनी आर्थिक और राजनीतिक सूझ-बूझ से दुनिया में आपने भारत का लोहा मनवाया और भारत को इस मंदी से बाहर निकाला। तब की UPA सरकार के साथ अमेरिका ने नाभकीय संधि किया जिस पर एतराज के बाद भी मुहर लगी। यह संधि भारत-अमेरिकी संबंध के इतिहास में मील का पत्थर साबित हुई। कई आपसी आर्थिक-तकनीकी सहयोग पर सहमति बनी। वर्तमान प्रधानमंत्री माननीय मोदी जी ने इसे आगे बढ़ाया। बात "हाउ डी मोदी" और "नमस्ते ट्रम्प" तक पहुँच गयी। मोदी जी ने "गुजराल डॉक्ट्रिन" को बढ़ाकर विश्व स्तर पर "मोदी सिद्धांत" के तहत दुनिया के देशों का दौरा कर राष्ट्र हित को यथासम्भव साधने का प्रयास किया। पाकिस्तान पोषित आतंकवाद और चीन के विस्तारवाद के विरूद्ध वैश्विक सहमति बनायी। दक्षिण चीन सागर में चीन का घेराबंदी किया और हिन्द महासागर को तनाव रहित क्षेत्र बनाए रखने में योगदान दिया। नए-नए आर्थिक संगठनों की सदस्यता लेकर आर्थिक हितों की पूर्ति और विदेशी निवेश लाने की कोशिश की। सर्जिकल स्ट्राइक कर पाकिस्तान को सबक सिखाया और चीन को भी गलवान घाटी एंव पौंगोंग-देप्सांग के अतिक्रमित एरिया से चीन का ओरिजिनल वास्तविक सीमा रेखा पर वापस लौटने पर भारत सरकार मजबूर कर रही है। हालांकि यह अभी भी राजनीतिक विवाद का विषय है। नए अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन से भी भारत अच्छा सम्बंध बनाने का प्रयास कर रहा है। बाइडन भी भारत की अहमियत समझ रहें हैं और ट्रम्प सिन्ड्रोम से बाहर आकर हिन्दुस्तान से परस्पर हित में मित्रता का हाथ बढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। बाइडन प्रशासन द्वारा वीजाकानून में दिया गया राहत उनकी नियत का प्रमाण है। यह भारत सरकार और अमेरिकी राष्ट्रपति जो बाइडन के बीच अच्छे सम्बंध के आसार का शुभ संकेत है।

निष्कर्ष

आजादी से अब तक भारत की विदेश नीति के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि हमारी जितनी भी सरकारें आईं और जो भी प्रधानमंत्री रहे, सभी ने समयानुकूल सही विदेश नीति का संचालन किया। दुनिया के देशों से हमारे सम्बंध अच्छे रहे। नेहरू से नरेंन्द्र तक निर्गुटता से बहुगुटता तक शीत युद्ध से इसके समाप्ति तक और वर्तमान वैश्वीकृत विश्व तक हमारी विदेश नीति सफल रही हैं। कूटनीति कामयाब रही है। गत्यात्मकता बरकरार रही है। तभी भारत दुनिया का शक्तिशाली समझदार और सक्षम देश के रूप में स्थापित हुआ है। नेहरू युगीन स्वेज के राजनीतिक संकट से मोदी युगीन कोविड-19

महामारी संकट तक भारत ने समाधान दिया है। आज भी टीका ब्राजील और अन्य सभी इच्छुक देशों को दी जा रही है। कुछ चुनौतियां भी हैं जिन पर विदेश मंत्रालय और सरकार को कार्य करने की जरूरत है। चीन द्वारा कब्जायी गयी जमीन की नावापसी और पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर हमारी असफलता का ज्वलन्त उदाहरण हैं। दोषारोपण और आरोप-प्रत्यारोप पर्याप्त नहीं हैं। भारत के सटे सीमावर्ती देशों से अवैध-अविराम घुसपैठ पर रोक भी अपेक्षित है। प्रवासी भारतीयों को आकर्षित करने और विदेश में भारतीय निवेश बढ़ाने के क्षेत्र में भी जोर लगाने की जरूरत है। सुधार की जरूरत तो हमेशा रहती हैं और रहेगी। लेकिन अभी तक की उपलब्धि के आधार पर निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि भारत की विदेश नीति दुनिया की श्रेष्ठ विदेश नीतियों में से एक है।

संदर्भः-

1. अप्पादुराई, ए (1989): रूट्स ऑफ इन्डियाज फॉरेन पालिसी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली।

2. कपूर, एस, पॉल (2003): नाभकीय प्रोलिफेरएशन, द कारगिल, कन्फिलिक्ट एंड दक्षिण एशियाई सिक्यूरिटी, सिक्यूरिटी स्टडीज (13.1) दिल्ली।

3. कुमार रमेश (2020): इंडियाज एक्ट ईस्ट पॉलिसीः इन रिट्रोस्पेक्ट एंड प्रोस्पेक्ट सुधीर सिंह द्वारा सम्पादित लुक ईस्ट टू एक्ट ईस्टः ट्रांस्फोर्मिंग इंडिया-एशियान रिलेशन इन मोदी एरा नामक पुस्तक में, पेंटागन प्रेस, दिल्ली।

4. थरूर शशि (2015): इंडिया शास्त्र, अलेप्फ बुक कंपनी, दिल्ली, पृष्ठ 407-8

5. दत, वेद प्रकाश (1984): इंडियाज फारेन पालिसी, विकास पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

6. दीक्षित, जे0 ऐन0 (2001): इंडियाज फारेन पालिसी एंड इट्स नेबरस, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

7. पंत, हर्ष (2019): इंडियन फॉरेन पॉलिसी, हर आन्नद पब्लिकेशन, दिल्ली।

8. नरसिम्हाराव, पि, वी, (2004): द पोस्ट-कोल्ड वार वर्ल्ड, द हिन्दू, 22 मार्च, दिल्ली।

9. रस्तोगी, दीपक (2021): दैमचौक-देपसांग के सवाल कितने अहम, जनसप्ता 23 फरवरी दिल्ली।

10. वार्षिक प्रतिवेदन (2018 -19): विदेश मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ठ 40

11. शंकर, एस (2020): द इंडिया वेः स्टेटेजी फॉर अनसरटेन वर्ल्ड, हार्पर कॉलिन्स, दिल्ली।

12. हॉल, इयान (2019): मोदी द रिइन्वेंशन ऑफ इंडियाज फॉरन पोलिसी, ब्रिस्टल यूनिवर्सिटी प्रैस, ब्रिस्टल।

अध्याय 04

भारतीय विदेश नीति: उपलब्धियां एवं चुनौतियां

डॉ. प्रमोद कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
एल. एन. एम. एस. कॉलेज,
बीरपुर सुपौल

भारत अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिए गुटनिरपेक्षता, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय हितों में तालमेल पर आधारित एक स्वतंत्र विदेश नीति का निर्माण एवं संचालन शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के पथ पर चलता रहा है। नेहरू जी की गुटनिरपेक्षता की नीति के कारण ही भारतीय विदेश नीति को गुटनिरपेक्षता की नीति माना जाता रहा है। गुटनिरपेक्षता ने ही भारत को अंतर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा दिलाई।[2] गुटनिरपेक्षता की नीति के रूप में भारत की विदेश नीति कई उतार-चढ़ाव के दौर से गुजरी है। अन्य देशों की विदेश नीतियों की तरह भारत की विदेश नीति भी राष्ट्रीय हितों की रक्षा करने तथा आर्थिक विकास के प्रयासों में कहीं सफल तो कहीं असफल रही है। गुटनिरपेक्षता को अपनाने का यही कारण था कि भारत विश्व राजनीति में शीत युद्ध में शामिल हुए बिना तथा अपने राष्ट्रीय हितों को दांव पर लगाए बिना, सक्रिय भूमिका निभाना चाहता था। भारत ने विश्व शांति एंव सुरक्षा साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद तथा नस्लवाद की समाप्ति, एशियाई तथा अफ्रीकी राष्ट्रों की मुक्ति एंव संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रति अपने अंतर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व को बखूबी समझा एंव अपने विदेशी नीति में शामिल किया।[3]

भारत की विदेश नीति कभी भी चीन की महत्त्वाकांक्षा तथा कूटनीतिक चालों को नहीं समझ सकी और भारत की सैकड़ों मीलभूमि चीन के कब्जे में चली गई। कश्मीर समस्या इसी का परिणाम है। विदेश नीति विश्लेषकों का मानना है कि नेहरू जी ने भारत की सुरक्षा के प्रति उदासीनता दिखाई और यथार्थवादिता की बजाय आदर्शवाद पर ही विदेश नीति को प्रतिष्ठित किया।[4] इसकी एक सकारात्मक विशेषता यह रही कि भारत किसी महाशक्ति का अनुसरण करने वाला देश नहीं बना और भारत ने स्वतंत्र विदेश नीति का संचालन करते हुए अपने आर्थिक विकास का मार्ग चुना।

विदेश नीति के संचालन में लाल बहादुर शास्त्री ने आदर्श और यथार्थ का सुंदर समन्वय किया। उन्होंने पाकिस्तान, इंडोनेशिया तथा चीन की भारत विरोधी गुटबंदी को ध्यान में रखकर ही विदेश नीति एवं रक्षा नीति का निर्धारण किया। उन्होंने राष्ट्रीय सुरक्षा को विशेष महत्त्व देकर भारतीय विदेश नीति को यथार्थवादी बना दिया। उन्होंने महाशक्तियों के साथ संबंध सुधारने तथा गुटनिरपेक्षता की बजाय दक्षिण एशिया के अन्य पड़ोसी देशों के साथ संबंधों पर बल दिया। उन्होंने 1965 में भारत-पाक युद्ध में रक्षा विभाग व सेना को स्वतंत्र नीति निर्धारण का अधिकार देकर विजयश्री को संभव बनाया। इस युद्ध में

पाकिस्तान पर भारत की विजय ने भारतीय विदेश नीति का अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय सम्मान वापस दिलाया।[5]

श्रीमती इंदिरा गांधी ने भी गुटनिरपेक्षता को अपनाने की अपनी प्रतिबद्धता को दोहराया। उन्होंने विदेश नीति को मजबूत करने एवं कूटनीति को विदेश नीति में प्रयोग करने जैसे व्यवहारिक कदम उठाए। इंदिरा गांधी ने बांग्लादेश के मुक्ति आंदोलन, बांग्लादेश की मान्यता, अमरीका के प्रति दृढ़ता, सोवियत संघ के साथ सम्मानजनक संबंधों से अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा की। 1971 ईस्वी में भारत ने सोवियत संघ के साथ शांति, मित्रता तथा सहयोग की संधि कर ली।[6] उन्होंने शिमला समझौते द्वारा भारतीय विदेश नीति की आदर्शवादिता को भी बरकरार रखा। उन्होंने कंबोडिया तथा वियतनाम के मुक्ति आंदोलनों का भी पूरा समर्थन किया। सोवियत संघ के साथ शांति और मित्रता की संधि के अनुच्छेद-8 में सैनिक संधि की अवधारणा का भी खंडन किया तथा इस रूप में इस संध ने किसी भी प्रकार से भारतीय गुट निरपेक्षता को सीमित नहीं किया तथा न ही किसी प्रकार से भारत का सोवियत संघ के साथ कोई गठबंधन हुआ।

जनता पार्टी की सरकार ने भी भारतीय विदेश नीति के मूल सिद्धांतों का ही पालन किया और उनमें कोई बदलाव नहीं किया। साथ ही दोनों शक्ति गुटों तथा पड़ोसी देशों के साथ मधुर संबंध स्थापित करने पर विशेष बल दिया। नेपाल, बांग्लादेश और पाकिस्तान के साथ भी मधुर संबंध स्थापित करने के प्रयास किए गए। इस अल्पकाल में ही भारत की विदेश नीति काफी सफल रही। आठवें दशक के मध्य में भारत की गुट निरपेक्षता अत्यधिक परिपक्व तथा संतुलित हो गई। इंदिरा गांधी के द्वितीय कार्यकाल के दौरान भारत स्वतंत्र विदेश नीति का पालन करता रहा तथा इसने महाशक्तियों एंव अन्य देशों द्वारा दिखाए मार्ग पर चलने से इंकार कर दिया। श्रीमती इन्दिरा गांधी की सरकार ने दक्षिण-दक्षिण सहयोग को बढ़ावा देने तथा गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के बीच संबंध तथा सहयोग बढ़ाने के कार्य हाथ में लिए।

राजीव गांधी की सरकार ने दक्षिण एशिया में भारत का वर्चस्व स्थापित करने पर अधिक जोर दिया। उन्होंने मालदीव में सैनिक क्रांति को विफल करने तथा श्रीलंका के जातीय संघर्ष को दबाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने दक्षिण अफ्रीकी सरकार के विरुद्ध आर्थिक प्रतिबंधों को लागू करने की मांग की और नेल्सनमंडेला को जेल से रिहा करने की पुरजोर अपील की। सार्क के निर्माण में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। भारत द्वारा गुटनिरपेक्ष आंदोलन, नि:शस्त्रीकरण तथा नस्ल विरोधी उठाए गए कदम बहुत महत्वपूर्ण माने गए।[9] राजीव गांधी ने दक्षिण अफ्रीकी सरकार की रंगभेद की नीति का पुरजोर विरोध किया और नामीबिया की स्वतंत्रता और नेल्सनमंडेला की जेल से रिहाई में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी।

परिवर्तित परिस्थिति में भारत में आर्थिक उदारीकरण करने के लिए विदेश नीति में कुछ परिवर्तन किए गये। इस दौरान भारत ने खुली अर्थव्यवस्था एवं बाजार मूल्य प्रणाली को भारतीय विदेश नीति में स्थान दिया। विदेश मंत्री इंद्र कुमार गुजराल के गुजराल सिद्धांत का प्रतिपादन करके अपने पड़ोसी राष्ट्रों के साथ भी बेहतर संबंधों को प्रमुखता दी। भारत ने रूस, चीन, श्रीलंका, इजराइल, ब्रिटेन आदि

देशों के साथ मधुर संबंध स्थापित करने के प्रयास किए। वाजपेयी सरकार ने सभी पड़ोसी देशों के साथ सौहार्दपूर्ण संबंधों को प्राथमिकता दी।[10] इसी समय पांच परमाणु परीक्षण किए गए, जिसकी विश्व समुदाय ने निंदा की। परंतु भारत ने बिना किसी दबाव के अपनी स्वतंत्र विदेश नीति का संचालन किया। भारत ने पाकिस्तान के साथ समसामयिक आधार पर संबंध स्थापित करने की पहल की और लाहौर घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किए। इसके तहत दोनों देशों ने पर्यटन और व्यापार को बढ़ावा दिया तथा दोनों देशों के बीच रेल, बस तथा हवाई सेवाएं प्रारंभ की गई। पाकिस्तान ने 1999 में कारगिल क्षेत्र में घुसपैठ करके भारत के शांति प्रयासों को चुनौती दी। इस घुसपैठ का मुंहतोड़ जवाब देकर भारत ने अपना राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय सम्मान बरकरार रखा। मई 2004 में भारत में संगठित यूपीए सरकार ने गुटनिरपेक्षता की नीति का समर्थन किया और प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह के नेतृत्व में विदेश नीति के क्षेत्र में कई सफलताएं हासिल की हैं।[11]

वर्तमान नरेंद्र मोदी की सरकार की विदेश नीति के अंतर्गत वैश्विक शक्तियों के साथ आगे बढ़ने और अपने राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित करते हुए भारत की सामरिक स्वायत्तता को बनाए रखना है। वर्तमान सरकार द्वारा राष्ट्रीय हितों को बढ़ावा देने के लिए सभी देशों से परस्पर संवाद के माध्यम से विदेश नीति को पुन:परिभाषित किया गया है। भारतीय विदेश नीति दूसरे देशों से केवल रक्षा उत्पादों की खरीद तक सीमित नहीं है बल्कि तकनीकी ज्ञान के क्षेत्र में भारत विकसित देशों के साथ प्रयत्नशील है।भारतीय विदेश नीति 'पड़ोसी प्रथम' और 'एक्टईस्ट' नीति के साथ आगे बढ़ रही है।[12] मॉरीशस और सेशेल्स देशों की यात्रा और हिंद महासागर रिम एसोसिएशन के साथ संबंध बनाने के अलावा भारत सरकार ने हिंद महासागर क्षेत्र में एक मजबूत नींव बनाई है। भारत की विदेश नीति में आए बदलाव से भारत और जापान के बीच संबंध गहरे हुए हैं और यह संबंध सामरिक एवं वैश्विक साझेदारी तक पहुंच गए हैं। भारत और जापान के बीच निर्बाध समन्वय, अवसंरचना सहयोग, परमाणु ऊर्जा और तकनीकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति सरकार की विदेश नीति की उपलब्धियों को रेखांकित करते हैं।[13]

भारतीय विदेश नीति की उपलब्धियां:

भारतीय विदेश नीति की उपलब्धियों में राष्ट्रीय सुरक्षा की मजबूती महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय सुरक्षा के संदर्भ में भारतीय विदेश नीति आदर्शवाद से यथार्थवाद की नीति की ओर अग्रसर हुई है। हिंद महासागर क्षेत्र में भारत की केंद्रीय तथा सामरिक स्थिति है। इसके राष्ट्रहित अनिवार्य रूप से हिंद महासागर के साथ जुड़े हुए हैं। भारत के विदेशी तथा तटीय व्यापार का एक बड़ा भाग हिंद महासागर की स्वतंत्रता पर निर्भर है। हिंद महासागर को शांति का क्षेत्र बनाने हेतु, महाशक्तियों के आपसी विरोध तथा शीत युद्ध से मुक्त रखने का भारतीय विदेश नीति का लक्ष्य इसी सोच पर आधारित रहा है। भारत ने अपनी सैन्य क्षमता बढ़ाने के लिए विदेशों से अत्याधुनिक हथियार खरीदे और सैन्य तकनीक का भी आदान प्रदान किया। बदलते हुए विश्व परिदृश्य में भारत ने अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा को मजबूती प्रदान की है।[14]

गुटनिरपेक्षता की नीति को दूसरी महत्वपूर्ण उपलब्धि माना जा सकता है, जो स्वतंत्र विदेश नीति के निर्धारण एवं कार्यान्वयन पर बल देती है।यह नवोदित राष्ट्रों की समस्याओं को अंतर्राष्ट्रीय मंच प्रदान

करता है। गुटनिरपेक्षता की नीति को एक आंदोलन में बदलकर भारत ने रंगभेद, नस्लवाद, उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के विरुद्ध आवाज उठाई। जिससे भारत की प्रतिष्ठा एशिया व अफ्रीका के देशों में बढ़ी। इस आंदोलन के मंच पर से ही एशियाई-अफ्रीकी एकता का जन्म हुआ। दक्षिण-दक्षिण सहयोग की प्रक्रिया में भी भारत गुटनिरपेक्ष देशों का सहयोग प्राप्त करने में सफल रहा है।[15]

भारतीय विदेश नीति विश्व शांति व सुरक्षा की प्रबल पक्षधर रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ के अंदर और बाहर विश्व शांति के लिए किए गए प्रयासों में भारत ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। नि:शस्त्रीकरण और शस्त्रों की होड़ रोकने के लिए उन सभी प्रयासों का समर्थन किया है, जो सार्वभौमिक और न्यायपूर्ण है। इसके अतिरिक्त भारत ने अंतर्राष्ट्रीय विवादों का शांतिपूर्ण समाधान करवाने में भी अहम भूमिका निभाई। कोरिया विवाद, स्वेज नहर संकट और खाड़ी संकट को हल कराने में भी भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ में जो प्रयास किये वे भी विश्व शांति की दिशा में महत्त्वपूर्ण कदम है। भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ शांतिपूर्ण सह अस्तित्व पर आधारित संबंधों को सर्वोच्चता प्रदान करता है।[16]

भारत को संयुक्त राष्ट्र संघ का संस्थापक सदस्य होने के नाते इसके आदर्शों एवं सिद्धांतों में पूर्ण विश्वास रखता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ तथा अन्य अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों के कार्यों तथा कार्यकर्मों में सक्रिय रूप से भाग लेना भारतीय विदेश नीति का मुख्य सिद्धांत रहा है।संयुक्त राष्ट्र संघ की विचारधारा इसका बहुमूल्य निवेश है। भारत ने इस संगठन के माध्यम से हिंद महासागर को शांति का क्षेत्र घोषित करवाने, नई अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की मांग उठाने तथा नवोदित राष्ट्र को स्वतंत्रता दिलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सामूहिक सुरक्षा, नि:शस्त्रीकरण तथा विश्व शांति के लिए किए गए प्रयासों में भी भारत ने विशेष भूमिका निभाई। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा आतंकवाद की समस्या, पर्यावरण संतुलन, पृथ्वी की सुरक्षा, ओजोन परत की सुरक्षा आदि के संदर्भ में चलाए जा रहे अभियान में भारत पूरा सहयोग दे रहा है।[17]

आर्थिक विकास की लक्ष्य प्राप्ति में भी भारतीय विदेश नीति की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। भारत ने दूसरे देशों से प्राप्त आर्थिक मदद को गरीबी, भुखमरी, बीमारी, बेरोजगारी आदि समस्याओं का समाधान करने के लिए किया है। साथ ही साथ विदेशों से मिलने वाली आर्थिक सहायता का उपयोग देश के औद्योगिक तथा संस्थागत ढांचे का विकास करने में किया है। भारत ने आर्थिक सुधारों को अपनाकर अपनी खराब अर्थव्यवस्था को पटरी पर ला दिया। आज भारत में विदेशी कंपनियां पूंजी निवेश को बढ़ावा दे रही है जो भारत के आर्थिक विकास में सहायक होगा।

भारत द्वारा नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना के दिशा में किए गए प्रयासों ने तृतीय विश्व के देशों अथवा नवोदित राष्ट्रों का मन मोह लिया है। भारत द्वारा इस संबंध में किए गए प्रयासों ने भारतीय की विदेश नीति को अंतर्राष्ट्रीय जगत में प्रतिष्ठा प्रदान की है। भारत द्वारा जी-77, जी-15, गैट, दक्षिण-दक्षिण सहयोग, सार्क तथा आसियान में निभाई गई भूमिका महत्वपूर्ण रही है।[18] भारत द्वारा परमाणु-नि:शस्त्रीकरण तथा संयुक्त राष्ट्र के लोकतांत्रिकरण की मांग उठाए जाने से भी भारतीय विदेश नीति को सम्मान प्राप्त हुआ है।

चुनौतियां:

भारतीय विदेश नीति के समक्ष अनेक ऐसी चुनौतियां हैं, जिसका सामना भारत करता रहा है। सामरिक दृष्टि से संपन्न किए गए परमाणु प्रक्षेपास्त्रव तकनीक हस्तांतरण से संबंधित सभी समझौते भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा बनकर उभरे हैं। विकसित राष्ट्र द्वारा परमाणु अप्रसार से संबंधित नीति भी भारत के राष्ट्रीय हित के विपरीत ही है। चीन ने भारत के पड़ोसी देशों को भारत के विरुद्ध उकसाया है ताकि भारत की विदेश नीति को अपने प्रभाव में रखा जा सके।

आतंकवाद की समस्या भारतीय विदेश नीति के समक्ष सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। भारत प्रारंभ से ही अपने पड़ोसी राष्ट्रों के साथ मित्रतापूर्ण व्यवहार करता रहा है तथा उसकी नीति 'पड़ोसी प्रथम' की रही है। बावजूद इसके भारत के पड़ोसी देश पाकिस्तान द्वारा अपनी भूमि का उपयोग आतंकवादी गतिविधियों के लिए किया जाता रहा है। आतंकी समूहों को प्रोत्साहित करने में भी पाकिस्तान की भूमिका रही है। हाल ही में ऊरी तथा पुलवामा में किया गया आतंकी हमला इसका ज्वलंत उदाहरण है।[19]

नीति निर्माता अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पाकिस्तान का पर्दाफाश करना चाहते हैं और उसे अलग थलग करना चाहते हैं, लेकिन यह पाकिस्तान को उसके कुत्सित इरादों से तथा भारत विरोधी हमलों एवं गतिविधियों में लिप्त रहने से रोकने के लिए काफी नहीं रहा है; उल्टे पाकिस्तान ने विशेष रुप से तालिबान से घिरे अफगानिस्तान के संदर्भ में रणनीतिक रूप से अपनी बेहतर स्थिति का पहले अमेरिका तथा पश्चिम, और अब रूस से लाभ उठाया है।

चीन हर मुश्किल में पाकिस्तान का दोस्त बना रहा है तथा वैश्विक चिंताओं को नजरअंदाज कर हर परिस्थिति में पाकिस्तान का साथ निभाता रहा है। हमारे अन्य पड़ोसी भी अक्सर क्षेत्रीय ताकतों, विशेषकर चीन से अधिक से अधिक लाभ लेने के लिए दांव खेलते रहते हैं। उनके राष्ट्रीय हितों के लिहाज से देखा जाए तो यह कूटनीति समझ में आती है लेकिन इनके कारण हमारी सुरक्षा तथा राष्ट्रीय हितों से समझौता हो जाता है।

निष्कर्ष: -

भारत की विदेश नीति सभी से मित्रता का प्रतीक है। यहकिसी भी प्रकार के भौगोलिक या विचारधारा संबंधी मतभेदों के होते हुए भी सभी दोस्तों के साथ प्रभुसत्तात्मक मित्रता के लिए कार्य करने के सिद्धांत में विश्वास रखता है। भारत दोनों ही महाशक्तियों का मित्र रहा तथा इसने सभी साम्यवादी तथा गैर साम्यवादी देशों से मित्रता की। भारत दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा देश है। औद्योगिक तथा प्रौद्योगिकी क्षेत्र में उन्नति के कारण भारत बड़ी शक्ति बनने की सामर्थ्य रखता है। वर्तमान विश्व में संबंधों के आयामों को आर्थिक आधार पर तौला जा रहा है। इसलिए भारत को भी अपने आर्थिक हित के हिसाब से ही विदेश नीति को आगे बढ़ाना चाहिए। पड़ोसी देशों के साथ संबंधों को मजबूत और विश्वसनीय स्थिति में ले जाने का प्रयास करना चाहिए। वर्तमान में अमेरिका-चीन, इजराइल-फिलिस्तीन, अमेरिका-रूस के बीच मनमुटाव है। इनके बीच न सिर्फ राजनीतिक बल्कि आर्थिक गतिरोध बढ़ गए हैं। ऐसे में भारत को कोई भी कदम सोच समझकर उठाना चाहिए क्योंकि इन सभी देशों के साथ उसके आर्थिक

हित जुड़े हुए हैं। रूसहमारा पारंपरिक मित्र रहा है इसलिए अमेरिका से मजबूत रिश्ते के बावजूद उससे बेहतर संबंध आवश्यक है।

सन्दर्भसूची:-

1. वी.एन. खन्ना एवं लिपाक्षी अरोड़ा, भारत की विदेश नीति, विकासपब्लिशिंगहाउस, प्रा.लि. ,पृष्ठ- 20
2. जे.एन. दीक्षित, भारतीय विदेश नीति, प्रभात प्रकाशन, 2017, पृष्ठ- 33
3. वी.एन. खन्ना, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा.लि., पृष्ठ- 440
4. जे.एन.दीक्षित, भारतीय विदेश नीति, पृष्ठ- 48
5. यू. आर. घई, भारतीय विदेशनीति, न्यू एकेडमिक पब्लिशिंग हाउस,पृष्ठ- 270
6. ArunMohanty, Toasting Legacy of Indo-Soviet Freindship Treaty, Russia and India Report, August 09, 2011
7. वेददानसुधीर, भारत की विदेशनीति: बदलते संदर्भ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ- 188
8. शीला ओझा, भारतीय विदेशनीति का मूल्यांकन: 1970-1980, प्रिन्टेवेला, 1992
9. काशी प्रसाद मिश्र, भारतीय विदेशनीति, मैकमिलन प्रकाशन, पृष्ठ- 166
10. रहीस सिंह, वैश्विक संबंध, पियरसन, पृष्ठ- 144
11. State by Prime Minister at XIV Summit of Non-Alligned Movement
12. Highlights of Prime Minister Narendra Modi's Visit to India-Japan Annual Summit, 28-29 Oct, 2018
13. Highlights of Prime Minister Narendra Modi's Visit to India-Japan Annual Summit, 28-29 Oct, 2018
14. http://www.saarc-sec.org
15. South-South Cooperation Defies the North/Global Envasion, 18 Jan, 2014
16. Opening Statement by Prime Minister at 11th ASEAN-INDIA Summit in Brunei
17. Introduction to India's Foreign Policy, Embassy of India, 12 Nov, 2011
18. India and the World- http://www.indianembassy.org
19. India Blames Pakistan for Attack in Kashmir, Promising a Response, New York Times, 15 Feb, 2019

अध्याय 05

भारत की विदेश नीति में सांस्कृतिक सम्बन्धों का महत्त्व

डॉ. उमेश कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर
इतिहास विभाग
स्वामी श्रद्धानंद कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

वसुधैव कुटम्बकम्' की भावना को जन्म देने वाला विश्व का एक मात्र देश भारत है। जिसकी संस्कृति का मूल आधार मानवीय मूल्य है। अपने मूल्यों और सांस्कृतिक विचारों के आधार पर ही भारत प्राचीन काल से ही विश्व के आकर्षण का केन्द्र रहा है। प्राचीन काल में आने वाले यात्री जिज्ञासु विद्वानों ने भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों और परम्पराओं को विश्व के विभिन्न देशों में पहुँचाया। फलतः विभिन्न देशों के शासकों और यात्रियों ने ज्ञान धन की लालसा में भारत से संबंध स्थापित किया। निश्चय ही भारतीय संस्कृति और मूल्यों के महत्त्व को देखकर विश्व नतमस्तक हो गया और भारत प्राचीनकाल में विश्व गुरु की पदवी से विभूषित हो गया। भारत और विश्व के साथ सम्बन्धों की दृष्टि से बात करें तो भारत ने हमेशा सम्बन्धों में आध्यात्मिकता और मानवीय मूल्यों को विशेष महत्त्व दिया है। यही कारण है कि भारत ने कभी भी किसी भी देश पर आक्रमण नहीं किया । न ही स्वार्थवश किसी देश से सम्बन्ध स्थापित किया। प्राचीन काल से ही भारत की विदेश नीति दोहन की बजाय परस्पर निर्भरता की थी। अतः उसमें एक दूसरे के शोषण का अभाव था। चूंकि भारत की विदेश नीति प्रेम भाई-चारे, परस्पर सहभागिता पर निर्भर रही है। यही कारण है कि भारत का अपने पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्ध केवल कूटनीति एवं आवश्यकता की पूर्ति पर निर्भर नहीं है बल्कि राजनीति से एक कदम आगे बढ़ कर सांस्कृतिक सम्बन्धों पर निर्भर है। जिसका परिणाम है कि भारत का अपने पड़ोसी देशों के साथ विदेश नीति प्रगाढ़ प्रेम सम्बन्धों पर आधारित है।

नेपाल

भारत और नेपाल के संबंध कूटनीति से ज्यादा सांस्कृतिक सम्बन्ध है। हमारे पौराणिक कथाओं के अनुसार माता सीता का मायका नेपाल में मौजूद है । हाल-फिलहाल हमारे प्रधानमंत्री आदरणीय नरेन्द्र मोदी जी ने नेपाल का दौरा किया। ऐसा पहली बार हुआ कि नेपाल ने भारत के प्रधानमंत्री का स्वागत और सम्मान एक प्रधानमंत्री से कहीं अधिक भगवान राम के सगे सम्बन्धी के तौर पर किया। यह भारत और नेपाल की विदेश नीति के इतिहास में बेमिशाल उदाहरण है। जहाँ एक देश का दूसरे देश से सम्बन्ध राजनीतिक स्वार्थों के आधार पर नहीं बल्कि सांस्कृतिक सम्बन्धों के आधार पर स्थापित करता है। अतः भरत और नेपाल की विदेश नीति राजनीतिक और व्यापारिक सम्बन्धों से अधिक सांस्कृतिक सम्बन्धों से जुड़ती है। इसीलिए भारत और नेपाल का नागरिक एक स्तर पर एक-दूसरे से जुड़ाव महसूस

करते हैं। ऐसी अनेक तथ्य हैं जिनका उल्लेख किया जा सकता है। अगर कुछ बातों को छोड़ दे तो भारत और नेपाल सांस्कृतिक धरातल पर एक-दूसरे के समानान्तर खड़े हैं।

श्रीलंका

श्रीलंका भारत का सबसे प्रिय देश रहा है अपने नाम के अनुरूप श्री और लंका दोनों शब्द ऐसा प्रतीत होता है कि भारत की ही देन है। भारतीय संस्कृति में अपने से बड़ों के सम्बोधन में 'श्री' लगाने की परंपरा रही है। यह भाव ही भारत को श्रीलंका से जोड़ता है। यह जुड़ाव राजनीति से कहीं अधिक धार्मिक है। प्राचीन काल में बौद्ध धर्म भारत से श्रीलंका पहुँचा और श्रीलंका ने भारत भूमि से आई इस आध्यात्मिक भावना को सहर्ष स्वीकार किया। जिसका प्रतिफल यह रहा कि श्रीलंका की भूमि भारत के लिए हमेशा हमेशा के लिए पूजनीय हो गई। सांस्कृतिक सम्बन्धों पर विकसित यह विदेश नीति न केवल धर्म के आदान-प्रदान तक सीमित रही बल्कि भारत के आराध्य भगवान श्री राम की कर्मस्थली का भी केन्द्र रही है। माता सीता को रावण के बन्धन से मुक्त कराने के लिए प्रभु राम द्वारा समुद्र पर निर्मित पुल एक पुरातात्विक उदाहरण है जो भारत और श्रीलंका के सम्बन्धों को प्रभावित करती है। भगवान राम के समय से ही भारत और श्रीलंका आपस में सांस्कृतिक आदान-प्रदान करते रहे हैं।

अतः राजनीति पर आधारित विदेश नीति स्वार्थ पूर्ति के बाद टूट सकती है, लेकिन सांस्कृतिक सम्बन्धों पर आधारित विदेश नीति प्रगाण होती है। जिसको हम वर्तमान दौर में भी देख सकते हैं।

भूटान

भारत का पड़ोसी देश भूटान हिमालय की गोद में प्राकृतिक छटा के बीच में विद्यमान है। प्रकृति की तरह सहज और सरल जीवन शैली और आध्यात्मिक भावन से ओत-प्रोत भूटान भारत से सहज रूप से ही जुड़ जाता है। यहाँ के सांस्कृतिक धरोहरों पर भारतीय संस्कृति का गहरा प्रभाव है। भूटान का 'भूमथंग प्रान्त एक आध्यात्मिक केन्द्र है। जहाँ के बौद्ध मन्दिर भारत के बौद्ध मन्दिरों की याद दिलाते हैं। श्रीलंका की तरह भूटान भी सांस्कृतिक सम्बन्धों से जुड़ा हुआ है। भारत की भूटान से विदेशनीति स्वतन्त्र और परस्पर सहयोग पर आधारित है जिसके केन्द्र में दोनों देशों की संस्कृति का मूल भाव ही मौजूद है यही कारण है कि छोटे से देश भूटान पर भारत ने कभी भी प्रभुत्वशाली दृष्टि से सम्बन्धों का निर्वहन नहीं किया। इसके पीछे मूल कारण भूटान का सांस्कृतिक रूप से भारत के नजदीक होना ही है। जिसके अनेकों उदाहरण भूटान की संस्कृति में देखे जा सकते हैं।

निष्कर्ष

किसी भी देश की विदेश नीति उसके विकास का आधार होती है। अधिकांश देश अपने लाभ-हानि को ध्यान में रखकर विदेश नीति का निर्धारण करते हैं। भारत दुनिया का एकमात्र देश है। जिसको विदेशनीति के केन्द्र में "वसुदैव कुटुम्बकम्' की भावना अनुस्युत है। जिसकी वजह से भरात की विदेश नीति मानवीय कल्याण एवं परस्पर सहयोग की भावना पर आधारित है। भारत का प्रत्येक पड़ोसी देश चाहे वह नेपाल, भूटान और श्रीलंका हो सभी सांस्कृतिक रूप से जुड़े हुए हैं। भारत का इनके साथ विदेश नीति सांस्कृतिक सम्बन्धों पर ज्यादा आधारित है। बरकस कूटनीतिक सम्बन्धों के इतिहास साक्षी है कि कूटनीतिक सम्बन्धों पर आधारित विदेश नीति छल-छद्म और स्वार्थ केन्द्रित होता है। जब एक -

दूसरे का स्वार्थ पूर्ण हो जाता है तो सम्बन्ध विच्छेद हो जाते हैं। इतिहास ऐसे उदाहरणों से भरा पड़ा हैए लेकिन सांस्कृतिक सम्बन्धों पर आधारित विदेश नीति सदियों सदियों चलती रहती है। जिसका प्रमाण है भारत का अपने पड़ोसी देशों के साथ अटूट सम्बन्ध ।

विश्व के एक भू-भाग के रूप में दक्षिण एशिया एक अनौपचारिक शब्दावली है जिसका प्रयोग एशिया महाद्वीप के दक्षिणी हिस्से के लिए किया जाता है। सामान्यतः इस शब्द से आशय हिमालय के दक्षिणवर्ती देशों से होता है जिनमें भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, बांग्लादेश, नेपाल और भूटान आते है।

दक्षिण पूर्व एशियाई देश

भारत का दक्षिण पूर्व एशिया के देशों के संबंध सर्वाधिक प्राचीन है। अनेक विदेशी यात्री और इतिहासकार भारत में शनैः शनैः आते रहे है। यही नहीं भारतीय भी अनेक कारणों से दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में जाते रहे है। इससे भारतीय संस्कृति का अन्य देशों में प्रचार-प्रसार हुआ। जैसा कि इतिहासकारों और विद्वानों के बीच आम धारणा है कि इस प्रकार के पीछे सैनिक वर्ग, वैश्य वर्ग, और पुरोहित वर्ग की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। ऐसा माना जाता है कि भारतीय सैनिकों ने विजेताओं के प्रभाव के कारण बड़ी संख्या में दक्षिण पूर्व एशिया में प्रवास किया। यही नहीं इन व्यापारियों के साथ पुरोहित और ब्राह्मण लोग भी दक्षिण एशिया के देशों में आए जिन्होंने भारतीय रीति-रिवाज, धर्म, शास्त्र एवं साहित्य से स्थानीय कुलीन वर्ग को परिचित करवाया। इन ब्राह्मणों को वहां के दरबार में परामर्शदाता बनाया गया। इन दोनों क्षेत्रों के पारस्परिक संबंधों के फलस्वरूप संस्कृत भाषा धर्म, हिंदू धर्म और बौद्ध धर्म का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। भारतीय धर्मों को स्थानीय संस्कृतियों ने गहराई से अवशोषित किया और अपने स्वयं के आदर्शों को प्रतिबिंबित करने के लिए इन संरचनाओं के अपने विशिष्ट रूप परिभाषित किए। भारतीय संस्कृति ने दक्षिण पूर्व एशिया में रहने वाली कई सभ्यताओं पर एक जबरदस्त प्रभाव डाला जिसने लिखित परंपराओं को संरचना प्रदान की ।

दक्षिण-पूर्व एशिया 200 ई.पू. से लेकर लगभग 15वीं शताब्दी तक भारतीय संस्कृति और सभ्यता से पर्याप्त प्रभावित हुआ है। भारतीय उप महाद्वीप के दक्षिण-पूर्वी तट पर स्थित साम्राज्यों ने दक्षिण-पश्चिमी एशियाई साम्राज्यों जैसे बर्मा, थाइलैंड, इंडोनेशिया, मलय, प्रायद्वीप, कम्बोडिया के साथ बड़े पैमाने पर तथा वियतनाम के साथ कम स्तर पर व्यापारिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक संबंध स्थापित किए। भारतीय उप महाद्वीप के भीतर हिन्दू साम्राज्यों के विपरीत प्रायः द्वीप के दक्षिण-पूर्वी तट के तमिल साम्राज्यों पर समुद्र के पार जाने पर सांस्कृतिक प्रतिबंध नहीं थे। इसके फलस्वरूप, दक्षिण-पूर्व एशिया में समुद्र तट मार्गों के माध्यम से अधिक आदान-प्रदान हुआ। फलतः भारतीय संस्कृति का प्रचार-प्रसार हुआ।

प्राचीन काल से ही भारत में सामुद्रिक मार्गों से व्यापार होता रहा है। इन मार्गों से होकर व्यापारी और यात्री भारत भूमि में आते रहे हैं। इन सामुद्रिक मार्गों से दक्षिण-पूर्व एशिया- आज के मलेशिया, इंडोनेशिया और फिलीपींस के लोगों को 2500 से 1500 ई.पू. के बीच दक्षिणी चीन से दक्षिण की ओर से प्रवासित हुआ। जिसकी वजह से भारतीय उप महाद्वीप की सभ्यता का प्रभाव धीरे-धीरे उनके मध्य

तथा दक्षिण-पूर्वी एशियाई मुख्य भूमि के लोगों के मध्य प्रधान बन गया। तमिल व्यापारियों, रोमांचकर्ताओं, शिक्षकों और पादरियों ने 1500 ई.पू. तक दक्षिण-पूर्व एशिया में अपना प्रभुत्त्व स्थापित करना शुरू कर दिया। तमिल राजाओं ने इन क्षेत्रों में पूर्ववर्ती राज्यों पर शासन किया। हिंदुत्व और बौद्ध धर्म, दोनों ही इन राज्यों में भारत से फैले तथा अनेक शताब्दियों तक वे पारस्परिक सहिष्णुता के साथ विद्यमान रहे। अंततः मुख्य भू-भाग के राज्य अधिकांशतः बौद्ध अनुयायी बन गए।

थाइलैंड

भारत के साथ थाइलैंड के संबंध हजारों वर्ष पुराने है। भारत का एकमात्र उल्लेखनीय योगदान जिसके लिए थाईलैंड भारत का ऋणी हैए बौद्ध धर्म का सम्राट अशोक द्वारा थाईलैंड भेजे गए बौद्ध धर्मावलम्बियों द्वारा तीसरी शताब्दी ई. पू. में बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ । । इसे थाईलैंड के राष्ट्रीय धर्म के रूप में अपना लिया गया। उसके बाद से भारत की संस्कृति थाईलैंड के लोगों के हृदयों और मस्तिष्कों में विद्यमान है। वर्तमान में 58,000,000 थाई, जो थाईलैंड की कुल जनसंख्या का 94 प्रतिशत हैं, बौद्ध धर्म के अनुयायी है। बौद्ध धर्म के अलावा, थाईलैंड ने अन्य विशिष्ट भारतीय धर्मों और सांस्कृतिक परम्पराओं को भी अपनाया है।

भारत से अनेक व्यापारी और सैनिकों के साथ ब्राह्मण भी थाईलैंड गये। इन ब्राह्मणों ने हिन्दू धारणाओं और परम्पराओं को लोकप्रिय बनाया। इस अवधि के दौरान, ब्राह्मण मंदिर पहले से ही विद्यमान थे। ब्राह्मणों ने दरबारों में समारोहों आयोजित किए। दैवीय राजतन्त्र और राजसी समारोह ब्राह्मणवाद के प्रभाव के स्पष्ट उदाहरण हैं। जैसा कि थाई राजतन्त्र के राज्याभिषेक वर्तमान साम्राज्य तक भी उनके मूल रूप में आयोजित किए जाते रहे हैं। हालाँकि यह परम्परा आज विद्यमान नहीं है। लेकिन थाईलैंड में वर्तमान चकरी साम्राज्य के प्रत्येक राजा को राम कहने की परम्परा आज तक विद्यमान है। यह भारतीय संस्कृति के प्रभाव का अनुपम उदाहरण है।

थाई समाज ने भाषा, साहित्य और नाटक के क्षेत्र में भारतीय कला और कलाकारों से अत्यधिक प्रेरणा प्राप्त की है। रामायण महाकाव्य थाइलैंड में भारत की ही भांति लोकप्रिय है। थाइलैंड ने अतीत में थाई जीवनशैली के अनुरूप रामायण को अंगीकृत किया तथा उसने रामायण का अपना संस्करण तैयार किया है जिसका नाम है- रामकेन । इसके अतिरिक्त थाई भाषा में द्रविड़ भाषाओं की निकटतम समीपता है। भारत और थाइलैंड के बीच निकटतम भाषाई संबंध का एक उदाहरण सामान्य थाई शब्दों में पाया जा सकता है जैसे रथ मंत्री, विद्या, समुथरा, करुणा, प्राणी आदि जो उनके भारतीय शब्दों के ही समान हैं। 1283 में थाई वर्णमाला के महान रचयिता राजा रामखामहेंग थे। उन्होंने प्राचीन खमेर चरित्रों के माध्यम से संस्कृत और पाली के प्राचीन भारतीय वर्णों को तैयार किया।

थाईलैंड में अनेक पर्व और त्यौहार भारतीय परंपरा से ग्रहण किए गए हैं। इनमें शामिल हैं अभिषेक, विवाह, पुण्य कर्म और दाह- संस्कार से संबंधित अनुष्ठान । हालांकि थाईलैंड में भगवान बुद्ध प्रमुख देवता है। लेकिन ब्रह्मा तथा अन्य हिन्दू देवी-देवताओं की भी व्यापक पैमाने में थाइलैंड में लोकप्रियता प्राप्त हैए जिनका प्रयोग विशेष रूप से शाही - समारोहों में किया जाता है।

शाही हल चलाने का समारोह, जिसे बड़ी धूमधाम के साथ प्रत्येक वर्ष मई माह में महामहिम सम्राट द्वारा आयोजित किया जाता है। मूलतः यह एक ब्राह्मण अनुष्ठान है जिसे फसल के मौसम की

शुरुआत के रूप में तथा सभी किसानों को वर्ष के लिए उर्वरता से परिपूर्ण करने का आशीर्वाद देने के लिए अपनाया गया था।

आज के समय की मान्यता है कि यह उत्सव समूचे वर्ष अति आवश्यक जल प्रदान करने के लिए जल देवी की पूजा करने के अनुष्ठान के रूप में आयोजित किया जाता है तथा इसके माध्यम से क्षमा-याचना भी की जाती है यदि वे जल को प्रदूषित कर दें।

विशाखा पूजा दिवस जिसे बुद्ध अनुयायियों का महानतम पवित्र दिवस माना जाता है क्योंकि यह भगवान बुद्ध के जन्म, निर्माण और प्रबोधन का प्रतीक है।

इंडोनेशिया

इंडोनेशियाई द्वीप समूह में सुमात्रा और जावा के हिंदू साम्राज्यों का उदय हुआ। दक्षिण-पूर्व एशिया के द्वीपों में प्रसिद्धि हासिल करने वाला प्रथम संगठित राज्य श्री विजय का हिंदू मलय साम्राज्य था जिसकी राजधानी दक्षिणी सुमात्रा में पालेम्बांग थी। इसकी वाणिज्यिक उत्कृष्टता सुमात्रा और मलय प्रायरूद्वीप के बीच (जिसे बाद में मालाका की खाड़ी के नाम से जाना गया) भारत से चीन के समुद्री मार्ग के नियंत्रण पर आधारित था। छठी और सातवीं शताब्दियों में, श्रीविजय ने दक्षिण-पूर्व एशिया में अग्रणी राज्य के रूप में फुनान को अपनाया। इसका शासक मलय प्राय: द्वीप और पश्चिमी जावा और सुमात्रा का अधिपति था। दक्षिण-पूर्व एशिया के अधिकांश प्रारंभिक साम्राज्यों की भांति श्रीविजय संस्कृति और प्रशासन में द्रविड़ियन था तथा बौद्ध धर्म वहां सुदृढ़ता के साथ फैल गया। श्रीविजय के विस्तार का विरोध पूर्वी जावा में किया गया जहां शक्तिशाली बौद्ध शैलेन्द्र साम्राज्य का उदय हुआ। सातवीं शताब्दी के बाद से पूर्वी जावा में मंदिर निर्माण में अत्यधिक कार्य किया गया। इनमें से सबसे प्रभावी बोराबदुर के अवशेष हैं जिसे विश्व में विशालतम बौद्ध मंदिर के रूप में जाना जाता है। शैलेन्द्र शासन दक्षिण सुमात्रा तथा कम्बोडिया के मलय प्रायरूद्वीप तक विस्तारित हो गया था (जहां इसे अंगकोर साम्राज्य द्वारा प्रतिस्थापित किया गया)। नौवीं शताब्दी मेंए शैलेन्द्र सुमात्रा चला गया तथा श्री विजय और शैलेन्द्र के संगठन से ऐसे साम्राज्य का निर्माण किया गया जिसने अगली पांच शताब्दियों तक दक्षिण-पूर्व एशिया के अधिकांश भाग पर आधिपत्य किया। शैलेन्द्र के पलायन के साथ पूर्वी जावा में एक नए साम्राज्य का उदय हुआ जिसने स्वयं को बौद्ध धर्म से हिंदू धर्म में पुन: वापस ला दिया। 500 वर्ष के अधिपत्य के साथ श्रीविजय को अजापहित द्वारा प्रतिस्थापित किया गया।

हालांकि इन प्रारंभिक 1500 वर्ष ईसी के विविध भारतीयकृत राज्यों और साम्राज्यों की स्थापना भारतीय उपनिवेशों द्वारा की गई थी और इन्होंने भारत के साथ राजनयिक संबंधों को अनुरक्षित किया था लेकिन ये भारतीय साम्राज्यों के राजनीतिक रूप से स्वतंत्र साम्राज्य बने रहे। इसका एकमात्र अपवाद 11वीं शताब्दी में दक्षिणी भारत में चीनी साम्राज्य द्वारा मलय पर अस्थायी विजय था, परंतु श्रीविजय के शैलेन्द्र राज्य चीनी सेना के साथ एक लंबे युद्ध में विजयी रहे।

हिंदू पुज़ारी और बौद्ध मठवासी व्यापारी वर्ग के साथ आए तथा उन्होंने संपूर्ण दक्षिण-पूर्वी एशियाई क्षेत्र में भारतीय विचारधारा और संस्कृति के संदेश को प्रसारित करने में एक अग्रणी भूमिका निभाई। चूंकि उनकी कोई राजनीतिक आकांक्षा नहीं थी तथा वे मठों और आश्रमों में रह रहे थेए स्थानीय लोगों ने उनका स्वागत किया।

अत: व्यापारियों, मठवासियों और हिंदू ब्राहमण पुजारियों ने एक बड़ी संख्या में सुदूरवर्ती साम्राज्य तक यात्रा की जैसे कंबोडिया और इंडोनेशिया तथा भारत की संस्कृति, धार्मिकता और सभ्यता स्थानीय संस्कृति में गहरे तक पैठ गई तथा उन भारतीयों के साथ इसका अत्यधिक संपर्क हुआ जो दक्षिण पूर्व एशिया के दरबारों में स्थान बना चुके थे। सबसे बड़ी बात यह हैं की जो भारतीय वहां गए थे वे न तो वहां शासन करने गए थे अथवा उन्हें सुदूरवर्ती देशों पर नियंत्रण करने में कोई रुचि नहीं थी । भारतीय प्रभाव व्यापार, धर्म और दर्शन के माध्यम से दक्षिण-पूर्व एशिया तक पहुंचा न कि तलवार अथवा हिंसा अथवा विजय के माध्यम से।

कम्बोडिया

कंबोडिया एशिया महाद्वीप के दक्षिण पूर्वी भाग में स्थित हिंद चीन प्रायद्वीप से अलग होकर एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में उभरा है। कंबोडिया क्षेत्र में भारतीयों ने अपने अनेक उपनिवेश स्थापित किए थे। यहां भारतीयों का सबसे महत्वपूर्ण उपनिवेश फुनान था। यहां के निवासी जंगली तथा अर्ध सभ्य अवस्था में रहते थे जो भारतीयों के साथ संपर्क में आकर सभ्यता के मार्ग पर अग्रसर हुए। कंबोडिया के जनजीवन को ध्यान से देखने पर पता चलता है कि उसका हर क्षेत्र चाहे वह शासकों से संबंधित हो या शासन व्यवस्था से समाज व्यवस्था से संबंधित हो या अर्थव्यवस्था से शिक्षा और भाषा से संबंधित हो या साहित्य और कला से संबंधित हो या अभिलेखों से और चाहे धर्म से संबंधित हो या अन्य किसी भी क्षेत्र से भारतीय संस्कृति से पूर्णतया प्रभावित रहा। उसका एक उदाहरण है कि भारतीय संस्कृति की तरह कंबोडिया में भी विवाह को एक संस्कार माना जाता है।

प्राचीन काल में दक्षिण भारत के लोग दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में गए और वहां पर उन्होंने अपना उपनिवेश भी स्थापित किए हैं। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने संस्कृति के चार अध्याय नामक पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा है भारतीयों ने कंबोडिया अपने अनेक उपनिवेश स्थापित किए थे। उपनिवेशो में सबसे महत्वपूर्ण फुनान का राज्य था। फुनान के स्थानीय निवासी जो जंगली व अर्ध सभ्य अवस्था में रहते थे। भारतीयों के आगमन से कम्बोडियाई व्यक्तियों की संस्कृति पूरी तरह से नष्ट नहीं हुई बल्कि भारतीय संस्कृति का ही एक अंग बन कर रह गई । इतिहास साक्षी है कि भारतीय संस्कृति ने कभी भी किसी भी देश के उपर सत्ता प्राप्ति की लालसा में अपना प्रभाव नहीं छोड़ा है।

दक्षिण पूर्व एशियाई देश कंबोडिया में भारतीय संस्कृति का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा है। इस बात को की जानकारी वहां पर प्राप्त अभिलेख और मंदिरों पर उत्कीर्ण संस्कृत भाषा में श्लोकों से जाना जा सकता है। यहां के अधिकतर अभिलेख संस्कृत और खमीर भाषा में लिखे गए हैं। कंबोडिया के लोग संस्कृत भाषा को बहुत पवित्र मानते थे। कंबोडिया के शासकों, सेनापतियों, पुरोहितों और अन्य प्रमुख अधिकारियों द्वारा अपने प्रशंसा में उत्कीर्ण अभिलेखों से विदित होता है। यह अभिलेख चट्टानों प्रस्तर, मंदिरों के दीवारों पर उत्कीर्ण हैं। कंबोडिया में वेद, वेदांग, दर्शनशास्त्र, स्मृति ग्रंथ, रामायण, महाभारत, पुराण आदि अनेक प्राचीन भारतीय ग्रंथों का पठन-पाठन कराया जाता है। यही नहीं यहां के बने अनेक मंदिरों में हम भारतीय संस्कृति का प्रभाव देख सकते हैं खासतौर से अंकोरवाट का मंदिर भारतीय कला का उत्कृष्ट नमूना है। जिसमें भारतीय संस्कृति और भारतीय शैली का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखता है। कंबोडिया में अंकोरवाट के मंदिर के अलावा बैलूनमंदिर का भी अपना एक महत्व है इस मंदिर में भगवान बुद्ध की मूर्ति है और उनके ऊपर कुंडली मारे हुए सात मुख वाले नागदेव देव दिखाए गए हैं।

भारत की तरह कंबोडिया में भी बौद्ध धर्म खूब फला-फूला। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कंबोडिया में बौद्ध धर्म का आगमन भारत से ही हुआ था क्योंकि महात्मा बुद्ध की जन्मस्थली और कार्यस्थली भारत ही थी। स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि कम्बोडिया के मंदिरों और भवनों की तुलना में वहां की प्राचीन मूर्तियों पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।

विदित है की जब भारतीयों ने कंबोडिया में अपना उपनिवेश स्थापित किया तो वहां की शिक्षा-दीक्षा का तरीका भारतीय ही रखा। कंबोडिया के मंदिरों में पुरोहितों द्वारा शिक्षा प्रदान की जाती थी। किसी विद्वान ने लिखा है कि सब लोग ब्राहमणों की पुस्तकें पढ़ते हैं और बौद्ध धर्म के नियमों का बहुत महान मानते हैं। बौद्ध और ब्राहमण पुरोहितों के कई मंदिर जो शिक्षा केंद्र है कंबोडिया में विद्यमान है। अतः हम कह सकते हैं कि भारतीय शिक्षा प्रणाली के आधार पर ही भारतीयों ने कंबोडिया में शिक्षा प्रणाली को विकसित किया। कंबोडिया के अनेक शासकों ने भारत के गुरुकुल पद्धति की तरह ही वहाँ के आश्रम और गुरुकुलों में शिक्षा की व्यवस्था की। गुरुकुल ही भारतीय संस्कृति के प्रमुख केंद्र कहे जा सकते हैं क्योंकि यहां पर शिक्षा दिक्षा भारतीय पद्धति के अनुरूप होती थी। कंबोडिया देश में विभिन्न विषयों विषयों का अध्ययन अध्यापन होता था। इस संबंध में अनेक अभिलेख प्राप्त है। खासतौर से वैष्णों और बौद्ध धर्म से संबंधित धार्मिक साहित्य का अध्ययन अध्यापन इन गुरुकुल में होता था। इसके अतिरिक्त भारत की तरह काव्यशास्त्र, व्याकरण शास्त्र, संगीत शास्त्र, नृत्य कला और ज्योतिष विषय की शिक्षा भी वहां दी जाती थी ।

भाषा किसी भी संस्कृति का आधार होती है। वह संस्कृति की वाहिका होती है। कंबोडिया से प्राप्त अभिलेखों में संस्कृत और खमीर भाषा विशेष रूप से मिलती है। ऐसे अनेक अभिलेख मिलते हैं जिनके आधार पर यह प्रमाणित हो गया कि वहां संस्कृत और पाली भाषा भारत की ही देन है। जैसा कि वहां के राज परिवारों, मंदिरों, आश्रमों तथा सब समाज में संस्कृत का प्रयोग होता था और समाज में खमीर भाषा का भी प्रचलन था। कंबोडिया के अनेक नगरों के नाम संस्कृत भाषा मिलते हैं। भारतीयों के लिए गौरव की बात है कि खमीर भाषा के शब्दों का उद्भव संस्कृत भाषा से ही हुआ। इसका समर्थन वर्तमान के अनेक कंबोडिया विद्वानों ने किया है। यही नहीं कंबोडिया में संस्कृत और पाली आदि भाषाएं ब्राहमी लिपि में भारतीय लेखन परंपरा के अनुरूप ही लिखी जाती है।

भारतीय संस्कृति अपने गुणों के कारण विश्व में जानी जाती है। इसका आधार संस्कार है। संस्कार का अर्थ होता है शुद्धि करना । प्राचीन समय में मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के उद्देश्य से संस्कारों का संयोजन किया गया। भारतीय समाज में जन्म से लेकर मृत्यु तक विभिन्न प्रकार के संस्कार होते हैं। इन संस्कारों का प्रभाव खासकर जो सोलह संस्कार हैं वह सारे संस्कार कंबोडिया के समाज में मिलते हैं। भारतीय संस्कृति के प्रभाव का एक सुंदर उदाहरण है। कंबोडिया का सामाजिक जीवन भारतीय रंग से पूर्णतया रंगा हुआ है। वहां के लोगों ने प्राचीन भारतीय संस्कारों को अपनाते हुए अपने जीवन जीने की शैली को भारतीय संस्कृति के अनुसार कर दिया । यहां के लोगों के प्रत्येक जीवन जीने का तरीका शिक्षा प्रणाली और भक्ति पर भारतीय संस्कृति और संस्कारों का अद्भुत प्रभाव दिखाई देता है। स्पष्ट रूप से कहा जाता है कि भारतीय संस्कारों का प्रभाव कंबोडिया की संस्कृति पर दिखाई देता है। सबसे बड़ी बात यह है कि थोड़े बहुत अंतर के बावजूद भारतीय संस्कारों का प्रभाव कंबोडिया की संस्कृति पर दिखाई देता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. "नेपाल : क्रिटिकल डेवेलपमेंट कॉन्स्ट्रेन्टस", एशियन डेवेलपमेंट बैंक (एडीबी), डिपार्टमेंट ऑफ इंटरनेशनल डेवेलपमेंट (डीएफआईडी), व इंटरनेशनल लेवर ऑर्गेनाइजेशन (आईएलओ) मनिला / लंदन, 2009

2. कृष्णा हछेथु, "माओइस्टइन्सर्जेन्सी इन नेपाल : एन ओवरव्यूह" यूनिवर्सिटी ऑफ बेलफिल्ड जर्मनी,

   http://www.uni-bielefeld.de/midea/pdf.harticle2.pdf.

3. अली रियाज व सुभो बसु, "पाराडाइज लॉस्ट" स्टेट फेल्योर इन नेपाल, लेक्सिंगटन बुक्स, प्लाईमॉउथ, 2010

4. नेपाल में विभिन्न जातीय समूहों के ऐतिहासिक प्रस्थितिकरण, ऐतिहासिकरण, अस्मिताकरण व सांस्कृतिकरण और इसका सामाजिक बदलावों और राजनैतिक चेतना पर किस तरह असर पड़ा के लिए देखिए । फिशर विलियम एफ, "फ्लुइड बाउन्ड्रज फॉरमिंग एंड ट्रांसफॉर्मिंग आडेंटिटी इन नेपाल" ए कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, 2001

5. Kamal Madishetty, "Modi's Neighborhood first policy must March on, with or without Pakistan". 16 March, 2017 CLAWS.

6. Balaji Chandramohan."India's neighborhood first policy: post 2014", EPRC Journal. Foreign Policy Research Center, New Delhi. 2015

7. Ritika Paasi. Aryaman Bhatnagar. Neighborhood first: Navigating ties under Modi, ORF and Global Policy Journal. New Delhi, 2016

8. Rajeev Sharma. "Why Modi picked Bhutan for his first foreign visit as PM", First Post, 7 June 2014.

9. Dr. Ashish Shukla, "The Impact of Recent High Level Visits on India-Bangladesh Relations:, ICWA, issue brief. 20 June 2018, https://icwa.in/pdfs/VP/2014IIndia_Bangladesh_RelationVP20062018.pdf

10. Dr. M. Samatha, "Indian Prime Minister's Visit to Sri Lanka", ICWA view point, 26 March 2015, https:llicwa.inlpdfsN P/2014IPMSLvisit 2060320 15VP.pdf

अध्याय 06

समकालीन विश्व में प्रयुक्त रक्षा एवं सामरिक शब्दावलियों का अध्ययनः प्राचीन प्राच्य साहित्य के विशेष संदर्भ में

स्वाति सुचरिता नंदा
सहायक प्रोफेसर
डी.ए.वी.पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

रक्षा एवं सामरिक अध्ययन अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध का एक अति महत्वपूर्ण पहलू है। एक विषय के रूप में यह अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, भू–रणनीति, अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति, अंतर्राष्ट्रीय अर्थनीति जैसे विभिन्न विषयों का समावेश करता है। रक्षा एवं सामरिक अध्ययन को युद्ध विद्या, युद्ध कौशल विद्या, रणनीति अध्ययन जैसे विषय के रूप में भी जाना जाता है। दो विश्व युद्ध तथा अन्य महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय विवादों के कारण सामरिक तथा रणनीति का अध्ययन अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध के प्रमुख पहलू के रूप में उभरा है। मुख्य रूप से रक्षा एवं सामरिक अध्ययन का अन्तःविषयक क्षेत्र है जो राजनीतिक प्रतिस्पर्धा के उद्‌देश्य की पूर्ति के दृष्टि से विभिन्न राष्ट्रों के बीच हो रहे सामरिक शक्ति की प्रतिद्वंदिता का अध्ययन करता है। इस तरह से यह विषय इतिहास, भूगोल, मनोविज्ञान, राजनीति विज्ञान, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र जैसे अनेक विषयों को अपने में समाहित करता है।

सामरिक अध्ययन मूल रूप से विदेश नीति में सैन्य बल के प्रयोग से सम्बंधित है। विद्वान कार्ल वोन क्लस्विज़ के अनुसार सामरिक अध्ययन युद्ध के उद्‌देश्य से हो रहे समाघात पर ध्यान केन्द्रित करता है।1 इस विषय के अन्य विद्वान कलिन ग्रे के अनुसार सामरिक अध्ययन मुख्य रूप से युद्धकौशल से सम्बन्धित है जो सैन्य शक्ति को राजनैतिक उद्‌देश्य से जोड़ता है। दूसरे शब्दों में युद्ध कौशल विद्या अथवा सामरिक अध्ययन राजनीतिक उद्‌देश्यों को प्राप्त करने के लक्ष्य से सैन्य शक्ति का विभिन्न प्रकार से उपयोग का सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक पक्ष का अध्ययन करता है।

यह लेख रक्षा एवं सामरिक अध्ययन के विषय–क्षेत्र के विकास को रेखांकित करने के उद्देश्य से एक लघु चेष्टा है। इस लेख में उपरोक्त विषय–क्षेत्र का प्राचीन से हाल के समय तक की यात्रा के दौरान व्यवहृत विभिन्न शब्दों को स्थान दिया गया है। लेख के प्रारम्भ में विषय–क्षेत्र पर एक ऐतिहासिक दृष्टिपात करने की चेष्टा की गयी है जिसके तहत प्राच्य तथा पश्चिम के विभिन्न विद्वानों के युद्ध सम्बंधी विचारों को संक्षिप्त में समझने की कोशिश की गई है। तत्पश्चात् काल क्रम में युद्ध के बदलते प्रतिमानों को सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक रूप से देखा गया है। पूरे लेखन प्रक्रिया में विभिन्न कालखंड में व्यवहृत विषय–विशेष शब्दों को अधिक से अधिक प्रयोग करने की चेष्टा की गई है।

रक्षा तथा सामरिक क्षेत्र में भारत का विशेष योगदान रहा है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों जैसे रामायण, महाभारत, हर्षचरित, मनुस्मृति तथा अर्थशास्त्र के गहन अध्ययन से उस समय की समृद्ध सामरिक चिंतन के बारे में पता चलता है। मध्य **कालीन** भारत में युद्ध कौशल के बारे में अनेक प्रकार के चिंतन पाए जाते हैं। समकालीन लोकतान्त्रिक भारत में रक्षा एवं सामरिक चिंतन भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा के साथ जोड़ कर देखा जाता है। अतः भारतीय विदेश नीति निर्माण के समय रक्षा एवं सामरिक क्षेत्र को अत्यंत महत्व दिया जाता है। इस लेख में रक्षा एवं सामरिक विषय को भारतीय दृष्टिकोण से समझने का प्रयास भी किया गया है।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से रक्षा एवं सामरिक अध्ययन–

प्राचीन काल के भारतीय विद्वान कौटिल्य (350-275 B.C.) की यशस्वी कृति ''अर्थशास्त्र'', प्राचीन चीनी लेखक सुन–जु के आर्ट आफ वार (Art of War) तथा उन्नीसवीं शताब्दी के यूरोपीय लेखक कार्ल वोन क्लस्विज (1780–1831) के आन वार में (On War) युद्ध एवं सामरिक अध्ययन की प्रारम्भिक कृतियों के रूप में जाना जाता है। कौटिल्य के महान ग्रन्थ अर्थशास्त्र को युद्धविद्या, युद्ध कौशल, राज्य के विदेश नीति, कूटनीति का एक सम्पूर्ण अध्ययन कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा। वह कूटनीति तथा विदेशनीति को युद्ध रूप में देखते हैं।

सुन जु (544–496 B.C.) की कृति में भी चीनी सैन्य बल का विस्तृत विश्लेषण मिलता है।2 कौटिल्य के अर्थशास्त्र की तरह यह कृति भी अस्त्र–शस्त्र, रणनीति, सूचना तथा युद्ध कौशल के प्रशिक्षण के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी देता है।3 महान फ्रेडरिक (Frederik

The Great) तथा नेपोलियन के युद्ध रणनीति के ऊपर आधारित यथार्थवादी विद्वान क्लस्विज़ का कृति पाश्चात्य युद्ध शैली का दार्शनिक पक्ष का विस्तृत अध्ययन करता है। क्लस्विज़ युद्ध को अव्यवस्था का स्वरूप के रूप में राज्यों के द्वारा लिए गए निर्णयों, क्रियाओं एवं अतिक्रियाओं का निष्कर्ष के तरह वर्णन किया गया है। इस तरह से यह कृति युद्ध की जटिल प्रकृति की व्याख्या करते हुए सामरिक अध्ययन के महत्व की स्थापना करती है।

इन महान कृतियों में व्यवहृत संकल्पनाएं तथा सिद्धान्त शताब्दियों के बाद भी सामरिक अध्ययन के विषयक्षेत्र को दिशा–निर्देश करते आ रहे हैं। इनमें कौटिल्य का मंडल सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण है जिसमें विभिन्न राज्यों द्वारा दूसरे राज्यों के प्रति अपनाई गई नीति का वर्णन किया गया है। यथार्थवाद पर आधारित राज्यों के मंडल अथवा समूहों के प्रतिमान का निर्माण कर कौटिल्य विभिन्न राज्यों के मध्य स्वाभाविक संबंध का वर्णन करते हैं। अर्थशास्त्र विभिन्न रणनीतियों पर बहुत गहराई से चर्चा करता है। यह विजिगीषु को पहले शत्रुतापूर्ण पड़ोसी के खिलाफ आगे बढ़ने की सलाह देता है। फिर, उसे नई अधिग्रहीत शक्ति के साथ तटस्थ राज्य से निपटना चाहिए। यदि वह सफल होता है, तो वह सबसे शक्तिशाली या 'उदासीन' राजा के खिलाफ कार्रवाई करनी चाहिए। इस प्रकार, विजिगीषु समग्र रूप से मंडल पर अपना आधिपत्य पूरा करने में सक्षम होगा।4 इसमें राज्यों के भौगोलिक परिवेश को महत्व दिया गया है। इस प्रतिमान में 12 प्रकार के राज्यों का वर्णन किया गया है जैसे कि– विजिगीषु, अरि, मित्र, अरिमित्र, मित्र–मित्र, अरि–मित्र–मित्र, पर्ष्णिग्राह, 'आक्रंद', 'पर्ष्णिग्राहसार', 'आक्रन्दसार', 'मध्यम' तथा 'उदासीन'। इस प्रतिमान के माध्यम से कौटिल्य युक्तिपूर्ण रूप से प्रमाणित करने की चेष्टा करते हैं कि प्रत्येक राज्य का अन्य राज्य से सम्बन्ध उसकी भौगोलिक संदर्भ पर निर्भर करता है। कौटिल्य के अनुसार राज्यों के भौगोलिक सामीप्य उन्हें मित्रता के जगह शत्रुता के सम्बन्ध में बांधता है। विजिगीषु का मुख्य तत्त्व केवल विजय प्राप्ति के इच्छा रखने वाला राष्ट्र से ही नहीं परंतु आर्थिक तथा सामरिक सामर्थ्य से भी है। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के भाषा में राजनीतिक, आर्थिक तथा सामरिक रूप से विश्व व्यवस्था को नियंत्रित करने की स्थिति में अवस्थित राज्य को वर्चस्ववादी राज्य माना जाता है।

कौटिल्य के साथ सुन जु तथा क्लस्विज का ध्यान सामरिक रणनीति (Strategy) के साथ–साथ बलविन्यास (Tactics) पर भी केन्द्रित होता है।5 किसी भी सामरिक कार्यवाही में राजनीतिक विजय के उद्देश्यों की पूर्ति के दृष्टि से की गयी योजनाओं, समन्वयन एवं सैन्य संचालन की सामान्य दिशानिर्देश को रणनीति कहा जाता है। इस रणनीति का कार्यवाहन करने

 ISSN: 2321-0443

को बलविन्यास कहा जाता है। रणनीति में निर्णय स्वाभाविक रूप से दीर्घकालिक होते हैं जबकि युद्धक्षेत्र में सैन्यबल की गतिविधि का संचालन तथा निर्दिष्ट अस्त्रों का व्यवहार जैसे अल्पकालिक निर्णय बलविन्यास के दायरे में आते हैं। क्लस्विज के अनुसार, युद्धक्षेत्र में सैन्यबल का व्यवहार करने की कला को बलविन्यास एवं युद्ध को जीतने की दृष्टि से संग्रामों का व्यवहार करने की कला को रणनीति कहा जाता है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि इतिहास के विभिन्न कालखंड में रणनीति तथा बलविन्यास को अलग–अलग रूप में देखा गया है। कौटिल्य ने, उदाहरण के लिए, रणनीति पर भी बहुत ध्यान केंद्रित किया है। कौटिल्य ने उल्लेख किया है कि सेना के प्रत्येक घटक के प्रत्येक दस सदस्यों के लिए, एक कमांडर होना चाहिए, जिसे पादिका कहा जाता हैय एक सेनापति के अधीन दस पदिकाएँ एक नायक के अधीन दस सेनापति। उन्होंने परिकल्पित रणनीति के अनुसार, अनुशासन, प्रशिक्षण और उपकरणों को बनाए रखने के साथ–साथ युद्ध संरचनाओं में बलों के स्वभाव की व्यवस्था करने के लिए प्रत्येक स्तर पर कमांडरों की जिम्मेदारियों को भी चित्रित किया है।5 प्राचीन काल में उभय पूर्व एवं पश्चिम के युद्ध तथा संग्राम के प्रकृति व रूप समकालीन युद्ध तथा संग्राम के प्रकृति व रूप से अलग हुआ करते थे।

कार्यवाहन के मापदण्ड (scale of action) के आधार पर युद्ध (War), संग्राम (battle), लड़ाई (skirmish), घात (ambush), छापा (raid), घेराबंदी (seige) तथा समाघात (combat) एक दूसरे से अलग होते हैं। अपने समय में शिवाजी ने ''शिव सूत्र'' या गनिमी कावा (गुरिल्ला रणनीति) का नेतृत्व किया, जिसने अपने बड़े और अधिक शक्तिशाली दुश्मनों को परास्त करने के साथ–साथ गहरे पानी में अपने बड़े और अधिक शक्तिशाली दुश्मनों को हराने के लिए जनसांख्यिकी, गति, अप्रत्याशित आक्रमण और पानी में केंद्रित हमले जैसे रणनीतिक कारकों का लाभ उठाया। वह अपनी गुरिल्ला रणनीति के लिए जाने जाते थे।6 अति सरल रूप से देखा जाये तो दो या दो से अधिक संगठित समाघाती सैन्य बलों के मध्य संघर्ष को संग्राम कहा जाता है। इस तरह से समय–सीमा, क्षेत्र तथा सैन्य प्रतिबद्धता की दृष्टि से संग्राम सुपरिभाषित होता है। व्यापक रणनीति से निर्देशित सामरिक कार्यवाहन को युद्ध कहा जा सकता है। युद्ध को अनेक संग्रामों का परिणाम भी कहा जा सकता है। क्लस्विज के अनुसार संग्रामों के माध्यम से युद्ध जीतना रणनीति का मुख्य उद्देश्य रहा है। सेनाओं के छोटे हिस्सों के मध्य अनियमित या अनियोजित रूप से हुए संघर्ष को लड़ाई कहा जाता है। घात में शत्रु पर अति तीव्र गति से अप्रत्याशित रूप से आक्रमण किया जाता है। छापा मारने के उद्देश्य से हुए आक्रमण में लूटपाट तथा सम्पत्ति जब्त करना देखा जाता है। घेराबंदी एक ऐसा सैन्य अभियान

है जिसमें शत्रु के शहर या बस्ती को घेर लिया जाता है तथा आवश्यक आपूर्तियों को काट दिया जाता है जिसके कारण शत्रु आत्मसमर्पण के लिए मजबूर हो जाता है। समाघात एक उद्देश्यपूर्ण सामरिक संघर्ष की ओर इंगित करता है जो शत्रु को कमजोर करने या दूर भगाने के लिए किया जाता है। इतिहास के विभिन्न पर्यायों में आर्थिक नाकाबंदी (Economic blockade) का व्यवहार को भी एक विवादित समय का महत्वपूर्ण बल–विन्यास के रूप में देखा जाता है।7 सामान्य रूप से आर्थिक नाकाबंदी के स्थिति में किसी विशेष क्षेत्र में युद्ध सामग्री या संचार व्यवस्था को सम्पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से काटने का प्रयास किया जाता है। कौटिल्य के द्वारा दिया गया भेद युद्ध की संकल्पना प्रचार व विघटन के माध्यम से शत्रु को मानसिक रूप से हानि पहुँचाने को वैधता प्रदान करता है। यह पद्धति आज के समय में भी व्यवहृत होता है।

हाल ही में भारत ने नेपाल के खिलाफ आर्थिक नाकाबंदी के द्वारा उस पर राजनयिक दबाव डालने का प्रयास किया। इसी प्रकार फरवरी 2019 में पुलवामा में भारतीय सेना पर आतंकी हमले के खिलाफ भारत ने पाकिस्तान के बालाकोट में आतंकियों के ठिकाने पर हवाई हमला (Air Strike) किया। इस सन्दर्भ में ये कहना औचित्य है कि पिछले 30 सालों से पाकिस्तान भारत के खिलाफ परोक्ष युद्ध (Proxy War) कर रहा है। भारत के विभिन्न राज्यों में आतंकवादी हमले कराता रहा है। दोनों देशों में सीमा पर गोलाबारी अक्सर होती रहती है। भारत के खिलाफ नकली नोटों (Counterfeit Currency) की तस्करी पाकिस्तानी विदेश नीति का एक अंग है। 2020 में पाकिस्तान ने अपने आधिकारिक नक्शे में भारत के अनेक क्षेत्रों को अपने देश का अंग बनाया। इसे सामरिक विशेषज्ञों ने कार्टोग्राफिक हमले (Cartographic Invasion) की की संज्ञा दी। इसी तरह कार्टोग्राफिक हमला (Cartographic Invasion) नेपाल ने 2020 में भारत के खिलाफ किया।

प्राचीन काल के उभय पूर्व एवं प्राच्य के विभिन्न सभ्यताओं में युद्ध का अध्ययन दो विरोधी राज्यों को केन्द्र में रखकर किया जाता था। इस कारण अध्ययन का केन्द्र बिन्दु सैन्य बल, रणभूमि का अवस्थिति तथा सेनापतियों द्वारा अभिकल्पित रणनीति हुआ करता था। विज्ञान एवं तकनीकि विकास के साथ–साथ युद्धभूमि, अस्त्र–शस्त्र तथा रणनीति में अनेक परिवर्तन हुए जिसको लेख के अगले भाग में संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है।

युद्ध के बदलते प्रतिमान–

विश्व की प्राचीन तथा मध्यकाल के विभिन्न सभ्यताओं के इतिहास तथा साहित्य में अनेक युद्धों का वर्णन मिलता है। भारत के संदर्भ में महाभारत युद्ध, यूनान में पेलोपोनेसियन युद्ध, रोम में केनि युद्ध से प्राचीन काल में युद्ध की अवधारणा के सम्बन्ध में ज्ञान मिलता है। उस काल के युद्ध सामान्यतः राजाओं के बीच अपने अधिकार के परिधि को विस्तार करने के लक्ष्य से लड़ा जाता था। धातु तथा काष्ठ निर्मित अस्त्र–शस्त्र जैसे धनुष–तीर, तलवार तथा भाला का प्रयोग कर पैदल, अश्वरोही सेना तथा समुद्री सेना द्वारा युद्ध लड़ा जाता था। इसमें मुख्य रणनीति आक्रमणात्मक हुआ करती थी जो आकस्मिक या घोषित कर प्रत्यक्ष रूप से शत्रु के साथ युद्धभूमि में लड़ा जाता था। तकनीकि, सांस्कृतिक तथा सामाजिक विकास के कारण मध्यकाल में सामरिक क्षेत्र में अनेक परिवर्तन हुए। इस समय अस्त्र–शस्त्र भण्डार (artillery) के व्यवहार से किलों (fort) से युद्ध होने के अनेक उदाहरण मिलते हैं। इस तरह से बीसवीं सदी के प्रारम्भिक पर्याय तक युद्ध मुख्य रूप से दो विरोधी राज्यों के मध्य का संघर्ष रहा जो पारंपरिक अस्त्र–शस्त्र के व्यवहार से रणभूमि– उभय जल एवं स्थल– में प्रत्यक्ष रूप से लड़े जाते थे। इस काल में रणभूमि अथवा युद्धक्षेत्र को निर्दिष्ट रूप से चिन्हित किया जा सकता था। युद्ध भूमि सामान्यतः दो राज्यों के बीच के सीमांत क्षेत्र होते थे। साधारण जनता का इससे कोई खास सरोकार नहीं होता था।

बीसवीं सदी के प्रारम्भिक पर्याय में हुए दो विश्व युद्धों ने युद्ध तथा सामरिक अध्ययन में रूचि की वृद्धि की जिसके तहत रणनीति का नये सिरे से विश्लेषण किया जाने लगा। परिणामस्वरूप आलफ्रेड महान (1840–1914), कोर्बेट (1854–1922), हलफोर्ड मैककाइंडर (1861–1947), लिडल हार्ट (1895–1970) जैसे विद्वानों के सिद्धान्त इस समय अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जाने लगे।8 उत्तर अमेरिकी भू–राजनीति के संस्थापक माने जाने वाले विद्वान अलफ्रेड महान ने समुद्री शक्ति को विश्व प्रभुत्व के सबसे महत्वपूर्ण कारक के रूप में स्थापित किया। अपने कृति द इन्फ्लुएंस ऑफ सी पावर ऑन हिस्ट्री, 1660–1783 में आल्फ्रेड महान ने राजनीतिक घटनाओं के ऐतिहासिक क्रम तथा कल्याणकारी राज्यों के विकास को नौसैनिक शक्ति के सम्बन्ध का विस्तृत रूप से विश्लेषण किया। उनके द्वारा दिये गये मैरिनिज्म सिद्धान्त के अनुसार महासागर पर वर्चस्व विस्तार करने वाले राज्य मानव जाति के भाग्य के निर्णायक होते हैं। महान का मुख्य ध्यान सामरिक जीत पर केन्द्रित होता हुआ दिखता है। महान के शत्रु के भौतिक विनाश के विपरीत अपने सिद्धांत देते हुए जुलिआन कोर्बेट ने समुद्र पर नियंत्रण प्राप्ति को महत्व दिया। कोर्बेट के समुद्र के नियंत्रण का सिद्धान्त सामरिक लाभ के उद्देश्य से युद्धाभ्यास तथा शत्रु पर ध्यान केन्द्रित करने के तरीके, आज भी नौसैनिक रणनीति का

दिशा–निर्देश करते हैं। सीमित युद्ध तथा रणनीतिक रक्षा पर उनके विचार उस काल के नौसेना सिद्धान्त एवं रणनीति के स्वीकृत मानदंडों से अलग थे। अपनी कृति सम प्रिंसिपल्स ऑफ मैरिटाइम स्ट्रैटेजी के माध्यम से उन्होंने नौसेना के रणनीति को सामान्य जनता के सामने रखने की चेष्टा की। बीसवीं शताब्दी के ब्रिटिश भू–राजक विद्वान हलफोर्ड मैककाइंडर ने अपनी कृति द जियोग्राफिकल पाइवोट ऑफ हिस्ट्री में केन्द्रभूमि की अवधारणा दी। इस सिद्धान्त के अनुसार यूरेशिया क्षेत्र में स्थित व राज्य विश्व केन्द्रभूमि होने की क्षमता रखता है जिसके पास विशाल आकार, प्रचुर संसाधन तथा अधिक जनसंख्या का आधार हो। इस तरह की शक्ति समग्र विश्व के ऊपर अपना वर्चस्व जाहिर कर सकती है।

ब्रिटिश सैनिक कैप्टन बी0एच0 लिडेल हार्ट के द्वारा प्रथम विश्व युद्ध के उपरांत लिखी गयी सैन्य इतिहास उस समय की राणनीतिकारों के मध्य प्रभावशाली प्रमाणित हुई। उनके विश्लेषण के अनुसार प्रथम विश्वयुद्ध में प्रत्यक्ष अथवा ललाट आक्रमण (direct/frontal attack) का विफलता सिद्ध हो गया था जिससे रणनीतिकारों को सीख लेनी चाहिए। उन्होंने इस तरह के आक्रमण से हुए सैनिक जीवन–हानि की तरफ ध्यान आकर्षित करते हुए अप्रत्यक्ष आक्रमण (indirect attack) के पक्ष में तर्क दिया। उनके अनुसार एक अच्छी रणनीति सुरक्षाकारी संरचनाओं पर आधारित होनी चाहिए। क्लस्विज के तरह कोर्बेट ने भी सामरिक लक्ष्य प्राप्ति से राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति को अधिक महत्व दिया। इस सिद्धान्त को आगे बढ़ाते हुए निकोलास स्पाइकमान (1893–1943) ने रिमलेंड (Rimland) का सिद्धांत दिया जिसके अनुसार वह राज्य जो केन्द्रभूमि के अंतरतम क्षेत्र को नियंत्रित करता है वह केन्द्रभूमि को नियंत्रित कर पायेगा और इस तरह समग्र विश्व का भाग्य विधाता बन पायेगा।

इस समय की मुख्य संकल्पनाएं वर्चस्व या आधिपत्य, भव्य–रणनीति, आक्रमणात्मक तथा आत्मरक्षक रणकौशल पर ध्यान केन्द्रित करना रहा। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा के अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का इतिहास राज्यों के क्षेत्रीय तथा वैश्विक आधिपत्य तथा वर्चस्व की कहानी रहा है। प्राचीन समय में यह राजाओं के आधिपत्य विस्तार की कहानी हुआ करता था। उन्नीसवीं शताब्दी में अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का मुख्य रंगमंच यूरोप रहा और ग्रेट ब्रिटेन इस रंगमंच का मुख्य नायक रहा जिसने शक्ति संतुलन (Balance of Power) के धारक के भूमिका में अपने प्राधान्य को अपने यूरोपीय प्रतिद्वंदियों के सामने सिद्ध किया था। सोलहवीं सदी से ही ब्रिटेन ने यूरोप में स्पेन और फ्रांस के मध्य संतुलन बनाए रखने की दृष्टि से एक ऐसी विदेश नीति का अनुसरण किया था जो बाद में उन्नीसवीं सदी के वृहद् यूरोप में युद्ध रोकने के

लिये शक्ति संतुलन की रणनीति बना। इस रणनीति के अनुसार सामरिक क्षमता के वितरण से न ही राष्ट्रीय सुरक्षा में वृद्धि होती है बल्कि क्षेत्रीय परिदृश्य में कोई भी राज्य दूसरे किसी राज्य पर हावी हो नहीं पाता। विश्व युद्धों ने इस शक्ति संतुलन के सिद्धान्त की विफलता की ओर ध्यान केन्द्रित किया। जैसा कि नाम से प्रतीत होता है, विश्व युद्ध अभी तक लड़े गये युद्धों से कई तरह से अलग थे। यह एक अति बड़े पैमाने पर हो रहे युद्ध थे जो पूरी दुनिया को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हुए दिखे। 1914 से लेकर 1945 तक के पर्याय में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विरोधी राज्य समूहों के गठबंधन बनते हुए दिखे जो इस तरह के दो महायुद्धों का कारण बने। जहाँ प्रथम विश्व युद्ध मित्र शक्ति बनाम केन्द्रीय शक्ति के बीच लड़ा गया, वहाँ द्वितीय विश्वयुद्ध मित्र राष्ट्र बनाम अक्ष राष्ट्रों के बीच लड़ा गया। इन युद्धों को अनेक युद्धक्षेत्रों में एक साथ लड़ा जाता हुआ देखा गया जो समग्र विश्व में अनोखी घटनाएं थीं। यहाँ यह व्याख्या करना आवश्यक है कि सामरिक अध्ययन में युद्धक्षेत्र अथवा थिएटर ऑफ वार को एक निर्दिष्ट अर्थ में प्रयोग किया जाता है। अति सरल रूप में, युद्धक्षेत्र अथवा थिएटर ऑफ वार वह 'स्थान' है जहाँ राष्ट्रों के बीच सामरिक घटनाएं या तो घट रही है या फिर घटने की संभावना है। यह 'स्थान' सामरिक अभियान में व्यवहार होने वाले भूमिक्षेत्र, समुद्रक्षेत्र या हवाईक्षेत्र को संपूर्णता के साथ शामिल करता है। युद्धक्षेत्र अथवा थिएटर ऑफ वार अभियान क्षेत्र अथवा थिएटर ऑफ आपरेशन्स से अलग होता है। अभियानक्षेत्र अथवा थिएटर ऑफ आपरेशन्स युद्धक्षेत्र अथवा थिएटर ऑफ वार का एक उप–क्षेत्र होता है जो संग्राम या समाघात के संचालन के उद्देश्य से युद्ध के सेनापति या कमांडर द्वारा चयन तथा परिभाषित किया जाता है। प्रथम विश्वयुद्ध के अनुभव के आधार पर अभियानक्षेत्र को सामान्यतः दो भागों में बांटा जाता है : समाघात का क्षेत्र (combat zone) या प्रत्यक्ष संग्राम का स्थान और संचार का क्षेत्र (communications zone) या युद्ध की प्रशासनिक संचालन का स्थान।

विश्व–स्तरीय इन दो युद्धों में राइफल्स, मशीनगन, फ्लैमथ्रोवर, मोर्टार, तोपखाने, टैंक के साथ–साथ विमान (Aircraft) तथा उप–समुद्री या पनडुब्बी (sub-marine) का भी प्रयोग किया गया। क्लोरिन गैस तथा मस्टार्ड गैस जैसे जहरीले रसायनिक हथियारों (Chemical weapon) के साथ एटमी बम के भी प्रयोग ने युद्ध के परिणाम को अत्यंत भयावह बना दिया। 6 अगस्त, 1945 को अमेरिकी वायु सेना ने जापानी शहर हिरोशिमा के ऊपर लिटिल बॉय नामक यूरेनियम आधारित विखंडन बम का विस्फोट किया और इस घटना के तीन दिन बाद 9 अगस्त 1945 को फिर से अमेरिकी वायु सेना ने नागासाकी के ऊपर फैट मैन

नामक प्लूटोनियम आधारित विखंडन बम के आक्रमण से लाखों नागरिकों के साथ परिवेश को नष्ट कर दिया। विडम्बना का विषय यह है कि इस तरह के अस्त्रों की विनाशकारी क्षमता सिद्ध होने के बावजूद आज भी समग्र विश्व के राष्ट्र इन अस्त्रों के उत्पादन तथा संग्रह में लगे हैं।

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय भव्य–रणनीति (Grand strategy) के माध्यम से अनेक राष्ट्रों ने आधुनिक सामरिक रणनीति को परिभाषित करने की चेष्टा की। भव्य–रणनीति में युद्ध जीतने के लक्ष्य से उद्‌देश्यपूर्ण रूप से शक्ति के सारे उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। यहाँ यह कहना आवश्यक है कि पारंपरिक रणनीति का आधार सैन्यबल होता है जबकि भव्य रणनीति सैन्य से परे जाकर राजनयिक, वित्तीय, आर्थिक, सूचनात्मक आदि साधनों को भी शामिल करती हैं। इस कारण से राष्ट्र के आंतरिक में आवश्यक परिवर्तन किया जाना भव्य रणनीति का एक महत्वपूर्ण पहलू है। भव्य–रणनीति में प्राथमिक बनाम द्वितीयक युद्ध क्षेत्र अथवा थिएटर का चयन करने के साथ राष्ट्रीय स्तर पर निर्मित होने वाले या खरीदे जाने वाले अस्त्र–शस्त्र तथा राष्ट्रीय लक्ष्य पूर्ति के लिए आवश्यक अंतर्राष्ट्रीय गठबंधन का चयन भी महत्वपूर्ण होता है। इस तरह से किसी राष्ट्र की भव्य रणनीति का विकास कई वर्षों तक या कई पीढ़ियों तक विस्तृत हो सकता है।

सामरिक अध्ययन के विषय क्षेत्र में द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत वैचारिक परिवर्तन होता हुआ देखा जा सकता है। इस परिवर्तन का केन्द्रबिन्दु राज्यों की सुरक्षा से जुड़ा हुआ रहा। इस समय राज्यों के भीतर से नागरिकों की आवाज राज्यों के द्वारा युद्ध में लिप्त होने के निर्णय से हुए विनाश के सम्बन्ध में प्रश्न उठने लगे थे जो अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के विषय क्षेत्र के शोध कार्य–सूची में मौलिक परिवर्तन के कारण रहे। यह समय अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के लिए सबसे रचनात्मक और रोमांचक अवधि रहा। 1940 के दशक के मध्य के अंत में शीतयुद्ध का उदय हुआ जिसके कारण दो महत्वपूर्ण कारक– परमाणु अस्त्र तथा विश्व का द्वि–ध्रुवीकरण– इस विषयक्षेत्र के प्रकृति में मौलिक बदलाव लाये। एक स्तर पर दोनों महाशक्तियों के बीच विश्ववर्चस्व के लिए असाधारण प्रतिद्वंदिता और दूसरे स्तर पर परमाणु अस्त्र का सामूहिक विनाशकारी क्षमता से पूरे विश्व के सुरक्षा के ऊपर संकट ने विद्वानों का ध्यान युद्ध, युद्ध कौशल, सामरिक रणनीति के साथ–साथ विश्व की सुरक्षा पर केन्द्रित करने लगा। परिणाम स्वरूप, अब ध्यान निवारण (deterrence), पारस्परिक विनाश का आश्वासन (Mutual Assured Destruction) ''आर्थिक नाकाबंदी'' (economic blockade) के साथ–साथ अस्त्र नियंत्रण (Arms Control), निशःस्त्रीकरण (Disarmament), जैसे विचारों के ऊपर

केन्द्रित होने लगा। शीतयुद्ध के समय परमाणु अस्त्र के उपयोग के संबंध में निवारण के सिद्धान्त को एक सामरिक रणनीति के रूप में प्रमुखता मिली। इस सिद्धांत के अनुसार विनाशकारी शक्ति के आधार पर एक कम शक्तिशाली राज्य अपने से अधिक शक्तिशाली विरोधी के आक्रमण का निवारण कर सकता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि निवारण सिद्धांत का मुलभूत आधार विनाशकारी शक्ति के आधार पर चोट पहुँचा पाने या ध्वंस करने का भय होता है जो कि शक्तिशाली राष्ट्र के साथ अस्थायी शांति की सौदेबाजी करने में काम आता है। निवारण के सिद्धांत पर आधारित पारस्परिक विनाश का आश्वासन भी शीतयुद्ध के समय सामरिक विमर्श का विषय रहा। पारस्परिक विनाश का आश्वासन एक सैन्य रणनीति और सुरक्षा का सिद्धांत है जिसमें दो या अधिक विरोधी पक्षों द्वारा परमाणु अस्त्र का पूर्ण उपयोग करने की क्षमता दोनों पक्षों का विनाश का कारण हो सकता है। यह रणनीति नैश संतुलन का एक स्वरूप है जिसके तहत दोनों पक्ष न विवाद चाहते हैं और न ही निरस्त्र होना। गणितज्ञ जॉन फोर्ब्स नैश जूनियर के नाम पर आधारित नैश संतुलन एक ऐसा रणनीति है जो असाझेदारी खेल (non-cooperative games) का प्रस्तावित समाधान देता है जिसके तहत यह मान लिया जाता है कि प्रत्येक खिलाड़ी दूसरे खिलाड़ियों के संतुलन की रणनीति को जानता है तथा कोई भी खिलाड़ी केवल अपनी रणनीति को बदल कर कुछ हासिल करने की स्थिति में नहीं है। दूसरे शब्दों में, शीतयुद्ध के समय की स्थिति में दोनों पक्षों की रणनीति एक–दूसरे की रणनीति पर निर्भरशील था। इसका मुख्य कारण दोनों पक्षों– संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ के पास परमाणु अस्त्र का भंडार (Nuclear stockpile) होना माना जाता था। शीत युद्ध के काल में क्युबा, रोडेसिआ, फाकलैंड जैसे क्षेत्रों में आर्थिक नाकाबंदी को भी व्यवहार में लाया गया है। शीत युद्ध में आर्थिक युद्ध के साथ–साथ मनोवैज्ञानिक रणनीति के भी व्यवहार में वृद्धि होता हुआ देखा जा सकता है। इस तरह के युद्ध कौशल में एक सुनियोजित तरीके से मनोवैज्ञानिक विधियों के माध्यम से प्रतिक्रियाएं उत्पन्न करने की चेष्टा किया जाता है जिससे विरोधियों के माध्यम से प्रतिक्रियाएं उत्पन्न करने की चेष्टा किया जाता है, जिससे विरोधियों के मनोबल को कमजोर किया जा सके और परिणामस्वरूप, प्रतिस्पर्धात्मक लाभ (Competitive Advantage) उठाने की स्थिति बने। वियतनाम युद्ध के दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा मनोवैज्ञानिक युद्ध का व्यापक कार्यक्रम चलाया गया जिसके माध्यम से वियतनामी सैन्यों को डराने की हर सम्भव कोशिश की गयी। उदाहरण स्वरूप, संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा रात को विकृत मानव ध्वनियों के ध्वन्यालेखन का व्यवहार कर वियतनामी सैन्यों को इस भय में रखना कि मृतक बदला लेने के लिये वापस आ रहे हैं।

द्वितीय विश्व युद्ध में एटमी बम के भयावह परिणाम के अनुभव के बावजूद शीत युद्ध काल में नाभिकीय हथियार का उत्पादन तथा संग्रह के प्रति विभिन्न राष्ट्रों का आकर्षण एक प्रमुख मुद्दा रहा है। न्यूक्लियर बम की विनाशकारी शक्ति विखंडन या उभय विखंडन तथा संलयन के संयोजन (thermo-nuclear bomb) से हुए परमाणु प्रतिक्रियाओं पर आधारित हैं। दोनों ही प्रकार के बम अति बड़ी मात्रा में विनाशकारी ऊर्जा छोड़ने की क्षमता रखते हैं। न्यूक्लियर बम के साथ आज अधिकतर राष्ट्रों के पास अति उच्चस्तरीय रासायनिक, जैविक, विकिरण हथियार तथा प्रक्षेपास्त्र तकनीक (Missile Technology) जैसे सामूहिक विनाश के हथियार (Weapons of Mass Destruction) उपलब्ध हैं। इन अस्त्रों–शस्त्रों की विनाशकारी क्षमता को ध्यान में रखते हुए संयुक्त राष्ट्र जैसे अंतर्राष्ट्रीय मंचों द्वारा अनेक अस्त्र नियंत्रण तथा निःशस्त्रीकरण पहल उठाए हैं जिनका सफलता आज भी एक प्रश्नचिन्ह बने हुए हैं परन्तु समकालीन सामरिक अध्ययन में विभिन्न परीक्षण प्रतिबंध संधि एवं अस्त्र–शस्त्र न्यूनीकरण के उद्यमों को भी महत्व दिया जा रहा है।9

इस संदर्भ में यहाँ यह बताना आवश्यक है कि अस्त्र–शस्त्र के बदलते स्वरूप के साथ अनेक संकल्पनाओं में भी बदलाव देखा जा सकता है। उत्तर–शीत युद्ध काल में यह बदलाव उल्लेखनीय है। उदाहरण स्वरूप, समकालीन युद्ध में युद्धभूमि अथवा युद्धक्षेत्र (battle field) के बदले युद्ध स्थान (battle space) का प्रयोग में आना। अति सरल रूप में, ''युद्धभूमि'' से हम उस निर्दिष्ट जल, स्थल या हवाई संदर्भ की ओर इंगित करते हैं जहाँ एक निर्दिष्ट समय में युद्ध को अंजाम दिया गया। इस तरह से ''युद्धभूमि'' समय तथा संदर्भ–स्थान पर आधारित रेखीय संकल्पना है। ''युद्धस्थान'' एक बहु–आयामी संकल्पना है जो जल, स्थल या हवाई संदर्भ के साथ सूचना एवं संजाल द्वारा संचालित साइबर स्पेस (Cyber space) को समाहित करता है। नब्बे के दशक से हुए संचार तकनीकी की क्रांति के बाद ISTAR या गुप्त समाचार, निरीक्षण, लक्ष्य प्राप्ति, आवीक्षण (Intelligence, Surveillance, Target Acquisition and Reconnaissance) प्रतिमान का व्यवहार सामरिक रणनीति के क्षेत्र में प्रमुख हो गया है। इस संदर्भ में अमेरिकी रक्षाविदों ने संजाल–केन्द्रित युद्ध (Network-centric warfare) संकल्पना का व्यवहार करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि संचार क्रांति का अधिकतम व्यवहार करने वाले राष्ट्र सामरिक क्षेत्र में प्रतिस्पर्धात्मक लाभ उठाने में सफल होंगे। समकालीन अंतर्राष्ट्रीय विवादों में मनोवैज्ञानिक रणनीति के व्यवहार में अत्यधिक वृद्धि होता हुआ दिखता है। इराक युद्ध के दौरान अमेरिका द्वारा अंतर्राष्ट्रीय प्रचार के माध्यम से समग्र विश्व के सामने इराक को खलनायक के रूप में प्रस्तुत करने तथा त्वरित प्रभुत्व (Rapid Dominance)

बलविन्यास के माध्यम से इराकी सैन्यों के मनोबल को कमजोर करने की चेष्टा समकालीन मनोवैज्ञानिक युद्ध का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। त्वरित प्रभुत्व बलविन्यास का अर्थ युद्ध के मैदान में भारी शक्ति तथा बल का शानदार प्रदर्शन कर शत्रु के मनोबल तथा इच्छाशक्ति को नष्ट करने की चेष्टा करना और सफलता प्राप्ति करना। इसके साथ आज के समय में विरोध–प्रचार (Counter propaganda) का भी व्यवहार अति सामान्य हो गया है। विरोध–प्रचार के माध्यम से शत्रु के प्रचार का जवाबी कार्यवाही की जाती है। भूजाल– आधारित संचार व्यवस्था (Internet- based communication system) के वजह से आज के समय में प्रचार तथा विरोध–प्रचार का प्रभाव क्षेत्रीय स्तर के बदले हुए पूरे विश्व स्तर पर अनुभव किया जा रहा है। वर्तमान काल में अमेरिकी सामरिक अध्ययन मनोवैज्ञानिक अभियान (psychological operations) के स्थान पर सैन्य सूचना समर्थन कार्यवाही (Military Information Support Operation) का व्यवहार कर रहा है। इस तरह से आज युद्ध रणभूमि के तुलना में संचार क्षेत्र में अधिक लड़ा जा रहा है।10

जब 1947 में अंग्रेज चले गए, तो भारत को एक सीमित औद्योगिक बुनियादी ढांचा और एक अच्छी तरह से प्रशिक्षित और संगठित सेना विरासत में मिली, जिसने दो विश्व युद्धों का अनुभव किया था। ऐतिहासिक रूप से, हिंसा और संघर्ष लगभग हमेशा एक नए राज्य के विकास के साथ होते हैं। 1947 में भारत और पाकिस्तान के मामले में ऐसा ही था। 1947–48 में पाकिस्तानी नियमित बलों के समर्थन से अनियमितताओं द्वारा शुरु किए गए हमलों के परिणामस्वरूप पाकिस्तान ने कश्मीर के एक बड़े हिस्से पर कब्जा कर लिया। सन् 1962 में चीन भारतीय क्षेत्रीय विवाद के कारण चीन ने ''भारत को सबक सिखाने'' के लिए दंडात्मक कार्रवाई की। 1965 में, भारत को कमजोर मानने के बाद, पाकिस्तान ने फिर से अखनूर–जम्मू रोड को काटने के लिए भारत के कश्मीर पर हमला करने का प्रयास किया।

सन् 1971 का भारत–पाक युद्ध, जिसके परिणामस्वरूप बांग्लादेश के नए राष्ट्र–राज्य का निर्माण हुआ और दक्षिण एशिया में एक प्रमुख राष्ट्र के रूप में भारत का उदय हुआ। 1971 के बाद से भारत का किसी भी पड़ोसी देश के साथ पूर्ण युद्ध (Total War) के स्थिति नहीं बनी। परंतु, युद्ध के स्वरूप में अनेक परिवर्तन देखने को मिला। पाकिस्तान के साथ 1999 में कारगिल युद्ध हुआ। कारगिल युद्ध को सीमित युद्ध (Limited War) का एक उत्कृष्ट उदाहरण माना जाता है।

भारत और चीन दोनों ही उभरते हुए शक्तियां हैं। दोनों देशों के बीच 1962 के बाद कोई बड़ी लड़ाई नहीं हुई है। परन्तु 2020 में लद्दाख में भारत और चीन के सैनिकों के बीच झड़प (skirmishes) हुई जिससे दोनों सेनाओं को नुकसान हुआ। सन् 2020–2021 में सीमा पर दोनों देशों के बीच कई महीने तक गतिरोध (Standoff) बना रहा।

निष्कर्ष–

विश्व व्यवस्था कोई निश्चित इकाई नहीं है। यह निरंतर विकसित होती रही है। निरंतर विकसित हो रही इस व्यवस्था को वर्णन करने के लिए विभिन्न विषय नई अवधारणाओं का आविष्कार करते रहे हैं। रक्षा एवं सामरिक अध्ययन का उद्देश्य विभिन्न राज्यों का एक–दूसरे के प्रति सामरिक तथा राजनयिक व्यवहार को समझना है। इस कारण से रक्षा तथा सामरिक विषयक्षेत्र के विद्वान समय की आवश्यकता के अनुसार नई संकल्पनाओं का आविष्कार करते रहे हैं। इनमें से कुछ संकल्पनाएं प्राचीन ज्ञान एवं समझ पर आधारित होते हैं तो कुछ नये होते हैं। इनमें से कुछ मौलिक संकल्पनाओं के बदलते स्वरूप, अर्थ तथा महत्व को अध्ययन कर विषय के बदलते प्रकृति, पद्धति तथा क्षेत्र को समग्रता के साथ समझा जा सकता है। उपरोक्त लेख में रक्षा एवं सामरिक अध्ययन में समयानुक्रम में परिलक्षित परिवर्तनों पर दृष्टि डालने की चेष्टा की गयी है। मुख्य रूप से युद्ध कि संकल्पना तथा युद्धक्षेत्र, रणनीति, बलविन्यास एवं अस्त्र–शस्त्र की बदलते धारणाओं को अति संक्षेप में व्याख्या किया गया है। निम्नोक्त सारणी से व्याख्या का सारांश देखा जा सकता है।

रक्षा एवं सामरिक अध्ययन के बदलते प्रतिमान

काल पर्याय	**युद्ध / विवाद का स्वरूप**	**चयनित मुख्य संकल्पनायें**	**युद्ध क्षेत्र का दायरा**	**रणनीति / बल–विन्यास**	**अस्त्र–शस्त्र**
विश्व युद्ध से पूर्व	अंतर्राज्य विवाद	दो–आयामी युद्ध : जल, स्थल	सीमांत क्षेत्र	प्रत्यक्ष	पारम्परिक हथियार– लकड़ी या धातु से निर्मित, तोपखाना, अश्वरोही सेना
विश्व युद्ध के दौरान	युरोप के विरोधी राज्यों के गुट (अंतर्राज्य विवाद,	तीन–आयामी युद्ध (हाट्लैंड, रिमलैंड, गठबंधन, लेबेंस्राम : जल,	क्षेत्रीय पर वैश्विक स्तर (जल, स्थल, हवाई रणभूमि)	गुट	नेवेल विमान, राइफल्स, मशीनगन, फ्लैमथ्रोवर, मोर्टार, तोपखाने, टैंक, विमान,

	गठबंधन हित)	स्थल, हवाई			पनडुब्बी, रसायनिक हथियार, एटमी बम
शीत युद्ध के दौरान	विरोधी विचारधारा	द्वि–ध्रुवीय व्यवस्था, निवारण, लोहा पर्दा, न्युक्लियर युद्ध	क्षेत्रीय पर वैश्विक स्तर (जल, स्थल, हवाई रणभूमि)	अप्रत्यक्ष	राइफल्स, मशीनगन, ग्रेनेड, टैंक, विमान, पनडुब्बी, न्युक्लियर बम
उत्तर शीत युद्ध	विरोधी राज्य/राष्ट्रीय आर्थिक हित, अमेरिका के अगवाई में नवीन विश्व व्यवस्था	बहु–ध्रुवीय व्यवस्था, साइबर हमला, आतंकवाद	अति व्यापक (जल, स्थल, हवाई, सूचना, साइबर स्पेस)	सूचना एवं संजाल केंद्रिक रणनीति	राइफल्स, मशीनगन, ग्रेनेड, टैंक, विमान, पनडुब्बी, न्युक्लियर बम (स्ट्रेटेजिक तथ टेक्टिकाल न्युक्लियर हथियार)

उपरोक्त लेख में रक्षा एवं सामरिक अध्ययन में समयानुक्रम में परिलक्षित परिवर्तनों पर दृष्टि डालने की चेष्टा की गयी है। मुख्य रूप से युद्ध की संकल्पना तथा युद्धक्षेत्र, रणनीति, बलविन्यास एवं अस्त्र–शस्त्र के बदलते धारणाओं का अति संक्षेप में व्याख्या किया गया है। निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि न्यूक्लियर हथियार के काल में रक्षा से अधिक सुरक्षा पर ध्यान केन्द्रित होने के कारण सामरिक अध्ययन के प्रकृति में मौलिक परिवर्तन हो रहे हैं जो इस विषयक्षेत्र को भारी मात्रा में चुनौतीपूर्ण बना रहे हैं।

रक्षा एवं सामरिक क्षेत्र में निरन्तर परिवर्तन हो रहा है। आज के समय में हाइब्रिड युद्ध के बारे में बात हो रही है। भारत में सूचना तंत्र को एक रक्षा एवं सामरिक हथियार के रूप में विकसित करने पर जोर है। इसी तरह युद्ध में ड्रोन का इस्तेमाल भी काफी महत्वपूर्ण हो गया है। भारत ड्रोन के विकास पर काफी जोर दे रहा है।

संदर्भ सूची–

1. कार्ल वॉन क्लॉज़विट्ज़, ओ. जे. मैथिज्स जोलेस क्लॉज़विट्ज़ द्वारा अनुवादित, ऑन वॉर, मॉडर्न लाइब्रेरी नंबर ळ22; प्रारंभिक संस्करण, 1943, पीपी। 280.

2. सुन जु, द आर्ट ऑफ वॉर लियोनेल जाइल्स द्वारा अनुवादित, डोवर प्रकाशन, न्यूयॉर्क, 2002, पीपी.14–38। (च.3)
3. एल. रंगराजन, कौटिल्यः ते अर्थशास्त्र पेंगुइन बुक्स इंडिया (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली, 1987, पीपी.675–739.
4. कर्नल हरजीत सिंह, द कौटिल्य अर्थशास्त्र ए मिलिट्री पर्सपेक्टिव, 2013, सेंटर फॉर लैंड वारफेयर स्टडीज (ब्स्ॅ), नई दिल्ली, पीपी 12.
5. कर्नल हरजीत सिंह, द कौटिल्य अर्थशास्त्र ए मिलिट्री पर्सपेक्टिव, 2013, सेंटर फॉर लैंड वारफेयर स्टडीज (ब्स्ॅ), नई दिल्ली, पीपी 16.
6. डॉ. के.सी. तिवारी, शिवाजीः 16 वीं शताब्दी के दौरान अरब सागर में सामरिक युद्ध के मास्टर, शोध प्रेरक, वॉल्यूम। 1, अंक 3, जुलाई 2011, पीपी.227
7. लांस ई. डेविस और स्टेनली एल. एंगरमैन, इंट्रोडक्शनः तू शाल नॉट पास, इन नेवल ब्लॉकेड्स इन पीस एंड वॉर, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयॉर्क, 2006, पीपी.1–25.
8. कोर्बेट, जे0एस0 (1988), सम प्रिंसिपल्स ऑफ मेरिटैम स्ट्रेटेजी, नावाला इंस्टीच्यूट प्रेस : आनपोलिस, मेरिलेंड ;महान, ए0ट0 (1987), द इंफ्लुएंस एफ सी पावर ऑन हिस्ट्री, डोवर : न्यूयार्क ;लिडल हार्ट, बी0एच0 (2012), स्ट्रेटेजी : द इंडारेक्ट आप्रोच (रिप्रिंट एडिसन), पेंटागन ;महान, ए0ट0 (1987), द इंफ्लुएंस एफ सी पावर ऑन हिस्ट्री, डोवर : न्यूयार्क
9. क्योहेन, रॉबर्ट ओ0 (1984), आफ्टर हेजेमनी, प्रिंस्टन यूनिवर्सिटी प्रेस : न्यू जर्सी

अध्याय 07

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत नेपाल सम्बन्ध: चुनौतियां एवं विकल्प

डॉ. शांतेश कुमार सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय
महेंद्रगढ़

डॉ. राकेश कुमार मीना
सहायक प्रोफ़ेसर
डी ए वी पीजी कॉलेज
बी एच यू, वाराणसी

भारत ने सदैव अपनी विदेश नीति में पड़ोसी सी देशों को वरीयता दी है। पड़ोसी देशों के साथ अपनाई गयी विदेश नीति को "गुजराल सिद्धांत" कहा गया, इस नीति का गठन 1996-97 में प्रधानमंत्री आई. के. गुजराल के कार्यकाल के दौरान हुआ था। यद्यपि यह नीति परोक्ष रूप से जवाहर लाल नेहरु के समय से ही भारत की विदेश नीति में शामिल थी।[i] पिछले सात दशकों में भारत की विदेश नीति और पड़ोसी देशों के साथ विदेश नीति के सामने विभिन्न प्रकार की चुनौतियां एवं समस्याएं उभर कर सामने आई हैं। इस परिप्रेक्ष्य में यह समझना जरुरी है कि भारत के नेपाल के साथ कैसे सम्बन्ध हैं, साथ ही उन्हें भविष्य में कैसे मधुर एवं गतिशील बनाया जा सकता है। भारत और नेपाल के सदियों पुराने ऐतिहासिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक, भाषाई और आर्थिक रूप से गहरे तार जुड़े हुए है। जो कि दोनों देशों के संबंधों को और भी गहरा बनाते हैं। इसके अतिरिक्त खुला बॉर्डर एवं सन 1950 की शांति एवं मैत्री संधि भी इस रिश्ते को अनोखा और विशिष्ट बनाती है।

यद्यपि, साल 2015 में दोनों देशों के संबंधों के आयाम में परिवर्तन आये, जब नेपाल ने अपने नए संविधान की घोषणा की। जिसकी परिणति के रूप में भारत नेपाल सीमा पर अनाधिकारिक नाकेबंदी हुई, जिसके बाद दोनों देशों के रिश्तों को सुधारने के लिए काफी प्रयास किये गये, जिसके तहत आपस में कई उच्च स्तरीय यात्रायें की गयीं, उदाहरण के तौर पर भारत के प्रधानमन्त्री नरेंद्र मोदी अपने पहले कार्यकाल में चार बार नेपाल की यात्रा पर गये थे। इसके प्रत्युत्तर में नेपाल के राजनीतिक नेतृत्व ने भी भारत की यात्रा की। नरेंद्र मोदी के दूसरी बार प्रधानमंत्री बनने के बाद नेपाल के साथ रिश्तों को सामान्य और मधुर बनाने की प्रबल आशा जाहिर की जा रही है।

मतभेद के मुद्दे

 ISSN: 2321-0443

यद्यपि क्रमिक रूप से रिश्ते सही पटरी पर आ रहे हैं, लेकिन अभी भी कई ऐसी कमजोरियां औए अनसुलझे मुद्दे हैं जिनको सुधारना बहुत जरुरी है। जिसमें **पहला** मुद्दा है प्रबुद्ध व्यक्तियों के समूह (EPG) की रिपोर्ट- साल 2016 में दोनों देशों की तरफ से 5-5 प्रबुद्ध व्यक्तियों के समूह का गठन किया गया, जिसे 1950 की शांति एवं मैत्री संधि तथा अन्य द्विपक्षीय मुद्दों की समीक्षा करनी थी। इस समीक्षा को करने का उद्देश्य यह था कि नेपाल ने इस संधि को संशोधित करने और 21वीं सदी में बदलते रिश्तों को अपडेट करने की मांग की थी। पिछले साल जुलाई 2018 में भारत नेपाल संबंधों पर प्रबुद्ध व्यक्तियों के समूह की अंतिम बैठक संपन्न हुई थी और इसके बाद दोनों समूहों ने अपनी रिपोर्ट स्वयं की सरकारों को सौंप दी थी। लेकिन अभी तक किसी भी सरकार ने अपनी रिपोर्टों का सार्वजनिक रूप से प्रकटीकरण नहीं किया है। [ii] नेपाल के सत्ताधारी दल कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ़ नेपाल ने अपने चुनावी घोषणा पत्र में भारत के साथ "असमान संधियों को संशोधित करने का वादा किया था। जिसके बाद से नेपाल के प्रधानमंत्री के पी शर्मा ओली पर संधि को संशोधित करने का दबाव है। यदि ये रिपोर्ट भारत सरकार और नेपाल सरकार स्वीकार नहीं करती है तो भारत नेपाल संबंधों पर इसका अनुकूल प्रभाव नहीं होगा। जैसा कि नेपाल सरकार बदलते दौर में द्विपक्षीय रिश्तों को EPG की रिपोर्ट की सहायता से पुनर्भाषित करना चाहती है।

दूसरा मुद्दा था नेपाल का नया संविधान, जो कि साल 2015 में उद्घोषित हुआ था। इस संविधान के कई प्रावधानों को लेकर भारत ने इसकी घोषणा के समय आपत्ति जाहिर की थी। जिसके अंतर्गत भारत ने यह इंगित किया था कि तराई क्षेत्र के लोग जिनके सामजिक और पारिवारिक सम्बन्ध भारत की तरफ के लोगों से काफी गहरे हैं, उनके साथ इस नये संविधान द्वारा भेदभाव किया गया है। इस मुद्दे के बाद नेपाल में भारत की इस मंशा पर काफी आलोचन की गयी थी। भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अपनी पहली नेपाल यात्रा के दौरान "समावेशी संविधान" के निर्माण की बात कही थी। हालांकि दोनों देशों के बीच आगे हुए संवादों में भारत की तरफ से नेपाल के संविधान पर कोई टिप्पणी नहीं की गयी और इसे नेपाल का आंतरिक मामला माना गया।

तीसरा मुद्दा था नोटबंदी/विमुद्रीकरण का, जिसमें भारत ने साल 2016 में 500 और 1000 की मुद्रा पर प्रतिबन्ध लगाया था, जिसका असर नेपाल पर भी पड़ा था। नेपाल राष्ट्र बैंक के अनुसार लगभग 33। 6 मिलियन प्रतिबंधित भारतीय रूपये नेपाल के बैंकों में कई माध्यमों से जमा हुए थे। इसके कारण नेपाल की जनता और वहाँ की अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ा था और बड़ी संख्या में लोग उस मुद्रा को बदलवाने की प्रतीक्षा में थे। पिछले साल नेपाल के प्रधानमन्त्री ओली के भारत आने से पहले वहाँ की संसद में इस मुद्दे पर चर्चा भी हुयी थी कि इस मुद्रा को भारत को बदलना चाहिए, लेकिन अंततः यह मुद्दा ज्ञापन समझौते में नहीं जुड़ पाया था। [iii]

चौथा, सार्क को सक्रिय रूप से पुनः संचालित करने के मामले में भी भारत और नेपाल के बीच अविश्वास बढ़ा है। भारत की विदेश नीति पिछले पांच सालों में बिम्सटेक, BBIN और एक्ट ईस्ट की नीति पर चल रहा है। पाकिस्तान द्वारा आतंकवाद को राज्य की नीति के रूप में संचालित करना और पठानकोट, उरी, पुलवामा इत्यादि जैसे आतंकी हमलों के फलस्वरूप सार्क देशों के नेताओं की बैठक नहीं हो पाई है। पिछले साल 2018 में काठमांडू में बिम्सटेक का चौथा सम्मलेन हुआ, जिसमे नेपाल के प्रधानमंत्री ओली ने कहा था कि बिम्सटेक सार्क की जगह नहीं ले सकता है और सार्क को पुनः सक्रिय करने पर बार बार बल भी नेपाल द्वारा दिया जा रहा है। इसके चलते साल 2018 में नेपाल की सेना ने भारत में हुए पहले बिम्सटेक सैन्य अभ्यास में भाग नहीं लिया था। [iv]

भूतपूर्व विदेश सचिव एस. जयशंकर ने विदेश मंत्री पद ग्रहण करते ही यह संकेत दे दिए थे कि भारत बिम्सटेक को सक्रिय करेगा जिससे पाकिस्तान इस दायरे से बाहर हो जायेगा। जैसा कि विदित है कि वर्तमान म नेपाल सार्क का चेयर है और इसका एक संस्थापक सदस्य भी रहा है। अतः दूसरी तरफ उसकी यह नैतिक जिम्मेदारी भी बनती है कि सार्क को सक्रिय रखा जाये जिससे पूरा क्षेत्र इसका लाभ उठा सके। हालांकि वर्तमान में भारत और पाकिस्तान के बीच चल रहे तनाव के कारण क्षेत्रीय स्तर का माहौल अनुकूल नहीं है और ऐसे में सार्क बैठक का आयोजन करवा पाना मुश्किल है। जिसके परिणामस्वरूप यह भारत और नेपाल के बीच एक मतभेद का मुद्दा बना हुआ है।

भारत में हाल ही में हुए आम चुनावों के बाद द्विपक्षीय रिश्तों के समीकरण में भी बदलाव दिखाई देता है। इस बदलाव से एक चीज स्पष्ट होती है कि द्विपक्षीय संबंधों को सुधारने में जितनी भूमिका और जिम्मेदारी भारत की है उतनी ही नेपाल की भी होनी चाहिए। दिसंबर 2022 में हुए चुनावों में नेपाल में फिर सत्ता परिवर्तन हुआ और माओवादी नेता पुष्पकमल दहल नेपाल के प्रधानमंत्री बने है, उनको भूमिका इस मामले महत्वपूर्ण है। नेपाल का दृष्टिकोण भारत द्वारा संचालित या एकपक्षीय नहीं होना चाहिए। इसलिए नेपाल को परिपक्वता दिखानी चाहिए कि वह भारत के साथ कैसे रिश्ते बनाना चाहता है। 30 मई 2019 को भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के शपथ समारोह में बिम्सटेक सदस्य राष्ट्रों को आमंत्रित किया गया। इस अवसर पर नेपाल के प्रधानमंत्री ओली ने प्रधानमंत्री मोदी को उपहार स्वरुप रुद्राक्ष माला भेंट की थी।[v] इस प्रकार के भाव और व्यवहार दोनों देशों के मध्य सांस्कृतिक और सौहार्दता के जुडावके संकेत देते है।

पाँचवा, चीन हमेशा से ही भारत और नेपाल के रिश्तों के मध्य एक प्रमुख कारक रहा है। साल 2015 में हुई नाकेबंदी के बाद से नेपाल में चीन के प्रभाव में पहले से ज्यादा वृद्धि हुई है। चीन की प्रबल इच्छा रही है कि वह नेपाल के बाजारों में अपनी पहुँच बनाये और वहाँ निवेश में बढ़ोतरी करे। इस संदर्भ में साल 2016 में नेपाल के प्रधानमंत्री ओली की चीन यात्रा काफी महत्वपूर्ण रही थी, जहाँ दोनों देशों ने कई

समझौतों और कनेक्टिविटी के प्रोजेक्टों, खासतौर पर रेल लिंक और हाइड्रो पॉवर प्रोजेक्ट पर हस्ताक्षर किये थे। आजकल नेपाल के स्कूलों में चीनी भाषा को पढ़ाने में वृद्धि हुई है और चीन की नेपाली छात्रों को दी जाने वाली छात्रवृत्ति में भी बढ़ोतरी हुई है, जिसकी संख्या अब 800 हो गयी है। इसके अतिरिक्त नेपाल चीन के महत्वाकांक्षी प्रोजेक्ट 'वन बेल्ट वन रोड़' का भी हिस्सा है। [vi]

छठा, वर्ष 2020 में भारत और नेपाल के मध्य कालापानी क्षेत्र पर अपना-अपना दावा करने की घटना सामने आई। भारत द्वारा जम्मू कश्मीर से धारा 370 हटाने के बाद भारत ने अपना राजनीतिक मानचित्र जारी किया, जिसमें कालापानी को अपना भूभाग प्रदर्शित किया। नेपाल का दावा है कि यह भूभाग उसके क्षेत्र में आता है। वर्ष 2020 में नेपाल ने भी अपना राजनीतिक मानचित्र जारी करने इसे अपने क्षेत्र में दिखाया है। दोनों ही देश इस भूभाग पर अपना दावा ऐतिहासिक तथ्यों से सिद्ध करने के तर्क देते है। दोनों देशों के मध्य कालापानी और सुस्ता क्षेत्र को छोड़कर 98 प्रतिशत सीमाई विवाद को सुलझा लिया गया है। [vii] नेपाल का कहना है कि भारत इस मुद्दे पर बातचीत नहीं करना चाहता। आशा है भविष्य में इसे दोनों देश वार्ता के माध्यम से सुलझा लेंगे।

नेपाल, चीन और भारत के मध्य एक भू सामरिक अवस्थिति पर है, जहाँ उसे इन दोनों शक्तियों के साथ प्रभाव के संतुलन को बनाने का निरंतर प्रयास करना होता है। चीन द्वारा नेपाल में बड़े पैमाने पर निवेश करने के बाद अमेरिका ने भी नेपाल में अपनी 'मुक्त एवं खुला इंडो पैसेफिक' नीति के तहत चीन को चुनौती दी है। अमेरिका और भारत ने चीन के बड़े पैमाने पर नेपाल में हो रहे निवेश पर सतर्कता बरतने की सलाह नेपाल को दी है। चीन के BRI प्रोजेक्ट से अन्य देशों के साथ हो रही मुश्किलों से भी नेपाल को सीखने की जरुरत है। नेपाल को यह भी संतुलन बनाना होगा कि कही चीन की इस BRI परियोजना से भारत और नेपाल के रिश्तों पर कोई प्रभाव न पड़े। नेपाल हाल ही में अमेरिका के सामरिक अभिलेख से जुड़ा है, जो कि नेपाल और अमेरिका के रक्षा संबंधों को मजबूत करता है। अमेरिका का इंडो पैसेफिक अभिलेख जून 2019 में प्रकाशित हुआ, जिसमे कहा गया कि अमेरिका नेपाल के साथ रक्षा संबंधो को सुदृढ़ करेगा जिसके अंतर्गत, शांति सेना ओपरेशन, रक्षा व्यवसायीकरण और सैन्य बलों की क्षमता के कार्यक्रम संचालित करेगा। यह विदित रहे कि भारत की सेना में नेपाल के गोरखा सैनिक सौ सालो से भी अधिक समय से काम कर रहे है। अब जबकि अमेरिका के साथ नेपाल का सैन्य सहयोग बढ़ रहा है, इसमें नेपाल को भारत नेपाल रिश्तों को भी ध्यान में रखना होगा।

संबंधों में मजबूती के आधार:

भौगोलिक समीपता, सामाजिक-सांस्कृतिक और धार्मिक जुड़ाव के कारण भारत और नेपाल के सम्बन्ध हमेशा से मजबूत रहे है। खुला बॉर्डर, नेपाल के लोगों को भारत में काम करने के अवसर और भारतीय सेना में नेपाल के गोरखा रेजीमेंट का होना, आपसी संबंधों को और भी गहरा तथा विशिष्ट बनाते है। साल 2018 में भारत के प्रधानमंत्री की नेपाल यात्रा के दौरान पशुपति मंदिर, जनकपुर और मुक्तिधाम मंदिर जाना हजारों साल पुराने सांस्कृतिक एवं धार्मिक संबंध को और मजबूत बनाती है।[viii]

निष्कर्ष

भारत यहाँ जानता है कि एक मजबूत और समृद्ध नेपाल ही उसके सुरक्षा हितों का बचाव कर सकता है, जिसमे जाली करेंसी और सीमा पर आतंकी समूहों के प्रवेश जैसे मुद्दे भारत की सुरक्षा से जुड़े हुए है। एक पड़ोसी के तौर पर भारत ने अतीत में जो नेपाल से वादे किये है, उन्हें संबोधित कर उनका निदान करना चाहिए। अभी हाल ही में अगस्त 2019 में भारत के विदेश मंत्री एस जयशंकर ने काठमांडू की यात्रा की, जो यह प्रदर्शित करता है कि भारत नेपाल पड़ोसी के रूप में कितना महत्व और वरीयता देता है। कोरोना महामारी के काल में भी भारत का नेपाल को सहयोग निरंतर बना रहा। इस संदर्भ में देखे तो जनवरी 2021 में भारत ने सबसे पहले कोरोना की वैक्सीन की खेप नेपाल और भूटान जैसे देशों को भेजकर आपसी संबंधों को मधुर और प्रगाढ़ बनाने की कोशिश की है।

नेपाल की तरफ से, नेपाल की सरकार को भारत के साथ इन अनसुलझे मुद्दों को कूटनीतिक माध्यमों से सुलझाने का प्रयास करना चाहिए, ना कि उनको राजनीतिक मुद्दा बनाकर लाभ लेने की कोशिश करनी चाहिए। यदि नेपाल के नेता इन मुद्दों को जनता के बीच ले जा कर राजनीतिक लाभ लेंगे तो भारत के साथ कूटनीतिक मंच पर इनको सुलझाना मुश्किल होगा। इसके अतिरिक्त दोनों देशो को सीमा के छोटे छोटे विवादों को समय रहते ही निपटारा कर देना चाहिए, जिससे आगे जाकर वे बड़े मुद्दे न बने। [ix]

नेपाल और भारत की भौगोलिक समीपता को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। साथ ही सकारात्मक द्विपक्षीय संबंधों को बनाए रखना भी बहुत जरूरी है। नेपाल में काफी लम्बे समय के बाद राजनीतिक स्थिरता आई है और अब उसे केवल आर्थिक विकास और सामजिक एवं सांस्कृतिक रचना पर ही ध्यान देना चाहिए। यह तभी संभव है जब भारत के प्रधानमंत्री मोदी के दूसरे कार्यकाल में आपसी रिश्तों की कायाकल्प में परिवर्तन होगा, जिसके फलस्वरूप पारस्परिक आर्थिक विकास होगा और दोनों देश अपने नारों- 'सबका साथ सबका विकास' और 'सुखी नेपाल समृद्ध नेपाल' को चरितार्थ कर पायेंगे।

संदर्भ:

---

[i] Padmaja Murthy, The Gujral Doctrine and Beyond, IDSA ,

https://www.idsa-india.org/an-jul9-8.html
[ii] Ajit Baral, "Eminently beneficial for India and Nepal", Nepali Times, 1 February, 2019, https://www.nepalitimes.com/here-now/eminently-beneficial-for-india-and-nepal/
[iii] Suresh Raj Neupane, "Modi Likely to visit Nepal in second week of May" The Kathmandu Post, 21 April 2018, http://epaper-archive-01.ekantipur.com/epaper/the-kathmandu-post/2018-04-22/2018-04-22.pdf
[iv] "BIMSTEC cannot replace SAARC", My Republica, 1 June, 2019, https://myrepublica.nagariknetwork.com/news/bimstec-cannot-replace-saarc-nepal-s-pm-kp-sharma-oli/
[v] Keshab Poudel, "Nepal India Relations under Modi II", Spotllight Nepal, 7 June, 2019, https://www.spotlightnepal.com/2019/06/07/nepal-india-relations-under-modi-ii/
[vi] Rakesh Kumar Meena, "Cementing a future for India Nepal ties" East Asia Forum, 17 August 2019, https://www.eastasiaforum.org/2019/08/17/cementing-a-future-for-india-nepal-ties/
[vii] Kavitha KK, "The Changing Paradigm of India-Nepal Relations: Problems and Prospects", Journal of Research in
Business and Management, Volume 4, pp। 12-13, 2016,
http://www.questjournals.org/jrbm/papers/vol4-issue5/B451015.pdf
[viii] "Indian Prime Minister Modi arrives in janakpur", The Himalayn Times, 11 May 2018, https://thehimalayantimes.com/nepal/indian-prime-minister-modi-arrives-in-janakpur/
[ix] "What does Nepal expect from Modi 2.0?", South Asian Voices, https://southasianvoices.org/what-does-nepal-expect-from-modi-2-0/

अध्याय 08

भारत-भूटान संबंध

डॉ. नीलम शर्मा
सहायक प्रोफ़ेसर
इतिहास विभाग
माता जीतोजी कन्या
महाविद्यालय,सूरतगढ़(राज.)

दक्षिण एशिया में भूटान हिमालय की गोद में स्थित एक पहाड़ी देश है। हिमालय पर्वत की विभिन्न शाखाएं इस देश को अपनी गोद मे समेटे हुए है। भूटान भारत की उत्तर-पूर्वी सीमा पर स्थित है। यह उत्तर-पश्चिम और पश्चिम में तिब्बत से सटा हुआ है। पूर्व में यह नॉर्थ ईस्ट फ्रंटियर एंजेन्सी (असम) के कमांग जिले से घिरा हुआ है, जबकि दक्षिण में भूटान की सीमाएं असम के कामरूप, गोलपाड़ा और दरांग जिले से लगती है। पश्चिम में भूटान की सीमाएं सिक्किम और पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले से जुड़ी हुई हैं। भूटान भारत का संरक्षित राज्य है।1 पुरातात्विक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि भूटान संभवतः 2000 ईसा पूर्व में बसा था। इसका कुल क्षेत्रफल 38.394 वर्ग किमी है। 2 साल 2017 में की गयी जनगणना के अनुसार भूटान की जनसंख्या 6 लाख 80 हजार थी। अक्टूबर 2020 के ताजा आंकड़ों के अनुसार इस समय भूटान की कुल आबादी 7,73,835 है।3

दुनिया के इस छोटे से देश भूटान का नाम संस्कृत भाषा में प्रचलित एक शब्द 'भुटुन' से लिया गया है, जिसका अर्थ है- 'तिब्बत का अंत' या 'उच्च भूमि'। एक अनुमान के अनुसार 2000 ईसा पूर्व में 'भुटुन' की भूमि पर लोगों ने बसना शुरू कर दिया था। प्रचलित मान्यताओं पर विश्वास करे तो यह कहा जा सकता है कि 7 वीं शती ईसापूर्व में यहां कूच बिहार के राजा का अधिकार था। किन्तु 9 वीं शताब्दी में यहां बौद्ध धर्म आने से पहले का इतिहास स्पष्ट नहीं है। लेकिन इस बात के पर्याप्त साक्ष्य मिलते हैं कि 17 वीं शताब्दी में भूटान ने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। ऐसा भी कहा जाता है कि भारतीय संत एंव गुरू पद्मसम्भव (कमल से उत्पन्न) ने आठवीं सदी में बौद्ध धर्म को भूटान और तिब्बत की सीमा में स्थापित करने का काम किया। भूटान में संत पद्मसंभव को गुरू रिम्पोछे (बहुमुल्य गुरू) भी कहा जाता है।

भूटान के तृतीय महाराजा जिग्मेय दोर जी वांग्चुक को आधुनिक भूटान का जनक कहा जाता है। यहां के स्थानीय लोग अपने देश भूटान को 'डुगयुल' भी कहते हैं, जिसका अर्थ है- 'अझदहा का देश'। भूटान में गालोप जाति के लोग बड़ी मात्रा में निवास करते हं। ऐतिहासिक साक्ष्यों में इन्हे भूटान का मूल

निवासी माना गया है। इस बात के पर्याप्त साक्ष्य मिलते हैं कि जब तिब्बत में अशांति व अस्थिरता का माहौल उत्पन्न हुआ तब बहुत सारे बौद्ध भिक्षु तिब्बत से आकर भूटान में बस गए। यहां पर निवास करने वाला ड्रूप्पा कंग्यूपा संप्रदाय आज भी यहां का प्रमुख संप्रदाय है, जो महायान शाखा (बौद्ध) के अनुयायी है।

ब्रिटिश शासन के दौरान भारत की ब्रिटिश सरकार और भूटान के बीच 1865 में एक संधि (सिनयूला) हुई। इस संधि के द्वारा भूटान को देशी रियासत का दर्जा प्रदान करने के साथ-साथ इस बात की व्यवस्था की गयी कि भारत की तत्कालीन ब्रिटिश सरकार भूटान के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगी तथा भूटान अपने विदेशी मामलों का संचालन भारत की सलाह और सहमति से करेगा।4 ब्रिटेन के हस्तक्षेप के कारण ही वहां राजशाही की स्थापना हुई। अज्ञेय बांग्चुक ने 1907 में लामाओं के पद और प्रभुत्व को मिटाकर भूटान पर अधिकार कर लिया। लामाओं ने अपने अस्तित्व और अपनी संस्कृति को बनाये रखने के लिए जनवरी 1910 में ब्रिटेन के साथ एक समझौता किया। इस समझौते के द्वारा यह तय किया गया कि भूटान के आंतरिक मामलों में किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा, लेकिन भूटान की विदेश नीति इंग्लैंड द्वारा तय की जाएगी।

भूटान के चौथे नरेश जिग्मेय सिग्य वांग्चुक ने भूटान के विकास मे अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके आर्थिक स्वावलंबन के आदर्शोंमें उनके द्वारा चलाए गए 'सकल राष्ट्रीय खुशहाली' अभियान ने भूटान की तस्वीर को ही बदल दिया। सीमित आर्थिक और सैन्य क्षमताओं के बावजूद भूटान का अनूठा राजनीतिक चरित्र कभी औपनिवेशिक प्रभाव में नहीं आया। इसी अनूठे राजनीतिक चरित्र के कारण ही भूटान ने खुद को दोनों विश्व युद्धों और शीतयुद्ध के प्रत्यक्ष प्रभाव से बचाये रखा।

भारत-भूटान संबंध

भौगोलिक और सांस्कृतिक संबंधों के आधार पर भारत और भूटान के रिश्ते प्राचीन काल से ही मधुर रहे हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत ने जिस विदेश नीति का खाका तैयार किया उसमें भूटान को अत्यंत महत्वपुर्ण पड़ोसी के रूप में स्वीकार किया गया। आज भी दोनों देशों के संबंध कमोबेश इसी नीति पर आगे बढ़ते दिखाई दे रहे है। आर्थिक रूप से अल्प विकसित राष्ट्र होने के बावजूद भूटान भारत के लिए सामरिक दृष्टि से काफी अहम हैं। खासतौर से 'चिकिन नेक कोरिडोर' में अवस्थित होने के कारण भारत की नीति हमेशा से भूटान को एक स्वतंत्र देश बनाए रखने की रही है। तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने संसद की कार्रवाई में भाग लेते हुए कहा था कि-'हिमालयी अवरोध में किसी अन्य शक्ति का प्रवेश भारत को स्वीकार्य नहीं है, भूटान, नेपाल और सिक्किम की सुरक्षा का दायित्व भारत पर है।'

सही अर्थों में भारत भूटान कूटनीतिक संबंधों की शुरूआत श्रीमती इंदिरा गांधी के कार्यकाल के दौरान 1968 में हुई जब भारत ने भूटान में अपना दूतावास शुरू किया। इससे पहले सिक्किम मे स्थित भारत के राजनयिक अधिकारी द्वारा भूटान का प्रतिनिधित्व किया जाता था।5

भारत ने आजादी के बाद से ही पड़ोसी देशों को साथ लेकर चलने की जो नीति अपनाई वह अगर सर्वाधिक कारगर रही तो वह भूटान में ही रही। नेपाल, पाकिस्तान, बांग्लादेश व श्रीलंका के साथ तो भारत के संबंधों में अकसर उतार-चढ़ाव आते रहे हैं, लेकिन हिमालयी देश भूटान के साथ संबंधों में कभी तल्खी नहीं आई। 1949 में भारत और भूटान के बीच हुई दार्जिलिंग संधि के बाद दोनों देश व्यापारिक, कूटनीतिक, सांस्कृतिक व सामरिक मुद्दों पर निरंतर आगे बढ़ते रहे हैं। इसी संधि को भूटान की विदेश नीति के तौर पर देखा जाता है। पिछले सात दशकों के भारत-भूटान संबंधों की विवेचना निम्न बिन्दुओं के अंतर्गत की गई है।

प्रथम चरण (1949 से 1964)

सन् 1950 में जब चीन ने तिब्बत पर कब्जा जमाने की कोशिश की तो भूटान को चीन के रूप में संभावित खतरा नजर आया। इसी संभावित खतरे के आलोक में भारत और भूटान के बीच द्विपक्षीय संबंध और मजबूत हुए। दोनों देशों के संबंधों को मजबूत बनाने की दिशा में भारत-भूटान मित्रता संधि(8 अगस्त 1949) का भी अपना योगदान रहा है। इस संधि के अनुसार भूटान अपने वैदेशिक मामलों का संचालन भारत की सलाह व सहमति से करेगा। भारत भी संप्रभुता और लोकतंत्र के प्रति भूटान की प्रगति का समर्थन करता है। कहना गलत नहीं होगा कि उक्त संधि दोनों देशों की अभिवृद्धि में सहायक बनी हुई है। जहां तक भारत के हित की बात है, सीमा से लगते देश भूटान में उसकी अनुमति के बिना किसी भी प्रकार की वैदेशिक गतिविधि की अनुमति नहीं है। निसंदेह यह संधि भारत के सामरिक हितों की दृष्टि से जरूरी भी थी । यद्यपि इस संधि में भूटान की सुरक्षा का भार भारत पर नहीं था परन्तु भारत-चीन युद्ध की परिस्थितियों से भयभीत भूटान ने अपनी सुरक्षा की जिम्मेदारी भारत पर डाल दी।6

साल 1950 में भूटान के नरेश जिग्मे डोरजी और भारत के प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने एक विशेष संधि पर हस्ताक्षर किये। इस संधि के द्वारा दोनों देशों ने संबंधों को बराबरी के धरातल पर स्वीकार किया। हालांकि नेपाल की तरह भूटान के भारत के साथ नदियों के पानी को लेकर किसी तरह का विवाद नहीं है, परन्तु भारतीय प्रभुत्व को लेकर भूटान व नेपाल की परेशानी एक जैसी ही है।7 यद्यपि संधि के अनुच्छेद 2 को लेकर भूटान के भीतर भारत विरोधी स्वर उभर रहे थे। भारत-भूटान संबंधों का विरोध करने वाले लगातार इस बात का तर्क दे रहे है कि भूटान ने अपनी संप्रभुता को भारत के हाथों बेच दिया है। इन लोगों ने संधि के अनुच्छेद 2 को यह तर्क देकर विवादास्पद बनाने का प्रयास किया कि भारत भूटान सरकार को सलाह दे सकता है, लेकिन भूटान उस सलाह को माने या न माने यह उसके विवेक पर निर्भर करता है। 17 मार्च 1960 को भारत की यात्रा पर आए भूटान के प्रधानमंत्री

जिग्मे दोरजी ने कहा कि सन् 1949 की संधि के कारण हम पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि भूटान की विदेश नीति के संचालन की जिम्मेदारी भारत सरकार की है। भूटान निवासियों की इस शंका का समाधान करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. नेहरू ने लोकसभा में कहा था कि -'भारत वस्तुतः भूटान की विदेश नीति का संचालन करने के लिए प्रतिबद्ध नहीं हैं।'

भारत-भूटान संबंधों को और अधिक मजबूत बनाने के लिए पं. नेहरू ने सितंबर 1958 में भूटान की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान भारत ने भूटान के संचार तथा आर्थिक विकास के कार्यक्रमों में रूचि दिखाई। दूसरी ओर चीन की विस्तारवादी दृष्टि भूटान पर लगी थी। जुलाई 1958 में चीन ने अपनी पत्रिका चाइना फिक्टोरियल में भूटान की कुछ सीमा को अपने क्षेत्र में दिखाया था।8 इस बात को लेकर 28 अगस्त 1959 को लोकसभा में बोलते हुए पं. नेहरू ने कहा था कि-'सिक्किम या भूटान पर किया गया कोई भी आक्रमण भारत पर आक्रमण माना जाएगा।' कालांतर में 1959 मंे जब चीन ने तिब्बत पर कब्जा किया तो भूटान का झुकाव भारत की ओर अधिक हो गया।9 1962 में भारत-चीन युद्ध के दौरान चीन ने भूटान के 340 वर्ग किमी भूमि पर कब्जा कर लिया तब से लेकर आज तक भूटान अपनी उस जमीन को प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है। दूसरी ओर चीन का कहना है कि चीन-भूटान विवाद को सुलझाने में भारत की कोई भूमिका नहीं होनी चाहिए। भारत इसे भारत-भूटान संधि 1949 की अवहेलना मानता है।10

भारत और भूटान के संबंध सामरिक मोर्चे पर तो आगे बढ़ ही रहे थे, दूसरी ओर भारत भूटान के ढांचागत विकास में भी रूचि ले रहा था। साल 1955 में जब भूटान ने अपनी राजधानी पारो से बदलकर कर थिम्पू बनाई उस वक्त थिम्पू को पश्चिम बंगाल से जोड़ने वाली सड़क का निर्माण भारत द्वारा करवाया गया।11 सितंबर 1961 में भारत-भूटान के बीच जरूंदके नदी के संबंध में जलविद्युत परियोजना को लेकर एक समझौता हुआ।

द्वितीय चरण (1964 से 1984)

1970 के दशक में भूटान खुलकर बाहरी देशों के साथ संपर्क बढ़ाने की नीति पर आगे बढ़ा। भारत ने भूटान की इस नीति का न केवल समर्थन किया बल्कि उसे शेष विश्व समुदाय से जुड़ने में सहयोग भी दिया। सितंबर 1971 में भारत के प्रयासों से भूटान यू एन ओं में 127 वें देश के रूप में शामिल हुआ। भारत के इस सहयोग को भूटान अनेक अवसरों पर यू एन के भीतर और बाहर प्रकट कर चुका है। इसी प्रकार भूटान 1973 में गुटनिरपेक्ष(नाम) देशों का सदस्य बना। 2 जून 1974 में जिग्में सिग्में वांग्चुक की ताजपोशी समारोह के अवसर पर संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् के पांचों स्थाई देशों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। इस अवसर पर भूटान ने स्पष्ट कहा था कि भूटान अपने पड़ोसियों के साथ सदैव मैत्रीपूर्ण संबंध रखेगा। दिसबंर 1974 में दोरजी सिग्में वांग्चुक ने भारत की यात्रा की। यात्रा के दौरान भारत ने भूटान के विकास में योगदान देने का वादा किया। 12 जनवरी 1976 में भूटान नरेश की बहन विकास मंत्रालय के प्रतिनिधि के रूप में भारत यात्रा पर नई दिल्ली आई। अगस्त 1976 में

आयोजित गुटनिरपेक्ष देशों की पांचवी शिखर बैठक में भाग लेने के लिए कोलम्बो जाते समय भूटान नरेश कुछ समय के लिए दिल्ली ठहरे और भारतीय नेताओं के साथ हुई संक्षिप्त मुलाकात के दौरान उन्होंने भूटान के विकास में भारत द्वारा किये जा रहे योगदान की सराहना की।

सही अर्थों में भारत-भूटान संबंध उस वक्त परवान चढ़ने शुरू हुए जब साल 1977 में भूटान ने नई दिल्ली में अपना दूतावास आरम्भ किया। दूतावास आरम्भ होने के साथ ही दोनों देशों के शासन प्रमुखों की यात्राओं का दौर शुरू हुआ। इसी क्रम में 1978 में भूटान नरेश जिग्मे खेसर नामग्याल वांग्चुक भारत की यात्रा पर आए। शासनाध्यक्षों की इन यात्राओं के दौरान दोनों देशों के बीच राजनयिक संबंधों में तो मजबूती आई ही, वहीं आर्थिक क्षेत्र में भी भारत-भूटान संबंध और अधिक मजबूत हुए। 1972 में भूटान भारत के सहयोग से एशिया के आर्थिक एवं सामाजिक आयोग का सदस्य बना।13

पिछले दो दशकों से भारत-भूटान के योजनाबद्ध विकास में सहयोग कर रहा है। भूटान की पहली दोनों पंचवर्षीय योजनाओं को पूरा करने में भारत ने सराहनीय योगदान दिया। भूटान की 35 करोड़ रूपये मूल्य की तीसरी पंचवर्षीय योजना में भारत ने 33 करोड़ रूपये का योगदान दिया था। इसी प्रकार भूटान की चैथी पंचवर्षीय योजना (77 करोड़ रूपये) में भारत ने 70 करोड़ रूपये से अधिक का सहयोग दिया। मार्च 1977 में जब जनता दल की सरकार बनी उस वक्त भारत-भूटान के बीच एक व्यापार समझौता हुआ । इस समझौते के अनुसार भूटान द्वारा निर्यात की गई वस्तुओं को भारत द्वारा अस्वीकृत किये जाने पर भूटान इन वस्तुओं को किसी अन्य देश को बेच सकेगा। इससे पहले भूटान का किसी भी देश के साथ व्यापारिक समझौता नहीं था। वह अपनी वस्तुओं को भारत के माध्यम से ही अंतर्राष्ट्रीय एजेसियों को बेचता था।14

भारत ने भूटान के सतत आर्थिक विकास के लिए भूटान की पांचवी विकास योजना 1981-87 के लिए 139 करोड़ रूपये देने का वादा किया। भूटान को पारो से कलकत्ता तक जोड़ने के लिए अंतर्राष्ट्रीय विमान सेवा शुरू की। साथ ही भारत ने उदारता का परिचय देते हुए भूटान में रहने वाले 1500 तिब्बत शरणार्थियों को भारत में शरण देना स्वीकार किया।15

तृतीय चरण (1984 से 2004)

30 सितंबर 1985 को तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी भूटान की यात्रा पर गए। इस मौके पर प्रधानमंत्री गांधी ने भूटान की संसद को संबोधित करते हुए भूटान के विकास में लगातार सहयोग करते रहने का वचन दिया। 8 दिसम्बर 1985 को जब ढाका में दक्षिण एशिया क्षेत्रिय सहयोग संघ (सार्क) की स्थापना हुई उस वक्त दक्षिण एशिया के जिन सात पड़ोसी देशों ने हस्ताक्षर किये थे उसमें भूटान भी शामिल था।16

16 नंवबर 1986 को बैगलोर में आयोजित दूसरी सार्क बैठक में भाग लेने के लिए भूटान नरेश जिग्में सिग्य वांग्चुक भारत आए। शिखर बैठक को संबोधित करते हुए भूटान नरेश ने कहा कि भारत-भूटान

संबंध पारस्परिक सहयोग की भावना का एक ऐसा ऊंचा आदर्श है, जिसे वास्तविक धरातल पर उतारने के लिए दोनों देशों के बीच मित्रता की इस भावना को और अधिक मजबूत करना होगा। सितंबर 1988 में प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी दूसरी बार भूटान की यात्रा पर गए। तीन दिवसीय यात्रा के दौरान उन्होंने नये कुरजे लखांग के निर्माण और बुन्थाग घाटी में मठों के जीर्णोद्धार के लिए 10 लाख रूपये प्रदान किए। प्रधानमंत्री श्री गांधी की यात्रा के तुरन्त बाद भूटान नरेश के निमंत्रण पर भारत के राष्ट्रपति आर. वेंकटरमन चार दिवसीय (18-21 अक्टूबर) यात्रा पर भूटान पहुंचे। इस यात्रा के दौरान राष्ट्रपति वेंकटरमन ने चूखा पनबिजली परियोजना का उद्घाटन किया।

1990 के दशक में भी भारत-भूटान संबंधों में नए आयाम स्थापित हुए। साल 1990 आर्थिक, राजनयिक व सामरिक दृष्टिकोण से दोनों देशों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। अगस्त 1993 में प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हाराव ने भूटान की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच कई महत्वपूर्ण समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। अमेरिका ने जब व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि पर हस्ताक्षर करने के लिए भारत पर दबाव बनाया तो उस वक्त भूटान भी उन देशों में शामिल था जो भारत के तर्कों का समर्थन कर रहे थे। भूटान के इस सकारात्मक कदम से दोनों देशों के संबंध और अधिक मजबूत हुए।17

दिसंबर 1999 में भारत-भूटान ने अपने संबंधों को और अधिक विकसित करने के लिए भारत-भूटान मित्रता समाज का गठन किया । सितंबर 2003 में भूटान नरेश वाग्चुक 5 दिनों की यात्रा पर भारत आए। इस यात्रा के दौरान वाग्चुंक ने भारत को विश्वास दिलाया कि उनकी सरकार आतंकवाद के विरूद्ध अभियान में भारत के साथ है। उन्होंने भारत सरकार को पूर्ण भरोसा दिया कि भूटान की जमीन से दूसरे राष्ट्रों के खिलाफ कोई गतिविधि संचालित नहीं होने देगा। दिसंबर 2003 व जनवरी 2004 में भूटान की आर्मी (रायल भूटान आर्मी) ने एक अभियान चलाकर अपने देश के भीतर संचालित किए जा रहे सभी आतंकी शिविरों को समाप्त कर दिया। भूटान की इस कार्रवाई का न केवल भारत सरकार ने, बल्कि दुनिया के दूसरे देशों ने भी सराहना की।18

भारत-भूटान संबंधों के तीसरे चरण तक आते-आते दोनों देशों के कूटनीतिक और राजनयिक संबंध तो मजबूत हुए ही, आर्थिक संबंध भी दृढ़ हुए। जनवरी 1987 में भूटान के योजना आयोग के सचिव दाशोसी दोरजी की भारत यात्रा के दौरान भारत ने भूटान को चूखा पनबिजली परियोजना तथा दामुस सीमेण्ट प्लांट के निर्माण के लिए 83 करोड़ रूपये का ऋण देने के लिए सहमति व्यक्त की। इसी प्रकार जनवरी 1988 में भूटान ने भारत के साथ नागरिक उड्डयन के संबंध में एक समझौता किया। समझौते के अंतर्गत भूटान को भारतीय हवाई अड्डों का प्रयोग करने की सुविधा दी गई। जून 1988 में भारत सरकार ने पुनाखा और पेण्डन परियोजना की प्रगति के लिए भूटान को 115 मिलियन रूपये का अनुदान प्रदान किया गया। साल 1988 में चूखा हाईडल प्रोजेक्ट का उद्घाटन करने के लिए भारत के पूर्व राष्ट्रपति आर. वेंकटरमण भूटान की यात्रा पर गए। इस अवसर पर राष्ट्रपति वेंकटरमण ने कहा कि भारत चूखा हाईडल प्रोजेक्ट भारत-भूटान के बीच आर्थिक सहयोग का झिलमिलाता हुआ प्रमाण है।19

1990 के दशक में भारत-भूटान के बीच व्यापारिक संबंध और अधिक मजबूत हुए। 2 मार्च 1990 को दोनों देशों के बीच एक महत्वपूर्ण समझौता हुआ जिसके अंतर्गत मुक्त व्यापार व्यवस्थाओं के बने रहने तथा आयात-निर्यात के लिए तीन नये केन्द्र खोलने का निर्णय लिया गया। अगस्त 1993 में प्रधानमंत्री नरसिंहाराव ने भूटान की यात्रा की । आर्थिक संबंधों के साथ-साथ इस यात्रा ने राजनीतिक संबंधों को भी सुदृढ किया। कई आर्थिक योजनाओं की स्वीकृति के साथ-साथ भूटान के शीतयुद्धोतर युग में उदारीकरण के अंतर्गत भारत की कंपनियों ने भूटान में निवेश की अपील की। 1996 में भारत में संयुक्त मोर्चा सरकार के विदेशमंत्री आई.के. गुजराल ने दक्षिण एशिया के देशों से संबंध सुधारने की दिशा में 'गुजराल सिद्धांत' पेश किया। बाद में जब श्री गुजराल भारत के प्रधानमंत्री बने तब 1997 में भारत में आयोजित सार्क शिखिर बैठक के दौरान भारत, भूटान, बांग्लादेश तथा नेपाल के साथ उपक्षेत्रीय सहयोग को स्वीकार किया गया। साप्टा की स्वीकृति से भी दोनों देशों के संबंध लाभकारी भूमिका की दिशा में आगे बढते दिखाई दिए। दिसबंर 1999 में दोनों देशों ने अपने संबंधों का और अधिक मजबूत करने के लिए भारत-भूटान मित्रता सामाज का गठन किया ।

चतुर्थ चरण (2004 से 2014)

भारत-भूटान संबंधों को आगे बढाने वाली 1949 में हस्ताक्षरित मैत्री संधि के प्रावधानों में साल 2007 में परिवर्तन किए गए। संधि के इस संशोधित स्वरूप पर भूटान के महामहिम जिग्मे खेसर नामग्याल वांगचुक की भारत यात्रा के दौरान हस्ताक्षर हुए।

इस अवधि के दौरान भूटान ने भारत के चुनाव आयोग के साथ एक महत्वपूर्ण समझौता किया। इस समझौते के तहत भारत के चुनाव आयोग ने भूटान के चुनाव आयोग को भूटान में होने वाले पहले संसदीय चुनाव (2008) को निष्पक्ष रूप से करवाने में मदद के सहयोग का वचन दिया। सैकड़ों वर्षों के पूर्ण राजतंत्र के बाद वर्ष 2008 में पहली बार भूटान में लोकतान्त्रिक तरीके से निर्वाचित सरकार सत्ता में आई। भूटान में लोकतांत्रिक संवैधानिक राजतंत्र स्थापित हुआ और भूटान को दुनिया के सबसे ताजा लोकतंत्र के रूप में पहचान मिली।20 भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहनसिंह ने 16-17 मई 2008 को भूटान की यात्रा की और लोकतांत्रिक रूप से चुने गए संसद के पहले सत्र को संबोधित किया। इस अवसर पर डॉ. मनमोहन सिंह ने भूटान में जल विघुत ऊर्जा के विकास के लक्ष्य को दुगना करने की घोषणा करते हुए साल 2020 तक 10 हजार मेगावाट करने की बात कही । इसी क्रम में भूटान के प्रधानमंत्री ल्योचेन जिग्मे वाई थिन्ले जुलाई 2008 में भारत यात्रा पर आए। इसके बाद नवंबर 2008 में उन्होंने पुनः नई दिल्ली में दूसरे बिम्सटेक सम्मेलन में भाग लेने के लिए भारत की यात्रा की। दिसबंर 2009 में महामहिम जिग्मे खेसर वांग्चुक की भारत यात्रा के दौरान हाईड्रोकार्बन, स्वास्थ्य व कृषि के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण समझौते हुए।

भारत-भूटान संबंधों में सितंबर 2010 में एक और मुकाम आया जब भूटान की राजधानी थिम्पू में स्थित भारतीय दुतावास में नेहरू वांग्चुक नाम से सांस्कृतिक विंग की शुरूआत की गई। इसे दोनों देशों

के सबंधों में मील के पत्थर के रूप में देखा जाता हैं। इसी प्रकार दोनों देशों ने अपने संबंधों को मजबूत करने के लिए नियमित यात्राओं की परंपरा जारी रखी। भूटान के महामहिम जिग्मे खेसर वांग्चुक जनवरी 2013 में भारत के 64 वें गणतंत्र दिवस समारोह में मुख्य अतिथि की हैसियत से भारत आए। प्रधानमंत्री जिग्मी वाई थिन्ली की दो दिन की भारत यात्रा (फरवरी 2013) के बाद जनवरी 2014 को भूटान नरेश और उनकी धर्मपत्नी 5 दिन की भारत यात्रा पर दिल्ली आए। इसी क्रम में दिनांक 30 अगस्त से 4 सितंबर 2013 को भूटान के नवनिर्वाचित प्रधानमंत्री शेरिंग तोबगे ने भारत की यात्रा की। इस यात्रा के दौरान भारत ने भूटान की 11 वीं पंचवर्षीय योजना में 5000 करोड़ रूपये का सहयोग प्रदान करने का आश्वासन दिया। इससे पहले भारत ने भूटान की दसवीं पंचवर्षीय योजना (2008-13) को पूरा करने में भी 3400 करोड़ रूपये की सहायता प्रदान की थी।

भारत में सत्ता परिर्वतन के बाद नवनिर्वाचित प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 'पड़ोसी-प्रथम' की नीति को आंरभ करते हुए जब अपने शपथ ग्रहण समारोह में सार्क देशों के शासनाध्यक्षों को आमंत्रित किया, तो उसी क्रम में भूटान के प्रधानमंत्री शेरिंग तोबगे भी भारत आए। पीएम मोदी ने उच्च स्तरीय यात्रा और वार्ता परम्परा को आगे बढाते हुए 15-16 जून 2014 को भूटान की यात्रा की । इस यात्रा के दौरान उन्होंने 16 जून को भूटानी संसद के संयुक्त सत्र को संबोधित करते हुए दोनों देशों के संबंधों को b2b संबंध (भारत से भूटान संबंध) की संज्ञा दी।

पारस्परिक लाभ के लिए आर्थिक संबंध, भारत और भूटान के बीच द्विपक्षीय संबंधों का एक महत्वपूर्ण घटक है। भारत भूटान का सबसे बड़ा व्यापार भागीदार भी है। भूटान के साथ भारत का व्यापार जो 2004-05 में 155.58 मिलियन था साल 2012-13 में बढकर 171.98 मिलियन डॉलर तक पहुंच गया। 21 वर्ष 2012 के दौरान दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय व्यापार 6960 करोड़ रूपये का था जिसमें भूटान ने भारत से कुल 4180 करोड़ रूपये मूल्यकी वस्तुओं का आयात किया जो कुल आयात का 79.4 प्रतिशत था। दूसरी ओर भूटान ने भारत को 2780 करोड़ रूपये (बिजली सहित) का निर्यात किया, जो भूटान की कुल निर्यात का 94 प्रतिशत है।22 भूटान प्रतिवर्ष भारत को तांबे के तार, डोलोमाईट, जिप्सम, मिश्र धातू व बिजली का निर्यात करता है। इसके अलावा भूटान एग्रो प्रोडक्टस के रूप में संतरा, इलायची व आलू भारत को भेजता है। दूसरी ओर भारत द्वारा भूटान को हाई स्पीड डीजल मोटर, पट्रोल, गंहू का आटा, लकड़ी का कोयला, सोयाबीन तेल, दूध बनाने का पाउडर आदि का निर्यात किया जाता है।

पंचम चरण (2014 से अब तक)

प्रधानमंत्री बनने के बाद नरेन्द्र मोदी अपनी पहली विदेश यात्रा पर 16 जून 2014 को भूटान पहुंचे । यात्रा पर रवाना होने से पहले पीएम मोदी ने कहा कि भूटान उनकी पहली विदेश यात्रा के लिए स्वाभाविक स्थल था क्योंकि उसके साथ भारत के अनोखे और विशिष्ट संबंध हैं। यात्रा के दौरान पीएम मोदी ने भूटानी संसद के संयुक्त सत्र को संबोधित करने के साथ-साथ भारत के सहयोग (70 करोड़ रूपये) से निर्मित भूटान की सुप्रीम कोर्ट की इमारत का उद्घाटन किया। इस अवसर पर पीम मोदी ने

कहा कि हम भूटान के आर्थिक विकास और इसकी प्रगति तथा समृद्धि से अभिभूत है। हम भूटान को इसके विकास प्रयासों में अपना भरपूर समर्थन जारी रखने को कटिबद्ध है। यात्रा के दौरान पीएम मोदी ने 600 मेगावाट की खोलोंगचू पनबिजली परियोजना का शिलान्यास किया। मोदी की भूटान यात्रा के दौरान भारत ने द्विपक्षीय मुक्त व्यापार व्यवस्था को और अधिक बढाने की आवश्यकता पर बल दिया। मोदी ने भूटान से आयात होने वाली पांच वस्तुओं-मिल्क पाउडर, गेहूं, खाद्य तेल, दालें, और गैर बासमती चावल पर किसी भी प्रकार का प्रतिबंध न लगाने का निर्णय लिया।

अतः निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि भारत-भूटान संबंधों की सात दशक की लंबी यात्रा के सिंहावलोकन के पश्चात कहा जा सकता है कि भारत और भूटान दुनिया के ऐसे इकलौते पड़ोसी देश है, जो 699 किमी लंबी सीमा साझा करते रहने, के बावजूद आज तक दोनों देशों के बीच तनाव के कोई बिन्दू नहीं उभरे है। अतः डॉ. अर्चना उपाध्याय के इस कथन से सहमत होते हुए कहा जा सकता है कि भारत-भूटान संबंध सदैव मधुर रहे हैं, लेकिन पिछले कुछ दशकों से चीन एशिया का शक्ति संतुलन अपने पक्ष में बनाने के उद्देश्य से छोटे देशों के सामरिक महत्व का लाभ उठाना चाहता है। इस परिपेक्ष में भूटान के संबंध में भारतीय विदेश नीति को अधिक सजग व विवेकपूर्ण रहना होगा।23

संदर्भः

1.पिताम्बर दत्त कौशिक, अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, पंचम सस्करण, 1995, कल्याणी पब्लिशर्स, पेज 539.

2 Statistical Year Book of Bhutan; 2012), National Statistics Bureau, Royal Govt. of Bhutan.

3. WWW.WorlodMeters.Infon

4 एस.पी सिंहलः भारत की विदेश नीतिः लक्ष्मीनारायण अग्रवाल प्रकाशन आगरा, वर्ष 2006-07 पृ. सं. 193

5. रूप नारायण झाः भारत-भूटान संबंधः 1947-1997, यूनिवर्सिटि बुक हाउस प्रा. लि. जयपुर, 1988 पृ. सं. 1

6. प्रो. पवन कुमारः भारत की विदेश नीतिः ओमेगा पब्लिकेशन नई दिल्ली वर्ष 2006 पृ.सं. 54

7. डा पुष्पेश पंत-श्रीपाल जैनः भारतीय विदेश नीति-नए आयामः मिनाक्षी प्रकाशन मेरठ, वर्ष 1994-95 पृ. सं. 115

8. ए. आप्पादोराई-एम.एस. राजन 1985 इंडियाज फाॅरन पोलिसी एंड रिलेशन, नई दिल्ली साउथ ऐशियन पब्लिर्सश पेज 173

9. लोक सभा डिबेट, सैकिड सिरिज अपेंडिक्स-1 लोकसभा सचिवालय, नई दिल्ली 28 अगस्त 1959 पेज नं 672)

10. आर.सी मिश्राः पाॅलिटिक्स इंडिया, मई 199 वोल्यूम 111 नं. 1 पेज नं. 35

11. डा. रामदेव भारद्वाजः भारत और अंतर्राष्ट्रीय संबंधः मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल वर्ष 2005 पृसं. 360

12 भूटान ए किंगडम इन हिमालायाः नगेन्द्र सिंहः थामसन प्रैस, इडिया लि. 1978 पृ.सं. 360

13. इंडो-भूटान रिलेशन एंड चाईना इंटरवेन्शनः लाल बाबू यादव, अनमोल पब्लिकेशन नई दिल्ली वर्ष 1996 पृ.सं. 163

14. डा. रामदेव भारद्वाजः भारत और अंतर्राष्टीय संबंधः मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल वर्ष 2005 पृस. 360

15. भारत की विदेश नीतिः डा ब्रजेन्द्र प्रताप गौतम, मयूर पेपर बैक्स नोयडा वर्ष 2004 पृ.सं. 164

16. डा. राजाबाला सिंहः भारत की विदेश नीति, आविष्कार पब्लिर्शस, जयपुर वर्ष 2005 पृ.सक्ं. 194

17. डा अर्चना उपाध्याय, भारत की विदेश नीति और अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. सं. 122

18. बी.सी. उप्रेती साल 2004 डाइलेमा आफ चेंज इन हिमालाय किंगडम दिल्ली, कंलीगा पब्लिकेशन पेज नं 84

19. पवन कुमारः भारत की विदेश नीतिः ओमेगाा पब्लिकेशन नई दिल्ली, वर्ष 2006 पेज नं 36

20. Democracy in Bhutan-Instiute of Peace and conflict Studies, at: WWW.ipcs.org/pdf-file/issue/RP24. Marian.Bhutan.pdf

21. Export-import Data Bank, Government of India, New Delhi, Apr.2013

22. meaindia.nic.in/meaxpsitef/oreign relation/ Bhutan.pdf.india Bhutan pg 01

23. डॉ अर्चना उपाध्याय, भारत की विदेश नीति और अंतर्राष्ट्रीय संबंध, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. सं. 123

अध्याय 09

म्यांमार के साथ भारत के उभरते संबंध: चुनौतियां और संभावनाएं

डॉ. आशुतोष पांडेय
एसोसिएट प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान और लोक प्रशासन
विभाग
डॉ. शकुंतला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास
विश्वविद्यालय, लखनऊ, यू.पी.

भारत और म्याँमार के संबंधों की आधिकारिक शुरुआत 1951 की मैत्री संधि पर हस्ताक्षर किये जाने के बाद हुई, जिसके बाद वर्ष 1987 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी की म्याँमार यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच अधिक सार्थक संबंधों की नींव रखी गई। म्याँमार एकमात्र ऐसा देश है जो भारत की "नेबरहुड फर्स्ट नीति" और 'एक्ट ईस्ट नीति' दोनों के लिये समान रूप से महत्त्वपूर्ण है। हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत की क्षेत्रीय कूटनीति को संचालित करने में म्याँमार एक महत्त्वपूर्ण घटक है और यह दक्षिण एशिया तथा दक्षिण-पूर्व एशिया को जोड़ने के लिये सेतु का कार्य करता है। यदि भारत एशिया में एक मुखर क्षेत्रीय शक्ति के रूप में स्वयं को स्थापित करना चाहता है, तो इसे ऐसी नीतियों के विकास की दिशा में काम करना होगा जो पड़ोसी देशों के साथ इसके संबंधों को बेहतर और मजबूत बनाने में सहायक हों। हालाँकि इस नीति के कार्यान्वयन में चीन एक बड़ी बाधा है, क्योंकि चीन का लक्ष्य भारत के पड़ोसियों पर इसके प्रभुत्त्व को समाप्त करना है। ऐसे में भारत और चीन दोनों ही म्याँमार पर अपना प्रभुत्त्व स्थापित करने के लिये एक अप्रत्यक्ष होड़ में शामिल हैं। उदाहरण के लिये हिंद महासागर हेतु स्थापित अपनी 'सिक्योरिटी एंड ग्रोथ फॉर ऑल इन द रीज़न' या सागर (SAGAR) नीति के तहत भारत ने म्याँमार के रखाईन प्रांत में सित्वे बंदरगाह को विकसित किया है। सित्वे बंदरगाह को म्याँमार में चीन समर्थित क्याउक्प्यू बंदरगाह के लिये भारत की प्रतिक्रिया के रूप में देखा जा सकता है, गौरतलब है कि क्याउक्प्यू बंदरगाह का उद्देश्य रखाईन प्रांत में चीन की भू-रणनीतिक पकड़ को मज़बूत करना है। भारत ने

 ISSN: 2321-0443

म्यांमार के साथ 1643 किलोमीटर लंबी सीमा साझा की है। म्यांमार दक्षिण पूर्व एशिया और भारत का प्रवेश द्वार है। प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में भारत की नई सरकार ने पूर्वी एशियाई पड़ोसियों के साथ अपने संबंधों को एक ऐसी समय में विदेश नीति की प्राथमिकता दी है जब अमेरिका 'एशिया की धुरी' था। यह नीति भारत द्वारा चीन के खिलाफ बाहरी संतुलन की रणनीति के तहत संचालित की गई है, लेकिन यह एक अधिक वैश्विक भूमिका के लिए भारत की इच्छा और एक व्यापारिक राष्ट्र के रूप में इसके उदय से भी प्रेरित है। वर्तमान मोदी सरकार ने भारत के दक्षिण एशियाई पड़ोसियों के साथ संबंधों पर शुरू में ध्यान केंद्रित करने की अपनी मंशा व्यक्त की है, आर्थिक विकास को आगे बढ़ाने की प्रतिबद्धता और एक अधिक महत्वाकांक्षी विदेश नीति से एक पूर्व-केंद्रित फोकस बढ़ेगा। पूर्व की ओर देखो नीति ने दो दशकों से एशिया प्रशांत के साथ भारत के जुड़ाव को आकार दिया है, जिससे भारत के आर्थिक, संस्थागत और क्षेत्र के साथ सुरक्षा संबंधों को काफी गहरा किया गया है। शुरू में दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ भारत के आर्थिक संबंधों को विकसित करने का इरादा था, अपने पूर्वी पड़ोसियों के साथ भारत का जुड़ाव पूर्वोत्तर एशिया और ऑस्ट्रेलिया को शामिल करने के लिए स्थानांतरित हो गया। हाल के वर्षों में, लुक ईस्ट ने एक महत्वपूर्ण नौसैनिक बल के साथ एक रणनीतिक आयाम हासिल कर लिया है।

भारत की सुरक्षा के लिए दक्षिण पूर्व एशिया का सामरिक महत्व है। के.एम. पणिक्कर प्रख्यात भारतीय विद्वान-राजनयिक ने टिप्पणी की कि दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों का 'राजनीतिक भविष्य',[2] उनके आर्थिक विकास और वहाँ की सुरक्षा के संबंध में माना जाता है, जो भारत की केंद्रीयता के साथ बंधे हुए हैं। पणिक्कर ने भारत और दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच निर्भरता के आधार पर दक्षिण-पूर्व एशिया की रक्षा के लिए 'सामूहिक सुरक्षा'[3] के साथ-साथ' सह-समृद्धि क्षेत्र '[4]के गठन की एक प्रणाली की वकालत की। जवाहरलाल नेहरू, भारत के पहले प्रधान मंत्री, की राय थी कि इसकी वास्तविक और अव्यक्त भौतिक शक्ति के साथ-साथ इसके भू-रणनीतिक स्थान के परिणामस्वरूप, भारत एशिया का धुरी [5] बनने के लिए बाध्य था।

एशिया में द्वितीय विश्व युद्ध के तत्काल बाद के दो सबसे महत्वपूर्ण प्रणालीगत विकास शीत युद्ध के अंतर्राष्ट्रीय वातावरण की प्रतिक्रिया में विघटन और गैर-संरेखण के उद्भव की प्रक्रिया थे। 1960 से शीत युद्ध के अंत तक, दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ भारत के संबंध शीत युद्ध के अंतर्राष्ट्रीय परिवेश में प्रणालीगत स्तर के कारकों के बड़े 'व्युत्पन्न' थे।[6] विदेश नीति और कूटनीति को पहियों के रूप में वर्णित किया गया है, जिसके भीतर प्रक्रिया है

अंतर्राष्ट्रीय संबंध संचालित होता है, क्योंकि यह एक ज्ञात तथ्य है कि सरकार का गठन राज्य को चलाने के लिए आवश्यक है और कोई भी राज्य अलगाव में नहीं रह सकता है। हालांकि एक सफल विदेश नीति राष्ट्र के समुदाय में एक राष्ट्र की शक्ति और प्रतिष्ठा को बढ़ाती है, लेकिन राज्य अपनी विदेश नीति के सावधानीपूर्वक निर्माण और सफल निष्पादन पर विशेष ध्यान देते हैं। शीत युद्ध के दौरान इस संबंध में, भारत ने किसी भी बड़ी शक्ति के साथ खुद को संरेखित नहीं करने की विदेश नीति अपनाई, लेकिन इसने क्षेत्रीय शांति और स्थिरता बनाए रखने के लिए कई देशों के साथ सहयोग करने का भी निर्णय लिया। भारत की लुक ईस्ट नीति दक्षिण पूर्व एशिया के राष्ट्रों के साथ व्यापक आर्थिक और सामरिक संबंधों को विकसित करने के प्रयासों को दर्शाती है ताकि क्षेत्रीय शक्ति और चीन के पीपुल्स रिपब्लिक के रणनीतिक प्रभाव के रूप में इसका मुकाबला किया जा सके। नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली नई भारत सरकार घरेलू और विदेश नीति में नए नारों और प्रतीकों की अत्यधिक पक्षधर है। 'मेक इन इंडिया, भारतीय विनिर्माण क्षेत्र के लिए एक नया नारा है क्योंकि' एक्ट ईस्ट 'पूर्वी एशिया के साथ भारत के जुड़ाव का एक नया मंत्र है। शीत युद्ध के अंत की पूर्व संध्या पर भारत ने दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों के साथ आर्थिक और अन्य क्षेत्रों में अपने करीबी संबंधों को तेज करने के लिए देशों की बहुप्रशंसित नीति 'लुक ईस्ट' की नीति को अपनाया। भारत की पूर्व की ओर देखो नीति को पिछले ढाई दशक में उल्लेखनीय सफलता मिली है क्योंकि भारत इस क्षेत्र के देशों के साथ आर्थिक, सांस्कृतिक और सामरिक संबंध बनाने में सफल रहा है। [7]

लुक ईस्ट नीति के मुख्य उद्देश्य इस क्षेत्र के देशों के साथ घनिष्ठ आर्थिक के साथ-साथ रणनीतिक संबंध विकसित करना और देश के तीव्र और निरंतर आर्थिक विकास के लिए बाजार, पूंजी और प्रौद्योगिकी के बेहतर अवसरों का लाभ उठाना है। यह नीति दो चरणों में लागू की गई है। इस नीति के पहले चरण में 1991 से 2002 तक की अवधि शामिल है। इस चरण के दौरान नीति मुख्य रूप से आसियान के सदस्य के साथ व्यापार और निवेश लिंकेज के विकास पर केंद्रित थी। इस नीति का दूसरा चरण 2003 से वर्तमान तक की अवधि को कवर करता है। इस चरण की सामग्री के साथ-साथ इस नीति की पहुंच का विस्तार इस अर्थ में किया गया है कि अब यह पूर्वी एशिया के आसियान गैर- आसियान दोनों देशों पर केंद्रित है। आर्थिक संबंध के अलावा दूसरा चरण इस क्षेत्र में रणनीतिक संबंधों के आधार पर समान रूप से केंद्रित है। हाल ही में विकसित एक्ट ईस्ट पॉलिसी मुख्य रूप से भारत की पूर्व की ओर देखो नीति का विस्तार और संशोधन है, जो शीत युद्ध के बाद के अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में भारत की एक प्रमुख विदेश नीति थी।

लुक ईस्ट पॉलिसी का कार्यान्वयन सुचारू और तेजी से हुआ। भारत और आसियान देशों के बीच संबंध में सुधार इस नीति का मूल तत्व है। तत्कालीन प्रधानमंत्री नरसिम्हा राव ने 1992 में दक्षिण पूर्व एशिया क्षेत्र का सफल दौरा किया और भारत उसी वर्ष AEAN का एक क्षेत्रीय संवाद भागीदार बन गया। भारत की स्थिति 1995 में पूर्ण संवाद भागीदार के रूप में बढ़ गई थी। अमेरिका, जापान और अन्य प्रमुख देशों के रूप में संबंध बढ़ाने के लिए एक अस्थायी झटका लगा था, 1998 के संबंध में भारत ने परमाणु परीक्षण प्रतिक्रिया में भारत के खिलाफ प्रतिबंध लगाए थे। आसियान भारत के लिए अनिच्छुक हो गया था जैसा कि इसके सदस्य रणनीतिक मामले में यूएस लाइन का अनुसरण करते हैं। जैसा कि 2002 में अमेरिका और जापान ने भारत के खिलाफ मंजूरी हटा ली थी, भारत और आसियान के बीच सहयोग की संभावना तेज हो गई थी। 2002 में दोनों ने सहयोग के क्षेत्रों को मजबूत करने और व्यापक बनाने के लिए नियमित वार्षिक शिखर बैठकें आयोजित करने का निर्णय लिया। 2002 के बाद से नियमित रूप से दोनों पक्षों के बीच वार्षिक शिखर बैठक हुई है। [8]

भारत-आसियान शिखर सम्मेलन (1992) की शुरुआत की 20 वीं वर्षगांठ के अवसर पर विशेष स्मारक भारत-आसियान शिखर सम्मेलन 20 दिसंबर, 2012 को पहली बार आयोजित किया गया था। पिछले दो दशकों में दोनों ने क्षेत्र में सहयोग के क्षेत्रों का विस्तार किया है व्यापार, निवेश, सुरक्षा, संस्कृति, पर्यटन, विज्ञान और प्रौद्योगिकी। यह एक ऐतिहासिक शिखर सम्मेलन था। भारत और आसियान के बीच द्विपक्षीय व्यापार 2.9 बिलियन डॉलर था जो 2009 में 43 बिलियन डॉलर तक पहुंच गया था। भारत और एईएएन के बीच 2010 में 24% की वृद्धि हुई और 2011 में $ 51 बिलियन तक पहुंच गया। भारत ने आसियान के साथ एक मुक्त व्यापार समझौते (एफटीए) पर हस्ताक्षर किए। 13 अगस्त 2009 को बैंकॉक में दो पक्ष के बीच व्यापार को बढ़ावा देने के लिए। यह 1 जनवरी, 2010 को लागू हुआ। इस एफटीए ने केवल वस्तुओं में व्यापार को कवर किया।[9] यह दो के द्विपक्षीय संबंधों में एक मील का पत्थर माना जाता है। FTA में 4000 सामान और उत्पाद शामिल हैं। वर्ष 2013 तक 3200 उत्पादों में टैरिफ कम हो जाएगा।

वर्ष 2014 में एक उल्लेखनीय सफलता सितंबर 2014 में सेवाओं में भारत आसियान एफटीए पर हस्ताक्षर करने की थी। सेवाओं में एफटीए पर हस्ताक्षर भारत और आसियान ने एक व्यापक आर्थिक साझेदारी की है। भारत ने

पहले ही दक्षिण के साथ कुछ व्यक्तिगत देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं। कोरिया, जापान, सिंगापुर, थाईलैंड, इंडोनेशिया और श्रीलंका। लुक ईस्ट पॉलिसी के दूसरे चरण के तहत भारत ने आसियान के साथ रणनीतिक संबंध में अपने संबंधों को विविधता प्रदान की, जिसमें सुरक्षा संबंधी मामलों में सहयोग और भारत-प्रशांत क्षेत्र में समुद्री सुरक्षा के मुद्दे शामिल हैं। भारत आसियान के सुरक्षा तंत्र का भी सदस्य है, जिसे ARF के रूप में जाना जाता है जो आसियान के सदस्य और अन्य सहयोगियों के बीच सुरक्षा के मुद्दों पर परामर्श और सहयोग का मंच है। इस नीति के दूसरे चरण के तहत भारत ने जापान, दक्षिण कोरिया और ऑस्ट्रेलिया जैसे पूर्वी एशिया के अन्य गैर-देशों के साथ अपनी आर्थिक और रणनीतिक साझेदारी को मजबूत करने की कोशिश की। जबकि FTA के रूप में व्यापक आर्थिक साझेदारी पर जापान और दक्षिण कोरिया के साथ हस्ताक्षर किए गए हैं, ऑस्ट्रेलिया के साथ एक उल्लेखनीय सफलता 2014 में बहुप्रतीक्षित असैन्य परमाणु सहयोग समझौते पर हस्ताक्षर किया गया था। 20 साल की अवधि के भीतर भारत की लुक ईस्ट पॉलिसी पूरी तरह से बदल गई है .[10]

एक्ट ईस्ट क्या है? एक्ट ईस्ट पहली बार तत्कालीन अमेरिकी विदेश सचिव हिलेरी क्लिंटन द्वारा जुलाई 2011 में भारत और दक्षिण एशिया के बीच संबंधों को और मजबूत बनाने की आवश्यकता पर प्रकाश डालने के लिए भारत यात्रा के दौरान इस्तेमाल किया गया था। अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने 2010 में अपनी भारत यात्रा के दौरान विशेष रूप से भारतीय संसद में अपने संबोधन के दौरान भारत को पूर्वी एशिया में बड़ी भूमिका निभाने का आग्रह किया था। यह इस तथ्य के कारण हो सकता है कि अमेरिका भारत को इस क्षेत्र पर चीन के खिलाफ एक काउंटर संतुलन के रूप में मानता है। जब भारत की नई विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने अगस्त 2014 में वियतनाम का दौरा किया तो उन्होंने भारत की 'एक्ट ईस्ट' नीति का भी उल्लेख किया। भारत के प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने सितंबर 2014 में अमेरिका की यात्रा के दौरान, एक्ट ईस्ट पॉलिसी के बारे में भी बात की। भारत की बहुप्रचारित एक्ट ईस्ट एशिया नीति के तीन आयाम हैं: सामरिक आर्थिक और प्रक्रियात्मक। सामरिक आयाम एशिया-प्रशांत क्षेत्र में बदलते रणनीतिक परिदृश्य से संबंधित है। इस क्षेत्र में बढ़ती चीनी सैन्य और रणनीतिक प्रोफाइल के मद्देनजर अमेरिका ने हाल ही में एशियाई पिवट और एशिया रिबैलेंसिंग जैसी कुछ नई रणनीतिक पहल की घोषणा की है, जो चीन के लिए चीनी प्राकृतिक बाधाओं को दूर करने के लिए क्षेत्रीय अभिनेताओं के साथ अमेरिकी रणनीतिक और सुरक्षा संबंध और सहयोग को तेज करता है। जवाबी कदम ने समुद्री रेशम मार्ग का प्रस्ताव मुख्य भूमि चीन को पूर्वी प्रशांत एशिया और

पूर्वी अफ्रीका के साथ पूर्वी यूरोप से जोड़ दिया है। इस बदलते सामरिक परिदृश्य में भारत भी एशिया प्रशांत क्षेत्र के देशों के साथ घनिष्ठ रणनीतिक साझेदारी विकसित करना चाहता है। अधिनियम एशिया नीति वियतनाम जापान दक्षिण कोरिया और अन्य जैसे क्षेत्रीय अभिनेताओं के साथ रणनीतिक साझेदारी पर ध्यान केंद्रित करके इस उद्देश्य को साकार करने की कोशिश करती है। [11]

इस नीति के आर्थिक आयाम को भारतीय प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा 12 नवंबर, 2014 को म्यांमार के भारत-एशियाई शिखर सम्मेलन में विस्तृत किया गया था। वह सूचना राजमार्ग भौतिक और डिजिटल कनेक्टिविटी और बुनियादी सुविधाओं के विकास के क्षेत्र में सहयोग को मजबूत करके एशिया प्रशांत क्षेत्र के आर्थिक परिवर्तन के इस कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करता है। उन्होंने घोषणा की कि भारत ने अगले पाँच वर्षों में इस क्षेत्र के देशों के साथ अपनी साझेदारी को व्यापक बनाने की योजना बनाई है। एक्ट ईस्ट पॉलिसी का प्रक्रियात्मक आयाम भारत और इस क्षेत्र के अन्य देशों के बीच परियोजनाओं और कार्यक्रमों के सहयोग के समयबद्ध और प्रभावी कार्यान्वयन से संबंधित है। यह भारत के पूर्व एशियाई साझेदारों द्वारा भारत की ओर से कार्यक्रमों के कार्यान्वयन में सुस्ती के बारे में लगातार शिकायतें पैदा करता है, जो साझेदारी और सहयोग की पहली वृद्धि पर टिका है।

भारत-म्यांमार के संबंध साझा ऐतिहासिक, जातीय, सांस्कृतिक और धार्मिक संबंधों में निहित हैं। भगवान बुद्ध की भूमि के रूप में, भारत म्यांमार के लोगों के लिए तीर्थ यात्रा का देश है। भारत और म्यांमार के संबंध समय की कसौटी पर खरे उतरे हैं। दोनों देशों की भौगोलिक निकटता ने सौहार्दपूर्ण संबंधों को विकसित करने और बनाए रखने में मदद की है और लोगों से संपर्क करने में मदद की है। जातीय भारतीयों के निष्कासन सहित घरेलू नीतियों ने संबंधों में खटास ला दी। 1988 के बाद से शुरू हुए लोकतंत्र समर्थक आंदोलन[12] के प्रति भारत सरकार की सहानुभूति के परिणामस्वरूप, रिश्ते पूरी तरह से तनावपूर्ण हो गए थे, 1987 में प्रधान मंत्री राजीव गांधी की यात्रा ने भारत और म्यांमार के बीच मजबूत रिश्ते की नींव रखी। हालाँकि, हालिया राजनीतिक सुधार और लोकतंत्र में परिवर्तन भारत म्यांमार के संबंधों के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। भारत के लिए जियो-रणनीतिक रूप से, म्यांमार का महत्व इन कारकों से उत्पन्न होता है: म्यांमार भारत का दूसरा सबसे बड़ा पड़ोसी है और हमारे पूर्वी हिस्से में सबसे बड़ा है। म्यांमार बंगाल की खाड़ी का पूर्वी तटवर्ती क्षेत्र प्रदान करता है। म्यांमार की उत्तर में चीन के साथ एक बड़ी सीमा है, चीन-

भारतीय विवादित सीमा के साथ सन्निहित है।[13] यह भारत के उत्तर पूर्वी राज्यों और चीन के दक्षिणी प्रांतों के बीच एक पुल के रूप में भी काम करता है। भू-राजनीतिक रूप से, एक दोस्ताना म्यांमार के साथ, भारत दक्षिण पूर्व एशिया के साथ संबंध बनाने की अपनी 'लुक ईस्ट' नीतियों में अधिक पदार्थ जोड़ सकता है, क्योंकि म्यांमार लाओस और थाईलैंड के साथ साझा सीमाएँ साझा करता है। भारत-म्यांमार संबंधों पर कोई विवादित मुद्दों के साथ, एक व्यावहारिक रणनीतिक साझेदारी अधिक आसानी से प्राप्त करने योग्य है। यह नकारात्मक छवि का प्रचार कर सकता है कि भारत अपने पड़ोसियों के साथ मैत्रीपूर्ण है। म्यांमार आसियान का अहम हिस्सा है और आसियान में एशिया के तेजी से बढ़ते कुछ अर्थव्यवस्थाएं शामिल हैं। साउथ ईस्ट एशिया के साथ संबंध के लिहाज से भारत के लिए म्यांमार अहम सहयोगी हो सकता है। साउथ ईस्ट एशिया को भारत महत्वपूर्ण आर्थिक सहयोगी के तौर पर देखता है। घरेलू व्यापार के लिहाज से भी म्यांमार अहम है क्योंकि कलादान प्रोजेक्ट के जरिए म्यामांर का सिटवे और कोलकाता का सीधे संपर्क बनेगा। यह नॉर्थ ईस्ट तक समुद्र के रास्ते पहुंचने के लिए भारत की महत्वाकांक्षी योजना है। पड़ोसी देश चीन की तरफ से एक के बाद एक भारत के लिए चुनौती पेश की जाती पही है। चीन ने हाल ही में म्यामांर में बंगाल की खाड़ी पर बंदरगाह निर्माण के लिए बड़ा निवेश का फैसला किया है। इससे पहले ऐसे ही प्रोजेक्ट श्री लंका और पाकिस्तान में भी चीन ने शुरू किए हैं। भारत को चारों तरफ से घेरने की अपनी रणनीति के तहत चीन एशियाई देशों पर पैसे लुटा रहा है। इन बंदरगाहों के निर्माण से चीन हिंद महासागर और बंगाल की खाड़ी में अपना प्रभुत्व बना सकेगा। चीन के ऐसे मंसूबों को नाकामयाब बनाने के लिए म्यांमार से भारत को अपनी मित्रता बढ़ानी ही होगी। म्याँमार के अन्य निकटतम पड़ोसियों की तरह भारत के लिये भी अपरिहार्य है कि वह म्याँमार की ओर हाथ बढ़ाए और अपने स्वयं के प्रक्षेपवक्र को आकार दे। भारत की क्षेत्रीय सुरक्षा की जटिलता और पड़ोस को देखते हुए आवश्यक है कि भारत म्याँमार के साथ संलग्नता में अपना आवश्यक व्यवहार खोए बिना एक अधिक सूक्ष्म स्थिति अंगीकार करे। म्याँमार के साथ अपने संबंधों को मज़बूत करने के लिये भारत को सांस्कृतिक कूटनीति का लाभ उठाना चाहिये जहाँ बौद्ध धर्म एक साझा सूत्र का निर्माण करता है। भारत की "बुद्धिस्ट सर्किट" (Buddhist Circuit) पहल, जो भारत के विभिन्न राज्यों में स्थित प्राचीन बौद्ध विरासत स्थलों को एक साथ जोड़कर विदेशी पर्यटकों के आगमन को दोगुना करने का लक्ष्य रखती है, बौद्ध-बहुल म्याँमार के साथ संबंधों

में प्रतिध्वनित होनी चाहिये। यह म्याँमार जैसे बौद्ध-बहुल देशों के साथ भारत के सद्भावना और विश्वास के राजनयिक कोश का निर्माण कर सकता है।

संदर्भ:

1. क्रिस्टोफर बेली और टिम हार्पर, भूल गई सेना: ब्रिटिश एशिया का पतन, 1941-1945, एन आर्बर: मिशिगन विश्वविद्यालय प्रेस, 2004, पृष्ठ,17

2. के.एम. पणिक्कर, द फ्यूचर ऑफ़ साउथईस्ट एशिया: एन इंडियन व्यू, न्यू यॉर्क: द मैकमिलन कंपनी, 1943, पृष्ठ, 16

3. पूर्वोक्त, पृष्ठ, 11

4. पूर्वोक्त, पृष्ठ, 16

5. सर्वपल्ली गोपाल, जवाहरलाल नेहरू: एक जीवनी, खंड दो 1947-1956, लंदन: जोनाथन केप, 1979, पृष्ठ, 59

6. कृपा श्रीधरन, भारत की विदेश नीति में आसियान क्षेत्र, डार्टमाउथ प्रकाशन कंपनी, 1996, पृष्ठ, 47

7. मनीष, चंद, 'एक्ट ईस्ट: इंडियाज़ जर्नी' विदेश मंत्रालय, नवंबर, 10, 2014

8. घोषाल, बालाडल, चीन की धारणा भारत की पूर्व की ओर देखो नीति और इसके निहितार्थ 'आईडीएसए मोनोग्राफ श्रृंखला, संख्या 26, अक्टूबर, 2013

9. हाओकिप, थोंगखोल, 'इंडियाज़ लुक ईस्ट पॉलिसी: इट्स एवोल्यूशनल; दृष्टिकोण 'दक्षिण एशिया सर्वेक्षण, ऋषि प्रकाशन, नई दिल्ली, 2011, पृष्ठ.47

10. ज्योति, 'इंडियाज लुक ईस्ट पॉलिसी: इन आईजीआईआर सेकेंड फेज', रिसर्च इंडिया पब्लिकेशन, ग्लोबल जर्नल ऑफ फार्मास्युटिकल्स साइंस अलाइ एजुकेशन, खंड 2, 2013, पृष्ठ,1

11. वी. एन. खन्ना, 'भारत की विदेश नीति', विकास प्रकाशन, नई दिल्ली,छठा संस्करण, 2011, पृष्ठ.18

12.http://epao.net/epPageExtractor.asp?src=features.IndoMyanmar_relationship_on_bilateral_and_economic_cooperation.html.. (Accessed on30, August, 2013)

13. http://www.southasiaanalysis.org/paper197 (Accessed on30, August, 2013)

अध्याय 10
वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य में भारत नेपाल सम्बन्ध

प्रो. रीना पाठक
राजनीति विज्ञान विभाग
शिव हर्ष किसान पी0 जी0 कॉलेज, बस्ती

प्रस्तुत शोध-पत्र के माध्यम से भारत और नेपाल के मध्य वैदेशिक सम्बन्धों में नवीन विश्लेषण तथा प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी के कार्यकाल में उभरते आयामों पर दृष्टि डालने का प्रयास किया गया है। भारत और नेपाल के बीच धार्मिक, सास्कृतिक, भाषायी एवं ऐतिहासिक समानता एक विशिष्ट महत्व रखती है। हिमालय की गोद में बसे नेपाल की उत्तरी सीमा तिब्बत से मिलती है तथा इसकी पूर्वी और दक्षिणी सीमा भारत से मिलती है। नेपाल, भारत और चीन के मध्य स्थित है जहां पर विश्व की सबसे ऊंची चोटी माउन्ट एवरेस्ट है। विश्व की 14 सबसे ऊंची चोटियों में 8 वही पर है जिसक क्षेत्रफल 1,47,181 किमी है। नेपाल की कुल जनसंख्या 3 करोड़ है।[1] नेपाल भारत का एक महत्वपूर्ण पड़ोसी देश है जिसकी जनसंख्या भारत के मुकाबले में बहुत कम है। भारत नेपाल का सबसे बड़ा व्यापार भागीदारी होने के साथ-साथ विदेशी निवेश का सबसे बड़ा स्रोत है। भारत सरकार नेपाल में बुनियादी ढ़ाचे के निर्माण पर अपना ध्यान केन्द्रित करते हुए समय समय पर विशिष्ट सहायता प्रदान करती है। स्वास्थ्य, शिक्षा, जल संसाधन, ग्रामीण और समुदायगत विकास जैसे मुद्दे ही नही बल्कि प्राकृतिक आपदाओं के समय मानवीय सहायता उपलब्ध कराकर भारत नेपाल में मानवीय संवेदनाओं के उच्च आदर्श को स्थापित करने के लिए सदैव प्रयासरत रहता है। विदेश नीति के सन्दर्भ में पुरातन मान्यताओं से पृथक नवीनता का सन्देश देने वाली प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी के कार्यकाल में भारत नेपाल सम्बन्धों का वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य नयी दिशाओं की ओर संकेत कर रहा है। ब्रिटिश कालीन भारत ने नेपाल के साथ जो सन्धि की थी उसका भारत की आजादी के बाद कोई महत्व नही रहा। अतः भारत सरकार ने नेपाल से नयी सन्धि का प्रस्ताव रखा।[2]

1950 की भारत नेपाल सन्धि:-

भारत सरकार ने नेपाल के प्रधानमन्त्री राणा मोहन शमशेर जंग को फरवरी, 1950 में आमन्त्रित किया, जिन्होनें दिल्ली में प्रधानमन्त्री जवाहर लाल नेहरू से विस्तृत वार्ता की परन्तु वे भारत के इस प्रस्ताव से सहमत न हुए कि नेपाल में लोकतन्त्र की स्थापना की जाय। अन्ततोगत्वा वार्ता असफल हो गयी। इसी समय चीन की गतिविधियां तिब्बत में तेज हो गयी, नेपाल में चीन के प्रभाव में वृद्धि हो जाने का खतरा भारत सरकार को अनुभव होने लगा अतः 17 मार्च, 1950 को भारतीय संसद में पं0 जवाहर लाल नेहरू ने विचार व्यक्त करते हुए भारत-नेपाल सम्बन्धों को

नई दिशा देने का संकेत दिया। भारत के प्रधानमन्त्री पं0 जवाहर लाल नेहरू से विस्तृत वार्ता के उपरान्त 30 जुलाई, 1950 को भारत-नेपाल के बीच एक सन्धि पूरी हुई।[3] 1950 की शान्ति और मित्रता सन्धि भारत-नेपाल सम्बन्धों की आधारशिला है। शान्ति और मित्रता की सन्धि में कहा गया की दोनों देश "एक दूसरे की पूर्ण सम्प्रभुता, क्षेत्रीय अखण्डता और स्वतन्त्रता को स्वीकार करने, सम्मान करने के लिए पारस्परिक रूप से सहमत है"। भारत और नेपाल के सम्बन्ध अतिप्राचीन है। दोनों ही पड़ोसी राष्ट्रों की धार्मिक, सांस्कृतिक, भाषायी और एतिहासिक स्थिति में बहुत अधिक समानता है। भारत और नेपाल के सम्बन्धों का संचालन 1950 की भारत नेपाल मित्रता सन्धि एक द्विपक्षीय सन्धि है जिस पर नेपाल साम्रज्य और भारत गणराज्य ने घनिष्ठ रणनीतिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए हस्ताक्षर किया है। सन्धि दोनों देशों के बीच लोगो और सामानों के आने-जाने, रक्षा तथा विदेश नीति के मामलों पर घनिष्ठ संबन्ध और सहयोग की अनुमति देती है। यद्यपि दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों में समय समय पर उतार-चढ़ाव आता रहा है लेकिन इसके बावजूद परम्परा का सम्मान करते रहने की नियति ने दोनों देशों के सम्बन्धों में सदैव सन्तुलन व मिठास घोलने का कार्य किया। 1951 में जब नेपाल में राजनीतिक संकट उत्पन्न हुआ तब महाराजा त्रिभुवन दिल्ली पहुचे थे और भारत के तत्कालीन प्रधानमन्त्री जवाहर लाल नेहरू ने मध्यस्थता करते हुए उन्हें पूरा सहयोग दिया। कहने का तात्पर्य यह है कि भारत और नेपाल के सम्बन्धों की विरासत अति प्राचीन है। भारत और नेपाल के मध्य सामरिक समझौता ना होने के बावजूद भारत नेपाल के विरूद्ध किसी भी प्रकार के युद्व को बर्दास्त नही कर सकता है। 2014 की नेपाल यात्रा में प्रधानमन्त्री नरेन्द्र दास मोदी जी ने 1950 की शान्ति और मित्रता सन्धि को संशोधित करने की इच्छा व्यक्त की थी। 1950 की सन्धि मंे नेपाल की आपत्ति मुख्य रूप से इस कल्पना पर आधारित है कि यह सन्धि 'सम्प्रभु विदेश और सुरक्षा नीति की प्रक्रिया की उसकी योग्यता को कमजोर बनाती है। सन्धि में संशोधन अथवा समायोजन निश्चित रूप से दोनों देशों के हितों की पूर्ति करेगा।

नेपाल में माओवादी विद्रोह और भारत की भूमिका:-

नेपाल की कम्युनिष्ट पार्टी (माओवादी) ने नेपाल की राजशाही राजनीतिक व्यवस्था के अन्त तथा लोकतान्त्रिक रूप से निर्वाचित सरकार को स्थापित करने के लिए एक सफल आन्दोलन का नेतृत्व किया। नेपाल की कम्युनिष्ट पार्टी (माओवादी) की स्थापना पुष्प कमल दहल ने किया था जिसे 'प्रचण्ड' के रूप में जाना जाता है। नेपाल में माओवादी विद्रोह 1996 से 2006 तक चला और इसके परिणाम स्वरूप 12 हजार से अधिक नेपाली नागरिक मारे गये। संयुक्त राष्ट्र संघ की मध्यस्थता शान्ति सन्धि ने नवम्बर 2006 में विद्रोह को समाप्त कर दिया। नव गठित संसद की पहली बैठक में, नेपाली राजशाही को भंग कर दिया गया और नेपाल में गणतंत्र घोषित कर दिया गया। मेहा दीक्षित ने इन्स्टिट्यूट आफ पीस एण्ड कान्फ्लिक्ट स्टडीज के अन्तर्गत अपने लेख 'नेपाल में माओवादी विद्रोह' में लिखा है कि नेपाल में माओवादी उग्रवाद एक बिल्कुल नयी परघटना है जो 'राज्य के दमनकारी, अलोकतान्त्रिक इतिहास में गहरे दबे सदियों पुराने अभावों से प्रज्ज्चलित ज्वाला की तरह उठी। विडम्बना यह है कि माओवादी जन आन्दोलन लोगों की दयनीय स्थिति को दूर करने की बजाय लोगों की शिकायतों के औचित्य तक ही सीमित रह गया। नेपाल में माओवादी

विद्रोह के कारण भारत और नेपाल के मध्य द्विपक्षीय वार्ता एवं राजनीतिक गतिविधियां लम्बे समय तक गतिशील नही रही। यद्यपि 2002 में तत्कालीन प्रधानमन्त्री अटल बिहारी वाजपेयी ने ग्यारहवें सार्क देशों के शिखर सम्मेलन में भाग लेने के लिए नेपाल गये थे लेकिन उनकी यह यात्रा द्विपक्षीय वार्ता से सम्बन्धित नही थी। तात्पर्य यह है कि 1997 से भारत और नेपाल के मध्य पारम्परिक द्विपक्षीय वार्ता नही हुयी। वर्ष 2007 में राजशाही की समाप्ति एवं 2008 में संविधान सभा के चुनावों के पश्चात् नेपाल में गणतंत्र स्थापित हुआ जिसके परिणामस्वरूप भारत-नेपाल सम्बन्धों में नए आयाम परिलक्षित हुए। श्री पुष्प कुमार दहल प्रचंड के नेतृत्व में माओवादियों की सरकार बनने से भारत-नेपाल संबंधों में मिठास कुछ कम होने लगी। प्रधानमंत्री प्रचंड द्वारा 1950 की मैत्री संधि की पुर्नसमीक्षा की घोषणा एवं चीन की तरफ उनके बढ़ते झुकाव ने इस बात को राजनीतिक रूप से सशक्तता प्रदान की। उल्लेखनीय है कि सेनाध्यक्ष की बर्खास्तगी के मुद्दे पर प्रचंड को इस्तीफा देना पड़ा। तत्पश्चात् उन्होंने नेपाल की आंतरिक अस्थिरता के लिए भारत की जिम्मेदार ठहराया। माओवादियों के सत्ता में आने के पश्चात नेपाल में चीन का प्रभाव असामान्य रूप से फैला है। नेपाल को तिब्बत से जोड़ने के लिए आंतरिक सड़कों एवं रेल की व्यवस्था की गई। नेपाल में चीन का प्रभाव बढ़ने देना रणनीतिक भूल होगी इसलिए यह जरूरी था कि जिन वजहों से नेपाल चीन की तरफ आकर्षित हो रहा है, उसकी भरपाई भारत करे। नेपाल के प्रधानमन्त्री शेर बहादुर देउबा ने यह भरोसा दिलाया है कि नेपाल की जमीन का इस्तेमाल भारत के हितों के खिलाफ नहीं होने देंगे। भारत और नेपाल में 8 समझौते हुए। इनमें से 4 नेपाल में भूकम्प के बाद पुनर्निर्माण से सम्बन्धित हैं। भारत ने नेपाल में ढांचागत विकास से जुड़ी 10 नई परियोजनाओं को शुरू करने के प्रस्ताव पर गम्भीरता से विचार करने का आश्वासन दिया। पनबिजली, एलपीजी पाइप लाइन बिछाने, रेलवे नेटवर्क के विस्तार, ड्राइपोर्ट के निर्माण पर भी समझौते हुए।

प्रधानमन्त्री नरेन्द्र दास मोदी की 2014 की नेपाल यात्राः-

नेपाल के प्रधानमन्त्री सुशील कोइराला के आमन्त्रण पर भारत के प्रधानमन्त्री ने 3-4 अगस्त 2014 में नेपाल यात्रा की। इस अवसर पर दोनों देशों के प्रधानमन्त्रियों ने अपने संयुक्त बयान में कहा कि नेपाल और भारत के बीच सीमा मुद्दे को ‘‘हमेशा के लिए सुलझा लिया जायेगा‘‘। इस यात्रा के सन्दर्भ में पूर्व राजदूत आचार्य ने कहा ‘‘राजनीतिक इच्छा शक्ति होगी तो काम होंगे, यदि राजनीतिक शक्ति नही है तो विदेश सचिवों की जिम्मेदारी तय करने से कुछ नहीं होगा। इसलिए शीर्ष स्तर के नेताओं की यात्रा का अपना महत्व है‘‘। द्विपक्षीय सम्बन्धों की सुधार की दिशा में प्रधानमन्त्री की नेपाल यात्रा एक सकारात्मक कदम के रूप में अविस्मरणीय रहेगी। उन्होंने कहा, ‘‘यह सीता और जनक की भूमि है, नेपाल-भारत सम्बन्ध हिमालय और गंगा जितने पुराने है‘‘। यात्रा पर जाने से पूर्व उन्होंने कहा, ‘‘मेरी यात्रा हमारी प्रकृति, इतिहास, संस्कृति, आध्यात्म और धर्म की साझा विरासत को प्रदर्शित करती है। यह यात्रा नेपाल के साथ हमारें सम्बन्धों को एक नये स्तर पर ले जाने के निश्चय को उजागर करती है‘‘। अपनी यात्रा के बारे में प्रधानमन्त्री मोदी ने कहा, जिस दिन से मैं प्रधानमन्त्री बना, नेपाल के साथ रिश्ते मजबूत करना मेरी सरकार की शीर्ष प्राथमिकता रही है। यात्रा के प्रारम्भ से ही सकारात्मक भावों से अविभूत प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने विभिन्न मुद्दों पर व्यापक विचार विमर्श तथा नयी सदी में नये सम्बन्धों को पुनर्जिवित

करने की सकारात्मक मनोवृत्ति रखी। वर्ष 2014 में प्रधानमन्त्री मोदी की 'नेवरहुड फर्स्ट पॉलिसी' वैश्विक स्तर पर सराहनीय रही और नेपाल के विकास के लिए उनकी प्रतिबद्धता ने नेपाल की जनता के मन-मस्तिष्क को जीतने का सफल प्रयास किया।4 जिस प्रकार का कूटनीतिक कदम प्रधानमन्त्री मोदी और टीम 2014 से ले रही है, क्षेत्रीय विकास के साथ-साथ भारत के लिए पड़ोस को ज्यादा सहज बनाने में मजबूत इरादे की भावना को प्रकट कर चुका है।[5]

वर्तमान विश्व में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का गंभीर प्रभाव है। ऐसा इसलिए है क्योकि इससे राष्ट्रों के बीच परस्पर सम्बन्धों को विकसित करने के विभिन्न अवसर उपलब्ध होते है।[6] दो देशों के बीच का सम्बन्ध केवल दो देशों के बीच का ही नही होता बल्कि वह उस विशेष समय व विशेष परिस्थिति में पूरे विश्व के लिए महत्वपूर्ण होता है। यह सही ही कहा गया है कि वर्तमान विश्व एक गांव की तरह हो गया है। इसलिए जो आदमी आज अकेले रहता है वह या तो भगवान है या जानवर है।[7] आधुनिक समय में कोई भी राष्ट्र या देश अलग थलग रहकर सुरक्षित नही रह सकता। राष्ट्रों के बीच सह अस्तित्व आज की आवस्कता है।[8] भारत नेपाल सम्बन्धों का उचित विश्लेषण करने के लिए कुछ बिन्दुओं पर दृष्टि डालना आवश्यक है। आर्थिक सम्बन्ध उन बिन्दुओं का मूल माना जा सकता है। किसी भी राष्ट्र की विदेश नीति का प्रमुख उद्देश्य आर्थिक विकास होता है और वैदेशिक सम्बन्धों के संचालन में आर्थिक पहलू मुख्य भूमिका का निर्वाह करता है। नेपाल के विदेश व्यापार का दो तिहाई क्रियान्वयन भारत के साथ होता है, जिसमें द्विपक्षीय व्यापार अनुमानतः लगभग 4.7 बिलियन डॉलर का है। नेपाल में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का 47 प्रतिशत भाग भारत से है। 1996 में संशोधित व्यापार संधि दोनों देशों के बीच आर्थिक संबंधों की केंद्र बिंदु साबित हुई है। 1996 के बाद से, भारत में नेपाल के निर्यात में ग्यारह गुणा वृद्धि हुई है और द्विपक्षीय व्यापार सात गुणा से अधिक बढ़ गया है। भारतीय फर्में नेपाल में सबसे बड़ी निवेशक हैं जिन्होंने कुल अनुमोदित प्रत्यक्ष विदेशी निवेशों का लगभग 40 प्रतिशत निवेश किया है। नेपाल में लगभग 150 से अधिक भारतीय उपक्रम कार्य कर रहे हैं जिनमें विनिर्माण, सेवाओं (बैंकिंग, बीमा, शुष्क बंदरगाह, शिक्षा और दूरसंचार), ऊर्जा क्षेत्र एवं पर्यटन उद्योग जैसे विविध क्षेत्रों के उपक्रम शामिल हैं। नेपाल में निवेशकर्ताओं में अन्य के साथ-साथ आईटीसी, डाबर इंडिया, टाटा पावर, हिंदुस्तान यूनीलिवर, वीएसएनएल, टीसीआईएल, एमटीएनएल, भारतीय स्टेट बैंक, पंजाब नेशनल बैंक, भारतीय जीवन बीमा निगम और एशियन पेंट्स शामिल हैं। स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि चाहे अर्थव्यवस्था का मुद्दा हो अथवा नेपाल में भारतीय कामगारों के अधिकारों का, ऐसे बहुत से मामले हैं जिनके सम्बन्ध में भारत एवं नेपाल को किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की आवश्यकता है। भविष्य में भारत नेपाल संबंधो को मैत्रीपूर्ण बनाने के लिए योजनाओं को व्यवहारिक स्वरूप देने की आवश्यकता है। दोनों देशों के मध्य एक लंबे समय से सुस्ता, कालापानी एवं लिपुलेख के त्रि-जंक्शन के संबंध में विवाद की स्थिति बनी हुई है लेकिन नेपाल के डरपोक रवैये के कारण इस दिशा में कोई कार्यवाही नहीं हो पा रही है। संभवतः इसका एक अहम कारण लंबे समय से चली आ रही नेपाली राजनीतिक अव्यवस्था है। ऐसे में भारत के लिये यह बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि वह बदलते क्षेत्रीय समीकरणों को मद्देनजर रखते हुए नेपाल के साथ अपने संबंधों को बेहतर करने की दिशा में प्रयास करे जिससे दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों को नयी दिशा प्राप्त हो सके। भारत 2011 से प्रतिवर्ष

नेपाल के साथ एक संयुक्त सैन्य अभ्यास करता है जिसे 'सूर्य किरण' के नाम से जाना जाता है। यद्यपि दोनों देशों के बीच सम्बन्धों में समय पर बदलाव होते रहे है। क्षेत्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में बदलाव के आधार पर इनके सम्बन्धों में बदलाव होता रहा है।[9] भारत-नेपाल सम्बन्ध शताब्दियों से सामाजिक-सांस्कृतिक, ऐतिहासिक-भौगोलिक रूप से जुड़ा है।[10]

मोदी सरकार ने पिछले तीन साल में नेपाल सहित अन्य सभी सार्क देशों के साथ रिश्ते मजबूत करने के लिए कई महत्वपूर्ण प्रयास किये हैं। 1997 में तत्कालीन प्रधानमन्त्री आई0 के0 गुजनाल के बाद काठमांडू की विदेश यात्रा और भारत-नेपाल सम्बन्धों पर पुनः व्यापक दृष्टि डालने का कार्य प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी द्वारा किया गया। यद्यपि 2002 में प्रधानमन्त्री अटल बिहारी वाजपेयी ने सार्क शिखर सम्मेलन में हिस्सा लिया था। सबका साथ सबका विश्वास का नारा लेकर चलने वाले भारतीय प्रधानमन्त्री ने पड़ोसी राज्यों के साथ सम्बन्धों को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनके प्रयासों से 23 वर्षों की लम्बी प्रतीक्षा के बाद 26 जुलाई 2014 को भारत व नेपाल संयुक्त आयोग की बैठक सम्पन्न हुयी। इस बैठक में दोनो देशों के बीच विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने पर सहमति बनी। इस संयुक्त आयोग की बैठक की अध्यक्षता विदेश मन्त्री सुषमा स्वराज तथा महेन्द्र बहादुर पांण्डेय ने की। इस बैठक में सुरक्षा, व्यापार, निवेश तथा जल संसाधन से जुड़ें प्रश्नों पर चर्चा हुयी। जब अप्रैल 2015 में नेपाल के लोगों को भूकंप का भयानक तांडव झेलना पड़ा, तो भारत सबसे पहला देश था, जिसने सहायता सामग्री एवं सैनिकों को नेपाल सरकार के साथ बचाव अभियान में सहयोग करने के लिए भेजा। दुर्भाग्यवश, इस भीषण त्रासदी से निपटने में भारत के सहयोगात्मक व्यवहार को नेपाल ने विपरीत संदर्भ में देखा। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि ओली सरकार ने नेपाल में भारतीय मीडिया की उपस्थिति पर सवाल उठाते हुए भारत पर नेपाल के लोगों के सामने अपनी छवि को सुधारने का आरोप लगाया तथा भारतीय मीडिया के लोगों को नेपाल से चले जाने के लिए कहा। इतना ही नहीं, प्रधानमंत्री ओली ने इस मुद्दे को संयुक्त राज्य के महासचिव बान की मून के समक्ष भी उठाया और भारत के प्रति कड़ा रुख अपनाते हुए चीन के साथ संबंधों की मजबूती पर विशेष ध्यान दिया। 2014 की नेपाल यात्रा की समाप्ति पर दोनों देशों के मध्य आर्थिक सम्बन्धों की महती आवश्यकता को रेखांकित किया गया। सूचना प्रौद्यौगिकी, सड़क, विद्युत, सीमावर्ती राज्यों में बिजली की मांग और आपूर्ति और संचार नेटवर्क के क्षेत्र में नवीनीकरण पर बल दिया गया। सीमा पर शान्ति और सुरक्षा तथा नयी विकासात्मक परियोजनाओं पर भी दृष्टि डाली गयी। प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी ने अपनी नेपाल यात्रा के दौरान काठमांडू से दिल्ली के बीच पशुपति एक्सप्रेस बस सेवा को हरी झंडी दिखा कर रवाना किया। चार महीने बाद 25 नवम्बर 2014 को प्रधानमन्त्री मोदी पुनः नेपाल की यात्रा पर गये।

नेपाल के प्रधानमन्त्री के पी शर्मा ओली की प्रथम भारत यात्रा (7 फरवरी 2016)

नेपाल के प्रधानमन्त्री के पी शर्मा ओली ने पद ग्रहण के पश्चात् प्रथम बार 7 फरवरी 2016 को भारत यात्रा की। भारत में आने के उपरान्त इस प्रकार की बातों पर विराम लग गया कि नेपाली प्रधानमन्त्री की पहली विदेश यात्रा चीन की होगी भारत की नही। इस यात्रा के दौरान भारत और नेपाल के बीच 9 समझौते हुए। प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने कहा, 'मै नेपाल के लोगों की आशाओं का, जागरूकता का और उनके विवेक का सम्मान करता हू। एक धनी संस्कृति और परम्परा के हम

साझे उत्तराधिकारी है। इस यात्रा में दोनों देशों के मध्य 12 सूत्री संयुक्त बयान जारी किया गया। 12 सूत्रीय समझौता नेपाल के राजनीतिक इतिहास में महत्वपूर्ण मोड़ है। इसने संविधान सभा और संघीय लोकतांत्रिक गणराज्य नेपाल के लिए दरवाजा खोल दिया। इस 12 सूत्री समझौते में राजनीतिक दल, लोकतन्त्र, शान्ति समृद्धि, सामाजिक उन्नति और निरंकुश राजशाही को समाप्त करने की दिशा में काम करने का संकल्प लेता है।[11] दोनों देशों के मध्य प्राइवेट सेक्टर, समानता, आपसी विश्वास, सम्मान और लाभ के आधार पर द्विपक्षीय सम्बन्धों को नये शिखर पर ले जाने के लिए एक दूसरे के साथ मिलकर विकास का वादा किया। प्रधानमन्त्री मोदी ने कहा कि भारत सरकार का विजन 'सबका साथ सबका विकास' अपने पड़ोसियों की समृद्ध और समावेशित विकास को साझा करने की निर्देशित संरचना है। प्रधानमन्त्री ओली ने कहा कि नेपाल में एक अभूतपूर्व राजनीतिक परिवर्तन के बाद उनकी सरकार ने 'समृद्ध नेपाल सुखी नेपाल' के लक्ष्य के साथ आर्थिक विकास और परिवर्तन को प्राथमिकता दी है। दोनों प्रधानमन्त्रियों ने मातिहारी (भारत) में मोतिहारी-अमलेखगंज पेट्रोलियम उत्पाद पाइप लाइन का उद्घाटन किया। पारस्परिक हितों के महत्वपूर्ण क्षेत्रों पर भी पृथक-पृथक संयुक्त वक्तव्य जारी किये गये, जिसके तहत भारत-नेपाल: कृषि में नयी साझेदारी, रेल लिंक का विस्तारण: रक्सौल (भारत) से काठमांडू (नेपाल) को जोड़ना तथा इनलैण्ड वाटर वेज द्वारा भारत के मध्य नयी सम्पर्कता स्थापित करना प्रमुख रहा। इसी यात्रा में नेपाल के प्रधानमन्त्री ओली ने भारत के प्रधानमन्त्री को नेपाल आने का निमन्त्रण दिया।[12]

नेपाल के प्रधानमन्त्री ओली के भारत आने से पूर्व दोनों ही देशों में इस यात्रा के उद्देश्य और महत्व पर बातचीत शुरू हो गयी थी। कांग्रेस के नेता मणिशंकर अय्यर ने कहा कि नेपाल के प्रधानमन्त्री ओली के भारत भ्रमण के दौरान मोदी को उदार हृदय रखना चाहिए और स्वयं को विवेकपूर्ण तरीके से प्रस्तुत करना चाहिए जिससे वह नेपाल के लोगों का दिल जीत सकें।[13] यद्यपि 2016 की यात्रा अनेक विकल्प लेकर आयी लेकिन नेपाल की विदेश नीति में बदलाव का पता उस समय स्पष्ट हो गया, जब फरवरी 2016 में भारत की यात्रा के तुरंत बाद ओली मार्च में चीन गये तथा काठमांडू एवं बीजिंग के बीच 'वन बेल्ट वन रोड' के अंतर्गत कई महत्वपूर्ण समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। इससे पहले कि नयी दिल्ली तथा काठमांडू के बीच और दूरी बढ़ती, 601 सदस्यीय संसद में ओली सरकार अल्पमत में आ गयी और नेपाल पर एक बार फिर राजनीतिक अस्थिरता का साया मंडराने लगा।

नये प्रधानमंत्री पुष्प कमल दहल प्रचंड के नेतृत्व में भारत-नेपाल संबंध:-

हालांकि, ओली सरकार का सत्ता से बाहर चले जाना भारत के लिए सुखद समाचार था परन्तु भारतीय राजनयिकों तथा विश्लेषकों ने इस पर चिंता प्रकट की कि नये प्रधानमंत्री पुष्प कमल दहल प्रचंड के नेतृत्व में भारत-नेपाल संबंधों में शायद ही सुधार होगा। कारण, अपने पहले प्रधानमंत्री कार्यकाल में प्रचंड ने भारत के बजाय चीन के साथ संबंधों को सुधारने पर बल दिया था। उस समय 1950 के भारत-नेपाल मैत्री समझौते पर प्रचंड का कठोर रुख भी भारत एवं नेपाल के बीच दूरी बढ़ाने का काम किया था। हालांकि, इस बार भारत के प्रति प्रधानमंत्री प्रचंड के रवैये में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिला उन्होंने सार्वजनिक रूप से इस बात को स्वीकार किया कि नेपाल का भारत के साथ रिश्ता अतुलनीय है। प्रचंड ने इसे भी माना कि उनके राजनीतिक अनुभवहीनता के कारण ही वह

अपने पहले कार्यकाल में भारत के साथ मैत्री रिश्ते नहीं बना पाये प्रचंड के भारत के प्रति बदले हुए विचार उस समय और स्पष्ट हो गये, जब दूसरी बार प्रधानमंत्री बनने पर वह सबसे पहले भारत की यात्रा पर आये. भारत-नेपाल के संबंधो में हुए इसी सकारात्मक बदलाव ने प्रधानमंत्री मोदी को अपने विरोधियों को चुप करने का अवसर दिया, जो यह आरोप लगा रहे थे कि नेपाल के साथ रिश्तों में विश्वास बहाल कराने में मोदी सरकार पूर्णतः असफल रही है।

राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी की नेपाल यात्रा 2-4 नवम्बर 2016:-

नेपाल की यात्रा करने वाले अन्तिम राष्ट्रपति 28 मई 1998 को के0 आर0 नारायण थे। 18 वर्षों बाद पुनः भारत के राष्ट्रपति की नेपाल यात्रा दोनों देशों के सम्बन्धों के लिए विशिष्ट महत्व रखती है। भारत के राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी की नेपाल यात्रा दोनों देशों के संबंधों को मजबूत बनाने में एक अति महत्वपूर्ण पहल थी। राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने अपनी यात्रा को 'मिशन ऑफ फ्रेंडशिप' का नाम दिया। दोनों देशों के लोगों के बीच नजदीकियां बढ़े इसके लिए उन्होंने घोषणा की कि नेपाली छात्र आइआइटी में 2017 से ग्रेजुएशन एवं पोस्ट-ग्रेजुएशन कर सकते हैं। भारत के राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी को नेपाल के काठमांडू विश्वविद्यालय द्वारा एक विशेष दीक्षान्त समारोह के दौरान डी0लिट0 की मानद उपाधि प्रदान की गयी। प्रधानमन्त्री और कुलपति पुष्प कमल दहल ने राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी को यह उपाधि प्रदान की। दीक्षान्त समारोह को सम्बोधित करते हुए दहल ने कहा कि प्रणव मुखर्जी एशिया के सर्वोपरि नेता है और भारत के विकास पथ को आगे बढ़ाने में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी-70 के दशक से लेकर इस दशक के पहले तक सरकार में अपने विभिन्न कार्यकालों में विशेष रूप से नेपाल और बांग्लादेश में दोनों पड़ोसियों में गहरी रूचि विकसित की। यद्यपि राष्ट्रपति की यह यात्रा उनकी व्यक्तिगत इच्छा की पूर्ति का प्रतीक है लेकिन सभी राजकीय यात्राओं की तरह राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी की यात्रा का महत्व व्यक्तिगत से परे है। मुखर्जी की यात्रा का पहला उद्देश्य द्विपक्षीय सद्भावना को विकसित करना ही माना जा सकता है। राष्ट्रपति ने नेपाल में समाज के सभी वर्गों को एक साथ लाने की आवश्यकता तथा मधेशी असंतोष को दूर करने की आवश्यकता पर बल दिया। उनकी जनकपुर यात्रा का महत्व दोनों देशों के सम्बन्धों के लिए अत्यधिक महत्व रखती है। यह दोनों देशों के बीच साझा सांस्कृतिक और सभ्यतागत सम्बन्धों पर जोर देता है। इसी परिप्रेक्ष्य में जहां नेपाल की राष्ट्रपति विद्या देवी भंडारी की भारत यात्रा से दोनों देशों के संबंधों को एक नयी गति मिली है, वहीं इस बात की उम्मीद की जानी चाहिए कि दोनों देश आने वाले समय में द्विपक्षीय संबंधों को एक नयी ऊंचाई पर पहुचायेंगे। भारत नेपाल सम्बन्ध मुख्य रूप से मित्रतापूर्ण रहे है। कभी कभी दोनों के सम्बन्धों में मतभेद भी रहें है। चीन को लेकर दोनों देशों के मध्य टकराव की स्थिति उत्पन्न हुयी है। नेपाल के लिए इसका भू-विष्टित राज्य होना तथा अपनी जरूरत के लिए भारत पर निर्भर होना उसकी सबसे बड़ी मजबूरी है। दूसरी दृष्टि से देखा जाय तो भारत के लिए नेपाल सामरिक महत्व का ऐसा क्षेत्र है जो चीन और उसके बीच राज्य की भूमिका निभा सकता है। इस कारण भारत कभी भी नेपाल के साथ अमैत्रीपूर्ण सम्बन्ध नही रखना चाहेगा।

 ISSN: 2321-0443

नेपाल में नये संविधान की रचना का भारत-नेपाल सम्बन्धों पर प्रभाव:-

नेपाल की राजनीतिक उथल-पुथल एवं नए संविधान की रचना में आने वाली नित नई चुनौतियों का प्रभाव न केवल इसकी अर्थव्यवस्था पर पड़ा है, बल्कि भारत-नेपाल संबंधों पर भी इसका स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है। हालाकि, इस संबंध में दोनों देशों की सरकारों द्वारा निरंतर प्रयास किये जा रहे हैं तथापि बदलते क्षेत्रीय संदर्भों में यह सब न तो बहुत आसान है और न ही बहुत कठिन। संभवतः इसका कारण यह है कि हमेशा से ही भारत-नेपाल के मध्य मधुर एवं सहयोगात्मक संबंध रहे है। लेकिन यह भी स्पष्ट है कि पिछले कुछ वर्षों से चीन ने अपने आक्रामक निवेश के जरिये नेपाल में अपनी मजबूत पैठ बना ली है। भारत नहीं चाहता कि चीन उसके पड़ोस में आकर उसे चारों तरफ से घेर ले, इसलिये भारत को नेपाल के साथ मधुर संबंध बनाए रखने की आवश्यकता है। भारत-नेपाल ने सीमाओं को सुरक्षित करने तथा खुली सीमा का उपयोग एक दूसरे की सुरक्षा के लिए खतरा बनने वाले अनैतिक तत्वों को रोक देने का संकल्प लिया है। सीमा से जुडे विवादों को आपसी वार्ता के माध्यम से हल करने हेतु सहमति बनायी गयी है। भारत के विदेश मन्त्रालय के प्रवक्ता सैयद अकबरूद्दीन ने कहा कि प्रधानमन्त्री 4सी एजेन्डे के साथ नेपाल गये थे। 4 सी अर्थात कॉपरेशन (सहयोग), कल्चर (संस्कृति), कनेक्टिविटी (संयोजकता) और कान्स्टीट्यूशन (संविधान)। 4 सी भारत और नेपाल दोनो देशों के मध्य मधुर वैदेशिक सम्बन्धों के लिए नवीन एवं गत्यात्मक संकल्पना का द्योतक है। जुलाई 2014 में शपथ लेने के बाद नेपाल के प्रधानमन्त्री ने भारत की पहली द्विपक्षीय यात्रा सम्पन्न की। यह यात्रा कनेक्टिविटी परियोजनाओं को शुरू करने की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण रही। भारत नेपाल ने दोनों देशों के मध्य सामंजस्य, सम्पर्क तथा आर्थिक विकास में वृद्धि के लिए विभिन्न कार्यक्रम को प्रारम्भ किया है।

प्रधानमन्त्री मोदी की नेपाल यात्रा (2018 एवं 2022):-

वर्ष 2018 में प्रधानमन्त्री मोदी द्वारा दो बार नेपाल की यात्राएं की गयी। 11-12 मई 2018 को नेपाल की विदेश यात्रा तथा 30-31 अगस्त 2018 को चौथी बिमिस्टेक समिति में प्रतिभाग करने काठमांडू पहुंचे। 11 मई 2018 को मोदी और प्रधानमन्त्री ओली के बीच पांच बार मुलाकात हुई। नेपाली प्रधानमन्त्री ने भारत को आश्वस्त किया कि भारत के खिलाफ नेपाल की धरती का इस्तेमाल नही होने दिया जायेगा। प्रधानमन्त्री मोदी ने जनकपुर से अयोध्या के लिए सीधी बस सेवा की भी शुरूआत की।[14] 30-31 अगस्त 2018 की यात्रा के दौरान प्रधानमन्त्री मोदी ने काठमांडू के पशुपति नाथ मन्दिर में पूजा अर्चना की और विजिटर बुक में लिखा था कि मुझे प्रसन्नता है कि एक बार फिर भगवान पशुपति नाथ मन्दिर में प्रार्थना करने का अवसर मिला। यह मन्दिर भारत और नेपाल के लोगों की साझी धार्मिक विरासत का प्रतीक है। इसी साझी धार्मिक विरासत ने भारत-नेपाल सम्बन्धों को मजबूती प्रदान की है। प्रधानमन्त्री नरेन्द्र मोदी ने नेपाल के प्रधानमन्त्री देउबा के निमन्त्रण पर 16 मई 2022 को बुद्धि पूर्णिमा के शुभ अवसर पर नेपाल के लुम्बिनी की अधिकारिक यात्रा की। दोनो प्रधानमन्त्रियों ने ऐतिहासिक अशोक स्तम्भ का दौरा किया जिस पर लुम्बिनी के भगवान बुद्ध के जन्म स्थान होने से सम्बन्धित पहला पुरालेख अंकित है। लुम्बिनी स्थित एक भूखण्ड पर भारत अन्तर्राष्ट्रीय बौद्ध संस्कृति एवं विरासत केन्द्र के निर्माण हेतु शिलान्यास समारोह में भाग लिया। दोनों प्रधानमन्त्रियों ने संस्कृति, अर्थव्यवस्था, व्यापार, सम्पर्क,

ऊर्जा एवं विकास साझेदारी सहित विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग को और मजबूत करने से सम्बन्धित विचार विमर्श किया। शैक्षिक एवं सांस्कृतिक आदान प्रदान का और अधिक विस्तार करने पर सहमति व्यक्त की। प्रधानमन्त्री मोदी की लुम्बिनी यात्रा भारत और नेपाल के बीच गहरे एवं समृद्धि सभ्यतागत जुड़ाव को सुदृढ़ करने तथा उसे प्रोत्साहित करने में दोनों ओर के लोगो के योगदान पर भी जोर देती है।[15]

वर्तमान सरकार नेपाल सम्बन्धों को मजबूत बनाने के लिए अनवरत प्रयासरत है। 'नेबरहुड फर्स्ट नीति' के आधार पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भारत नेपाल सम्बन्ध को एक नयी दिशा प्रदान की। उनका कहना है कि नेपाल एक नए युग में प्रवेश कर चुका है और भारत हमेशा उसका साथ देगा। सामाजिक संबंधों के अलावा नेपाल के साथ अपनी आर्थिक और विकास संबंधी साझेदारी को भारत पर्याप्त महत्त्व देता है। नेपाल की प्राथमिकताओं को देखते हुए भारत उसके साथ अपने सहयोग को व्यापक बनाने की दिशा में लगातार प्रयासरत रहता है। दोनों देशों के बीच इस मुद्दे पर कोई असहमति नहीं है कि नागरिकों के बीच परस्पर संबंध आर्थिक प्रगति के लिये बेहद जरूरी हैं, क्योंकि दोनों देशों के एक-दूसरे के यहाँ अपने-अपने हित हैं। विश्व के अन्य देशों के बीच वैसा मित्रता एवं सहयोग का संबंध नहीं है, जैसा भारत एवं नेपाल के बीच है। दोनों देश न केवल भौगोलिक दृष्टि से जुड़े हैं, बल्कि इतिहास, संस्कृति, सभ्यता और निकटजनों एवं पारिवारिक संबंधों से भी जुड़े हैं। दोनों देशों के बीच सर्वोच्च राजनीतिक स्तर पर नियमित यात्राएँ इस बात को दर्शाती हैं कि इस विशेष साझेदारी को दोनों देश उच्च प्राथमिकता देते हैं। नेपाल की स्थिरता और आर्थिक समृद्धि में भारत का हित है और भारत का यह प्रयास रहता है कि सद्भाव, परस्पर विश्वास एवं लाभ के आधार पर संबंधों को उत्तरोत्तर मजबूती प्रदान की जाए। भारत नेपाल के मध्य अनेक समझौतों और संधियों के बाद भी कालापानी सीमा मुद्दा, विमुद्रीकरण के कारण 15.3 ट्रिलियन रूपये से अधिक की वापसी के कारण उत्पन्न समस्या, चीन का बढ़ता हस्तक्षेप एवं आर्थिक निवेश दोनों देशों के मध्य अविश्वास और नैतिक मतभेद को तेजी से विकसित कर रहा है। भारत को नेपाल के आंतरिक राजनीति से पृथकता की रणनीति पर चलना अग्रिम मधुर सम्बन्धों की महती आवश्यकता है। दोनों देशों के मध्य विश्वास की डोर को सशक्त किये जाने की आवश्यकता है। नेपाल के द्वारा अधिकारिक रूप से नवीन मानचित्र जारी किया जाना, लिपुलेख-धारा चूला मार्ग उद्घाटन पर नेपाल की आपत्ति, नेपाल में कोरोना वायरस के प्रसार में भारत पर आरोप ने दोनों देशों के मध्य विवाद के नवीन बिन्दु तैयार किये है। भारत नेपाल के मध्य उत्पन्न हो रहे विवादों में चीन की भूमिका पर विमर्श समय की माग बनता जा रहा है। दोनों देशों के मध्य अति प्राचीन सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक सम्बन्ध, रक्षा सहयोग, आपदा प्रबन्धन, संचार तथा सामुदायिक विकास की अनेकों विरासतें मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के लिए नई उम्मीद को सदैव कायम रखता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जगदीश सिंह (2013) भौगोलिक चिन्तन के मूल आधार, ज्ञानोदय प्रकाशन, गोरखपुर
2. ए0 के0 मिश्रा, दक्षिण एशिया एवं भारत का विकास, प्रिज्म बुक्स (इण्डिया) जयपुर 2012, पृष्ठ 54
3. ए0 के0 मिश्रा, दक्षिण एशिया एवं भारत का विकास, प्रिज्म बुक्स (इण्डिया) जयपुर 2012,

पृष्ठ 54

4. डां0 अमित कुमार, भारत नेपाल सम्बन्ध-एक नयी शुरूआत, भारतीय वैश्विक परिषद, सप्रू हाउस, नई दिल्ली, 14 अगस्त 2014

5. प्रो0 अरविन्द कुमार और डां0 मोनिश तोरंग बाम, वर्ल्ड फोकस अंक 92 नवम्बर 2019 भारत के पड़ोस प्रथम नीति पर फिर से आना: एक मूल्यांकन, पृष्ठ 28

6. पामर नार्मन डी0 एण्ड पार्किन्स हार्वल्ड सी0, इंटनेशनल इंटरनेशनल रिलेशन (न्यू डेलही सी0बी0एस0 पब्लिसर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, 2011) पृष्ठ 11

7. मल्होत्रा वी0के0 - इण्टरनेशनल रिलेशन्स (नई दिल्ली: अनमोल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड 2001 पृष्ठ 1)

8. मल्होत्रा वी0के0 - इण्टरनेशनल रिलेशन्स (नई दिल्ली: अनमोल पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड 2001 पृष्ठ 1)

9. मुनि एस0 डी0 (1992-इण्डिया एण्ड नेपाल: ए चेन्जिंग रिलेशनशिप, कोनार्क पब्लिसर्स, (नई दिल्ली)

10. सन्ध्या रानी, (2011)-इण्डिया नेपाल रिलेशन्स, (नई दिल्ली) वी आई जे बुक्स (इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड)

11. डहल जी0 (2015) कान्स्टीट्यूशन असेम्बली आफ नेपाल, माइलस्टोन कार पीस, डेवलपमेन्ट एण्ड पालिटिकल स्टेबिलिटी, के0 एम0 सी0 जर्नल आफ इण्टरडिसिप्लिनरी स्टडीज 4(1), पृष्ठ 70-77

12. डां0 राकेश कुमार मीना, ‘‘नेपाल के प्रधानमन्त्री ओली की भारत यात्रा ‘‘भारतीय वैश्विक परिषद सपूर हाउस, नई दिल्ली

13. सुरेश राज न्यूपैन, ‘‘रेस्पेक्ट नेपाल, सेज इण्डियन अपोजिशन‘‘, द काठमांडु पोस्ट, 5 अप्रैल 2018

14. डां0 बी0 एल0 फाड़िया, डां0 कुलदीप फाड़िया, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2020 पृष्ठ 344

15. प्रधानमन्त्री की लुम्बनी, नेपाल यात्रा (16 मई 2022), पोस्टेड आन प्रधानमन्त्री कार्यालय, मई 2022

अध्याय 11

भारत– मालदीव संबंधों का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. एन. के. सोमानी
सहायक प्रोफेसर
राजनीति–विज्ञान विभाग
एम.जे.जे. गर्ल्स कॉलेज
सूरतग ढ़

मालदीव हिन्द महासागर में स्थित छोटे–छोट द्वीपों से बना हुआ टापुओं का एक समूह है। इस समूह में 1192 द्वीप शामिल है, इनमें से केवल दो सौ द्वीपों पर ही लोग बसे हुए हैं। शेष द्वीपों का उपयोग पर्यटन या कृषि के लिए किया जाता है। जो उत्तर–दक्षिण दिशा के बराबर 26 प्रवाल द्वीपों की दोहरी श्रृखंला के रूप में संगठित है। यह द्वीप इतने छोटे है कि विश्व के कई मानचित्रों में मालदीव नजर ही नहीं आता। इसका क्षेत्रफल 90,000 वर्ग किलोमीटर है। साल 2018 तक मालदीव की जनसंख्या लगभग 5.16 लाख थी। क्षेत्रफल और जनसंख्या दोनों ही दृष्टि से मालदीव दक्षिण एशिया का सबसे छोटा देश है। इसकी समुद्रतल से औसत ऊंचाई 1.5 मीटर है। यह दुनिया का ऐसा इकलौता देश है, जो समुद्र तल की सबसे कम ऊंचाई वाले धरातल पर स्थित है।

मालदीव का इतिहासः कुछ विचारकों का मत है कि मालदीव नाम संस्कृत के शब्द मालाद्विपा (द्वीपों का हार) से उत्पन्न हुआ हैं।[1] हालांकि किसी भी प्राचीन साहित्य में मालदीव शब्द का कोई उल्लेख नहीं मिलता है, परन्तु वैदिक समय में पारम्परिक संस्कृत अवतरण 'सौ हजार द्वीप' (लक्षाद्वीपाः) के बारे में चर्चा जरूर मिलती है। दरअसल, 'सौ हजार द्वीप' का अर्थ द्वीपों के एक ऐसे वर्ग समूह से लिया गया जिसमें एक साथ कई द्वीप शामिल हों।[2] मालदीव की भाषाई और सांस्कृतिक परम्परा तथा रीति –रिवाज के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि इस द्वीप पर सबसे पहले द्रविड़ जाति के लोगों ने आकर रहना शुरू किया। ऐतिहासिक तथ्यों से इस बात की भी पुष्टि होती है कि यहां आने से पहले द्रविड़ लोग केरल के दक्षिण–पश्चिम तट पर मछुवारों के रूप में निवास करते थे । इस क्षेत्र में इन्हें गिरावारू समुदाय के रूप जाना जाता था, जिन्हें प्राचीन तमिलों का वंशज भी कहा जाता है। ऐसा भी अनुमान है कि समुद्री विप्लव के कारण अक्सर होने वाले जान माल की हानि के कारण तमिलों ने लक्षद्वीप व उसके आसपास के क्षेत्रों में बसना शुरू कर दिया। यहीं से मालद्वीव एक द्वीप समूह के रूप में स्थापित हुआ।

मालदीव की प्रारंभिक सभ्यता के अवशेषों का अध्ययन करने वाले सीलोन देशीय सर्विस के एक ब्रिटिश अधिकारी एच.सी.पी. बेल के अनुसार प्राचीन मालदीव के लोग थेरवाद (बौद्ध) धर्म को मानते थे। इस संबंध में कई पुरातात्विक अवशेष आज भी राजधानी माले के संग्रहालय में सुरक्षित हैं। सम्राट अशोक के शासनकाल के दौरान मालदीव बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार का केन्द्र रहा। 12 वीं सदी तक बौद्ध धर्म यहां का प्रमुख धर्म बना रहा। लेकिन बाद में यह धीरे–धीरे मुस्लिम देश में बदल गया । मालदीव के संविधान में इस्लाम धर्म के अलावा अन्य किसी भी धर्म को मान्यता या पहचान नहीं है।

मालदीव का आधुनिक इतिहासः ब्रिटिश अधिराज्य (सूवरेन्टी) के पहले मालदीव पुर्तगालियों के अधीन था। उसके बाद मालदीव में डचों ने शासन किया। साल 1776 में सीलोन का शासन अंग्रेजों के हाथ में आ गया फलस्वरूप मालदीव भी ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा बन गया। सन् 1798 ई. में मालदीव के सुल्तान ने सीलोन के गर्वनर को पत्र को लिखकर यथास्थिति बनाए रखने का आग्रह किया। सन् 1887 में सीलोन के गवर्नर और मालदीव के सुल्तान के बीच हुए समझौते के तहत मालदीव पर ब्रिटिश संप्रभुता को अधिकारिक रूप से स्वीकार कर लिया गया।

1960 से पहले लगभग 8 शताब्दियों तक मालदीव एक सल्तनत रहा है। कालांतर में 26 जुलाई 1965 को कोलबों में ब्रिटिश उच्चायुक्त के निवास पर आयोजित एक समारोह में मालदीव को पूर्ण राजनीतिक स्वतंत्रता देने का समझौता हुआ। इस समझौते पर महामहिम सुल्तान की ओर से इब्राहीम नासिर रंनाबदयी किलेगेफा तथा ब्रिटिश प्रधानमंत्री और महारानी की ओर से सर माइकल वॉकर ने हस्ताक्षर किए। नवबर 1968 में मालदीव पूर्ण गणराज्य के रूप में स्थापित हुआ। ब्रिटिश रॉयल नेवी द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान मालदीव के दक्षिणी द्वीपों का इस्तेमाल अपने सैन्य अड्डे के रूप में करती थी। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जापान का सिंगापुर और इंडोनेशिया में बढ़ते प्रभाव के कारण ब्रिटेन ने गन द्वीप पर नौसैनिक अड्डे की स्थापना की। 1965 में मालदीव ब्रिटेन से स्वतंत्र हुआ और इसके बाद वर्ष 1976 में ब्रिटिश सरकार ने **ईस्ट आफ स्वेज नीति** को ध्यान में रखते हुए ब्रिटिश रॉयल वायु सेना ने इस स्थान को खाली कर दिया। मालदीव की सहमति से अब वहां कई दशकों से भारतीय नौसेना की एक निगरानी चौकी हैं। अतः मालदीव की स्वतंत्रता का वास्तिवक इतिहास यहीं से शुरू होता हैं। बाहरी शक्तियों से स्वयं को सुरक्षित रखने के लिए सन 1987 में मालदीव ने ब्रिटेन के साथ एक समझौता किया, समझौते के तहत ब्रिटेन ने मालदीव को संरक्षण प्रदान किया।[3]

भारत–मालदीव संबंध

मालदीव के साथ भारत के सदियों पुराने व्यापारिक और सांस्कृतिक संबध रहे हैं। घनिष्ठ एवं मैत्रीपूर्ण पड़ोसियों के रूप में भारत और मालदीव के बीच मजबूत जातीय, भाषायी, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं वाणिज्यिक संबंध है। यह भारत के लक्षद्वीप समूह से महज 700 किमी दूर है।[4] मालदीव हिन्द महासागर में स्थित डियागोगार्सिया केवल 240 मील दूर स्थित है, जिसके कारण हिन्द महासागर की वर्तमान राजनीति में सामरिक रूप से मालदीव का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है।[5] मालदीव में सिंहली, भारतीय आर्य एवं द्रविड़ जाति के लोग भी निवास करते हैं। इसकी राजधानी माले है। मालदीव की मुद्रा का नाम **मालदीवियन रूफिया** है। मालदीव की 60 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या मत्स्य उद्योग से जुड़ी हुई है।[6]

मालदीव फारस की खाड़ी, अदन की खाड़ी और मलक्का जलडमरू जैसे महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री जलमार्गो के निकट स्थित है। यहीं से चीन, जापान, दक्षिण कोरिया और भारत जैसे देशों को ऊर्जा की आपूर्ति होती है। भारत का करीब 95 फीसदी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार हिन्द महासागर के द्वारा ही होता है।[7] मालदीव एक ऐसे समुद्री मार्ग के बीच स्थित है जहां से दुनिया का दो–तिहाई तेल और मालवाहक जहाजों का आधा हिस्सा गुजरता हैं। सच तो यह है कि मालदीव हिंद महासागर क्षेत्र में ऐसी जगह अवस्थित है,

जहां वह भारत के इर्दगिर्द महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भूतपूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था कि हम मित्र तो बदल सकते हैं, पड़ोसी नहीं। यह वक्तव्य मालदीव के महत्व को व्यक्त करता हैं।

साल 1965 में जब मालदीव ब्रिटिश आधिपत्य से मुक्त हुआ तो भारत दुनिया का पहला देश था जिसने इसे मान्यता प्रदान की। मालदीव में करीब 25000 भारतीय निवास करते हैं। यह मालदीव का दूसरा सबसे बड़ा विदेशी समुदाय है। मालदीव के पर्यटन उद्योग में भारत हर साल करीब छह फीसदी का योगदान करता हैं । 1966 में भारत ने मालदीव के साथ औपचारिक राजनयिक संबंध स्थापित किए। सही अर्थों में भारत–मालदीव के बीच राजनयिक संबंधों की शुरूआत साल 1972 में उस वक्त हुई जब भारत ने मालदीव में अपना दूतावास शुरू किया । भारत–मालदीव संबंधों को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से निम्न चरणों में विभाजित किया जा सकता है।

प्रथम चरण (1972 से 1982) : मालदीव के लिए भू–रणनीतिक दृष्टि से भूमि बद्ध स्थिति जोखिम का एक बड़ा कारण है, जो हिंद महासागर के सैन्यीकरण तथा 1970 और 1980 के दशक में महाशक्तियों के बीच बढ़ती प्रतिद्वंद्विता के चलते उच्च हो गया।[8] बाहरी शक्तियों के हस्तक्षेप के इसी भय के चलते मालदीव सन 1965 में ब्रिटिश उपनिवेश से आजाद होते ही भारत के साथ राजनयिक संबंधों में बंध गया। एक कमजोर और छोटा देश होने के नाते मालदीव आज भी भारत को अपनी सुरक्षा का महत्वपूर्ण स्रोत मानता है। दूसरी ओर भारत ने मालदीव द्वारा 1970 के दशक में अपनाई गई **'इंडिया फर्स्ट पॉलिसी'** का सम्मान करते हुए अपनी विदेश नीति में मालदीव को अहम स्थान दिया है।

सन 1976 में दोनों देशों ने **मध्य रेखा सिद्वांत** को अपनाकर अपनी समुद्री सीमा को निर्धारित करने के लिए एक समझौता किया, जो उनके आपसी संबंधों को उल्लेखनीय तरीके से स्पष्ट करता हैं।[9] साल 1981 में भारत और मालदीव ने अपने आर्थिक ओर वाणिज्यिक संबंधों को नई ऊंचाईया देने के लिए आवश्यक वस्तुओं के निर्यात से संबंधित एक अन्य समझौते पर हस्ताक्षर किए। बहुत छोटी शुरूआत के साथ लगातार आगे बढते हुए आज दोनों देश के बीच 700 करोड़ रूपये से अधिक का द्विपक्षीय व्यापार है।

द्वितीय चरण (1982 से 2002): जुलाई 1982 में भारत–मालदीव संबंधों में उस वक्त तनाव उत्पन्न हो गया था, जब मालदीव के तत्कालीन राष्ट्रपति अब्दुल गयूम के भाई ने दावा किया कि भारत के लक्ष्यद्वीप का मिनिकाय द्वीप मालदीव का हिस्सा है। भारत सरकार की कड़ी आपत्ति के बाद मालदीव ने मिनिकाय द्वीप से अपना दावा वापिस लेकर तनाव को बढ़ने से रोक लिया। पिछले कुछ वर्षो में भारत ने मालदीव को बड़े पैमाने पर सहयोग एवं सहायता देकर उसके अवसंरचना के विकास में बड़ी भूमिका निभाई है। साल 1986 में दोनों देशों के बीच पांच साल के आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग समझौते पर हस्ताक्षर किए गए। इस समझौते के तहत भारत ने मालदीव में आर्थिक, तकनीकी और वाणिज्यिक सहायता का विस्तार किया।

वर्ष 1988 में जब अब्दुल्ला लुतूफी नाम के विद्रोही नेता ने श्रीलंकाई विद्रोहियों की मदद से राष्ट्रपति मौमून अब्दुल गयूम को सत्ता से बेदखल करने की कार्रवाई की तो मालदीव ने भारत और अमेरिका सहित अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय से मदद की गुहार लगाई। उस वक्त भारत की राजीव गांधी सरकार ने **'ऑपरेशन कैक्टस'** के तहत विद्रोहियों का सफाया कर गयूम सरकार की मदद की। भारत के इस सहयोग के लिए मालदीव ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत का आभार जताया।

जनवरी 1990 में माले में संपन्न भारत–मालदीव संयुक्त आयोग की पहली बैठक में भारत ने ग्रीन हाउस प्रभाव की रोकथाम करने तथा वहां के विदेश विभाग के कार्यालय हेतु सिविल सेवकों को प्रशिक्षण देने पर सहमति व्यक्त की। नवबंर 1990 में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर सार्क के पांचवें शिखर सम्मेलन में भाग लेने के लिए दो दिन की यात्रा पर मालदीव गए। इसके बाद मई 1997 में तत्कालीन प्रधानमंत्री इन्द्रकुमार गुजराल ने मालदीव की यात्रा की। उन्होंने माले में आयोजित सार्क की नौंवी शिखर बैठक में भाग लिया तथा गुजराल सिद्वांत के आधार पर दोनों राष्ट्रों ने सहयोग के अनेक क्षेत्रों पर सहमति जतायी।

तृतीय चरण (2002 से 2012): इतिहास इस बात का गवाह है कि जब भी मालदीव पर कोई प्राकृतिक आपदा या मानवीय विपदा आई है, भारत बिना वक्त गंवाए मालदीव की मदद के लिए उपस्थित हुआ है। 26 दिसंबर 2004 को आए विनाशकारी समुद्री तूफान सुनामी के कारण मालदीव को बड़ी क्षति उठानी पड़ी। एक अनुमान के अनुसार मालदीव को 400 मिलियन डॉलर का नुकसान हुआ जो उसकी कुल जीडीपी का 62 फीसदी से अधिक था। तूफान में 108 लोग मारे गए थे। उस वक्त भारत दुनिया का पहला देश था जिसने मालदीव को भौतिक सहायता के अलावा 37 करोड़ रूपये की वितीय मदद प्रदान की थी।

साल 2006 में भारत ने मालदीव में आतंकवादियों और समुद्री लुटेरों के खिलाफ कार्रवाई के लिए हवाई जहाज आईएनएस तिलानचैंग उपलब्ध कराया था।[10] इसी प्रकार साल 2007 में समुद्री ज्वार से हुए नुकसान से उबरने के लिए भारत ने मालदीव को 10 करोड़ रूपये की सहायता राशि पहुंचाई। भारत के विदेशी इन्फ्रास्ट्रेक्चर अलांयस को मालदीव में 485 घरों के निर्माण का ठेका दिया है।

7 अगस्त 2008 को मालदीव में नया संविधान लागू होने के बाद बहुदलीय राष्ट्रपति के निर्वाचन का मार्ग खुला। संविधान लागू होने के बाद हुए चुनाव में लोकतांत्रिक पार्टी के मोहम्मद नशीद राष्ट्रपति निर्वाचित हुए। राष्ट्रपति नशीद के शपथ ग्रहण समारोह में भाग लेने के लिए भारत के उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी ने 11 नवंबर 2008 को मालदीव की यात्रा ।[11]

दिसंबर 2008 में नवनिर्वाचित राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद ने भारत की राष्ट्रपति श्रीमति प्रतिभा देवी सिंह पाटील के निमंत्रण पर 23 से 25 दिसंबर 2008 तक भारत का राजकीय दौरा किया। उनके साथ उनकी पत्नी श्रीमति लैलाअली और एक उच्चस्तरीय व्यावसायिक प्रतिनिधि मंडल भी भारत आया। इस अवसर पर दोनों देश साझे लोकतांत्रिक मूल्यों, आर्थिक विकास तथा अन्तर्राष्ट्रीय मुददों पर समान विचारों के आधार पर अपने बहुफलकीय संबंधों को और मजबूत करने के लिए सहमत हुए।[12] यात्रा के दौरान उन्होंने पूर्व प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहनसिंह से समुद्र की ओर से होने वाले हमलों को देखते हुए तटीय सुरक्षा बढाने की आवश्यकता पर बल दिया। इस यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच नागर विमानन क्षेत्रों में द्विपक्षीय सहयोग को बढ़ाने हेतु दो समझौतों पर हस्ताक्षर किये गए।[13] साथ ही भारत ने मालदीव को 15 मिलियन कीमत की इलेक्ट्रोनिक वोटिंग मशीने देने की घोषणा की। भारत ने मालदीव को 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर की अतिरिक्त ऋण सुविधा उपलब्ध करवाई। इसमें 50 लाख रूपये भारत से आयात करने के लिए था और बाकी 50 लाख रूपये बजटीय समर्थन के रूप में बढाया गया था।[14] वर्ष 2009–10 में दोनों देशों के बीच व्यापार बढ़कर 396 करोड़ रूपये हो गया। भारत की कुछ निजी कंपनियां जैसे ताज ग्रुप, सुजलोन एनर्जी, जीआरएम इन्फ्रास्ट्रक्चर कंपनी ने 2010 में मालदीव में 25 मेगावाट के सोलर एनर्जी प्रोजेक्ट की स्थापना के लिए हस्ताक्षर किए।[15]

अगस्त 2009 में मालदीव द्वारा उसके एक द्वीप रिजार्ट पर आतंकवादियों के कब्जा किए जाने की आशंका जताए जाने के बाद भारत के रक्षा मंत्री ए.के. एंटनी तीन दिन की यात्रा पर मालदीव गए। यात्रा के दौरान भारत–मालदीव के बीच ग्राउंड रडार नेटवर्क स्थापित करने का समझौता हुआ । इस रडार का सीधा संपर्क भारतीय तट रक्षक कमांड से था। रक्षामंत्री के दौरे के बाद से भारतीय जंगी जहाज और डॉर्नियर विमान समुद्री गश्त और सर्विलांस में मालदीव की मदद कर रहे हैं। इससे पूर्व भी भारत ने हाइड्रोग्राफिक सर्वे और अन्य सैनिक सहायता मालदीव को दी है।[16] अक्टूबर 2010 में मालदीव के राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद राष्ट्रमंडल खेलों के उद्घाटन समारोह में भाग लेने के लिए भारत की यात्रा पर आए।

उच्चतम स्तरों पर नियमित संपर्को से भारत और मालदीव के बीच द्विपक्षीय संबंध मजबूत हुए हैं। भारत के लगभग सभी प्रधानमंत्रियों ने मालदीव का दौरा किया है। मालदीव के आडू शहर में आयोजित सार्क की 17 वीं शिखर बैठक (10–11 नवंबर 2011) में भाग लेने के लिए प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने मालदीव का दौरा किया। शिखर बैठक से इतर राष्ट्रपति नशीद से वार्ता के दौरान डॉ. मनमोहन सिंह ने मालदीव की सामरिक सुरक्षा और विकास में मदद की बात दोहराई। अक्टूबर 2012 में भारत ने घोषणा की कि माले में एक सुरक्षा अटैच बनाया जायेगा, वहां हेलिकॉप्टरों के साथ मालदीव के सुरक्षा अधिकारियों को प्रशिक्षण भी दिया जायेगा।[17]

चतुर्थ चरणः(2012 से अब तक): साल 2012 राजनीतिक दृष्टि से मालदीव में उथल–पुथल वाला रहा। भारत समर्थक मोहम्मद नशीद की लोकतांत्रिक ढंग से चुनी हुई सरकार के विरूद्व जब प्रदर्शनों का सिलसिला शुरू हुआ तो नशीद सरकार ने भारत से सहयोग की उम्मीद की। भारत ने नशीद का सहयोग करने के बजाए मोहम्मद वहीद हसन की सरकार को न केवल मान्यता दी बल्कि हर तरह के समर्थन देने का वादा भी किया।[18]

मालदीव में सत्ता परिर्वतन के बाद भारत विरोधी भावनाओं का विस्तार होने लगा। पूर्व राष्ट्रपतिअब्दुल्ला यामीन की कार्यशैली पूरी तरह से भारत विरोधी रही है। यामीन के बारे में यहां तक कहा जाता रहा है कि वह अपने देश में भारत की किसी भी तरह की भागीदारी पसंद नहीं करते हैं। यामीन सरकार ने भारतीयों को वर्क परमिट जारी करना बंद कर दिया था जिसकी वजह से वहां उन परियोजनाओं का काम प्रभावित हुआ, जिसमें भारत की भागीदारी थी।[19]

इसी तनाव और विवाद के बीच भारत के तत्कालीन रक्षामंत्री ए.के.एंटनी ने सिंतबर 2012 में तीन दिन की राजकीय यात्रा पर मालदीव गए। यात्रा के दौरान भारत ने मालदीव की राजधानी माले में एक रक्षा अधिकारी की नियुक्ति करने तथा मालदीव के हेलीकॉप्टर चालकों और रक्षाकर्मियों को प्रशिक्षण देने का भी फैसला किया। इसके अलावा दोनों देश लक्षद्वीप के आसपास के समुद्र में डकैती की घटनाएं रोकने हेतु साथ काम करने को राजी हुए। एंटनी ने वहां भारत के सहयोग से बनने वाली मैरीटाइम ट्रेनिंग अकादमी की आधारशिला भी रखी तथा भारत की मदद से बने सैन्य अस्पताल का उद्घाटन किया। इस दौरान भारत ने अपने अत्याधुनिक ध्रुव हैलीकॉप्टर की तैनाती दो वर्ष के लिए 2014 तक बढाने का फैसला किया। भारत ने यह हैलीकॉप्टर वर्ष 2010 में मालदीव को दिए थे।[20] दिसंबर 2014 में माले के सबसे बडे वाटर ट्रीटमेंट प्लांट के जनरेटर में लगी आग से उत्पन्न जल संकट से निबटने के लिए मालदीव ने भारत सरकार से मदद की गुहार लगाई। भारत ने तत्काल मदद करते हुए हजारों टन पानी के साथ आईएनएस सुकन्या व आईएनएस दीपक को माले रवाना किया। भारतीय वायु सेना ने भी अपने एयरक्राफ्ट के जरिए सैंकड़ों टन पानी माले पहुंचाया। भारत के इस अभियान को **'ऑपरेशन नीर'** के नाम से जाना जाता है।[21]

इसके अलावा स्वास्थ्य मंत्री जे.पी. नड्डा ने जुलाई 2015 में मालदीव की स्वतंत्रता के स्वर्णजंयती समारोह में भाग लेने के लिए प्रधानमंत्री के विशेष दूत के रूप में मालदीव की यात्रा की थी। वहीं मालदीव की तरफ से विदेशमंत्री दुन्या मॉमून ने फरवरी एवं नवबंर 2015 में भारत का दौरा किया। अप्रैल 2016 में राष्ट्रपति यामीन भारत के दौरे पर आए।

भारत–मालदीव संबंध उस वक्त और अधिक मजबूत हुए जब नवंबर 2018 में भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी नवनिर्वाचित राष्ट्रपति इब्राहिम मोहम्मद सोलिह के शपथ ग्रहण समारोह में भाग लेने के लिए मालदीव गए। 8 जून 2019 का दिन भी भारत–मालदीव संबंधों के लिए ऐतिहासिक दिन था, जब मालदीव ने भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी को मालदीव का सर्वोच्च सम्मान **'रूल ऑफ निशान इज्जुद्दीन'** प्रदान किया। इस अवसर पर प्रधानमंत्री मोदी ने राष्ट्रपति इब्राहिम मोहम्मद सोलिह को टीम इंडिया के खिलाड़ियों का हस्ताक्षर किया हुआ बल्ला भेंट किया। पीएम मोदी की इस यात्रा के दौरान भारत ने हाइडोग्राफी, हेल्थ सेक्टर, समुद्री मार्ग से पैसेंजर और कार्गो सेवाएं, कस्टम्स के क्षेत्र में क्षमता निर्माण ओर सिविल सेवा प्रशिक्षण के क्षेत्र में सहयोग हेतु समझौता किया। दोनों देशों के बीच वाणिज्यिक और असैन्य जहाजों के आवाजाही के बारे में सूचना के आदान प्रदान के लिए व्हाइट शिपिंग इंफॉर्मेशन के विनियम हेतु समझौता हुआ है। यात्रा के दौरान मालदीव और केरल(कोच्चि) के बीच फोर सर्विसेज सेवा शुरू करने पर सहमति के साथ–साथ रूपे कार्ड लॉन्च किया गया। इसके अतिरिक्त भारत ने मालदीव की फ्राइडे मस्जिद के संरक्षण हेतु मदद का ऐलान किया। दुनिया की इकलौती मूंगा पत्थरों से निर्मित इस मस्जिद को मालदीव में हुकुरू मिस्की के नाम से भी जाना जाता है।

भारत और मालदीव के बीच नियमित उच्च स्तरीय वार्ताओं के आदान–प्रदान हेतु भारत के विदेशमंत्री डॉ.एस. जयशंकर और मालदीव के विदेशमंत्री अब्दुल्ला शाहिद के बीच 13 अगस्त 2020 को वर्चुअल बैठक आयोजित हुई। इस बैठक में दोनों देशों के द्विपक्षीय संबंधों की समीक्षा करते हुए कहा गया कि कोविड–19 जैसी वैश्विक महामारी भी दोनों देशों के द्विपक्षीय सहयोग को कम नहीं कर सकी। इस अवसर पर भारतीय विदेश मंत्री ने कहा कि मालदीव कोविड–19 से संबंधित सहायता पाने वाले सबसे बड़ा लाभार्थी देश है।[22] नवंबर 2020 में भारत के विदेश सचिव हर्षवर्धन श्रृंगला दो दिन की यात्रा पर मालदीव गए। इस दौरान दोनों देशों के बीच दो सहमति पत्रों पर हस्ताक्षर किए गए। एक समझौता ग्रेटर माले कनेक्टिविटी प्रोजेक्ट के लिए 10 करोड डॉलर के अनुदान के लिए है, तथा दूसरा खेल तथा युवा मामलों में सहयोग से संबंधित है।

निष्कर्षः भारत इस समय मालदीव के साथ लंबे और बेहतर संबंध कायम करने के निर्णायक बिन्दु पर खड़ा है। खास कर चीन के संदर्भ में। सामरिक दृष्टि से मालदीव चीन के लिए भी काफी अहम है। चीन ने उसे अपनी **'डेब्ट ट्रेप डिप्लोमेसी'** में उलझा रखा है। वह अपने कुल ऋण का 60 फीसदी से अधिक चीन से लेता है, जो उसके बजट का 10 प्रतिशत है। एक अनुमान के अनुसार चीन का मालदीव पर 1.4 अरब डॉलर का कर्ज है। इसका अर्थ यह हुआ कि मालदीव के प्रत्येक नागरिक पर चीन का आठ हजार डॉलर का कर्ज बकाया है। साल 2016 में मालदीव ने चीन की एक कंपनी को **फेयदहू–फिनोलहू द्वीप** 50 वर्षों के लिए लीज पर दे दिया था। उपग्रहों के माध्यम से लिए गए चित्र बताते हैं कि चीन ने इस द्वीप की आस–पास की गहराई को पाटते हुए उसका आकार 85 हजार वर्ग मीटर से बढाकर एक लाख वर्गमीटर कर दिया है। उसकी योजना यहां एक सैन्य अड्डे के निर्माण की है। वह इस अड्डे का उपयोग परमाणु पनडुब्बियों के संचालन के साथ–साथ भारतीय पनडुब्बियों की जासूसी के लिए भी कर सकता है। हिंद महासागर के इस हिस्से में भारत के पास कोई नौ सैनिक अड्डा नहीं है।[23] निसंदेह, मालदीव में चीन का बढता प्रभाव हिंद

महासागर में भारत के सुरक्षा हितों के लिए दीर्घकालिक खतरा बन सकता है। ऐसे में भारत को मालदीव को यह विश्वास दिलाना होगा कि वह **बिग ब्रदर्स सिंड्रोम** की गलतफहमी को त्यागकर 'इंडिया फर्स्ट' की नीति को प्राथमिकता दे। भारत को भी इस बात का ध्यान रखना होगा कि हिंद महासागर क्षेत्र में केवल मालदीव ही ऐसा देश है, जिसके विश्वसनीय होने की उम्मीद भारत कर सकता है। इसलिए एक समृद्ध, लोकतांत्रिक और शांतिपूर्ण मालदीव न केवल भारत बल्कि पूरे क्षेत्र के हित में हैं।

———

सदर्भः

1. जे. होगनडोर्न और एम. जॉनसन : द शेल मणी ऑफ द स्लेव ट्रेड पृ.सं. 20–22.
2. आप्टे, वामन शिवराम(1985)संस्कृत–अंग्रेजी शब्दकोश, मोतीलाल–बनारसी दास , नई दिल्ली 1985.
3. फडनीस–उर्मिलाः मालदीव वाइन्डस ऑफ चेन्डा इन ऐन एटाल स्टेट : साउथ एशियन पब्लिशर, नई दिल्ली, 1985 पेज 731.)
4. Rajeswari Pillai Rajagopalan, “India’s Maldives Headache”, The Diplomate, February 23, 2018.
5. उर्मिला–फडनीस एण्ड इलादत्तः मालदीव विण्ड एण्ड चेंज इन एन स्टाल स्टेट पृ सं. 2
6. उर्मिला–फडनीस एण्ड इलादत्तः मालदीव विण्ड एण्ड चेंज इन एन स्टाल स्टेट पृ0 सं. 58
7. Saji Abraham, China”s Role in the Indian Ocean: Its Implications on India”s National Security (Delhi: Vij Books India Pvt. Ltd, 2015), p.39.
8. अंतरराष्ट्रीय राजनीति अवधारणाएं, सिद्धांत तथा मुद्देः संपादन रूमकी बासू
9. अंतरराष्ट्रीय राजनीति अवधारणाएं, सिद्धांत तथा मुद्देः संपादन रूमकी बासू
10. Maldivian ship arrives in Vizag for refit, The Hans India, July 13, 2018
11. अपला,डी (2009) भारत और उसके पड़ोसीःखट्टे–मीठे अनुभव वर्ल्ड फोकस, नवंबर–दिसंबर, पृ. सं. 51
12. विदेश मंत्रालय भारत सरकार, मीडिया सेंटर, दिसबंर 25, 2008)
13. South Asia Cluster – Institute for Defence Studies and Analysis, 28 May, 2009,pp 12-13
14. South Asia Cluster – Institute for Defence Studies and Analysis, 28 May, 2009,pp 12-13
15. Chandramohan, Balaji (2009) “ India Maldives and The India Ocean,” IDSA Comments, Oct. 13

16. Ministry of External Affairs, Government of India, Annual Report, 2009
17. Kumar, Anannd (2012) " China Engagement with the Maldives: Impact on Security Environment in the Indian Ocean Region", Strategic Analysia, Vol. 36, No. 2, March)
18. Dikshit, Sandeep (2014) " India Hopes to Resolve Situations in Maldives", The Hindu, Feb. 14
19. एन.के. सोमानीः चिंता बढाते पाक–मालदीव संबंधः सच कंहु 14 जुलाई 2018
20. डॉ. आर.के. सिंहः अंतरराष्ट्रीय संबंधः मिश्रा ट्रेडिंग, वाराणासी, पृ. सं. 106.
21. Maldivian crises: Indian Navy's prompt First rsponse, Indian Navy, Dec 07,2014.
22. भारतीय विदेश मंत्रालय, 13 अगस्त 2020.
23. जिसकी हिंद महासागर में चलेगी, एशिया में उसी की तूती बोलेगीः राम यादव : 5 अगस्त 2020, सत्याग्रह।

———————

अध्याय 12

भारत-बांग्लादेश संबंधों के बदलते आयाम

डॉ एस. एस. नंदा
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज
वाराणसी

विपिन कुमार गुप्ता
शोध छात्र
डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज
वाराणसी

परिचय

"हाथ छूटे भी तो रिश्ते नहीं छूटा करते वक्त के शाख से लम्हें नहीं तोड़ा करते" यह बात भारत और बांग्लादेश के बीच चले आ रहे सतत् आत्मीय संबंध के बीच सटीक बैठता है। दोनों देशों का साझा इतिहास, स्वाधीनता संघर्ष की साझी विरासत तथा भाषा एवं संस्कृति दोनों देशों को आपस में जोड़ने का काम करती हैं। बांग्लादेश के स्वतंत्रता संग्राम से लेकर एक मजबूत राष्ट्र की स्थिति में खड़ा करने में भारत का महत्वपूर्ण योगदान रहा है । इस योगदान स्वरूप भारत बांग्लादेश के एक सदाबहार मित्र के रूप में स्वीकार्य है। वर्तमान में भारत का क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक रूप से प्रभाव बढ़ा है, साथ ही बांग्लादेश भी दशकों की मेहनत के बाद आर्थिक क्षेत्र में मजबूत राष्ट्र की श्रेणी में खड़ा हुआ है। भारत का अपने आंतरिक विकास और बाह्य प्रभाव को स्थापित करने के लिए बांग्लादेश जैसे पड़ोसी देश के साथ मजबूत संबंध बनाना अनिवार्यता हो गया है ।

बांग्लादेश की भौगोलिक और रणनीतिक स्थिति के कारण, विस्तारवादी चीन और अमेरिका की अप्रत्याशित प्रकृति, इस क्षेत्र में अपने हित साधने तथा इस क्षेत्र में अपनी ताकत बढ़ाने के लिए लगातार प्रयासरत हैं। दोनों राष्ट्रों की विदेश नीति के तहत दोनों देशो के अपने-अपने राष्ट्रीय हित शामिल हैं और दोनों राष्ट्रों के राष्ट्रीय हित में टकराव और तनाव

 ISSN: 2321-0443

होना स्वभाविक सी बात है। परंतु आपसी आशंका और भ्रम के कारण यह तनाव संघर्ष की स्थिति तक ना पहुंच जाए, यह हमेशा से अध्येताओं के लिए विचारणीय प्रश्न रहा है। भले ही भारत और बांग्लादेश एक कड़वाहट और प्यार का संबंध साझा करते हों लेकिन यह दोनों देशों के बीच कई आयामों पर सहयोग करने से नहीं रोक सकता है।

भारत-बांग्लादेश संबंधों के निर्धारक तत्त्व

किन्ही दो देशों के संबंधों के विकास में उस देश की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं भौगोलिक परिस्थितियां एक निर्धारक तत्त्व के रूप में कार्य करती हैं। यह निर्धारक तत्त्व आने वाली पीढ़ियों के लिए संबंधों को आगे ले जाने में प्रकाश पुंज की तरह काम करेंगी। भारत-बांग्लादेश संबंध को स्थाई एवं महत्वपूर्ण बनाने में दोनों देशों की पृष्ठभूमि हमेशा प्रेरणादायक रहेगी। इस संबंध में वीपी दत्त का कथन सही है कि "किसी भी देश की विदेश नीति उसके इतिहास, भूगोल और अतीत के अनुभव, तत्कालीन आवश्यकताएं, राष्ट्रीय हितों की सर्वोच्चता, अपने आदर्शों के प्रति जागरूकता के मिश्रित अंतर्राष्ट्रीय खेल की उपज है ।"

ऐतिहासिक तत्व

भारत के स्वतंत्रता से पूर्व बांग्लादेश, भारत के बंगाल प्रांत का ही एक भाग था। अतः भारत के विभाजन से पूर्व बांग्लादेश का इतिहास भारत के ही इतिहास का एक भाग है। वर्ष 1947 में विभाजन के पश्चात पश्चिमी पाकिस्तान के नेताओं ने पूर्वी प्रांत के प्रति उदासीनता की नीति अपनाई। पूर्वी पाकिस्तान के नाम से प्रसिद्ध बांग्लादेश में आवामी लीग ने कौमी असेम्बली में आवंटित 300 सीटों में से 167 पर विजय प्राप्त करके यह बता दिया था की पूर्वी पाकिस्तान का बच्चा बच्चा शेखमुजीब और उनकी पार्टी आवामी लीग के साथ है लेकिन पूर्वी पाकिस्तान में पूर्ण बहुमत के बावजूद आवामी लीग नेता बंगबंधु शेख मुजीबउर रहमान को सरकार नहीं बनाने दिया गया, यहां तक की राष्ट्रीय असेंबली की बैठक भी नहीं होने दी

गई। इस जटिल परिस्थिति में पाकिस्तानी सेना पूर्वी प्रांत में आ गई और व्यापक नरसंहार को अंजाम दिया ।[1]

इस समय भारत ने निस्वार्थ भाव के आदर्श से प्रेरित होकर बांग्लादेश की स्वतंत्रता में जो भी सहयोग दिया इतिहास उन गौरवशाली कार्यों के लिए हमेशा ही याद रखेगा | बांग्लादेश के प्रधानमंत्री अजीउद्दीन अहमद ने कहा है कि "हमारे प्रिय कभी भी नहीं भूल पाएंगे जो भारत ने उनके स्वतंत्रता के लिए किया है। दोनों देशों के बीच ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में उर्वरक भूमि के रूप में सदैव काम करते रहेंगे।"[2]

भौगोलिक तत्व

भारत और बांग्लादेश की भौगोलिक स्थिति के कारण दोनों देश एक दूसरे के साथ घनिष्ठता एवं मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए रखने के लिए प्रतिबद्ध हैं। भारत अपने भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 4096 किलोमीटर लम्बी (2,545 मील) लम्बी सीमा क्षेत्र साझा करता है जो कि किसी भी पड़ोसी देश से ज्यादा है यही समान स्थिति बांग्लादेश के लिए भारत की भी है। यदि विश्व मानचित्र पर दृष्टिपात करें तो भारत-बांग्लादेश मिलकर एक साथ चतुष्कोणीय स्थिति प्राप्त करते हैं। जिसके उत्तर पूर्व में असम, उत्तर पश्चिम में बंगाल और पूर्व, में त्रिपुरा से घिरा हुआ है। भारत और बांग्लादेश के बीच कई सालों से कोई सीमा अवरोध नहीं होने के कारण स्थली सीमा द्वारा भारत के सीमावर्ती राज्य (असम, बंगाल, त्रिपुरा, मेघालय) मे अवैध शरणार्थी के रूप में हजारों लोग प्रवेश कर जाते हैं यह अवैध प्रवास समय-समय पर अवैध तस्करी, अपराध एवं आतंकवादी घटनाओं के लिए जिम्मेदार होते हैं।

बांग्लादेश की स्थलीय सीमा भारत के लिए इतनी महत्वपूर्ण स्थिति रखती है कि बांग्लादेश द्वारा दिया गया परागमन मार्ग भारत के लिए उत्तर पूर्वी राज्यों में पहुंचने की दूरी

---

1 बांग्ला-देश स्वतंत्रता और भारत पाक सम्बन्ध, डॉ कृष्णादेव झारी, बुक बैंक इंडिया, 2012 संस्करण 2012नई दिल्ली - 110048, पेज न 53

2 https://en-m-wikipedia-org.translate.goog/wiki/Bangladesh%E2%80%93India_border?_x_tr_sl=en&_x_tr_tl=hi&_x_tr_hl=hi&_x_tr_pto=tc accessed on 2 January 2022

को लगभग 1400 किलोमीटर कम कर देगा। बांग्लादेश डेल्टाई क्षेत्र में होने के कारण यह गंगा और ब्रह्मपुत्र की बेसिन क्षेत्र में आता है और बांग्लादेश की लगभग 230 नदियों में से 54 नदियों का उद्गम भारत में होता है। चूँकि बांग्लादेश पूरी तरह से कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है अतः यह भारत और बांग्लादेश दोनों के लिए एक दूसरे का सहयोगी बने रहना अत्यंत आवश्यक है।

भारत के उत्तर में प्रतिस्पर्धा रखने वाला चीन और दूसरी ओर सदैव नुकसान पहुंचाने की ताक में पाकिस्तान है। उल्लेखनीय है कि चीन और पाकिस्तान दोनों भारत में आंतरिक अशांति और अराजकता द्वारा भारत की स्थिति को कमजोर करना चाहते हैं। अतः बांग्लादेश, भारत विरोधी गतिविधियों का केंद्र न बन जाए इसके लिए भारत को बांग्लादेश के सामरिक महत्व को ध्यान में रखते हुए उससे समानता और भ्रातृत्व भावना के आधार पर संबंध बनाए रखने का प्रयास करना होगा। आज तक कोई भी राष्ट्र, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में भौगोलिक परिस्थितियों को तिरस्कार करके अपने राष्ट्रीय हितों का सुरक्षा नहीं कर पाया है।

आर्थिक तत्व

बांग्लादेश का स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में उद्भव, भारतीय उपमहाद्वीप में आर्थिक सहयोग और विकास के लिए प्रेरणादायक है। यदि बांग्लादेश अपने प्राकृतिक संसाधनों को भारत के साथ पुनर्स्थापित करता है तो ऐसी स्थिति में दोनों देशों के आर्थिक विकास में मदद मिलेगी। बांग्लादेश जूट का बड़ा उत्पादक देश है और जूट उत्पादन का छोटा सा भाग ही उपयोग में ला पाता है। यदि उस कच्चे माल को पश्चिम बंगाल के जूट मिलों में भेजा जाए तो इससे दोनों देशों को परस्पर लाभ मिलेगा।

बांग्लादेश लगातार दशकों से आर्थिक वृद्धि कर रहा है परंतु आज भी यह मुख्यतः कृषि प्रधान देश है। यहां की लगभग 80% जनसंख्या आज भी किसी न किसी प्रकार से कृषि आधारित कार्यों पर निर्भर है। इन दोनों के व्यापारिक संबंध पश्चिम बंगाल के खाद्य समस्या के समाधान में मदद कर सकते हैं। मछली, मांस, बकरे, अंडे और सब्जियां सीमा पार

आसानी से आयात की जा सकती हैं। भारत जो कि अखबारी कागज का बड़ा उपयोगकर्ता देश है वह आसानी से बांग्लादेश से कच्चे माल का आयात कर सकता है।

बांग्लादेश आज भी औद्योगिक रूप से निर्धन देश है। आज भी वो व्यापक रूप से विदेशी सहायता पर निर्भर है। अतः गुटनिरपेक्ष देशों के साथ आर्थिक सहयोग बनाए रखना बांग्लादेश और साथ ही भारत दोनों के हित में है। भारत और बांग्लादेश के बीच स्थित भौगोलिक और आर्थिक परिस्थितियां दोनों पड़ोसी देशों के लिए विकास का स्वर्णिम अवसर प्रदान कर रही हैं।

सांस्कृतिक और सामाजिक तत्व

विश्व की कोई भी संस्कृति पूर्णतया अलग थलग रहकर जीवित नहीं रह सकती। भारतीय संस्कृति विश्व के अन्य संस्कृतियों को अपने मूल्यों से प्रभावित करने के साथ-साथ उनसे प्रभावित होती रही है। आज भले ही ऐतिहासिक घटनाक्रम के बाद बांग्लादेश विश्व मानचित्र पर संप्रभु राष्ट्र है परंतु सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से बांग्लादेश और भारत को कोई अलग नहीं कर सकता है।

सांस्कृतिक आदान-प्रदान, साझा इतिहास और साझी भाषा के कारण दोनों देशों के लोगों के बीच मैत्री पूर्ण सम्बन्ध रहे है। सरकार ने संगीत, रंगमंच, कला, चित्रकला एवं पुस्तकों के आदान-प्रदान पर प्रमुख जोर दिया है। इस संदर्भ में भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् (आई. सी. सी. आर.) भारत से कलाकारों की यात्राओं को प्रायोजित करके दोनों देशों के संबंधों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। दिसंबर 2010 में रविंद्रनाथ टैगोर के 150वीं जयंती के अवसर पर संयुक्त वार्ता की गई। बांग्लादेश इस्लामी संस्कृति के अनुगामी होने के बावजूद भी भारतीय संस्कृति को अपने जीवन में अस्वीकार नहीं करता है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण देते कि बांग्लादेश का राष्ट्रीय गीत भारतीय कवि गुरुदेव रविंद्र नाथ टैगोर की कविता "आमार सोनार बांग्ला" से लिया गया है। 1947 में पाकिस्तान निर्माण के बाद से भाषा और संस्कृति के मुद्दे को लेकर पश्चिमी एवं पूर्वी पाकिस्तान में विवाद आरंभ हो गया

और यह विवाद इतना बढ़ गया कि अंततः बांग्लादेश के रूप में नए राष्ट्र का जन्म हुआ। बांग्लादेश राष्ट्र के रूप मे उद्भव में बांग्ला भाषा का बहुत बड़ा योगदान था क्योंकि पाकिस्तान की सरकार बांग्ला को राजभाषा का दर्जा नहीं देना चाहती थी जबकि पूर्वी बंगाल में लोग खुद को बंगाली कहने पर गर्व का भाव महसूस करते थे।

आदिकाल से चले आ रहे भारत-बांग्लादेश के सामाजिक और सांस्कृतिक संबंधों को और विकसित किया जाना चाहिए जिससे कि दोनों राष्ट्रों के बीच आर्थिक, राजनीतिक और सामरिक संबंधों को और भी मजबूत किया जा सके।

भारत और बांग्लादेश सम्बन्धों के बदलते आयाम

सीमा विवाद

भारत बांग्लादेश के साथ लगभग 4096 किलोमीटर की सीमा को साझा करता है और यह सीमा भारत के पश्चिम बंगाल, असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम से होकर गुजरती है। इतनी लंबी सीमा में दोनों देशो के बीच आज भी लगभग 6 किलोमीटर की सीमा विवादित है। इस विवादित एवं खुली हुई सीमा का प्रयोग अक्सर दवाई, मवेशी और खाद्य वस्तुओं की तस्करी के लिए किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों से कुछ बांग्लादेशी जन, भारतीय सीमा में रोजगार एवं बेहतर जीवन की तलाश में अवैध रूप से प्रवेश कर जाते हैं। वर्ष 2001 में बांग्लादेश राइफल्स ने 15 भारतीय जवानों को मार था। वहीं 1985 में असम समझौता के तहत सीमा की घेराबंदी का वादा किया था जो अभी तक पूरा नहीं हो सका है।

6 जून 2015 को भूमि सीमा समझौता पर हस्ताक्षर किए गए। इस समझौते में भारत द्वारा बांग्लादेश 17160.63 एकड़ भूमि जिसमें कि 10111 एनक्लेव आते थे हस्तातंरित किये गये। वही बांग्लादेश द्वारा भारत को 7110.02 एकड़ भूमि हस्तांतरित की गई जिसमें भारत को 51 एनक्लेव प्राप्त हुए 'यह समझौता सीमा समस्या के समाधान को लेकर महत्वपूर्ण द्विपक्षीय समझौतों में से एक है। इसके माध्यम से सन 1947 के विभाजन

के बाद में उत्पन्न हुए सीमा विवाद को खत्म करने का प्रयास किया गया है। इससे इन परिक्षेत्रों में रहने वाले लोगों को एक राजनीतिक पहचान मिल सकी है जो कि लंबे समय से एक राज्यविहीन स्थिति में जीवन व्यतीत कर रहे थे। यह समझौता न केवल द्विपक्षीय संबंधों को मजबूती प्रदान करता है बल्कि यह अन्य अनसुलझी समस्याओं को हल करने का रास्ता भी खोलता है।

शरणार्थी समस्या

भारत-बांग्लादेश के बीच अवैध रूप से घुसपैठ करना सम्बन्धो में एक बड़ा मुद्दा बना हुआ है। बांग्लादेश की स्वतंत्रता के समय अनुमानतः 10 लाख शरणार्थियों ने भारत में शरण लिया था। बाद मे बहुत लोगो ने अवैध रूप से भारत मे प्रवेश किया है। सीमा प्रबंधन का मुद्दा 1971 से ही भारत-बांग्लादेश संबंधों पर हावी रहा है। बांग्लादेश के शरणार्थी बंगाल, असम और त्रिपुरा में आसानी से प्रवेश कर जाते हैं और स्थाई रूप से भारत मे निवास करने लगते हैं। वर्तमान जनगणना के दौरान इन राज्यों में बड़े तौर पर जनसंख्या में असमानता पाई गई है और राजनीतिक इच्छाशक्ति में कमी के कारण यह अवैध प्रवास का मामला सुलझाया नहीं जा सका है।[3] मिजोरम राज्य नशीली दवा और ड्रग्स के लिए एक सरल मार्ग के रूप में काम कर रहा है। इस समस्याओं के निवारण के लिए भारत सरकार ने अपनी तरफ से प्रयास किए हैं जिसमे सरकार ने असम में अवैध प्रवासियों की समस्या को देखते हुए राष्ट्रीय जनसं ख्या रजिस्टर (एन आर सी) की अंतिम लिस्ट जारी कर दी है। एनआरसी के अंतिम लिस्ट से करीब 19 लाख लोगों को नागरिकता के लिए अवैध करार दिया गया है बांग्लादेश को यह डर सता रहा है कि इन बाहर से आये हुए 19 लाख लोगों को रखने की क्षमता बंगलादेश के पास नहीं है ऐसे में अगर भारत में एन आर सी से बाहर हुए लोगों को उनके देश भेजता है तो क्या होगा । भारत ने इस सम्बन्ध मे आश्वासन दिया है कि इस समस्या से बांग्लादेश पर कोई आंच नहीं आएगा क्योंकि यह उनका आंतरिक मामला है।

---

3 https://www.orfonline.org/research/the-2015-india-bangladesh-land-boundary-agreement-identifying-constraints-and-exploring-possibilities-in-cooch-behar/

रोहिंग्या शरणार्थी से जूझ रहे बांग्लादेश के लिए एक बड़ी चुनौती होगी बांग्लादेश के जरिए तमाम रोहिंग्या शरणार्थी भारत पहुंचे हैं। वर्ष 2017 में केंद्र सरकार ने सूचित किया था की देश में लगभग 40000 रोहिंग्या अवैध रूप से भारत में रहते हैं भारतीय गृह मंत्रालय ने रोहिंग्या शरणार्थियों को सुरक्षा के खतरे के रूप में वर्गीकृत किया है साथ ही भारत सरकार ने म्यांमार सरकार से शरणार्थियों को वापस लेने की अपील की है। वर्तमान समय में भारत और बांग्लादेश कि सीमा पर कटीले तार को लगाए जाने का काम जारी है क्योंकि यह भारत की सुरक्षा की दृष्टि से अत्यंत ही महत्वपूर्ण है।[4]

नदी जल विवाद

भारत और बांग्लादेश आपस में 54 नदियों को साझा करते हैं और इन सभी नदियों का उद्गम भारत में होता है जिनका निचला क्षेत्र बांग्लादेश से होकर गुजरता है। चूँकि बांग्लादेश एक कृषि प्रधान देश है कृषि में पर्याप्त सिंचाई के लिए पानी की आवश्यकता होती है।[5] बांग्लादेश द्वारा अक्सर भारत पर आरोप लगता है कि भारत द्वारा नदी जल का सामान वितरण नहीं किया जा रहा है। इस समस्या से निजात के लिए 12 जनवरी 1996 को गंगा समझौता पर हस्ताक्षर हुआ तथा यह समझौता गंगा जल के समान वितरण के सिद्धांत पर आधारित था, जो कि लगातार संतोष जनक कार्य कर रहा है। दोनों देशों के बीच एक एक संयुक्त नदी आयोग (जे आर सी विद्यमान है 'इसकी स्थापना जून 1972 में दोनों देशों के बीच नदी प्रणाली के अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने के लिए बाढ़ नियंत्रण कार्यों का व्यवस्थापन, समुद्री तूफानों का भविष्यवाणी और साथ ही साथ सिंचाई परियोजना के विकास के लिए किया गया था।[6]

---

4 https://www.livehindustan.com/national/story-assam-nrc-19-lakh-people-could-not-prove-citizenship-now-these-three-options-are-in-front-2719789.html

5 https://navbharattimes.indiatimes.com/india/rohingya-refugees-in-india-history-and-politics-all-you-need-to -know/articleshow/93630098.cms

6 https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct=j&url=https://pib.gov.in/Press ReleasePage.aspx%3FPRID%3D1854557&ved=2ahUKEwjMpvfrjff8AhWy8DgGHcYEDrgQFnoECAsQAQ&usg=AOvVaw35KZ4U CYGV1qM_qA52लबेल

जल विवाद को लेकर दोनों देशों के बीच सबसे बड़ी दुविधा तीस्ता नदी जल बंटवारे को लेकर है। गंगा, ब्रह्मपुत्र और मेघना नदी के बाद तीस्ता भारत से होकर, बांग्लादेश में बहने वाले चौथी सबसे बड़ी नदी है। बांग्लादेश का लगभग 14 प्रतिशत इलाका सिचाई के लिए तीस्ता नदी के पानी पर निर्भर है और बांग्लादेश के 7 फ़ीसदी आबादी को इस नदी के माध्यम से रोजगार मिलता है। 2011 में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के ढाका यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच नदी के जल बंटवारे को लेकर आम सहमति लगभग बन गई थी लेकिन समझौते पर हस्ताक्षर नहीं हो सका था बाद में प्रधानमंत्री मोदी द्वारा भी तीस्ता नदी के समझौते को लेकर किया गया प्रयास पूर्ण रूप से सफल नहीं रहा क्योंकि पश्चिम बंगाल के तत्कालीन मुख्यमंत्री ममता बनर्जी द्वारा इसका विरोध किया गया और इस पर हस्ताक्षर नहीं गया । ममता बनर्जी द्वारा यह कहा गया कि बांग्लादेश पहले से ही अपने खेतों मे तीन फसल ऊगा रहा है और तीस्ता नदी समझौते के द्वारा बंगाल को हानि उठानी पड़ सकती है, कई बिजली परियोजना को रोकना पड़ सकता है। ममता बनर्जी के द्वारा तीस्ता नदी की जगह टोरसा नदी के पानी को देने का विकल्प प्रस्तुत किया गया । प्रधानमंत्री मोदी के द्वारा तीस्ता और फेनी नदी के विवाद पर एक संतुलित समाधान का विश्वास दिलाया गया है । तीस्ता नदी के समाधान पर एक जटिल स्थिति बनता दिख रहा है और दोनों राष्ट्रों के बीच सकारात्मक संबंध को बढ़ाने के लिए तीस्ता नदी के समाधान को जल्द से जल्द खोजना होगा क्योंकि पश्चिम बंगाल के बहुत सारे लोगों के आजीविका का सवाल बना हुआ है, जो की अपने अस्तित्व के लिए इन नदियों पर निर्भर है। तत्काल समय में 6 सितंबर 2022 को मोदी और शेख हसीना के बीच कुशियारा नदी के बंटवारे को लेकर समझौता किया गया है यह समझौता दक्षिण असम और बांग्लादेश के सिलहट में निवास करने वाले लोगों को सीधे तौर पर लाभ पहुंचाएगा' । शेख हसीना ने अपनी भारत यात्रा के दौरान हैदराबाद हाउस में कहां की 'मुझे याद है कि दोनों देशों ने मैत्री और सहयोग की भावना से जटिल समस्याओं

का समाधान किया है हमें उम्मीद है कि तीस्ता जल बंटवारा समझौता सहित अन्य सभी लंबित मुद्दों का जल्दी समाधान किया जाएगा" वर्तमान सरकार इस संबंध मे प्रयासरत है ।[7]

परागमन मार्ग और उत्तर पूर्वी राज्यों का विकास

भारत द्वारा अपने उत्तर पूर्वी राज्य मे प्रवेश के लिए बांग्लादेश से परागमन मार्ग की मांग कर रहा हैं। भारत के विभाजन के बाद भारत का उत्तर पूर्वी क्षेत्र भू आबद्ध क्षेत्र बन गया और वर्तमान में उत्तर पूर्वी राज्यों का भारत के साथ जुड़ाव सिलीगुड़ी गलियारे द्वारा ही होता है जो कि मात्र 40 किलोमीटर चौड़ा है यह एक ओर चीन तथा दूसरी ओर बांग्लादेश से घिरा हुआ है। भारत के उत्तर पूर्वी क्षेत्र के लिए यही एकमात्र संपर्क मार्ग है भारत को अगर बांग्लादेश से आगमन मार्ग प्राप्त होता है तो यह भारत की विकास व सुरक्षा की दृष्टि से एक बड़ा कदम होगा, इससे एक ओर अगरतला से बंगाल के बीच 1400 किलोमीटर का रास्ता कम होगा दूसरी ओर उत्तर पूर्वी राज्यों से मिलने का एक और वैकल्पिक मार्ग प्रशस्त होगा। भारत के लिए यह परागमन मार्ग प्राप्त होना न केवल उत्तर पूर्वी राज्यों के विकास की दृष्टि से सही हैं बल्कि सुरक्षा की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है । वर्तमान सरकार द्वारा इस परागमन मार्ग के लिए बांग्लादेश सरकार से लगातार संपर्क साधे हुए है। सन 2015 में हुए भूमि सीमा समझौते को 100वे संविधान द्वारा संवैधानिक मान्यता प्रदान की गई इस समझौते के तहत आपसी विवाद की भूमि को एक दूसरे को शांतिपूर्ण रूप से हस्तान्तरित किये गये इस समझौते के बाद कयास लगाया जा रहा है कि आने वाले भविष्य में भारत को व्यापार और यात्रा के लिए बांग्लादेश से पर आगमन मार्ग मिल जाएगा निकट भविष्य में अगर परागमन के लिए यह यह समझौता होता है तो यह भारत के लिए बहुत बड़ी सफलता होगी। भारत और बांग्लादेश के बीच कोलकाता ढाका अगरतला तथा ढाका शिलांग गुवाहाटी के बीच बस सेवा को चालू किया गया इसे हम संबंधों को नए आयाम के रूप में देख सकते है । तटीय जहाजरानी (शिपिंग) समझौते सें भारत को अनेक लाभ मिला है, इससे ना केवल

7 https://navbharattimes.indiatimes.com/india/india-bangladesh-signs-first-water-sharing-agreement-in-25-years/articleshow/94032666.cms

माल दुलाई में वाले समय की बचत होगी बल्कि किसके खर्चों में भी कमी आएगी बांग्लादेश के चटगांव और मोगला बंदरगाह का उपयोग से पूर्वोत्तर भारत के विकास के लिए एक बेहतर दिशा मिल सकती है भारत और बांग्लादेश के बीच अनेक तरह की समस्याएं और मुद्दे हैं। इन मुद्दों को सुलझाना वाकई में दोनों सरकारों के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।

वर्तमान परिदृश्य

सन 2014 में मोदी सरकार के पूर्ण बहुमत से सत्ता में आने के बाद यह उम्मीद जगी है कि दोनों राष्ट्रों के मध्य जो समस्याएं चली आ रही है, उन्हें सरकार कड़े के निर्णय द्वारा दूर करने का प्रयास किया जाएगा | दोनों राष्ट्रों के बीच संबंधों के सकारात्मकता को लेकर और भी उम्मीद इसलिए भी लगाई गई है क्योंकि बांग्लादेश में भी आवामी लीग प्रमुख शेख हसीना की सरकार है और आवामी लीग का रवैया सदैव से भारत की तरफ सहयोगात्मक रहा है| 21 वीं सदी में अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की यह सच्चाई है कि कोई भी राष्ट्र अगर सुरक्षित और स्थित बनना चाहता है तो उन्हें अपने पड़ोसी राष्ट्रों से प्रेम, सहयोग और मित्रता का सम्बन्ध होना ही चाहिए| अटल जी ने एक बार एक वक्तव्य में भी कहा था कि "हम निश्चित रूप से अपने मित्र को बदल सकते हैं परंतु अपने पड़ोसियों को नहीं" | भारत के वर्तमान निर्वाचित प्रधानमंत्री मोदी जी ने इसमें गहरा विश्वास दिखाया है। मोदी जी ने विदेश नीति में सक्रियता को दिखाते हुए "पड़ोस पहले" की नीति पर जोर दिया है । इसके क्रियान्वयन स्वरूप देखते हैं कि प्रधानमंत्री मोदी ने अपने शपथ ग्रहण समारोह में सभी दक्षिण एशियाई देशो के प्रमुखों को आमंत्रित किया और उन्होंने उसके साथ द्विपक्षीय वार्ता भी किया ।

जून 2014 में विदेश मंत्री सुषमा स्वराज ने बांग्लादेश का दौरा किया | इस यात्रा के दौरान विदेश मंत्री ने बांग्लादेशी प्रधानमंत्री के साथ साथ, विपक्षी दल के नेता रामाशंकर प्रसाद से भी मुलाकात किया और इसमें भूमि सीमा समझौता और तीस्तानदी को लेकर मजबूत प्रतिबद्धता को व्यक्त किया। भारत के द्वारा 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस

को स्थापित किया गया । यह भारत के सॉफ्ट पावर के प्रसार को दिखाता है। इस प्रस्ताव को महासभा में बांग्लादेश सहित 177 राष्ट्रों का समर्थन मिला जिसे निर्विरोध पारित कर लिया गया । बांग्लादेश योग एसोसिएशन ने इंदिरा गांधी सांस्कृतिक केंद्र के सहयोग से ढाका में पहला अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस आयोजित किया। मई 2015 में संसद द्वारा 100 वां संवैधानिक संशोधन पारित किया गया है इसके माध्यम से वर्षों से चले आ रहे विवादित भूमि को एक दूसरे राष्ट्र को हस्तांतरित किया गया तथा इस समझौते के द्वारा कई हजार लोग जो अब तक नागरिकता विहीन जिंदगी जी रहे थे उनको अपनी नागरिकता को चुनने ने के लिए स्वतंत्रता मिल गई । इस समझौते के माध्यम भारत ने न केवल अपने आंतरिक सुरक्षा को मजबूत किया बल्कि अपने द्विपक्षीय संबंधों को मजबूत भी किया है और आशा की जाती है कि आने वाले समय में अन्य समस्याओं को शांतिपूर्ण तरीके से हल करने का मार्ग खुलेगा ।

निष्कर्ष

वर्तमान में भारत और बांग्लादेश का संबंध केवल भावनात्मक न होकर राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की मांग है परंतु आज दोनों देश मुजीब के स्वर्णिम युग की घनिष्ठता से दूर हो चुके हैं। बांग्लादेश लोकतंत्र एवं धर्मनिरपेक्षता के रास्ते से भटक रहा है। संबंधों में प्रगाढ़ता के लिए आवश्यक है कि दोनों देश एक दूसरे के प्रति विश्वास अर्जन का काम करते रहे। साथ ही भारत को बांग्लादेश के औद्योगिक विकास एवं आर्थिक विकास में लगातार योगदान देना चाहिए।

भारत और बांग्लादेश का वर्तमान अपने स्वर्णिम काल में है फिर भी दोनों देशों के लिए अपनी कुछ चिंताएं और समस्याएं बनी हुई हैं। दोनों राष्ट्रों के आपसी सहयोग द्वारा जल्द से जल्द दोनों देशों के बीच शंकाओं और समस्याओं को समाप्त किया जाना चाहिए जिससे कि एक दूसरे के सहयोग से विकास के नए प्रतिमान स्थापित किया जा सके। दोनों देशों की प्रगति और समृद्धि के लिए आवश्यक है कि दोनों एक दूसरे के प्रति सहयोग की

भावना बनाए रखें क्योंकि भूगोल ने हमें पड़ोसी बनाया है, इतिहास ने हमें मित्र, अर्थशास्त्र हमें भागीदार बनाता है और हमारी आवश्यकताए हमें स्थाई मित्र बनने की ओर प्रेरित करती हैं।

संदर्भ सूची

1. बाजपेई, अरुणोदय 2012. *समकालीन विश्व एवं भारत: प्रमुख मुद्दे और चुनौतियां*, पियर्सन प्रकाशन, नई दिल्ली-110017
2. कुमारी, प्रतिमा, 2019. *भारत बांग्लादेश संबंध: बदलते परिप्रेक्ष्य उभरते आयाम*, अंकित पब्लिकेशन, दिल्ली-110009
3. आजाद, सलाम, 2017. *बांग्लादेश के स्वतंत्रता संग्राम में भारत का योगदान*, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत
4. सिंह, प्रवीणकुमार, 2018. *भारत-बांग्लादेशः समस्याएं और चुनौतियां*, राज पब्लिकेशन, नई दिल्ली-110002
5. मिश्रा, डॉ सुरेंद्र कुमार, 2007. *बांग्लादेशी घुसपैठ व भारतीय सुरक्षा*, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली- 110002

6. दीक्षित, जे.एन., 2013. *भारत के विदेश नीति और उसके पड़ोसी देश*, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

7. कुमार, डॉक्टर सतीश, 2017. *भारत बांग्लादेश संबंध: उभरते आयाम*, अनूप बुक पब्लिकेशन, मेरठ

*****

अध्याय 13

भारत-चीन सीमा विवाद एवं वर्तमान संबंध

डॉ. राजेश कुमार शर्मा
निदेशक, गांधी अध्ययन केन्द्र
राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

डॉ. संगीता शर्मा
सीनियर पीडीएफ रिसर्च फैलो
आई.सी.एस.एस.आर, नई दिल्ली

प्रस्तुत शोध आलेख में मेरे द्वारा भारत-चीन सीमा विवाद के वर्तमान आयाम के संबंध में समीक्षात्मक मूल्यांकन बताया गया है। जैसा कि ये विदित है, भारत एवं चीन सीमा विवाद कोई नई बात नहीं है। एक बार फिर अरूणाचल प्रदेश के तवांग में दोनों देशों के सैनिकों के मध्य 9 दिसम्बर, 2022 को झड़प हुई जिसमें अधिकृत रूप से दोनों देशों के सैनिक घालय हो गये। भारत-चीन सीमा विवाद का पिछले 65 वर्षों से किसी न किसी रूप में बना हुआ है। आज जब दुनिया कोविड महामारी के प्रकोप के साथ-साथ पोस्ट कोविड के प्रभावों एवं चुनौतियों से जूझ रही है वही चीन अपनी विस्तारवादी नीतियों के कारण न केवल अपने पड़ोसी देशों के लिए बल्कि विश्व सामारिक संतुलन के लिए भी चुनौती बना हुआ है। भारत-चीन के मध्य 3488 किलोमीटर लम्बी सीमा रेखा है ये जम्मू-कश्मीर, उत्तराखण्ड, सिक्किम और अरूणाचल प्रदेश से होकर गुजरती है। ये सीमा तीन वर्गों में बँटी हुई है। भारत-चीन सीमा विवाद में तवांग की घटना इससे पूर्व 15-16 जून, 2022 को पैगोंग झील विवाद तथा गलवान घाटी विवादों का प्रभाव दोनों देशों पर अधिक प्रभावी रूप से दिखाई दे रहा है। भारत-चीन विवाद की असल वजह को देखें तो ये मुद्दा वर्चस्व और प्रभुत्ववादी नीति का अधिक है। 1962 से वर्तमान तक के सभी विवादों में एक बात सामान्य है चीन भारत को एशिया में किसी स्तर पर नहीं बढ़ने देना चाहता है। गलवान घाटी की खोज 1890 में रसूल गलवान द्वारा की गई। ब्रिटिश अधिकारी यंग हसबैंड ने गलवान को सिल्क व्यापार के लिए खोजा।

गलवान घाटी का पूरा इलाका लद्दाख में आता है इस विवादित क्षेत्र में चीनी सेना अनावश्यक कार्यवाही के माध्यम से समय-समय पर भारतीय सेना के गश्ती दल पर हमला करते हैं। 20वीं शताब्दी के मध्य तक भारत और चीन संबंध न्यूनतम थे। 1948 में

जनवादी चीन को मान्यता प्रदान कीं 1954 में हिंदी-चीनी भाई का नारा लोकप्रिय हुआ। लेकिन 1959 के उपरान्त द्विपक्षीय संबंधों को गहरा आघात लगा। चीन व भारत के बीच मई 2020 के प्रथम सप्ताह से सीमा पर चल रहा सैनिक तनाव 1962 के बाद का सबसे बड़ा सैनिक तनाव है, हालाँकि 2017 में दोनों देशों के बीच डोकलाम में 73 दिनों तक सैनिक तनाव चला था, लेकिन उसे कूटनीतिक स्तर पर सुलझा लिया गया था, वर्तमान में दोनों देशों की लद्दाख सीमा पर तनाव जटिल प्रकृति का है तथा ऐसा प्रतीत होता है कि चीन ने लंबी योजना के साथ सीमा पर इस तनाव को अन्जाम दिया है, सीमा पर दोनों देशों के मध्य वर्तमान तनाव की शुरूआत 5 मई, 2020 को पूर्वी लद्दाख की सीमा पर स्थिति पैंगोंग झील के उत्तरी किनारे में गश्त के दौरान दोनों देशों की सेनाओं के बीच बिना हथियारों के हिंसक झड़प से हुई।[1] लेकिन जल्द ही इसे कूटनीतिक स्तर के द्वारा बातचीत से सुलझाने हेतु सैन्य कमाण्डरों की वार्ता में दोनों देशों के मध्य यह सहमति बनी कि वे पश्चिमी लद्दाख में गलवान घाटी के पास नियंत्रण रेखा से अपनी सेनाओं को पीछे हटाएंगे। इसी बात का सत्यापन करने के लिए दिनांक 15 जून की रात भारत के सैनिकों का एक दल नियंत्रण रेखा पर गया, लेकिन चीन ने अपनी सेनाओं को पीछे करने की बजाय भारत के सैनिक दल पर आक्रमण कर दिया जिसमें भारत के 20 सैनिक शहीद हो गए। भारत ने भी चीन के 15 सैनिकों को बंदी बना लिया तथा 43 सैनिकों के मारे जाने की आशंका व्यक्त की गई। इन घटनाओं के बाद सीमा पर दोनों देशों के बीच तनाव अधिक बढ़ गया है। भारत ने चीन को करारा जवाब देने तथा चीनी सामान के बहिष्कार के लिए सरकारी उच्च स्तर पर आत्मनिर्भर भारत की मुहिम चलाई जा रही है।[2]

पूर्व में भारत व चीन की सीमा 1914 में ब्रिटिश काल में मैकमहोनलाइन के द्वारा निर्धारित की गई थी, चीन मैकमहोन लाइन को मान्यता नहीं प्रदान करता है तथा अरुणाचल प्रदेश को तिब्बत का दक्षिणी भाग बता कर उस पर अपना दावा करता है। मध्य में दोनों देशों के बीच सीमा को लेकर अधिक विवाद नहीं हैं पश्चिम में 1962 के युद्ध में चीन ने भारत की 7000 वर्ग किमी भूमि पर कब्जा कर लिया था जिस पर आज भी उसका कब्जा बना हुआ है।[3] इस क्षेत्र को अक्साई चीनके नाम से जानते है। पश्चिम में दोनों देशों की वर्तमान सीमा को वास्तवकि नियंत्रण रेखा ¼Line of Actual Control-LAC½ के नाम से जानते हैं। इसी बीच 1963 में पाकिस्तान ने पाक-अधिकृत कश्मीर का 5000 वर्ग किसी

---

[1] चीन ने गलवान घाटी को बताया अपना इलाका भारत की दूर रहने की चेतावनी, नवभारत टाइम्स समाचार पत्र, 16 जून, 2020

[2] आठ उंगलियों पर टिका है भारत चीन सीमा विवाद, अमर उजाला समाचार पत्र, 16 जून, 2020

[3] घई यू.आर., "अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, सिद्धान्त तथा व्यवहार, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी जालन्धर, 2014, पृ. सं. 109

क्षेत्र अभी भी चीन के पास है। इसी क्षेत्र से होकर चीन वर्तमान में चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारे का निर्माण कर रहा है। भारत व चीन के बीच अभी भी सीमा विवाद का निदान नहीं हुआ है। विवाद के समाधान के बाद ही वैध सीमा रेखा का निर्धारण हो सकेगा।[4]

सीमा विवाद व उसके समाधान की अनिश्चितता के मध्य ही चीन ने वर्तमान में सीमा में तनाव उत्पन्न करने की कार्यवाही की है, यह बात सही है कि भारत व चीन के मध्य वास्तविक नियंत्रण रेखा भी कई स्थानों पर स्पष्ट नहीं है तथा दोनों अपने पूर्व व्यवहार के आधार पर ही वास्तविक नियंत्रण रेखा की व्याख्या करते हैं।[5]

इसी सन्दर्भ में चीन द्वारा मई 2020 से वर्तमान तक अनेकों बार सीमा रेखा का उल्लंघन किया गया। 9 मई, 2020 से 9 दिसम्बर, 2022 तक भारत के गश्ती दलों पर चीनी सेना द्वारा आक्रमण किया गया। यह आम बात है कि दोनों देशों के मध्य वार्ताओं के बावजूद भी आपसी तनाव बना रहता है। दोनों देशों की शांति समितियों के आधार पर 20 से अधिक बार वार्ताओं का आयोजन किया जा चुका है। इसके उपरान्त भी बातचीत में रूकावटें अधिक है। दोनों देश परमाणु ताकत से सम्पन्न है। इसलिए छोटी सी घटना भी कब विशाल आकार ले लेगी इसका पूर्वानुमान संभव नहीं है। सीमा पर दोनों देशों के हालात में अनिश्चितता और तनाव है।[6]

दोनों देशों के मध्य तनाव की स्थिति का देखे तो प्रमुखतः पाँच स्थानों को चिन्हित किया जा सकता है। सैटेलाइट से प्राप्त चित्रों व अन्य स्रोतों की जानकारी के आधार पर समीक्षकों का यह मानना है कि चीन ने वास्तविक नियंत्रण रेखा पार कर लद्दाख क्षेत्र में भारत के कुछ भूभाग पर अतिक्रमण कर लिया है। प्रथम चीन ने गलवान नदी घाटी में भारत के गश्ती बिन्दु 14, 15 तथा 17 गलवान घाटी के तीनों बिन्दु वास्तविक नियंत्रण रेखा पर स्थित हैं। 80 किमी लम्बी गलवान नदी चीनी क्षेत्र से निकलकर वास्तविक नियंत्रण रेखा को पार कर भारत की ओर शियोक नदी में मिलती है। शियोक नदी काफी दूर तक वास्तविक नियंत्रण रेखा के समानान्तर पूरब से पश्चिम की आकर बहती है तथा गिलगित बाल्टिस्तान में के पास सिन्धु नदी में मिल जाती है। भारत ने हाल में ही शियोक नदी के सहारे 355 किमी लम्बा डरबक-शियोक-दौलत बेग ओल्डी रोड बनाया है जिसके द्वारा वास्तविक नियंत्रण रेखा तक रसद पहुँचाना बहुत आसान हो गया है। इसके साथ ही भारत ने दौलत बेग ओल्डी में एक हवाई पट्टी का भी निर्माण किया है। चीन इस सड़क

[4] वही, पृष्ठ संख्या 113

[5] पंत पुष्पेश, 21वीं शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, टाटोमैग्रा हिल एजुकेशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 120

[6] वासन आर.एस., भारत-चीन संबंध एवं गतिरोध, योजना नई दिल्ली, अक्टूबर, 2020, पृ. 38

पर नियंत्रण रखने के लिए चीन अब पहली बार पूरी गलवान घाटी पर अपना दावा कर रहा है। दूसरा क्षेत्र पूर्वी लद्दाख में चुसुल के पास स्थित है तीसरा क्षेत्र पैंगोंग झील के उत्तरी किनारे में स्थित फिंगर चार है। दो भुजाकार इस झील की लम्बाई 135 किमी है तथा इसका 45 किमी हिस्सा भार के कब्जे में है तथा शेष हिस्सा चीन के नियंत्रण में है। वास्तविक नियंत्रण रेखा इस-झील के उत्तरी किनारे से 45 किमी साथ चलकर इस झील को भारत व चीन में बाँट देती है। उत्तरी किनारे में झील के पास जो पहाड़ियाँ हैं उन्हें फिंगर कहा जाता है। भारत प्रति वर्ष फिंगर आठ तक गश्त लगाता था, लेकिन इस बार चीन ने अपनी सेना फिंगर चार पर तैनात कर भारत की गश्त का मार्ग अवरूद्ध कर दिया है।[7]

इस बीच दोनों देशों के बीच सैनिक तनाव को कम करने के लिये सैनिक अधिकरियों व कूटनीतिक स्तर पर बातचीत का सिलसिला भी चलता रहा। भारत ने इस बातचीत में यह माँग रखी है कि चीन की सेनाएं अपनी अप्रैल 2020 की स्थिति में जाएं तथा भारत सीमा में अपनी ओर निर्माण कार्य बन्द करें। चीन ने स्वयं हाल के वर्षों में सीमा के पास ढ़ाँचागत सुविधाओं का तेजी से विकास किया है, लेकिन वह भारत को इन सुविधाओं का विकास नहीं करने देना चाहता। उल्लेखनीय है कि भारत के रक्षा मंत्रालय के अन्दर कार्यरत सड़क सीमा सुरक्षा बल द्वारा सीमावर्ती क्षेत्रों में सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण 61 सड़कों का निर्माण किया जा रहा है।[8] गलवान की हिंसक घटना के बाद भारत व चीन में तनाव और अधिक बढ़ गया है। भारत ने अपने सैनिकों पर हिंसक आक्रमण को चीन की साजिश बताया है। इसके साथ ही दोनों देशों ने आधुनिक तकनीक से निर्मित सैन्य साजो सामान की तैनाती कर दी है। भारत का मानना है कि चीन ने चालबाजी करके जानबूझ कर सीमा पर तनाव की स्थिति उत्पन्न की है। वर्तमान स्थिति अगस्त 2017 में डोकलाम में चले 73 दिन के तनाव से भी ज्यादा खतरनाक है। इस तनाव के कारण 1993 से दोनों देशों के बीच चल रही विश्वास बहाली की प्रक्रिया को भी आघात लगा है। दोनों देशों ने 1993 से 2013 तक पाँच समझौतों पर हस्ताक्षर कर सीमा पर तनाव को कम करने तथा विश्वास बहाली का प्रयास किया था। ये समझौते हैं- 1993 का सीमा पर शान्ति का समझौता, 1996 का विश्वास बहाली समझौता, 2003 का सीमा विवाद को निपटाने के लिए अलग बातचीत का समझौता, 2005 का सीमा विवाद के समाधान हेतु राजनीति मापदण्डों के निर्धारण का समझौता तथा 2013 का सीमा सहयोग व प्रतिरक्षा समझौते सम्पन्न हुए।[9] उक्त समझौतों के साथ-साथ दोनों देशों के नेताओं द्वारा 2018 से अनौपचारिक शिखर

[7] राजमोहन सी, चाइन नाऊ हैज दी मिलिट्री पाॅवर, दी इण्डियन एक्सप्रेस समाचार पत्र, 9 जून, 2020

[8] हिंद महासागर में चीनी अनुसंधान और भारत की सुरक्षा चिंता, दैनिक भास्कर समाचार पत्र, 30 नवम्बर, 2020.

[9] वीर गौतम, महाशक्तियों की विदेश नीतियाँ, विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2016, पृ. 211

वार्ताओं की प्रक्रिया भी शुरू की गई थी, लेकिन चीन की विस्तारवादी नीति के चलते दोनों देशों के बीच अविश्वास बढ़ गया है तथा इसका असर आगे आने वाले समय में भी दिखाई देगा।

विचारणीय प्रश्न यह है कि जब चीन व भारत सहित विश्व के सभी देश कोविड महामारी से जूझ रहे हैं, तो चीन ने ऐसे में भारत के साथ सीमा पर तनाव बढ़ाने की साजिश क्यों रची? अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के प्रसिद्ध जानकारों का मानना है कि इसके पीछे चीन के कुछ प्रमुख मंतव्य है इन्हें युद्ध जैसे वातावरण से पूरा किया जा सकता है। जैसे- 1962 के भारत-चीन युद्ध में चीन को निर्णायक जीत मिली थी, लेकिन हाल के वर्षों में भारत के हाथों उसे निरन्तर चुनौती मिल रही थी। 2017 में डोकलाम विवाद में भारत ने भूटान का साथ देते हुए चीन को चुनौती दी थी। चीन इस चुनौती का बदला लेने के लिए 2017 से ही सीमा पर अपनी तैयारी कर रहा हैं। इसके साथ ही भारत ने अगस्त 2019 में जम्मू-कश्मीर की वैधानिक स्थिति को बदलकर चीन व पाकिस्तान के कब्जे में भारत की भूमि को वापिस लेने की बात कई बार दोहराई। इससे पाकिस्तान व चीन दोनों को इस बात का डर था कि भारत अपनी जमीन को वापस लेने के लिए कोई बड़ी सैनिक कार्यवाही कर सकता है। पाक अधिकृत कश्मीर में चीन का हित निहित है, क्योंकि इसी भूमि से ही उसकी आर्थिक गलियारा परियोजना निकल रही है। अतः दोनों ने भारत को रोकने के लिए यह साजिश रची है। पाकिस्तान भी इसी समय सीमा पर लगातार तनाव बढ़ा राह है। उधर चीन ने नेपाल की साम्यवादी सरकार को भी भारत के विरुद्ध कालापानी भूमि का विवाद उठाने के लिए उकसा दिया है।[10]

चीन की अधिनायकवादी राजनीतिक व्यवस्था की स्थिरता इस बात पर निर्भर करती है कि चीन की अर्थव्यवस्था का निरन्तर विकास होता रहे, लेकिन अमरीका के साथ व्यापार युद्ध तथा कोविड महामारी के कारण चीन की अर्थव्यवस्था सुस्त पड़ गई है।, कम्युनिस्ट दल के अन्दर भी चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के खिलाफ विरोध के स्वर उभर रहे है। उधर कोविड महामारी के कुप्रबन्धन के लिए विश्व समुदाय द्वारा चीन को दोषी ठहराया जा रहा है। ताईवान तथा हांगकांग में चीन की मुश्किलें बढ़ रही हैं। चीन इन असफलताओं से जनता व विश्व समुदाय का ध्यान भटकाने के लिए भारत के विरुद्ध तनाव की स्थिति उत्पन्न कर रहा है। चीन के वर्तमान राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने 2049 तक चीन को विश्व की एक महाशक्ति बनाने का लक्ष्य रखा है। एशिया में भारत उसके इस लक्ष्य में एक बड़ी

[10] भारत-चीन विवाद का केंद्र गलवान घाटी के बारे में कुछ जानकारी, द इकोनोमिक टाईम, समाचार पत्र, 17 जून, 2020

बाधा है। इस सैनिक कार्यवाही से चीन यह सन्देश देना चाहता है कि एशिया में चीन ही सबसे बड़ी ताकत है। भारत के बाद चीन द्वारा अगला सन्देश अमरीका को दिया गया है।[11]

भारत-चीन विवाद की स्थिति को गहराई से देखे तो यह पूर्णतः पता लगाया जा सकता है कि चीन एशिया-प्रशांत विशेषतः दक्षिण एशिया में भारत की बढ़ती सामरिक, आर्थिक शक्ति तथा अमेरिका एवं यूरोपीय देशों के साथ भारत के प्रगाढ संबंधों से भी चिंतित है। वर्तमान मोदी सरकार ने भारत की लुक ईस्ट पॉलिसी को ऐक्ट ईस्ट पॉलिसी यानी पूर्व की ओर उन्मुख होने और आर्थिक सहभागिता की प्रक्रिया को तेज करने की आवश्यकता पर बल देना प्रारम्भ कर दिया है। चीन की हठधर्मिता के कारण भारत ने न केवल अपने पड़ोसमें बल्कि आसियान देशों के साथ भी अच्छे संबंधों की स्थापना की शुरूआत कर दी है। साथ ही अमेरिका के साथ स्वास्थ्य, रक्षा, ऊर्जा एवं तकनीक के साथ-साथ हिंद एवं प्रशांत क्षेत्र में भारत ने अनेक समझौते सम्पन्न किये है जैसे-सामान्य सैन्य सुरक्षा सूचना समझौता, भारत अमेरिका परमाणु समझौता 2008, लॉजिस्टिक एक्सचेंज मेमोरेंडम-2018, आंतकवाद विरोध द्विपक्षीय कार्यबल बैठक 2019। मानसिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में हेल्थ एंड ह्युमन सर्विसेज समझौता, नशीले पदार्थों के नियंत्रण हेतु काउण्टरनारकोटिक्स वर्किंग ग्रुप समझौता-2020।[12]

अमेरिका राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प फरवरी 2020 में भारत का दौरा किया इसमें दोनों देशों के मध्य तीन मिलियन अमेरिकी डॉलरकी रक्षा खरीद पर सहमति बनी। इसके अलावा अन्य सुरक्षा मुद्दों में भी दोनों देशों ने मानव तस्करी, हिंसक अतिवाद, साइबर अपराध, ड्रग तस्करी जैसे अपराधों के साथ मिलकर निपटने पर सहमति बनी हैं। हिंद प्रशांत क्षेत्र में भारत और अमेरिका आसियान को केन्द्र में रखकर समायोजित और समृद्ध हिंद-प्रशांत की अवधारणा को समर्थन दे रहे है। भारत अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और जापान ने मिलकर क्वाड संगठन की स्थापना और उसका क्रियान्वयन प्रारम्भ कर दिया है। हिन्द प्रशांत क्षेत्र में भारत-जापान-अमेरिका ने त्रिपक्षीय सम्मेलन तथा रक्षा एवं विदेश मंत्रियों की 2+2 की वार्ताओं का भी आयोजन प्रारंभ कर दिया है। अमेरिका, आस्ट्रेलिया, जापान, रूस सहित अनेक देशों ने गलवान विवाद पर भारत का समर्थन किया जो भारत की कूटनितिक समृद्धता को दर्शाता है।

---

[11] पंत वी हर्ष, कोविड़19 के मध्य भारत-चीन सीमा विवादः पुराने अनुभव की पुनरावृत्ति, 26, मई 2020 (ORF) observer research foundation, New Delhi

[12] भारत-चीन तनावः चीन से बिगड़ते संबंधों का सामना कैसे करेगा भारत-बीबीसी न्यूज, 19 जून, 2020

निष्कर्ष- गलवान घाटी पर वास्तविक नियत्रंण रेखा अक्साई चीन को भारत से अलग करती है। इस क्षेत्र पर चीन ने 1962 के युद्ध में कब्जा किया पूर्व में ये भारत के हिस्से में था। 1962 में भी इसी क्षेत्र से युद्ध प्रारंम्भ हुआ। सामरिक एवं राजनीतिक दृष्टि से ये क्षेत्र भारत के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। लद्दाख के इस क्षेत्र में भारत की मौजूदगी चीन की अनावश्यक गतिविधियों पर रोक लगाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निवर्हन करेगी। कोविड-19 के इस दौर में चीन के साथ रणनीतिक, आर्थिक, राजनयिक संबंधो को पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता है। इसकी शुरूआत भी आत्मनिर्भर भारत अभियान के अन्तर्गत भारत ने शुरू कर दी है। भारत अपनी शांतिवादी नीतियों के माध्यम से ही पडौसी देशो के साथ अपने सीमा संबंधी विवादों को हल करना चाहता है लेकिन चीन के साथ द्विपक्षीय संबंधो को लाभकारी दिशा में बढाने की भारतीय पहल का हमेशा चीन ने गलत प्रत्युत्तर दिया। हिमालय के उन क्षेत्रों में जहां कोई विवाद नहीं था वहां भी विवाद शुरू कर दिया है। इसलिए भारत को आवश्यक है कि थल, जल और नभ में चीन की चुनौती का वैश्विक समन्वयक तथा भारतीय सटीक राणनीति द्वारा प्रतिकार आवश्यक है।

सन्दर्भ सूची:-

1. चीन ने गलवान घाटी को बताया अपना इलाका भारत की दूर रहने की चेतावनी, नवभारत टाइम्स समाचार पत्र, 16 जून, 2020
2. आठ उंगलियों पर टिका है भारत चीन सीमा विवाद, अमर उजाला समाचार पत्र, 16 जून, 2020
3. घई यू.आर., "अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, सिद्धान्त तथा व्यवहार, न्यू एकेडेमिक पब्लिशिंग कम्पनी जालन्धर, 2014, पृ. सं. 109
4. वही, पृष्ठ संख्या 113
5. पंत पुष्पेश, 21वीं शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, टाटोमैग्रा हिल एजुकेशन, नई दिल्ली, 2016, पृ. 120
6. वासन आर.एस., भारत-चीन संबंध एवं गतिरोध, योजना नई दिल्ली, अक्टूबर, 2020, पृ. 38
7. राजमोहन सी, चाइन नाऊ हैज दी मिलिट्री पाॅवर, दी इण्डियन एक्सप्रेस समाचार पत्र, 9 जून, 2020

8. हिंद महासागर में चीनी अनुसंधान और भारत की सुरक्षा चिंता, दैनिक भास्कर समाचार पत्र, 30 नवम्बर, 2020.

9. वीर गौतम, महाशक्तियों की विदेश नीतियाँ, विश्वभारती पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2016, पृ. 211

10. भारत-चीन विवाद का केंद्र गलवान घाटी के बारे में कुछ जानकारी, द इकोनोमिक टाईम, समाचार पत्र, 17 जून, 2020

11. पंत वी हर्ष, कोविड़19 के मध्य भारत-चीन सीमा विवादः पुराने अनुभव की पुनरावृत्ति, 26, मई 2020 (ORF) observer research foundation, New Delhi

12. भारत-चीन तनावः चीन से बिगड़ते संबंधों का सामना कैसे करेगा भारत-बीबीसी न्यूज़, 19 जून, 2020

अध्याय 14

भारत-चीन संबंधों की चुनौतियाँ और संभावनांए

मीना रानी
सहायक प्रोफ़ेसर
लोक प्रशासन विभाग
राजस्थान विश्वविद्याल

विनय कौड़ा
सहायक प्रोफ़ेसर
सरदार पटेल पुलिस विश्वविद्यालय

अरुणाचल प्रदेश के तवांग सेक्टर में दिसंबर 2022 में भारतीय और चीनी सैनिकों के बीच झड़प हुई थी। चीनी सैनिकों की मंशा भारतीय इलाके पर कब्जा करने की थी लेकिन भारतीय सेना ने करारा जवाब देते हुए चीनी सैनिकों के मंसूबों पर पानी फेर दिया। लद्दाख क्षेत्र के गलवान में जून 2020 में भारत-चीन संघर्ष के दो साल से अधिक समय में यह सबसे बड़ी घटनाओं में से एक थी। चीन लगातार भारतीय भूमि पर आधिपत्य जमाने का प्रयास कर रहा है। चीन ने अब आर्थिक मुद्दों की तुलना में सुरक्षा को अधिक महत्व देना आरंभ कर दिया है जिससे चीन के रुख में लचीलापन समाप्त हो गया है।

उल्लेखनीय है कि 2020 में लद्दाख की गलवान घाटी में 20 भारतीय सैनिकों की शहादत के बाद चीन के साथ संबंध भारतीय विदेश नीति की सबसे बड़ी प्राथमिकता और चुनौती बन कर उभरा हैं। इस दुखद घटना ने 1962 में भारत के विरुद्ध अनुचित चीनी आक्रामकता के घाव हरे कर दिये हैं। ये घटनाएं चीन की उसी आक्रामक सैन्य रणनीति का हिस्सा है जो उसने 2017 में डोकलाम में अपनाई थी। डोकलाम में भले ही गतिरोध समाप्त हो गया था लेकिन चीन का सैन्य विस्तार बंद नहीं हुआ था। चीन की गतिविधियां भारत को निरंतर सतर्क रहने के लिए स्पष्ट संकेत दे रही हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि चीन, भारत का सबसे बड़ा और शक्तिशाली पड़ोसी देश है। लेकिन सीमा विवाद, आतंकवाद, जल सहभाजन और क्षेत्रीय सहयोग जैसे अनेक मुद्दों पर शांतिपूर्ण समाधान के मार्ग में अनेक बाधाएं भी हैं। चीन के भौगोलिक आकार, सैन्य क्षमता और आर्थिक समृद्धि को दृष्टिगत रखते हुए भारत को चीन के साथ अपने संबंधों पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है। गलवान घाटी की हिंसक झड़प के बाद भारत को यह समझ आ गया है कि चीन की आक्रामकता और लड़ाकूपन को वश में करने के लिए दीर्घ-कालीन रणनीति के तहत कार्य करने की आवश्यकता है।

आज चीन विश्व की दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। अपनी व्यापक होती व्यापारिक शक्ति और बढ़ती सैन्य ताकत के बल पर चीन, भारत के लिये अत्यन्त महत्वूपर्ण हो गया है। चीन के रणनीतिकारों का मानना है कि चीन द्वारा शक्ति अर्जित करने के कारण अब उसकी बराबरी केवल अमेरिका के साथ ही हो सकती है। हालांकि भारत भी विकास के पथ पर आगे बढ़ रहा है और उसकी गिनती भी प्रमुख

शक्तियों में होने लगी है। लेकिन चीन अपनी आर्थिक एवं सामरिक उपलब्धियों के बावजूद भारत को एक प्रतिस्पर्धी के रूप में कल्पना कर रहा है।

चीन की बढ़ती क्षमताएं एवं महत्वाकांक्षाएं

चीन की व्यापक राष्ट्रीय क्षमताओं में अपार वृद्धि हुई है। चीन बहुत शीघ्र शक्तिशाली सैन्य शक्ति बनने की इच्छा रखता है। परिणामस्वरूप चीन ने तेजी से अपने व्यवहार में 'संकोच' करना छोड़ दिया है। वह अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और हिंद महासागर में अमेरिका के बराबर की भूमिका की मांग कर रहा है। चीन ने ऑस्ट्रेलिया और पश्चिमी यूरोप में भी तेजी से अपनी आर्थिक पैठ स्थापित की है। रूस से पश्चिमी जगत की शत्रुता को देखते हुए शी जिनपिंग और व्लादिमीर पुतिन के मध्य गहरी मित्रता कायम हो रही है जिससे रूस-चीन की साझेदारी ने एक व्यापक सामरिक आयाम प्राप्त कर लिया है।

वर्तमान अमेरिकी प्रशासन के तहत प्रतिपादित नीतियों ने द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत के बाद से विकसित हुए अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक, भू-रणनीतिक और आर्थिक संबंधों की पूरी संरचना पर गंभीर प्रश्न उठाए हैं। इस संरचना के माध्यम से चीन ने 1978 में अपने सर्वोच्च नेता देंग जियाओपिंग द्वारा चार आधुनिकीकरण कार्यक्रम को पुनः शुरु करने के बाद से अपनी व्यापक राष्ट्रीय ताकत के संवर्धन के माध्यम से बहुत कुछ हासिल किया है। इसलिये अमेरिका द्वारा अपनी नीति में परिवर्तन चीन के लिए महत्वपूर्ण चिंता का विषय है क्योंकि भविष्य में राष्ट्रीय कायाकल्प और 'चीनी स्वप्न' को साकार करने की अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए चीन को भू-राजनीतिक और भू-सामरिक संतुलन के अलावा अंतर्राष्ट्रीय बाजारों, संसाधनों और प्रौद्योगिकी तक पहुंच जरूरी है।

भारत-चीन संबंधों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारत और चीन पड़ोसी हैं। दोनों पड़ोसी दुनिया की दो सबसे अधिक आबादी वाले देश हैं। दोनों की शासन और विकास की प्रणालियां हालांकि भिन्न है। वर्तमान में दोनों देश दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में से हैं। ऐतिहासिक रूप से, भारत और चीन ने व्यावहारिक दृष्टि से एक-दूसरे को काफी प्रभावित किया है। हमारी अर्थव्यवस्थाएं भी काफी हद तक पूरक हैं। इसलिये दोनों देशों के बीच सकारात्मक सहयोग के बिना 21वीं सदी शांति एवं सहयोग की सदी नहीं हो सकती। दोनों देशो के संबंधों के संदर्भ में कुछ ऐतिहासिक तथ्यों पर गौर करना प्रासंगिक होगा।

'हिन्दी-चीनी भाई-भाई' के नारे का खोखलापन 1962 के विश्वासघाती युद्ध ने जगजाहिर हो गया था। इस युद्ध में भारत की अपमानजनक हार के बाद दोनों देशों के बीच खटास आ गयी थी। हालांकि संबंध सुधारने का सिलसिला 1970 के दशक के अंत से राजनीतिक स्तर पर आरंभ हुआ। फरवरी 1979 में तत्कालीन विदेश मंत्री, अटल बिहारी वाजपेयी की यात्रा के बाद दोनों देशों के अधिकारियों के मध्य सीमा के प्रश्न पर चर्चा हुई। इस प्रक्रिया का समापन अक्टूबर 1988 में तत्कालीन प्रधानमंत्री राजीव गांधी की चीन यात्रा के दौरान हुआ। इसके बाद इस सहयोगी दृष्टिकोण को सुदृढ़ करने के प्रयास में उच्च स्तरीय राजनीतिक वार्ता जारी रही कि सीमा पर मतभेदों को अन्य क्षेत्रों में द्विपक्षीय संबंधों के विकास को

बाधित करने नहीं देना चाहिए और विशेष रूप से यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि भारत- चीन सीमावर्ती क्षेत्रों में शांति का माहौल बनाए रखा जाए। वास्तविक नियंत्रण रेखा पर शांति बनाए रखने के लिए सीबीएम पर उच्च स्तरीय राजकीय यात्राओं के दौरान 1993 और 1996 में अत्यंत महत्वपूर्ण समझौते किए गए। सीबीएम पर प्रक्रिया जारी है। वर्ष 2014 और 2018 में भी समझौते हुए हैं। चीन के साथ यह कूटनीतिक वार्ताएं और राजनीतिक परामर्श तब तक सफल रहे जब तक चीन को यह यकीन था कि भारत ने यथास्थिति को स्वीकार कर लिया है। लेकिन डोकलाम विवाद और गलवान घाटी की हिंसा ने संबंधों में तनाव को पुनः उजागर किया है।

जम्मू-कश्मीर में संवैधानिक बदलाव

वर्ष 2019 में भारत ने जम्मू और कश्मीर को विशेष राज्य का दर्जा देने वाले भारतीय संविधान के अनुच्छेद 370 को समाप्त कर दिया। लद्दाख को सीधे केंद्र सरकार के नियंत्रण वाला केंद्र शासित प्रदेश बनाया गया। गौरतलब है कि चीन ने जिस अक्साई पर कब्जा कर रखा है, वह इलाका भौगोलिक रूप से लद्दाख का एक हिस्सा है। चीन की अति महत्वाकांक्षी सामरिक परियोजना 'बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव' अथवा बीआरआई इसी मार्ग से होकर गुजरती है। हालाँकि भारत के इस संवैधानिक कदम से दोनों देशों के मध्य नियंत्रण रेखा पर कोई असर नहीं पड़ता लेकिन इसे चीन की विस्तारवादी नीति पर करारा प्रहार अवश्य माना जा सकता है। इसीलिए चीन ने केंद्र शासित लद्दाख क्षेत्र में भारतीय बदलाव पर गहरी आपत्ति जताई थी। चूंकि भारत का यह प्रयास चीन द्वारा सीमावर्ती क्षेत्रों में निरंतर अतिक्रमण को रोकने तथा सीमा सुरक्षा के दृष्टिकोण से उठाया गया महत्वपूर्ण कदम है, तो चीन को यह रास नहीं आया। भारत ने एक तरफ तो नियंत्रण रेखा और दूसरी तरफ वास्तविक नियंत्रण रेखा से सटे लद्दाख में बेहतर बुनियादी ढांचा विकसित करने और रोड एवं संचार नेटवर्क बढ़ाने पर ध्यान केन्द्रित किया है।

उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि गलवान घाटी में हुई घटना अनायास नहीं घटी। भारत ने चीन के साथ अपनी सीमावर्ती इलाकों में बॉर्डर इंफ्रास्ट्रक्चर को सशक्त करने का कार्य पिछले कुछ सालों में किया है, जिससे चीन खुश नहीं है। पिछले दो दशक से भारत और चीन के बीच सामरिक असंतुलन बन गया जिसके कारण चीन काफी सशक्त हो गया और भारत पीछे छूटता गया। इस असंतुलन को कम करने के लिये भारत द्वारा जो प्रयास किए जा रहे हैं, उसको लेकर भी चीन बौखलाया हुआ है। इसके साथ ही कोविड-19 के बाद जो आर्थिक संकट उत्पन्न हुआ है उसका चीन फायदा उठाना चाहता है। हालांकि चीन की कोविड-19 से निपटने की घरेलू नीति पूरी तरह विफल रही है। परन्तु चीन की मंशा यह है कि जो भी देश उसे कमजोर करना चाहते हैं, उनके लिए अधिक से अधिक कठिनाइयां उत्पन्न की जाए जिससे वे चीन की राह में रोड़े न अटका सकें। भारत के प्रति लड़ाकू रवैया चीन की एक सोची-समझी रणनीति है।

विश्वास **बहाली के असफल प्रयास**

भारत और चीन दोनों के सहयोग के बिना अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक, आर्थिक और सुरक्षा ढांचे में कोई गंभीर सुधार नहीं हो सकता। चीन और भारत को एक साथ क्यों काम करना चाहिए, इसकी सूची वास्तव

में काफी लंबी है। डोकलाम को लेकर 2017 में भारतीय और चीनी सेना के बीच 73 दिनों तक गतिरोध जारी रहा था। दरअसल यह इलाका भारत, चीन एवं भूटान की सीमा पर स्थित है। चीन ने जब इस इलाके में सड़क बनाने का प्रयास किया तो भारतीय सेना ने इसका विरोध किया जिसकी वजह से दोनों देशों की सेनाएं दो महीने से भी लंबें समय तक यहां आमने सामने डटी रहीं। भारत के कड़े रवैये के बाद में चीन ने अपनी सेनाएं पीछे हटा ली। डोकलाम मुद्दे के निपटारे के बाद भारत और चीन के बीच वुहान में 2018 में अनौपचारिक शिखर सम्मेलन प्रक्रिया शुरू हुई थी। उस प्रक्रिया में दूसरा शिखर सम्मेलन 2019 में चेन्नई में आयोजित किया गया। आपसी मतभेदों को दूर करने और साझेदारी विकसित करने की आवश्यकता को वुहान और चेन्नई में स्वीकार किया गया। पहले तो तीसरा सम्मेलन 2020 में प्रस्तावित था लेकिन कोरोनावायरस से उत्पन्न चुनौतियों और लद्दाख में चीन की हिंसक घुसपैठ के बाद इसकी कोई संभावना नहीं है।

चेन्नई शिखर सम्मेलन में दोनों नेता इस बात पर सहमत हुए थे कि दोनों पक्ष सूझबूझ से अपने मतभेदों का सुलझाएंगे और किसी भी मुद्दे पर मतभेदों को विवाद में तब्दील नहीं होने देंगे। इस बात पर भी सहमति व्यक्त की गयी थी कि इस क्षेत्र में एक समावेशी, समृद्ध और स्थिर वातावरण सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। वुहान और चेन्नई सम्मेलनों में दोनों पक्षों द्वारा इस तथ्य को छुपाने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि उनके बीच गंभीर मतभेद हैं। सीमावर्ती क्षेत्रों में शांति और सौहार्द बनाए रखना भारत-चीन साझेदारी विकसित करने के लिए बुनियादी पूर्व-अपेक्षा है। लेकिन चीन की आक्रामकता को देखते हुए यह प्रश्न स्वाभाविक है कि क्या हमें चीन पर आंख मूंदकर भरोसा करना चाहिए?

चीन पर कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ चाइना का शासन है। वह शासन पर एकाधिकार बनाये रखने के लिये तरह-तरह के हथकंडे अपनाती रहती है। चीन के शासक वर्ग को यह विश्वास हो गया है कि अब चीन को दुनिया में अपनी खास जगह बनाने का समय आ गया है। हालांकि चीन यह भी स्वीकार करता है कि उसे आंतरिक और बाहरी दोनों ही प्रकार की कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, इसलिये उसे शांतिपूर्ण माहौल और स्थिरता की आवश्यकता है। इससे चीन अपने विकास पर ध्यान केंद्रित कर पायेगा और अपनी अर्थव्यवस्था को दुनिया के साथ और प्रगाढ़ता से जोड़ पायेगा। लेकिन भारत सहित अनेक देश एक ताकतवर उभरते चीन को चुनौती के रूप से देखने लगे हैं।

निर्बाध व्यापार के खतरे

कोरोनावायरस के बाद तो पूरे विश्व में चीन के प्रति अविष्वास में वृद्धि हुई है। चीन के कई प्रमुख पश्चिमी साझेदार देश उदीयमान प्रौद्योगिकियों में चीन के साथ सहयोग करने की अपनी पुरानी नीति पर पुनर्विचार कर रहे हैं। यहां 5-जी तकनीक और हुआवेई कंपनी विवाद का उल्लेख प्रासंगिक होगा। इस दिशा में भारत को अपना रास्ता स्वयं चुनना चाहिए। वास्तविक तौर पर हुआवेई कंपनी पर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी का ही आधिपत्य है। भारत के राष्ट्रीय हित के लिए अब चीन के साथ आर्थिक लगाव के लिए ज्यादा स्थान नहीं हो सकता।

5-जी तकनीक का महत्व सिर्फ उसकी रफ्तार के कारण नहीं है बल्कि उसकी व्यापकता के कारण भी है। 5-जी की वास्तविक क्षमता उसके नेटवर्कों का नेटवर्क होने की क्षमता में है। चूंकि ये एक साथ कई कार्य संपादित कर सकता है जिसमें व्यवसाय, स्मार्ट सिटी, शासन, शिक्षा और कोविड-19 के बाद की दुनिया में टेलीमेडिसिन के जरिए स्वास्थ्य सेवाएं भी शामिल है, इसलिये भारतीय दूरसंचार कंपनियों के लिए हुआवेई को 5-जी तकनीक एवं उपकरण उपलब्ध कराने की अनुमति किसी भी कीमत पर नहीं दी जा सकती। चीन की कंपनियों के साथ सावधानी और एहतियात से पेश आना आवश्यक हो गया है।

जहां तक आर्थिक वैश्वीकरण के नए मॉडल का संबंध है, तो चीन उन नियमों और संस्थाओं के आधार पर नवाचार करना चाहता है जो व्यापारिक उदारीकरण और बहुपक्षीय व्यापार जैसे व्यवहार में उसके लिये लाभकारी सिद्ध हुए हैं। इसके अलावा चीन का यह भी मानना है कि ऐसे नियमों और मानकों की स्थापना करने की जरूरत है जो तकनीकी नवाचारों और विकास को सुगम बना सकें। यह आश्चर्य का विषय नहीं है कि संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य के रूप में चीन चाहता है कि भविष्य की कोई भी अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली संयुक्त राष्ट्र के इर्दगिर्द ही हो। लेकिन यह बात जगजाहिर हो चुकी है कि चीन जिन तथाकथित नई अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्थाओं को लागू करना चाहता है, वे चीनी हितों और चीन के समक्ष आने वाले खतरों को ध्यान में रखकर बनाये गये हैं। भारत द्वारा सुरक्षा परिषद की स्थायी सदस्यता प्राप्त करने के मार्ग में भी चीन सबसे बड़ी बाधा बना हुआ है।

चीन के साथ भारत का व्यापार घाटा नियंत्रण से बाहर हो गया है। व्यापारिक घाटा अनिवार्य रूप से बुरा नहीं है, लेकिन जब वे तुलनात्मक लाभ नहीं दर्शाते और जब वे अनुचित व्यापार प्रथाओं के परिणाम होते है तो स्वीकार्य नहीं किये जा सकते। व्यापारिक असंतुलन का एक पक्षीय लाभ वर्तमान में चीन को मिल रहा है। इस सदी के प्रारंभ से विकसित व्यापार और आर्थिक साझेदारी के अलावा, भारत व चीन ने कृषि, डेयरी, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, शिक्षा, संस्कृति, रेलवे में सहयोग के लिए कई समझौते किए हैं। लेकिन खेद की बात यह है कि संभावनाओं और अवसरों के बावजूद स्थिति अनुकूल नहीं रही हैं।

चीन का एकतरफा लाभ

भारत और चीन उच्चतम राजनीतिक स्तर पर समझौतों के बाद न केवल द्विपक्षीय मुद्दों पर बल्कि क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मामलों में भी सहयोग करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। परन्तु यहां भारत का अनुभव यह रहा है कि चीन एकतरफा लाभ उठाने की मंषा रखता है। अनेक उप-क्षेत्रीय और क्षेत्रीय व्यवस्थाओं का हिस्सा बनने के बावजूद संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद और परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह में भारत की स्थायी सदस्यता के लिए चीन द्वारा समर्थन नहीं करना इस बात का उदाहरण है कि चीन, भारत को वैश्विक मंच में उभरता नहीं देखना चाहता है। चीन साझा नदी जल संसाधनों पर भारत का सहयोग नहीं करता है।

यहां चीन की बीआरआई योजना का उल्लेख भी प्रासंगिक होगा। चीन द्वारा यह योजना भारत के साथ बिना किसी परामर्श के आरंभ की गयी। इससे भी दुर्भाग्यपूर्ण यह तथ्य है कि बाद में चीन पाकिस्तान आर्थिक गलियारा ‘सीपीईसी‘ को बीआरआई के छाते तले ले आया। चूंकि सीपीईसी भारत की संप्रभुता और

क्षेत्रीय अखंडता का गंभीर उल्लंघन करती है तो भारत ने इसे खारिज कर दिया गया। बीआरआई के प्रति भारत के सैद्धांतिक विरोध को अंतर्राष्ट्रीय जगत का समर्थन प्राप्त हुआ है और इससे चीन चिंतित हो गया है। इसके बावजूद, भारत और चीन ने सतत विकास, जलवायु परिवर्तन और विश्व व्यापार संगठन और जी-20 जैसे मुद्दों पर संयुक्त राष्ट्र में सफलतापूर्वक काम किया है। आतंकवाद के खिलाफ सहयोग की अपार क्षमताएं है लेकिन यहां पाकिस्तान बाधा बना हुआ है। जब भी अंतर्राष्ट्रीय मंच पर भारत पाकिस्तान के विरुद्ध कार्रवाई का कदम उठाता है तो चीन लगातार पीछे हट जाता है।

पाकिस्तान के बहुत से सामरिक विशेषज्ञ हमेशा इस बात पर अफसोस जताते हैं कि पाकिस्तान ने 1962 में भारत से कश्मीर छीनने का मौका गंवा दिया, जबकि उस समय भारत, चीन के साथ युद्ध में उलझा हुआ था। पाकिस्तान के सैन्य विशेषज्ञ यह मानते हैं कि भविष्य में चीन और भारत के बीच युद्ध होने पर पाकिस्तान को कश्मीर पर अधिकार करने का प्रयास अवश्य करना चाहिये। भारत के सामरिक विशेषज्ञ भी अपने विश्लेषण में इस तथ्य को नहीं भूलते कि भारत को एक साथ दो मोर्चों पर लड़ाई का सामना करना पड़ सकता है। यदि चीन और पाकिस्तान मिलकर भारत के विरुद्ध सैन्य अभियान चलाते हैं तो भारतीय सेना के लिए एक साथ दो मोर्चों पर युद्ध लड़ना सबसे बड़ी चुनौती होगी।

चीन की अर्थव्यवस्था भारत की अर्थव्यवस्था से कई गुना बड़ी है लेकिन ऐसा कोई कारण नहीं है कि भारत उसकी बराबरी न कर सके। यदि भारत सही नीतियों का पालन करता है तो वह अगले तीन दशक में एक उच्च विकास दर के जरिये चीन की अर्थव्यवस्था की बराबरी कर सकता है। यदि चीन की अमेरिकी अर्थव्यवस्था के आकार से अधिक होने की मंशा है तो भारत भी ऐसी ही आकांक्षाएं कर सकता है। चीन ने अभी तक आर्थिक दृष्टि से भारत से काफी आगे प्रगति की है, फिर भी राजनीतिक और वैचारिक दृष्टि से भारतीय अनुभव कहीं अधिक आकर्षक है। चीन को इसका अहसास है और वह भारत की राजनीतिक शासन प्रणाली को अपनी प्रणाली के लिए एक गंभीर चुनौती के रूप में देखता है। आज जब चीन की अर्थव्यवस्था एक कठिन दौर से गुजर रही है और बेरोजगारी बढ़ रही है, तो उस समय चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के लिए दुविधा भी बढ़ गयी है। उसे चीन की आर्थिक समृद्धि और अपनी सत्ता की राजनीतिक वैधता में से एक का चुनाव करना है। वर्तमान में तो उसने राजनीतिक वैधता को ही चुना है। इसीलिये हांगकांग में परिस्थितियां विपरीत होने के बावजूद चीन ने भारत से लगने वाली सीमा पर आक्रामक रवैया दिखाया है।

निष्कर्ष

भारत एक ऐसा देश है जिस पर दुनिया भर में भरोसा किया जाता है क्योंकि भारत ने अपनी विदेश नीति में दूसरे देशों की संप्रभुता को चुनौती देने का कार्य नहीं किया। एक बड़ी आबादी वाले विकासशील देश को लोकतंत्र के रूप में अक्षुण्य बनाये रखना भारतीयों की सफलता की शानदार कहानी है। कोविड-19 के उद्भव से पहले भारत ने उच्च विकास दर को बनाए रखा है। इसका तात्पर्य है कि भारत विकास, स्थिरता और शांति का प्रतिनिधित्व करने वाली विश्वशक्ति बनने की आकांक्षा रखता है।

जबकि चीन का मार्ग विस्तारवादी एवं अधिनायकवादी रहा है। वर्तमान में चीन वैश्विक और घरेलू स्तर पर कई चुनौतियों का सामना कर रहा है। ऐसे में समझदारी इसी बात में है कि वह भारत से लगी अपनी सीमा पर तनाव उत्पन्न करने वाली गतिविधियां बंद करे। लेकिन विपरीत परिस्थितियों के बावजूद चीन को लेकर कोई अनुमान लगाना घातक होगा। शी जिनपिंग के नेतृत्व में पूरी दुनिया चीन के रूप में एक ऐसा राष्ट्र देख रही है, जो आक्रामक और हठधर्मी ताकत के रूप में सामने आया है। इसलिये चीन को सीमा पर खदेड़ते हुए भारत को यह भी सुनिश्चित करना होगा कि हमारे शहरों, घरों और मस्तिष्क पर चीन की विचारधारा का असर न पड़ सके।

चीन ने जिस तरह सीमा के कई इलाकों में भारत के हितों के खिलाफ जो सैन्य मोर्चा खोला है, उससे निपटने में भारत के लिए विकल्प स्पष्ट हैं। भारत को गहन मंथन के बाद रक्षा योजना, आर्थिक योजना, सुरक्षा योजना और रणनीतिक योजना बनाने की आवश्यकता है। भारत अपनी संप्रभुता, क्षेत्रीय अखंडता और स्वाभाविक आकांक्षाओं से समझौता नहीं कर सकता। जब तक चीन इनका सम्मान करता रहेगा, तब तक भारत उसके साथ सहयोग करता रहेगा। सहयोग आपसी लाभ, समानता और समान सुरक्षा पर आधारित ही हो सकता है। यह एकतरफा नहीं हो सकते, जिसमें एक पक्ष ही लाभ कमाता रहे। रणनीतिक और राजनीतिक भरोसा जीते बिना भारत से आर्थिक फायदा उठाने की चीन की मंशा को सफल नहीं होने दिया जा सकता। भारत एक बढ़ती हुई सैन्य शक्ति भी है और चीन उसे अपने राष्ट्रीय निर्णय लेने की स्वतंत्रता से बाधित नहीं कर सकता।

संदर्भ ग्रंथ सूची

Duara, Prasenjit and Elizabeth J. Perry. *Beyond Regimes: China and India Compared*. Cambridge: Harvard University Asia Center, 2018.

Fang, Tien-sze. *Asymmetrical Threat Perception in India-China Relation. New Delhi*: Oxford University Press, 2014.

Ganguly, Sumit. *Indian Foreign Policy*. Oxford University Press, 2015.

Garver, John W. *Protracted Contest: Sino-Indian Rivalry in the Twentieth Century*, Seattle: University of Washington Press, 2001.

Lintner, Bertil. *China's India War: Collision Course on the Roof of the World*. New Delhi: Oxford University Press, 2018.

Paul, T. V. *The China-India rivalry in the globalization era*. Washington DC: Georgetown University Press. 2018.

Pollock, Sheldon and Benjamin Elman. *What China and India Once Were: The Pasts That May Shape the Global Future*. New York: Columbia University Press, 2018.

Verma, Shiv Kunal. *1962: The War that Wasn't: The Definitive Account of the Clash between India and China*. New Delhi: Aleph.

अध्याय 15
भारत - ईरान संबंधों के कारक के रूप में अमेरिका: समकालीन परिदृश्य

डॉ. मृदुला शर्मा
सहायक प्रोफ़ेसर
सुबोध महिला महाविद्यालय
सांगानेर, जयपुर

प्रस्तुत शोध आलेख के अन्तर्गत अमेरिका एवं ईरान के मध्य संघर्ष की स्थिति में भारत की भूमिका को रेखांकित करने का प्रयास किया गया है। भारत अमेरिका संबंधों की शुरूआत शीतयुद्ध की समाप्ति के उपरान्त शुरू हुई तथापि इसमें अधिक गतिशीलता पिछले 20 वर्षों में प्रभावी ढंग से दिखाई दे रही है। वर्ष 1991 में सोवियत संघ के विघटन के बाद भारत की विदेश नीति में आए अनेक परिवर्तनों के साथ एक परिवर्तन भारत-अमेरिका के मध्य बढ़ती सामाजिक, आर्थिक एवं सामरिक साझेदारी है। अमेरिका की सम्पूर्ण एशिया क्षेत्र के प्रति जो विदेश नीति है वह स्वयं के राष्ट्रीय हितों तथा वैश्विक शक्ति के संतुलन पर आधारित है। पश्चिमी एशिया के सन्दर्भ में भी अमेरिका की नीति विशेषतः ईरान, ईराक, यमन, सीरिया तथा अन्य इस्लामिक देशों के प्रति तेल कूटनीति पर आधारित है। वर्तमान में ईरान और अमेरिका के मध्य तनाव चरम सीमा पर है 2020 में अमेरिका ने ईरान के प्रसिद्ध सैन्य कमाण्डर मेजर जनरल कासिम सुलेमानी को बगदाद हवाई अड्डे के बाहर हवाई हमले में मार गिराया। कमाण्डर सुलेमानी ईरान की शक्तिशाली कुद्दस फोर्स के प्रमुख थे जो ईरान के लिए खुफिया सूचनाओं को एकत्रित करने तथा गुप्त सैन्य अभियानों के लिए प्रसिद्ध रहा। यह क्षति ईरान अमेरिका संबंधों में अधिक कटूता बढ़ाने वाली मानी गयी। इसमें थोड़ा सुधार वर्तमान राष्ट्रपति जो बाइडन द्वारा संचालित नीतियों से किया गया है।[1]

अमेरिका-ईरान संघर्ष - अमेरिका-ईरान के मध्य प्रारम्भ से ही गहरा विवाद रहा है। 1953 में अमेरिका तथा ब्रिटेन ने मिलकर ईरान में लोकतांत्रिक तरीके से चुनी मोसदेग सरकार को अपदस्थ कर शाह पहलवी को सत्ता सौंप दी। ईरान के शासक मोहम्मद रजा पहलवी ने अमेरिका के सहयोग से 'ऐटम फॉर पीस' परमाणु प्रोग्राम शुरू किया इसके लगभग 26 वर्ष बाद 1979 में ईरान में इस्लामिक क्रांति द्वारा नये नेता अयातुल्लाह खुमैनी ने सत्ता पर नियंत्रण स्थापित किया। ईरान की इस्लामिक क्रांति का मुख्य कारण पहलवी की बढ़ती

अमेरिकी निर्भरता और पश्चिमीकरण के विरोध पर आधारित थी। इस्लामिक क्रांति के बाद ईरान में रुढ़िवादिता और कट्टर इस्लामिक परम्पराओं का प्रसार होता गया। खुमैनी ने समय के साथ कुछ उदारवादी रूख अपनाया लेकिन शीघ्र ही कट्टरतावादी अन्य संस्थाओं के विरोध के कारण इस्लामिक रिपब्लिक ऑफईरान में लोकतांत्रिक व्यवस्था पूरी तरह समाप्त हो गयी। अमेरिका ने भी ईरान से सभी कूटनीतिक एवं राजनयिक संबंध विच्छेद कर लिये। इसी समय राजधानी तेहरान में ईरान के कट्टरवादी छात्रों के एक समूह ने अमेरिकी दूतावास को अपने कब्जे में ले लिया और 52 अमेरिकी नागरिकों को 444 दिन तक बंधक बना कर रखा। इस घटना में अप्रत्यक्ष तौर पर ईरान सरकार का हाथ माना गया जिससे दोनों देशों के मध्य संबंधों में और कड़वाहटपैदा हो गयी। अमेरिका द्वारा समय पर ईरान के खिलाफ कड़े प्रतिबंध लगाये गये। यह प्रक्रिया न केवल यहीं तक ही सीमित रही बल्कि अन्य देशों पर भी अमेरिका ने ईरान के खिलाफ होने का दबाव बनाया।[2] भारत भी इस नीति से अछूता नहीं रह सका।

भारत ईरान संबंध - भारत की बात करे तो तेल आपूर्ति के क्षेत्र में ईरान का बड़ा महत्व हैं और भारत ईरान से अपने उपयोग का लगभग 10 प्रतिशत तेल आयात करता है। ईरान में प्राकृतिक संसाधनों का बड़ा भण्डार है शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद भारत ने निरन्तर ईरान के साथ संबंधों को सामान्य करने की प्रक्रिया पर बल दिया। 1993 से 2003 के दशक को भारत ईरान संबंधों का स्वर्ण दशक कहा जाता है। 1995 में राष्ट्रपति हाशमी रफशंजानी एवं 2003 में राष्ट्रपति मोहम्मद खातमी गणतंत्र दिवस के मुख्य अतिथि के रूप में भारत की यात्रा पर आये। वर्ष 1995 में भारत-ईरान-तुर्कमेनिस्तान के मध्य सहमति ज्ञापन समझौता हुआ। क्योंकि मध्य एशिया में भारत की वस्तुओं तुर्कमेनिस्तान के रास्ते से होकर जाती है, इसमें ईरान भूमि सेतु की भूमिका का निर्वहन करता है। भारत मध्य एवं पश्चिमी एशिया के राष्ट्रों से अच्छे आर्थिक एवं सामरिक संबंधों की लगातार स्थापना करने के लिए प्रयासरत है। तत्कालीन प्रधानमंत्री पी.वी. नरसिम्हा राव ने 1995 तथा मनमोहन सिंह ने 2011 में कजाकिस्तान की यात्रा पश्चिमी एवं सेंट्रल एशिया के साथ संबंधों की नयी शुरूआत के लिए की। कजाकिस्तान पूर्व सोवियत संघ के विघटन के उपरान्त बना पश्चिमी एशियाई राष्ट्र है। यहाँ भारत का सैनिक हवाई अड्डा भी है।[3] भारत और ईरान को एक साथ आने का मौका तब मिला जब वर्ष 1996 में अफगानिस्तान में तालिबान शासन द्वारा ईरान की इस्लामिक सत्ता को चुनौति दी गई परिणामस्वरूप ईरान ने तालिबान का विरोध किया। वहीं दूसरी ओर भारत ने भी तालिबानी कट्टरपंथी शासन की आलोचना की।

इन सभी कारणों से ईरान और भारत तालिबान शासन के खिलाफ रहे। 2001 में अमेरिका द्वारा आतंक के विरुद्ध युद्ध की घोषणा के लिए ऑपरेशन 'एनड्यूरिंग फ्रीडम'

आरम्भ किया जिसका भारत और ईरान दोनों देशों ने स्वागत किया। तालिबान शासन की समाप्ति के बाद ईरान ने अफगानिस्तान जाने के लिए भारत को पारगमन मार्ग उपलब्धकराया। चाबहार (ईरान) से देलाराम जेरांग (अफगानिस्तान) मार्ग का निर्माण 2009 में पूरा किया जा चुका है। भारत, ईरान, रूस, अफगानिस्तान के साथ मिलकर मध्य एशियाई राष्ट्रों तक व्यापार एवं निर्यात के लिए तथा उत्तर-दक्षिण कॉरिडोर के निर्माण हेतु प्रयासरत है। इस कारिडोर में ईरान, यूरेशिया और हिन्द महासागर के मध्य एक प्राकृतिक प्रवेश द्वारा के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका में है। ये सभी कारक ऐसे है जो भारत के विदेश नीति निर्माण हेतु ईरान की भू-राजनीतिक स्थिति के महत्व को दर्शाते है।[4] वर्तमान सन्दर्भ में भारत की दुविधा ओर बढ़ गयी है क्योंकि के साथ ईरान और अफगानिस्तान के साथ ओमान की खाड़ी क्षेत्र में स्थित इन बन्दरगाहों का भू-राजनीतिक महत्व तनाव का कारण है।

ऊर्जा सुरक्षा तथा परमाणु कार्यक्रम - ईरान में प्राकृति ऊर्जा के संसाधनों का भण्डार है और भारत को अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऊर्जा की आवश्यकता है। भारत ने न केवल कच्चे तेल बल्कि प्राकृतिक गैस की आपूर्ति के लिए भी ईरान के साथ 2013 में समझौता किया है। जिसके तहत ईरान से पाकिस्तान होते हुए भारत तक गैस की आपूर्ति की जायेगी। बदलते अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य, सामरिक समझौतों के कारण तथा सुरक्षागत अवधारणाओं के कारण अभी यह पूरी तरह मूर्त रूप ग्रहण नहीं कर सका है। एक तरफ आपूर्ति लाइन की सुरक्षा तथा दूसरी ओर गैस की कीमत भी समझौते के क्रियान्वयन में बड़ी बाधा है।[5]

अमेरिका एवं ईरान के मध्य सर्वाधिक विवाद ईरान के परमाणु कार्यक्रम के विकास को लेकर है। अमेरिका का मानना है कि ईरान गुप्त रूप से अपने परमाणु कार्यक्रम को बढ़ावा दे रहा है। इससे पश्चिमी एशिया में सामरिक असन्तुलन पैदा हो सकता है। सन् 2005 में ईरान ने परमाणु बिजली उत्पादन की शुरूआत की जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा ऐजेंसी ने उच्चतम यूरेनियम संवर्धन के इस्तेमाल की आशंका व्यक्त की है। ऐजेंसी ने यह भी आरोप लगाया कि ईरान ने कुछ परमाणु संयंत्रों को एजेन्सी की निगरानी से बाहर रखा है। इन घटनाओं के उपरान्त संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद (UNSC) के द्वारा ईरान के विरुद्ध प्रस्ताव पारितकिया जिसमें भारत के साथ-साथ रूस एवं चीन द्वारा ईरान के खिलाफ मतदान किया। ईरान अनेक बार यह आरोप लगा चुका है कि अमेरिका ईराक की तरह उसके यहाँ भी ऐसी कार्यवाही को अंजाम देने के फिराक में है। ताकि तेल के समृद्ध उत्पादन पर नियंत्रण स्थापित कर सके।[6]

ईरान का परमाणु कार्यक्रम पश्चिम एशिया क्षेत्र की शांति एवं स्थिरता के लिए घातक है। ईरान को शांतिपूर्ण कार्यों के प्रयोजन हेतु परमाणु ऊर्जा के प्रयोग का अधिकार है। ईरान एन.पी.टी. पर हस्ताक्षर करने वाला राष्ट्र है। सबसे बड़ी बात यह है कि ईरान के परमाणु मुद्दे का हल सैन्य कार्यवाही के बजाय शांतिपूर्ण वार्तालाप से होना चाहिए। इसी उम्मीद से 14 जुलाई 2015 को ईरान परमाणु समझौता (वान समझौता) सम्पन्न हुआ। इसमें सुरक्षा परिषद के पाँच सदस्य-अमेरिका, रूस, फ्रांस, चीन और ब्रिटेन के साथ-साथ जर्मनी एवं यूरोपीय संघ भी शामिल था। इसलिए इसे (P-5+1) का नाम दिया गया इसमें निम्न बाते शामिल की गई हैं-

1. ईरान की यूरेनियम परिशुद्धीकरण सुविधाओं में दो-तिहाई कटौती की जाएगी। ईरान अगले दस वर्षों तक परिशुद्धीकरण के 19,000 मशीनों में से केलव 5,060 मशीनों का ही उपयोग कर सकेगा।

2. अगले 15 वर्षों के लिए ईरान के परिशुद्ध यूरेनियम के भण्डार में 98 प्रतिशत की कटौती की जाएगी।

3. ईरान के हैवी वाटर के संयंत्रों को इस तरह बदला जाऐगा कि वह केवल कम मात्रा में ही उत्पादन कर सकें।

4. ईरान के फोरडो नामक स्थान पर जमीन के नीचे स्थित यूरेनियम परिशुद्धीकरण संयंत्र को एक चिकित्सा शोध केन्द्र के रूप में बदल दिया जाएगा।

5. अगले 20 वर्षों तक ईरान की परमाणु सुविधाओं का अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेन्सी दिन-प्रतिदिन के आधार पर गहन निरीक्षण करेगी। इसके साथ ही उच्च तकनीकी उपकरणों द्वारा ईरान की परमाणु सुविधाओं की निगरानी की जाएगी।[7]

सऊदी अरब तथा इज़राइलदोनों ने अलग-अलग कारणों से इस समझौते का खुलकर विरोध किया था। क्योंकि दोनों देश पश्चिम एशिया में ईरान के प्रभाव में वृद्धि से चिन्तित हैं, मार्च 2015 में इज़राइल के प्रधानमंत्री नेतान्याहू ने अमरीकी कांग्रेस को दिए गए अपने सम्बोधन में ओबामा के ईरान के प्रति समझौतावादी रूख की कड़ी आलोचना की थी। अमरीका की रिपब्लिकन पार्टी तथा यहूदी लॉबीभी इसके खिलाफ रही है। यद्यपि तत्कालीन राष्ट्रपति ओबामा ने इन आलोचनाओं के बावजूद इस समझौते को कूटनीतिक विजय बताया था।[8]

जनवरी 2017 में जब अमेरिकी के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने राष्ट्रपति बनते ही ईरान के खिलाफ कड़े प्रतिबंध लगा दिये जिससे न केवल भारत बल्कि सम्पूर्ण विश्व की अर्थव्यवस्था को खतरा पैदा हो गया है। संयुक्त कार्यवाही व्यापक योजना (JCPOA) से मई 2018 में ट्रंप ने अमेरिका के समझौते से अलग होने की घोषणा कर दी। साथ ही ईरान पर सामारिक, आर्थिक एवं वित्तीय प्रतिबंध भी लगा दिये। राष्ट्रपति ट्रंप का मानना है कि ईरान परमाणु समझौते की आड़ में परमाणु हथियारों का विकास कर रहा है। यद्यपि इस समझौते के अन्य पक्षकारों ने अमेरिका के अलग होने के बाद भी समझौते को बनाये रखने की प्रतिबद्धता व्यक्त की है। लेकिन अन्य पक्षकार ईरान के नुकसान की पूरी तरह भरपाई कर पायेगें इस पर सन्देह है। अमेरिका प्रतिबंधों के कारण ईरान की तेल आधारित अर्थव्यवस्था कमजोर होने लगी है।[9] इन सभी विवादों के मध्य वर्तमान राष्ट्रपति जो बाइडन ने ईरान के साथ संतुलित नीति अपनाने की घोषणा की है।

अमेरिका और ईरान के मध्य जून 2019 से तनाव और अधिक बढ़ गया। जिसके कारण अमेरिका ने खाड़ी क्षेत्र में अपनी सैन्य उपस्थिति बढ़ा दी है। इस सैनिक तैनाती में विमान वाहक पोत तथा मिसाइलों को शामिल किया गया है। इसी दौरान सऊदी अरब के तेल पोतों एवं तेल लाइनों पर यमन विद्रोहियों ने आक्रमण कर दिया। अमेरिका ने इसके पीछे ईरान का हाथ माना क्योंकि सऊदी अरब और अमेरिका दोनों की मित्रता है तथा ईरान की इनसे शत्रुता है। ईरान के इनकार के उपरान्त भी अमेरिका ने खाड़ी क्षेत्र में टोही विमानों की तैनाती प्रारम्भ कर दी। 20 जून, 2019 में ईरान ने अमेरिका के एक टोही विमान को खाड़ी क्षेत्र में मार गिराया। इसके उपरान्त अमेरिका ने ईरान पर आक्रमण की बड़ी योजना बनायी लेकिन राष्ट्रपति ट्रंप ने इसे अंतिम समय में स्थगित कर दिया क्योंकि अमेरिका जानता है कि ईरान पर आक्रमण से सम्पूर्ण पश्चिमी एशिया की तेल कूटनीति पर गहरा प्रभाव पड़ेगा।[10] इन सभी कारणों का प्रभाव अन्तर्राष्ट्रीय पारगमन रूट अर्थात् ट्रांजिट रूट पर दिखायी दे रहा है। फारस की खाड़ी का संकरा गलियारा दुनिया का सबसे व्यस्ततम तेल रूट माना जाता है। भारत की तेल जरूरतों पर ये एक गहरा आघात है।

वर्तमान में भारत और ईरान संबंधों की स्थिति - वैसे तो भारत व ईरान के बीच ऐतिहासिक व सांस्कृतिक सम्बन्ध रहे हैं। व्यापार व ऊर्जा के क्षेत्र में दोनों के सम्बन्ध उल्लेखनीय हैं, भारत ईरान से अपनी तेल आवश्यकताओं का 10 प्रतिशत तेल आयात करता है, अन्य निर्यातकों से अलग ईरान तेल के भुगतान के लिए भारत को दो महीने की मोहलत भी देता रहा है, जुलाई 2015 मे ईरान तथा पश्चिमी देशों के बीच ईरान परमाणु समझौते के बाद ईरान के विरुद्ध लगाए गए अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबन्धों को धीरे-धीरे समाप्त कर दिया गया

था। भारत ने इस समझौते का स्वागत करते हुए दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय सम्बन्धों को आगे बढ़ाने के नए प्रयास शुरू किए।[11]

15 वर्षों के अन्तराल में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 22-23 मई, 2016 को ईरान की ऐतिहासिक यात्रा सम्पन्न की गई। यद्यपि इससे पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने अगस्त 2012 में गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में भाग लेने के लिए तेहरान की यात्रा की थी। लेकिन यह उनकी द्विपक्षीय राजकीय यात्रा नहीं थी। बदले हुए माहौल में प्रधानमंत्री मोदी ने अपनी यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच सम्पर्कता, ऊर्जा तथा व्यापार व निवेश के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने पर बल दिया। दोनों देशों ने 2003 की दिल्ली घोषणा में निहित द्विपक्षीय सम्बन्धों के मौलिक सिद्धान्तों को पुनः रेखांकित किया। इस यात्रा की सबसे महत्वपूर्ण घटना ईरान, अफगानिस्तान तथा भारत के बीच हुआ त्रिपक्षीय सम्पर्कता समझौता जिसके कारण भारत ईरान के चाबहार बन्दरगाह का विकास कर रहा है। इससे सड़क मार्ग के माध्यम से भारत मध्य एशिया से कनैक्ट हो रहा है। भारत की इस नीति के संचालन का दूसरा उद्देश्य चीन की वन वेल्ट वन रोड़ पॉलिसी का प्रत्युत्तर भी देना है। इस योजना के माध्यम से भारत सड़क मार्ग का अनुसरण कर सकेगा।[12]

भारत एवं अमेरिका के लिए ईरान सहित पश्चिमी एवं मध्य एशिया में सामरिक सन्तुलन बनाना अति आवश्यक है। हिन्द महासागर के व्यापारिक मार्गों को सुरक्षित रखने में अमेरिका एवं भारत की समान दिलचस्पी है। भारत-अमेरिका रणनीतिक साझेदारी को बढ़ावा देने वाला अप्रभावी कारक दक्षिण एशिया में चीन का उदय है। भारत एवं अमेरिका दोनों इस बात से परिचित हैं कि चीन किस प्रकार एक वैश्विक शक्ति बनता जा रहा है। यद्यपि दोनों देशों के चीन के साथ व्यापारिक एवं आर्थिक संबंध है। कोविड-19 के दौरान चीन ने दक्षिण चीन सागर के साथ-साथ गलवान घाटी एवं एल.ओ.सी. के विवाद को बढ़ावा दिया।[13] वर्तमान में भारत एवं चीन के द्विपक्षीय संबंध अत्यधिक तनाव की स्थिति में हैं। चीन ने अपनी वन रोड़ वन वेल्ट नीति के तहत भारत के पड़ोसी देशों के साथ अनुकूल संबंध बनाकर भारत को चारों तरफ से रणनीतिक रूप से घेरने का प्रयास किया है। वर्तमान में जब भारत-ईरान के रिश्ते नाजुक दौर में है। अमेरिकी प्रतिबंधों के बावजूद भारत को सशर्त चाबहार पोर्ट की विकसीत करने की छूट दी गई है। लेकिन इसमें ईरानी सेना का कोई हस्तक्षेप नहीं होगा। चाबहार व्यापारिक दृष्टिकोण के साथ-साथ रणनीतिक रूप से भी महत्वपूर्ण है। यह चीन की मदद से पाकिस्तान में विकसित किये ग्वादर पार्ट से महज 100 किलोमीटर दूर है। कभी चाबहार भारत की सीमा से सटा हुआ था। 10वीं सदी के मशहूर विद्वान और इतिहासकार अलबरूनी ने लिखा था कि भारत के समुद्र तट की शुरूआत चाबहार से होती है।[14] भारत की

 ISSN: 2321-0443

ईरान के साथ संबंधों की जटिलता का एकमात्र कारण अमेरिका ही नहीं है बल्कि इजराइल और सऊदी अरब की ईरान से दुश्मनी भी है। इस कारण भारत को हमेशा बहुत ही ध्यानपूर्वक मध्य एवं पश्चिमी एशिया में अपने संबंधों के निर्वहन हेतु विदेश नीति का संचालन करना होता है। ईरान शिया बहुल देश है। जबकि खाड़ी देशों में ज्यादातर राजशाही सुन्नियों की है।[15]

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ईरान के साथ सम्बन्धों में भारत के दो महत्वपूर्ण हित संलग्न हैं- आसान शर्तों पर ईरान से भारत को तेल की आपूर्ति तथा दूसरा चाबहार बन्दरगाह से भारत को अफगानिस्तान तथा सेण्ट्रल एशिया के लिए मार्ग उपलब्ध होना, लेकिन वर्तमान में ईरान व अमरीका के बीच जो तनाव उत्पन्न हो गया है उसके कारण भारत को अपने हितों की रक्षा करना कठिन होता जा रहा है। अमरीकी प्रतिबन्धों के अनुसार भारत ने के साथ तेल आयात नीति पर प्रतिबंध तो लगा दिया है लेकिन अमेरिका के सहयोग से अन्य खाड़ी देशों के साथ-साथ अमेरिका से तेल का आयात बढ़ा दिया है। अमेरिका व भारत के सम्बन्ध भी भारत के लिए सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। भारत अमेरीका के साथ अपने सम्बन्धों की अब अनदेखी नहीं कर सकता है। एक तरफ ईरान इस बात से भी भारत से नाराज हो सकता है कि जनवरी 2020 में सैनिक तनाव के समय भारत ने तटस्थ रूख अपनाया दूसरी तरफ सऊदी अरब के साथ भारत के निरन्तर घनिष्ठ होते सम्बन्धों को लेकर भी ईरान चिन्तित हो सकता है। इसी कारण ईरान के द्वारा भारत को चाबहार पोर्ट से जाहिदान को जोड़ने वाले रेल प्रोजेक्ट से बाहर कर चीन के साथ 400 मिलियन डालर का करार किया है।[16]

निष्कर्षतः इस परिस्थिति में मूल प्रश्न यह है कि क्या भारत अपनी चाबहार परियोजना को मूर्त रूप दे सकेगा। इस परियोजना का भारत के लिए सामरिक महत्व है। भारत इस परियोजना के द्वारा कम समय में यूरोप तक अपना सामान रेल मार्ग से पहुँचा सकेगा। राजनीतिक दृष्टि से देखें तो यह भारत को बड़ा नुकसान है।

अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप द्वारा ईरान के खिलाफ लागू किया संघर्ष अभी तो टल गया है लेकिन इससे विश्वयुद्ध तो न सही परन्तु क्षेत्रिय अस्थिरता अवश्य पैदा हो गयी है। जनवरी 2021 में नये राष्ट्रपति जो बाइडेन ने अपने चुनाव के समय ही स्पष्ट कर दिया कि ईरान के खिलाफ 'अधिकतम दबाव की नीति' विफल रही है। इससे दोनों के मध्य तनाव ही बढ़ा है यद्यपि इस नीति को सहयोगियों ने भी अस्वीकार कर दिया है। हालांकि उन्होंने ये साफ किया है कि अगर ईरान परमाणु समझौते का पालन करता है तो ही दोबारा समझौते में शामिल होगें, लेकिन तब तक प्रतिबंध नहीं हटेगें।

हालांकि यह बात गौर करने लायक है कि बाइडेन ईरान के साथ संबंधों को पुनः बहाल करने में थोड़ी शिथिलता दिखाई। लेकिन मध्यपूर्व में एवं पश्चिमी एशिया में इजराइल तथा सऊदीअरब का दबाव भी उन पर ईरान के खिलाफ बना हुआ है। जिसके कारण वे पूरी तरह एक तरफा ईरान के विपरीत फैसला नहीं ले पा रहे है। दूसरी प्रमुख चुनौती अमेरिकी कांग्रेस की है जहाँ रिपब्लिकन पार्टी का बहुमत है। यहाँ से समझौते को पुनः पास कराना भी एक कठिन चुनौती है।

भारत के लिए बाइडेन की सरकार ने निश्चित रूप से सहयोगी एवं मदद का भाव रखा है। उन्होंने अपने भाषणों में प्रदर्शितभी किया है। भारत-ईरान चाबहार समझौता, ऊर्जा एवं गैस समझौते को बहाल करना न केवल ऊर्जा जरूरतों के हिसाब से आवश्यक है बल्कि सामरिक दृष्टि से भी उपयोगी है। नई दिल्ली को अरब-इजराइल देशों के मध्य साझेदारी से अमेरिकी दबाव को कम करने का अधिकतम प्रयास करना होगा तभी ईरान के साथ भारत अपने संबंधों के मुद्दे पर सर्वसम्मति बना पायेगा।

संदर्भ -

1. नव भारत टाइम्स 3 जनवरी, 2020

2. पंत पुष्पेश, 21वीं शताब्दी में अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, McGraw Hill Education (India) New Delhi, 2016, पृ.सं. 80

3. INDO-IRAN RELATIONS, COLLECTED PAPERS (Prof. S.M. Waseem, Aligarh Muslim University) Iran Culuture house, New Delhi, 2005, Page. 96

4. वर्ल्ड फोकस, जनवरी 2017, द्विवेदी मनन, “भारत-अमेरिका द्विपक्षीय संबंध इतिहास का नया तारा: तेजी से बढ़ते लक्षण-निर्यात, पेज 103,

5. वही पेज 104

6. वही पेज 107

7. Kumar, V. (2016). India-Iran Relations: Part One-Understanding the "Dalay" Factor. Future directions international.

http://www.futuredirections.org.au/publication/india-iran-relations-part-one-under standing-delay-factor/ accessed on 2018

8. जनसत्ता 23 मई, 2016

9. नवभारत टाइम्स / www.navbharttimes.com, on 13 November, 2018

10. www.danikbhaskar. com, on 10 january, 2020

11. भारत परिपेक्ष्य, नई दिल्ली अंक 30, संस्करण-4, जुलाई-अगस्त 2016, पृ.सं. 12

12. वही, पृ.सं. 4

13. भारत-अमेरिका संबंध: इतिहास के आइने में बी.बी.सी. न्यूस हिन्दी, पृष्ठ सं. 2

14. भारत-अफगानिस्तान संबंध, विश्व मामलों की भारतीय परिषद, प्रथम प्रकाशन, सपूर हाउस वाराखंभा रोड़, नई दिल्ली, 2018, पृ. 14

1. नवभारत टाइम्स, इंडिया www.navbharattimes.com visited on 11 May 2019

15. योजना, अक्टूबर 2020, पृ. 39

अध्याय 16

भारत-वियतनाम संबंध: एक विवेचन

गरिमा कुमावत
शोध छात्रा
इंटरनेशनल अफेयर्स एंड सिक्योरिटी स्टडीज
सरदार पटेल पुलिस विश्वविद्यालय

प्रकाश जांगिड़
जूनियर रिसर्च फैलो
राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय

भारत और वियतनाम के संबंध अत्यन्त प्रगाढ़ हो रहे हैं। भारत की 'पूरब की ओर देखो नीति' तथा वियतनाम की 'पश्चिम की ओर देखो नीति' के बीच एक जबरदस्त बहुआयामी सांमजस्य बैठ चुका है क्योंकि दोनों देश सामरिक और आर्थिक दृष्टि से पारस्परिक संबंधों को सुदृढ़ करने के इच्छुक है। वर्ष 2022 में दोनों देशों ने राजनयिक संबंधों के पचास साल पूरे किये हैं।

भारत के रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह ने नवंबर 2022 में वियतनाम के रक्षा मंत्री जनरल फान वान गियांग के साथ मुलाकात कर द्विपक्षीय संबंधों को मजबूती प्रदान की थी। वैसे आपस में जुड़े हितों का संगम दोनों देशों की महत्वपूर्ण बैठक में 2020 में परिलक्षित हुआ था। भारतीय विदेश मंत्री एस. जयशंकर और वियतनाम के विदेश मंत्री फाम बिन्ह मिन्ह ने अगस्त में ऑनलाइन बैठक में आर्थिक और रक्षा संबंधों को नयी ऊर्जा प्रदान करने पर सहमति जताते हुए असैन्य परमाणु ऊर्जा व अंतरिक्ष क्षेत्रों में सहयोग की संभावनाएं तलाशने का संकल्प लिया। जयशंकर ने एक ट्वीट में कहा था कि 'भारत वियतनात संयुक्त आयोग की 17वीं बैठक की समाप्ति हुई। वियतनाम के उप प्रधानमंत्री एवं विदेश मंत्री फाम बिन्ह मिन्ह को सह-अध्यक्षता के लिये धन्यवाद। हमारा समग्र सामरिक गठजोड़ बढ़ रहा है। हिन्द-प्रशांत में शांति, सुरक्षा और समृद्धि सुनिश्चित करना है।' बैठक के बाद भारत के विदेश मंत्रालय ने अपने बयान में कहा कि 'दोनों पक्षों ने भारत वियतनाम समग्र सामरिक गठजोड़ में हाल के घटनाक्रमों की समीक्षा की और व्यापक सम्पर्कों की भविष्य की दिशा के बारे में चर्चा की।' दक्षिण चीन सागर की सम्पूर्ण स्थिति पर भी चर्चा हुई। वियतनाम के भारत में राजदूत फाम सान्ह चाउ भारत के विदेश सचिव हर्षवर्धन श्रृंगला को दक्षिण चीन सागर में बढ़े तनाव के बारे में पहले ही जानकारी दे चुके थे। चीन ने इस क्षेत्र में अपनी सैन्य मौजूदगी को काफी बढ़ा दिया है।

मैत्रीपूर्ण संबंध

भारत और वियतनाम के असाधारण मैत्रीपूर्ण संबंधों में असहमति के लिए कोई जगह नहीं है। किसी प्रकार की असहमति से मुक्त हैं। यह संबंध प्राचीन काल से चले आ रहे हैं जब तटीय भारत के लोग वियतनाम गए थे जिससे वहां सांस्कृतिक, रीति-रिवाज, और भाषाओं का संगम हुआ था। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू तथा वियतनाम के करिश्माई नेता हो ची मिन्हं ने संबंधों की मजबूत नींव रखी जो आज बहुत गहरी हो चुकी है। शीतयुद्ध के दौरान वियतनाम ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन में भारत की भूमिका की बहुत सराहना की और भारत के साथ सहयोग और मित्रता को लगातार बढ़ाया। फ्रांस के विरूद्ध प्रसिद्ध डेन बेन फु की लड़ाई में वियतनाम की जीत का उत्सव मनाने के लिए नेहरू जी 1954 में वियतनाम गए थे, और इसके बाद 1958 में मिन्ह भारत आए थे। उनकी ऐतिहासिक 11-दिवसीय राजकीय यात्रा ने भारत-वियतनाम संबंधों में एक नया अध्याय खोला। भारत ने आधिकारिक रूप से वियतनाम के लोकतांत्रिक गणराज्य का समर्थन किया। नेहरू जी ने हो ची मिन्हं का स्वागत एक महान क्रांतिकारी और महानायक के रूप में किया।

भारत के राष्ट्रपति राजेंद्र प्रसाद ने मिन्ह के निमंत्रण पर 1959 में वियतनाम का दौरा किया जिसमें दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक संबंधों पर जोर दिया गया। साम्राज्यवाद-विरोधी साझी विरासत एवं एशियाईएकता की भावना ने भी द्विपक्षीय संबंधों को सकारात्मक स्वरूप प्रदान किया। भारत ने 1975 में वियतनाम को मोस्ट फेवर्ड नेशन का दर्जा दिया, और इसके साथ ही दोनों देशों ने द्विपक्षीय व्यापारसमझौते पर 1978 में हस्ताक्षर किये। जनवरी 2000 में भारत तत्कालीन रक्षा मंत्री जॉर्ज फर्नांडीज ने वियतनाम को सबसे भरोसेमंद मित्र देश संबोधित करते हुए नए सिरे से राजनीतिक संबंध कायम करने का प्रस्ताव रखा।

वर्तमान सदी में दोनों देश अपनी रणनीतिक साझेदारी को व्यापार और रक्षा संबंधों के बल पर बहुउद्देश्यीय सामरिक साझेदारी में परिवर्तित कर रहे हैं। उच्चस्तरीय वार्ताओं में निरंतर वृद्धि हो रही है। दोनों देशों के शीर्ष नेता एक दूसरे देश की राजकीय यात्राएं कर चुके हैं। सितंबर 2016 की वियतनाम यात्रा पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 500 मिलियन डॉलर की नयी क्रेडिट लाइन की घोषणा की। मई 2019 में भारत के उपराष्ट्रपति वेंकैया नायडू ने अपने वियतनाम दौरे में कहा कि भारत, वियतनाम के साथ विविध क्षेत्रों में सहयोगात्मक संबंध बनाने के लिए प्रतिबद्ध है। नायडू ने यह भी कहा कि 'हमारी साझेदारी समय की कसौटी पर खरी उतरी है। 2000 वर्ष पहले भारतीय भिक्षु और व्यापारी अपने साथ भगवान बुद्ध के शांति और करुणा का संदेश वियतनाम लेकर आए थे।' यह सही है कि महात्मा गांधी एवं हो ची मिन्ह से लेकर नेताओं ने पीढ़ी दर पीढ़ी इस विश्वास को विकसित किया है।

 ISSN: 2321-0443

सामरिक संबंध

एशिया का सामरिक परिदृश्य बदल रहा है। इस क्षेत्र में उथल-पुथल की पृष्ठभूमि में भारत एवं वियतनाम के बीच सामरिक संबंधों ने नई ऊंचाइयां हासिल की हैं। भारत हिंद महासागर में अपनी भूमिका सुरक्षा प्रदाता के रूप में देखता है। नियम-कायदों पर आधारित वैश्विक व्यवस्था तथा नौवहन की स्वतंत्रता की पुरजोर वकालत करते हुए भारत ने समुद्र के कानूनों के अनुसरण में दक्षिण चीन सागर विवाद के समाधान पर जोर दिया है। समुद्री सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए भारत ने सैन्य उपकरण की खरीद के लिए वियतनाम को ऋण प्रदान किया है जिसका उद्देश्य वियतनाम के सैन्य आधारभूत ढांचाको सुदृढ़ बनाना और उसे बाहरी संकट से निपटने के लिए तैयार करना है। वियतनाम को हथियारों की बिक्री पर अमेरिका द्वारा प्रतिबंध हटाने के बाद बहुपक्षीय रक्षा और सुरक्षा सहयोग ढांचे के समन्वय को बढ़ावा देने के लिये भारत सैन्य हार्डवेयर के संयुक्त उत्पादन की दिशा में अग्रसर है। नई दिल्ली और हनाई ने अपने द्विपक्षीय रक्षा सहयोग को आगे बढ़ाते हुए दक्षिण वियतनाम में एक उपग्रह ट्रैकिंग और इमेजिंग केंद्र स्थापित करने की योजना बनाई है। इस प्रणाली से वियतनाम को भारतीय अवलोकन उपग्रहों तक पहुँच प्रदान करने की उम्मीद है जो उसे विवादित दक्षिण चीन सागर का सर्वेक्षण करने में सक्षम बनाएगा। दोनों देश समुद्री सुरक्षा सहयोग का दायरा बढ़कर सामरिक रक्षा वार्ता एवं संयुक्त नौसैनिक अभ्यास पर ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं। भारत और वियतनाम अपने बढ़ते संबंधों को क्षेत्रीय शांति एवं स्थिरता के दृष्टिकोण से अहम मानते हैं जो आसियान, पूर्वी एशिया शिखर बैठक, मेकांग-गंगा सहयोग, एशिया-यूरोप बैठक सहित अनेक क्षेत्रीय मंचों में उनके घनिष्ठ सहयोग में परिलक्षित होता है।

यहां आसियान का विशेष उल्लेख करना होगा। वियतनाम अभी आसियान का अध्यक्ष है, और इस कारण भी वह भारत के लिये महत्वपूर्ण है। अध्यक्षता संभालने के बाद वियतनाम ने आसियान को केन्द्र में रखते हुए अपनी छवि को भी सुधारा है। संयुक्त राष्ट्र संघ के अस्थायी सदस्य के रूप में भी वियतनाम ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रभावी भूमिका अदा की है। वियतनाम लगातार आर्थिक विकास के साथ दक्षिण पूर्व एशिया में एक महत्वपूर्ण देश के रूप में उभरा है। हालाँकि आसियान ने क्षेत्रीय ढ़ाचे के विकास में केंद्रीय योगदान दिया है, लेकिन दक्षिण चीन सागर विवाद पर इसके कुछ सदस्यों के बीच मतभेद ने वियतनाम की विदेश नीति को भी प्रभावित किया है। आसियान के सदस्यों में मतभेद तब से हुआ है जब से चीन ने 'फूट डालो राज करो 'की रणनीति अपनाई है। लेकिन अब वियतनाम अपनी दिशा

तय कर चुका है। नवंबर 2017 में फिलीपींस में 'इंडो-पैसिफिक' अथवा 'हिंद-प्रशांत' परामर्श की आधिकारिक शुरुआत वियतनाम के लिए एक महत्वपूर्ण घटना थी।

भारत उन महत्वपूर्ण देशों में से एक है जो खुले, मुक्त और समावेशी इंडो-पैसिफिक विजन पर जोर दे रहा है। इंडो-पैसिफिक के लिए 'क्वाड' और आसियान की अवधारणाओं के बीच कई समानताएं भी हैं। क्वाड समूह भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया का एक समूह है जो समानता, बहुध्रुवीयता और अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों के आधार पर स्वतंत्र, खुले और समावेशी इंडो-पैसिफिक की स्थापना की आवश्यकता पर बल देता है। यह एक सैन्य गठबंधन नहीं है। पिछले पांच वर्षों में 'क्वाड' के साथ अपने संबंधों को वियतनाम ने मजबूत किया है जो यह संकेत देता है कि वियतनाम की राष्ट्रीय सुरक्षा और विकास में क्वाड देशों की महत्वपूर्‍ण भूमिका रहेगी। क्वाड में यह सहमति बन चुकी है कि आसियान के अन्य देशों को क्वाड में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया जाना चाहिए। वियतनाम का क्वाड समूह में शामिल होना भारत के लिये अत्यधिक वांछनीय है।

जापान के नवनिर्वाचित प्रधान मंत्री योशिहिदे सुगा ने अक्टूबर 2020 में पद संभालने के बाद वियतनाम को अपना पहले गंतव्य के रूप में चुना। उनसे पहले के प्रधानमंत्री शिंजो आबे ने भी अपना पहला विदेशी दौरा वियतनाम का ही किया था। दोनों देशों के बीच रणनीतिक साझेदारी में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। बुनियादी ढांचे के विकास, समुद्री सुरक्षा को बढ़ाने के लिए जहाजों की आपूर्ति और रक्षा सहयोग के माध्यम से जापान, वियतनाम के साथ अपने संबंधों को मजबूत कर रहा है। भारत के लिये जापान और वियतनाम के प्रगाढ़ होते रिश्तेलाभदायक हैं क्योंकि इससे चीन के खिलाफ संतुलन में मदद मिल सकेगी।

चीन की चुनौती

भारत और वियतनाम के निकटतम होते संबंधों में चीन की बहुत बड़ी भूमिका रही है। शीत युद्ध के बाद के काल में चीन ने दक्षिण पूर्व एशिया में एक सक्रिय भूमिका निभाई है। पिछली सदी में फ्रांस और अमेरिका के खिलाफ युद्ध में चीन ने वियतनाम को सहायता प्रदान की थी। लेकिन दोनों देशों के रिश्तों में खटास भी आ गई। वियतनाम के एकीकरण से पहले चीन की सेना ने 1974 में पार्सेल द्वीपों पर कब्जा कर लिया। उसके बाद जनवरी 1978 में वियतनाम ने चीन समर्थित कंबोडिया की खमेर-रूज सरकार पर आक्रमण कर तानाशाही शासकों को अपदस्थ कर दिया, जिससे चीन आग बबूला हो गया।

फरवरी 1979 को चीन ने वियतनाम को सबक सिखाने के लिए उसकी उत्तरी सीमाओं पर हमला बोल दिया लेकिन चीन को इससे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ। जब चीन ने वियतनाम पर हमला किया था तो भारत के तत्कालीन विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी चीन के दौरे पर ही थे। वियतनाम के साथ मित्रता के प्रदर्शन करते हुए दौरा बीच में ही छोड़कर वे वापस भारत आ गए थे।

चीन ने जल्द ही अपनी भूल सुधार कर शांतिपूर्ण तरीके से वियतनाम के साथ सीमा मुद्दों को हल करने पर सहमत जताई। इसके परिणामस्वरूप टोंकीन की खाड़ी में सीमा विवादों को सुलझाया गया। लेकिन पार्सेल और स्प्रैटली द्वीपों के विवाद अनसुलझे ही रह गये। 1988 में एक बार फिर चीन और वियतनाम के बीच नौसैनिक संघर्ष हुआ। उसके बाद दोनों देषों के सुरक्षा बलों ने इन द्वीपों के कुछ हिस्सों पर अपने सैनिक तैनात कर दिये। हालांकि 1991 में वियतनाम-चीन संबंध सामान्य हो गये। उसके बाद दोनों देशों के बीच संबंधों को 2008 में एक व्यापक रणनीतिक भागीदारी में बदल दिया गया था।

एक जैसी राजनीतिक विचारधारा रिश्ते में सुधार का एक महत्वपूर्ण कारक हो सकती है लेकिन यह मतभेदों से निपटने में एक बड़ी बाधा भी है। दक्षिण चीन सागर विवाद सुलझाने के लिए वियतनाम अंतर्राष्ट्रीय कानून के आधार पर लगातार कूटनीतिक और शांतिपूर्ण तरीके अपना रहा है, जबकि चीन ने समुद्र में अपनी उपस्थिति एवं क्षमता बढ़ाई है। 1995 में चीन ने फिलीपींस के दावे वाले एक इलाके पर कब्जा कर लिया। मई 2011 में चीन ने वियतनामी तेल अन्वेषण को नुकसान पहुंचाने का प्रयास किया जिसके परिणामस्वरूप दोनों देशों के बीच तनाव और बढ़ गया। दक्षिण चीन सागर में वियतनाम ने भारत को तेल ब्लॉक आवंटित किया है। लेकिन चीन इस मामले को अनावश्यक रूप से उलझाने की कोशिश कर रहा है।

चीन के राष्ट्रपति शी जिनपिंग के नेतृत्व में चीन की साम्यवादी सरकार बहुत मुखर हो गई है। मई 2014 में बीजिंग ने जब दक्षिण चीन सागर में एक मोबाइल तेल रिग स्थापित किया तो फिलीपींस ने स्थायी मध्यस्थता न्यायालय में इस मामले की शिकायत की। जुलाई 2016 को आये फैसले में यह निष्कर्ष निकाला गया कि नाइन डैश लाइन से गहरे समुद्र में चीन को विशेष अधिकार नहीं मिला है। चीन इस फैसले से परेशान हो गया और उसने यह निर्णय मानने से इंकार कर दिया। भारत और वियतनाम दोनों गहरे समुद्रों में नौवहन की स्वतंत्रता का सम्मान करते हैं।

आर्थिक विकास

आर्थिक दृष्टि से भारत ने एशिया में अपनी एक नई पहचान बनाई है। इसलिये वियतनाम इस बात का इच्छुक है कि भारत के साथ उसके द्विपक्षीय व्यापार में वृद्धि के प्रयास किये जाये। दोनों देश के बीच 2019 में लगभग 14 अरब डॉलर का द्विपक्षीय व्यापार दर्ज किया गया है जिसे 2020 तक 15 अरब डॉलर तक बढ़ाने का लक्ष्य रखा गया है। वियतनाम अनेक भारतीय कंपनियों के लिए एक आकर्षक केन्द्र है जहां भारत की अनेक परियोजनाएं पहले से चल रही हैं। भारतीय निवेश के तहत विविध क्षेत्र शामिल हैं जैसे कि तेल, गैस और खनिज की खोज और प्रसंस्करण, कृषि रसायन, आईटी आदि। वियतनामी कंपनियां भी भारत में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। वियतनाम में किसी भारतीय कंपनी द्वारा सबसे बड़ा एकल निवेश टाटा पावर ने किया है। ऊर्जा सहयोग एक अन्य उदीयमान क्षेत्र है जो दोनों देशों को निकट ला रहा है। वियतनाम में तेल व गैस के क्षेत्र में अन्वेषण में भारत की भागीदारी के खिलाफ चीन यह कहकर कई बार विरोध व्यक्त कर चुका है कि ये इलाका दक्षिण चीन सागर के विवादित हिस्सों में हैं। वियतनाम भी कड़े शब्दों में चीन यह कहकर के विरोध को इस तर्क के साथ अस्वीकार करता रहा है कि ये अंतर्राष्ट्रीय सामुद्रिक क्षेत्र के अंदर आते हैं। वियतनाम के आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए भारत ने अनेक अवसंरचना परियोजनाओं के लिए ऋण प्रदान किया है। ज्ञान के क्षेत्र में अपनी प्रमाणित ताकतों के आधार पर भारत ने क्षमता-संवर्धन की अनेक संस्थाओं के निर्माण में अहम भूमिका निभाई है। इनमें आईटी प्रशिक्षण केंद्रों, अंग्रेजी भाषा प्रशिक्षण केंद्रों तथा उद्यमशीलता विकास संस्थान शामिल हैं। भारत ने भारतीय तकनीकी एवं आर्थिक सहयोग कार्यक्रम के तहत हर साल सैकड़ों वियतनामी छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान की है। आईटी दोनों देशों के बीच ज्ञान आधारित साझेदारी के एक महत्वपूर्ण आधार के रूप में उभरा है। लगभग 35,000 वियतनामी पर्यटक प्रतिवर्ष भारत आते हैं और मुख्य रूप से बौद्ध स्थलों का भ्रमण करते हैं। एक लाख से अधिक भारतीय भी हर साल वियतनाम की यात्रा करते हैं।

भविष्य का मार्ग

भारत और वियतनाम मजबूत सामरिक संबंध विकसित कर रहे हैं। वार्षिक सामरिक रक्षा वार्ताएं निरंतर हो रही हैं जिसमें भारत का प्रतिनिधित्व देश के रक्षा सचिव करते हैं। संबंधों की गहराई को देखते हुए इन वार्ताओं को मंत्रिस्तरीय किया जा चुका है। वियतनाम की रक्षा जरूरतों के आधार पर भारत उसे ड्रोन निगरानी विमान, मानवरहित यान और स्वदेश में निर्मित आर्टिलरी उपकरण प्रदान करने की योजना बना रहा है। भारत उन कुछ देशों में से एक है जिनके साथ वियतनाम ने संयुक्त नौसैनिक अभ्यास आयोजित किया है। वियतनाम, भारत के सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल 'ब्रहमोस' को खरीदने के लिए उत्सुक है। भारत

के दिवंगत रक्षा मंत्री मनोहर पर्रिकर ने जून 2016 में हनोई में अपने वियतनामी समकक्ष जनरल न्गो जुआन लिच के साथ ब्रह्मोस के स्थानांतरण पर व्यापक विचार-विमर्श किया था। इसके अलावा सतह से हवा में मार करने वाली आकाश मिसाइल, जो 25 किमी स्ट्राइक रेंज के साथ लड़ाकू विमानों और हेलीकॉप्टर को लक्ष्य बना सकती है, वियतनाम को बेचने की बातचीत चल रही है। 'ब्रह्मोस' और 'आकाश' वियतनाम को प्रदान कर न केवल चीन का मुकाबला करने में भारत को एक प्रमुख रणनीतिक सहयोगी मिलेगा, बल्कि भारत सरकार की निर्यात नीति के लिये भी यह एक सकारात्मक कदम होगा।

वियतनाम इस बात को लेकर भी उत्सुक है कि मिसाइल तकनीक और परमाणु रिएक्टरों के संचालन में उसके वैज्ञानिकों को प्रशिक्षित करने का अवसर भारत में मिले। वियतनाम, भारत के साथ बाह्य अंतरिक्ष के क्षेत्र में सहयोग की उम्मीद कर रहा है। वियतनाम को सैन्य तौर पर मजबूत करना और उसे सामरिक पहलुओं में सहयोग करना भारत के लिये लाभदायक है क्योंकि इससे चीन के आक्रामक रवैये पर रोक लगेगी।

निष्कर्ष

दक्षिण पूर्व एशिया के केन्द्र में स्थित वियतनाम एक महत्वपूर्ण रणनीतिक स्थान रखता है। वियतनाम के साथ अपने द्विपक्षीय संबंधों को प्रगाढ़ करने से भारत को कई लाभ हैं। मुख्य रूप से वह दक्षिण पूर्व एशियाईक्षेत्र के अन्य देशोंके साथ अपने रिश्तेऔर मजबूत कर सकता है ताकि उनके साथ रणनीतिक साझेदारियां विकसित की जा सकें। सामरिक चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए भारत और वियतनाम को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में घनिष्ठ समन्वय में कार्य करना होगा। चीन के परम्परागत प्रभाव वाले क्षेत्र में अपनी रणनीतिक स्थिति को मजबूत करने के लिये भारत को ओर अधिक प्रतिबद्धता दिखानी होगी। भारत को चीन के प्रति अपनी परम्परागत नीति का परित्याग कर अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करनी होगी। इस कार्य में भारत को वियतनाम का सहयोग अपरिहार्य है। उम्मीद की जानी चाहिये कि भविष्य में वियतनाम के साथ भारत का द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय सहयोग अधिक ऊर्जावान होगा।

References

Pankaj K Jha and Vo Xuan Vinh, *India, Vietnam and the Indo-Pacific: Expanding Horizons*, Taylor & Francis, 2020.

Rezaul H Laskar, “Vietnam ramping up ties with India in defence, tourism,” *Hindustan Times*, November 4, 2019.

S D Pradhan, “Japanese PM’s visit to Vietnam: An assessment,” Times of India, October 19, 2020.

Suranjan Das, Tridib Chakraborti, Subhadeep Bhattacharya, *Indo-Vietnam Relations in the Emerging Global Orderi*, KW Publishers, 2018.

Vo Xuan Vinh, “India in Vietnam’s Foreign Policy,” *Strategic Analysis*, 2019.

Xiaobing Li, *The Dragon in the Jungle: The Chinese Army in the Vietnam War*, Oxford University Press, 2020.

अध्याय 17

बदलते दौर में भारत-अफ्रीका संबंध

प्रो. प्रवीण कुमार झा
राजनीति विज्ञान विभाग
शहीद भगत सिंह महाविद्यालय
दिल्ली

'अफ्रीका हमारी आर्थिक और विदेश नीति की प्राथमिकता में'-

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी (2017)

पिछले दशकों में भारत की अफ्रीका नीति में निराशा व उदासीनता रही। राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर राजनीतिक उदासीनता के कारण दोनों महाद्वीप एक दूसरे के नजदीक नहीं आ पाये। लेकिन हाल के वर्षों में इस स्थिति में बदलाव साफ तौर पर देखा जा सकता है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा सन् 2017 में गुजरात में आयोजित अफ्रीकी विकास बैंक की सालाना बैठक में प्रस्तुत उपरोक्त कथन दोनों के बदलते संबंध को साफ तौर पर रेखांकित करता है। कोविड-19 के दौर में इनके आपसी संबंधों में और मजबूती आई है। भारत ने अफ्रीका के लगभग 25 से अधिक देशों में जीवनरक्षक दवाएँ एवं जरुरी सामग्री उपलब्ध कराया। कोविड 19 के इस कठिन दौर में भारत ने मेडागास्कर, सेशेल्स और कोमोरोस को आवश्यक आपूर्ति की है।

भारत और अफ्रीका के बीच राजनीतिक आत्मीयता और एकजुटता की भावना लगातार देखी जा सकती है। भारत और अफ्रीका के लोगबाग औपनिवेशिक शासन से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए एक दीर्घकालीन संघर्ष में करते रहे। स्वतंत्रता के बाद भारत हालांकि आर्थिक व सामाजिक समस्याओं से जकड़ा हुआ था, बावजूद इसके स्वतंत्र अफ्रीकी देश के विकास को गति देने के प्रति वह लगातार प्रतिबद्ध रहा। आज के इस दौर में भारत अफ्रीका के सहयोग से ही गुटनिरपेक्ष आंदोलन के बुनियादी विषयों को वैश्विक फलक में स्थापित कर पायेगा।

वैश्विक स्तर पर मानव सुरक्षा के संकट विकराल रुप धारण करते जा रहे है। गरीबी, बीमारी, नस्लवाद, पलायन आदि की समस्याओं के संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा उठाये गये सतत् विकास लक्ष्यों (SDG) को अपनाया जाना महत्वपूर्ण पहल है। एसडीजी की सफलता भारत और अफ्रीका जैसे देशों के प्रदर्शन व

प्रगति पर निर्भर करती है। बदलते भारत-अफ्रीका संबंधों को सक्षमता निर्माण, विकास सहयोग और आर्थिक-तकनीक संदर्भ में देखे जाने की जरुरत है।

बहरहाल भारत और अफ्रीका दुनिया में सबसे तेजी से बढ़ती विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ हैं। लोकतांत्रिक समेकन, राजनीतिक स्थिरता, मानवाधिकारों के प्रति प्रतिबद्धता और आर्थिक सुधारों ने अफ्रीका को हमारी वस्तु-सामग्री और सेवाओं के लिए एक महत्वपूर्ण निवेश गंतव्य और बाजार में तब्दील कर चुका है। इसमें प्रमुख रूप से भारत-अफ्रीका व्यापार सम्मेलन, भारत-अफ्रीका हाइड्रोकार्बन सम्मेलन, भारत-अफ्रीका मंच सम्मेलन, अफ्रीकी क्षेत्रीय आर्थिक समुदाय और पैन-अफ्रीकी ई-नेटवर्क परियोजना शामिल है। उदारीकरण के दौर में जब भारत और अफ्रीका दोनों को एक दूसरे की जरुरत है। वैसी स्थिति में भारत-अफ्रीकी संबंध के पुनर्निर्धारण के लिए कुछ मूलभूत आवश्यक शर्ते हैं-

क) आदर्शवाद से व्यवहारिकता की तरफ नीतियों में क्रांतिकारी बदलाव
ख) अफ्रीका की प्रमुख वास्तविकताओं के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण, जैसे ऋण संकट और बिखरती अर्थव्यवस्था
ग) लोकतंत्र और विकास की ओर अफ्रीकी देशों के परिवर्तन को प्रोत्साहित करना
घ) अफ्रीका में बढ़ते चीनी विस्तार का मुकाबला करने के लिए निवेश, वित्त और प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में एक आक्रमक दृष्टिकोण
ङ) राष्ट्रीय हितों की रक्षा को रणनीतिक संबंधों के साथ एकात्मकता प्रदान करना
च) भारत और अफ्रीका के बीच समानता, आपसी सम्मान और आपसी लाभ के एकीकरण और ऐतिहासिक संबंधों को मजबूती प्रदान करना।

दिलचस्प यह है कि देखें तो आर्थिक उदारीकरण के इस दौर में भारत और अफ्रीका के बीच द्विपक्षीय व्यापार 1991 में 967 मिलियन अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 2014-15 में 71.5 बिलियन अमेरिकी डॉलर हो गया। भारत के वैश्विक व्यापार में अफ्रीका का हिस्सा 2002-03 में 5.8 प्रतिशत से बढ़कर 2006-07 में 8 फीसदी हो गया (भसीन 2008)। भारत-अफ्रीका शिखर सम्मेलन 2008 में दिल्ली और अफ्रीकी देशों इकोनॉमिक कम्युनिटी आफ वेस्ट अफ्रीकन स्टेट्स (ECOWAS), अफ्रीकन यूनियन (AU) और साउथ अफ़्रीकान डेवलपमेंट कम्युनिटी (SADC) जैसे प्रमुख क्षेत्रीय मंचों के साथ व्यापक राजनीतिक जुड़ाव के लिए आयोजित किया गया। फोकस- अफ्रीका प्लॉन और मेड इन इंडिया, उप-सहारा अफ्रीका में व्यापार और निवेश प्रोत्साहत के लिए योगदान दे रहे हैं। भारत ने एलडीसी से उत्पादों तक पहुँच के लिए डीटीएफसी की भी घोषणा की। इसके साथ ही साथ दवाओं और फार्मास्युटिकल, रसायन, सूचना प्रद्योगिकी, मशीन उपकरण, चिकित्सा और शल्य चिकित्सा उपकरण, कृषि और खाद्य प्रसंस्करण, प्रशिक्षण और अनुसंधान विकास क्षेत्र में भारत-अफ्रीकी सहयोग के लिए पर्याप्त गुंजाइश प्रदान करते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन के बाद भारत की उर्जा मांगों को 2030 तक दोगुना होने की संभावना है, जो दुनिया का तीसरा बड़ा शुद्ध तेल आयातक है। ओएनसीजी, इंडियन ऑयल, और रिलायंस जैसी

भारतीय कंपनियाँ सूडान, अंगोला, नाइजीरिया और गिनी की खाड़ी में तेल की खोज में लगी हुई है। भारत के प्रसिद्ध ओनएनजीसी ने नाइजीरिया सहित आठ अफ्रीकी देशों में 2 बिलियन अमेरिकी डॉलर का निवेश किया है, इसमें भारत के तेल आयात का 10 फीसदी शामिल है (भारतीय दूतावास समाचार पत्र, 2000)। गौरतलब है कि जैसे जैसे दुनिया अधिक भूमंडलीकृत और परस्पर जुड़ती जा रही है समस्याएँ और जटिलाएँ भी लगातार बढ़ती जा रही है। जलवायु परिवर्तन, अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद, नशीले पदार्थों की तस्करी, वैश्विक सार्वजनिक स्वास्थ्य इत्यादि। पैन-अफ्रीकी ई-नेटवर्क परियोजना को अफ्रीकी देशों के बीच डिजिटल विभाजन को जोड़ने के लिए अदीस अबाबा में 2007 में शुरु किया गया।

कोविड-19 और भारत-अफ्रीका संबंध

कोविड -19 के इस वैश्विक आपदा के दौर में जहाँ भारत स्वयं संघर्ष कर रहा था, फिर भी वह ने अफ्रीका के लगभग 25 से अधिक देशों में जीवनरक्षक दवाएँ एवं जरुरी सामग्री उपलब्ध कराया। भारत द्वारा प्रमुख रुप से हाइड्रोक्सीक्लोरोक्वीन, पैरासिटामोल, इबुप्रोफेन के अलावा एंटीबायोटिक, एंटी-डायबिटिक, एंटी-कैंसर, एंटी अस्थमा प्रदान किया गया है। साथ-साथ इस सूची में इंजेक्शन और थर्मामीटर जैसे अन्य चिकित्सा उपकरण भी शामिल है (लोकेश कुमार 2020)। इसके अलावा, भारत ने अफ्रीकी देशों में इस संकट को कम करने के लिए अफ्रीका के स्वास्थ्य देखभाल कर्मियों को संलग्न करने और प्रशिक्षित करने के लिए स्थानीय अफ्रीकी संस्थानों के साथ शीर्ष भारतीय संस्थानों के साथ साझेदारी करके भी महत्वपूर्ण कार्य किया है। कोविड 19 के इस कठिन दौर में भारत ने मेडागास्कर, सेशेल्स और कोमोरोस को आवश्यक आपूर्ति की है। ऐसा नहीं है कि भारत ने अफ्रीका के प्रति यह चिकित्सा कूटनीति कोविड 19 को ध्यान में रखकर प्रारंभ की है अपितु यह सहयोग भारत और अफ्रीका के बीच साझा की गई ऐतिहासिक सद्भावना पर आधारित है (लोकेश कुमार 2020)। 2008 के बाद से ही, भारत ने इस चिकित्सा कूटनीतिक सहयोग को राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक सहयोग के अलावा प्रारंभ किया था। उसी का परिणाम है कि आज भारत पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीकी देशों मे जेनरिक दवाओं के सबसे बड़े आपूर्तिकर्ताओं में से एक है। जिसमें पेट्रोलियम उत्पादों के साथ इसके कुल निर्यात का चालीसफीसदी योगदान है। इसके अतिरिक्त स्वास्थ्य क्षेत्र में अफ्रीकियों को प्रशिक्षित करने के लिए भारत सरकार ने टेलीमेडिसिन और आईटीईसी कार्यक्रम के माध्यम से प्रशिक्षण तो दिया ही है साथ ही स्थानीय अफ्रीकी संस्थाओं के साथ शीर्ष भारतीय संस्थान, एम्स रायपुर में भागीदारी करके अफ्रीकी देशों की स्वास्थ्य को विकसित करने का भी कार्य किया है।

इस प्रकार कोविड-19 के दौर में भारत और अफ्रीका बहुत नजदीक आये हैं, उन्होंने आपस में मिलकर एकजुटता, प्रतिबद्धता व सामंजस्य के साथ-साथ विश्व बंधुत्व की भावना को भी प्रगाढ़ किया है। विशेष रुप से भारत द्वारा कोविड-19 के दौर में किया गया अफ्रीकी प्रयास अत्यंत प्रशंसनीय और भारतीय विदेश नीति में एक नई उभरते संकेत की ओर साफ इशारा कर रहे हैं।

कोविड-19 के बाद एवं ऊर्जा संसाधन एवं जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में साझेदारी

कोविड 19 के बाद के वैश्विक स्थिति से भारत और अफ्रीका के विकासशील देशों के लिए स्थायी विकास के लक्ष्य को हासिल करना बहुत महत्वपूर्ण है। ख़ासतौर से ऊर्जा के संसाधनों तक पहुंच और उससे भी महत्वपूर्ण है जलवायु परिवर्तन रोकने के लिए उठाए जाने वाले क़दम को इसमें शामिल किया जा सकता है। (राय 2020)। जलवायु परिवर्तन की बढ़ती समस्याओं व उसके अनुरूप दोनों देश के बीच उभरते साझेदारी की आज महती आवश्यकता है। कोविड-19 ने भारत औऱ अफ्रीका को अहसास कराया है कि वो कैसे किसी संकट से निपटतें हुए अपनी अर्थव्यवस्था को स्थिर और विकासशील बना सकते हैं। भारत और अफ्रीका दोनों ही ऊर्जा के संसाधनों से अनजाना है। इन दोनों की अर्थव्यवस्थाओं के कई क्षेत्रों में ऊर्जा के अपर्याप्त संसाधन होने के कारण इस महामारी के व्यापक प्रभाव को लेकर चिंताएं व्यक्त की जा रही हैं। स्थायी संसाधनों से मिलने वाली बिजली, ऐसी महामारी के समय जन सेवाओं से संवाद स्थापित करने के लिए बहुत ज़रूरी है (राय 2020)। क्योंकि इसकी मदद से ही मेडिकल के उपकरण पहुंचाए जा सकते हैं और ये व्यवस्थाएं महामारी के वक़्त पूरी तरह कार्यकुशलता से काम कर सकती हैं। विश्व बैंक के अनुसार अफ्रीका के सब सहारा देशों में क़रीब साठ करोड़ लोग आज भी बिना बिजली के रहते है। वहीं, भारत में क़रीब बीस करोड़ लोग बिजली के बिना रहते हैं। वर्ष 2035 तक भारत की ऊर्जा खपत में प्रति वर्ष चार प्रतिशत से अधिक दर से वृद्धि होने की संभावना है। जो दुनिया की सभी प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में सबसे अधिक है (राय 2020)। दुनिया की कुल ऊर्जा मांग में से भारत का हिस्सा 2016 में केवल पांच प्रतिशत था। जिसके वर्ष 2040 तक बढ़ कर 11 फ़ीसद होने की संभावना है। वहीं, अफ्रीका की ऊर्जा की खपत वर्ष 2030 तक तीन गुना बढ़ जाएगी। जीवाश्म ईंधन के संसाधन जैसे कि कोयले से इस मांग का आधा हिस्सा ही पूरा किया जा सकता है। ऐसे में स्थायी विकास के लिए इन देशों में रिन्यूएबल एनर्जी के संसाधनों का विकास और इस्तेमाल, इनके आर्थिक विकास की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। चूंकि, इस वक़्त वैश्विक जलवायु प्रशासन में भारत की भूमिका बेहद महत्वपूर्ण हो गई है. ऐसे में अफ्रीका और विकासशील विश्व के अन्य देश भारत के उदाहरण का क़रीब से अनुसरण करने की कोशिश करेंगे। वो ये देख रहे हैं कि भारत किस तरह से अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर कोविड-19 के बाद की दुनिया वाले मंचों पर प्रभावशाली ढंग से विकासशील देशों का पक्ष रख रहा है (राय 2020)। फिर चाहे वो जी-20 (G 20) देशों का मंच हो या फिर जलवायु परिवर्तन से जुड़े COP-26, जहां पर भारत जलवायु परिवर्तन की रोकथाम के एजेंडे को आगे बढ़ाने की कोशिश कर रहा है. ताकि स्थायी विकास के मोर्चे पर प्रगति की ओर बढ़ सके। और साथ-साथ आर्थिक प्रगति के रास्ते पर दोबारा लौटा सके।

कुल जमा बदलते जलवायु परिवर्तन और उर्जा जरुरतों के इस विश्व में भारत और अफ्रीका एक दूसरे के नजदीक आयेंगे तभी दक्षिण-दक्षिण संबंधों को भी मजबूती मिलेगी और यह एक नई अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के लक्ष्यों को भी प्राप्त करने में योगदान देगी।

भारत और अफ्रीका के बीच के उभरते रक्षा संबंध

आतंकवाद का मुक़ाबला करने में अफ्रीका की कोशिशों में शामिल है प्रमुख रुप से 1999 का अल्जीयर्स समझौता एवं इसके साथ ही साथ इससे जुड़ा 2004 का महत्वपूर्ण प्रोटोकॉल (मिश्रा व तनेजा 2020) इतना ही नहीं उसके अलगाव 2002 में आतंकवाद को रोकने और उसका मुकाबला करने के लिए अफ्रीकन यूनियन की कार्ययोजना, 2004 में अफ्रीकन सेंटर फॉर द स्टडी एंड रिसर्च ऑन टेररिज्म की स्थापना। आतंक विरोधी इन उपायों ने अफ्रीका के देशों के बीच बढ़े हुए सहयोग के लिए ठोस क़ानूनी और संस्थागत आधार तैयार करने में मदद की है। ऐसा इसलिए क्योंकि ये उपाय आतंकी समूहों की गतिविधियों पर जानकारी के आदान-प्रदान के अलावा रिसर्च और विशेषज्ञता के आदान-प्रदान और अफ्रीका के भीतर और बाहर तकनीकी सहायता जुटाने से जुड़े हैं (वहीं)। लेकिन वित्तीय और मानव संसाधन क्षमता की मजबूरियों के साथ राजनीतिक इच्छाशक्ति में कमी महत्वपूर्ण चुनौती पेश करेंगे। कई उदाहरण ऐसे हैं जब अफ्रीका में आतंकवाद विरोधी पहल को वित्तीय समर्थन नहीं मिला। इसकी एक वजह ये भी है कि आर्थिक, विकास और ग़रीबी उन्मूलन जैसे ज़रूरी मुद्दों के मुक़ाबले अफ्रीका के देशों के लिए आतंकवाद से लड़ाई हमेशा मुख्य प्राथमिकता नहीं है (मिश्रा व तनेजा 2020)। महत्वपूर्ण होने के बावजूद अफ्रीका में आतंक विरोधी कोशिशें बंटी हुई और ख़तरे के स्तर से कम रहती हैं। अफ्रीकन सेंटर फॉर द स्टडी एंड रिसर्च ऑन टेररिज़्म (ACSRT) के मुताबिक़ अगस्त 2020 तक अफ्रीका में 183 आतंकी हमले हुए जिसमें 763 लोगों की मौतें हुईं। डेमोक्रेटिक रिपब्लिक ऑफ कांगो (DRC), सोमालिया, माली, मोज़ाम्बिक और बुर्किना फासो सबसे ज़्यादा प्रभावित देशों में हैं.

पिछले कुछ वर्षों में दो महत्वपूर्ण पहल हुई हैं जो भारत और अफ्रीका के बीच बढ़ते सुरक्षा संबंधों की तरफ़ इशारा करते हैं। पहली पहल है अफ्रीका-इंडीया फील्ड ट्रेनिंग एक्सरसाइज (AFINDEX) की शुरुआत जो मार्च 2019 में पुणे में हुई थी और जिसमें अफ्रीका के 17 देशों की सैन्य टुकड़ियां शामिल हुई थीं। इस अभ्यास का मुख्य उद्देश्य मानवीय सहायता और शांति अभियान की योजना बनाना और उसे संचालित करना था। इसमें संयुक्त राष्ट्र के द्वारा बताए गए काम को करने में सर्वश्रेष्ठ पद्धतियों और नीतिगत स्तर के अभियान को साझा किया गया। दूसरी पहल है पहली बार भारत-अफ्रीका रक्षा मंत्री कॉन्कलेव (IADMC) जो फरवरी 2020 में लखनऊ में आयोजित हुआ। 38 अफ्रीकी देशों के प्रतिनिधियों के अलावा 14 अफ्रीकी देशों के रक्षा मंत्री और सेना प्रमुख इसमें शामिल हुए। इस कार्यक्रम

में लखनऊ घोषणा पत्र को अपनाया गया जो ख़ास तौर पर रक्षा, सैन्य और सुरक्षा सहयोग से जुड़ा है।

- भविष्य को देखते हुए दोनों ही महाद्वीपों को जो प्रमुख मुद्दों पर खास तौर पर ध्यान देने की जरुरत है। उसमें प्रमुख है क) विविधता पर ध्यान दें- अफ्रीकी महाद्वीप के भीतर प्रत्येक राष्ट्र की अपनी विविधता है जिसका पूरा ख्याल रखा जाना चाहिए। ख) सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत करके- आगे का कोई भी संबंध दोनों महाद्वीपों के बीच के सांस्कृतिक तानाबाने के बिना संभव नहीं हो सकता है। ग) आकांक्षापूर्ण अर्थव्यवस्था का लक्ष्य- अफ्रीकी महाद्वीप भी भारतीय अर्थव्यवस्था के हालिया प्रदर्शन से सीख लेते हुए आकांक्षापूर्ण अर्थव्यवस्था के तरफ अपना कदम बढ़ाने की दिशा में अग्रसर होगें। घ) संवृद्धि और विकास- आर्थिक संवृद्धि और औद्योगिक साझेदारी की दिशा में दोनों ही देशों को मिलजुलकर कार्य करने की जरुरत है। ड.) सुरक्षा- दोनों ही देश बदलते सुरक्षात्मक स्थितियों का जायजा लेते हुए एक दूसरे के सुरक्षा के सवालों को गंभीरता से लेगा और भविष्य के रोडमैप तैयार करेगा। च) आपसी संपर्क को बहाल करना- दोनों महाद्वीप के निवासियों के बीच आपसी यात्राओं का दौर शुरु करके पीपुल्स टू पीपुल्स कान्टेक्ट की पूरी मुहिम को मजबूत बनाया जा सकता है।

समग्र रूप से कहा जा सकता है कि भारतीय विदेश नीति विशेष रुप से मोदी सरकार की विदेश नीति में अफ्रीका को विशेष तरजीह और तवज्जोदिया जा है। यही कारण है कि कोविड-19 के दौर में भी भारत ने अफ्रीकी देश के प्रति अपनी प्रतिबद्धता लगातार व्यक्त किया एवं वहाँ कल्याण की बहाली में मुस्तैदी दिखाया। बहरहाल संबंधों को मजबूती देने की दिशा में इतना तो जरूर कहा जाना चाहिए कि भारत को उन मुद्दों की पहचान करनी चाहिए जिन्हें ध्यान में रखकर वह अफ्रीकी देशों के साथ संपर्क और बढ़ा सकता है। इसके साथ ही साथ ऐसे उपाय भी करने होगें जिनसे भारत और अफ्रीकी देशों की साझेदारी और संभावित क्षमताओं का फायदा दोनों मुल्कों को हो।

संदर्भ सूची :

1. अहूजा, अतुल (2000), इंडिया नाइजीरिया स्ट्राइव फॉर स्पेशल टाईज, *द हिंदू*, मार्च 29.
2. भसीन, अवतार सिंह (2009), इंडियाज फोरन रिलेशनंस- 2008 डॉक्यूमेंट्स, दिल्ली : गीतिका पब्लिकर्स.

3. कुमार, लोकेश (2020), कोविड-19 के दौरान अफ्रीकी देशों में भारत की मानवीय एवं चिकित्सकीयसहायता, https://www.orfonline.org/hindi/research/indias-humanitarian-and-medical-assistance-to-african-countries-during-covid-19-68352/
4. कॉन्फेडरेशन ऑफ इंडियन इंड्रस्ट्री न्यूज, प्रेस रिलिजेस, न्यू दिल्ली, 2001.
5. चाइनाज़ अफ्रीका पॉलिसी, एमईए, बीजिंग : जनवरी 2006.
6. डिक्सन, ईयोह (1998). अफ्रीकन पर्कपेक्सिटिव ऑन डेमोक्रेसी एंड डिलेमाज ऑफ पोस्टकोलोनियल इंटेलेक्चुअल्स, अफ्रीका टुडे.
7. डाले, मार्टिन हुज एंड स्टीफन एल. मुयाका (2008). चाईना इन अफ्रीका लेंडिंग पॉलिसी स्पेस एंड गवर्नेंस, नार्विजियन कॉउंसिल फॉर अफ्रीका.
8. एक्जीम बैंक, इंडिया, इंडो-अफ्रीकन स्टेटिक्स. 2009
9. एमबेंसी ऑफ इंडिया (दोहा), मंथली न्यूजलेटर. 2000.
10. मिश्रा व तनेजा (2020). भारत और अफ्रीका के बीच आतंक विरोधी संबंध जरुरी, 22 दिसंबर,https://www.orfonline.org/hindi/research/building-a-case-for-stronger-counter-terrorism-ties-between-india-and-africa/
11. बिजनेंस लाइन (2002). फोकस-अफ्रीका प्लॉन अवेट्स ग्रीन लाइट, जनवरी.
12. राय, अपर्णा (2020). कोविड-19 के बाद भारत-अफ्रीका साझेदारी की एक नई उम्मीद. https://www.orfonline.org/hindi/research/new-hope-for-india-africa-partnership-after-covid-19-68215/
13. गुप्ता, अनिरुद्ध (1997). गवर्नेंस इन अफ्रीका: एन ओवरविव्यू, इन अफ्रीका, इंडिया एंड साउथ-साउथ कॉपरेशन, (संपादित) मैथ्यूज के. एंड वोहरा एन.एन., न्यू दिल्ली: हर-आनंद पब्लिकेशन.
14. www.itec.nic.in
15. http://english.focacsummit.org.
16. http://www.financialexpress.com
17. http://meaindia.nic.in
18. http://www.panafricanenetwork.com
19. मेरिडेथ, मार्टिन (2006). द स्टेट ऑफ अफ्रीका- ए हिस्ट्री ऑफ फिफटी इयर्स ऑफ इंडिपेंडेंस, फ्री प्रेस.
20. मिनिस्ट्री ऑफ एक्सटर्नल अफेयर, इंडिया एनुअल रिपोर्ट:2008-2009, पॉलिसी प्लानिंग एंड रिसर्च डिविजन, न्यू दिल्ली.
21. स्टेफिन, हैनसन (2008). चीन, अफ्रीका एंड ऑयल, सीआरएफ, पब्लिकेसंस.

22. द दोहा कॉन्फ्रेंस: ए भेजिटेबल मिक्स बेग, टेरी, 2008.
23. टाइम्स ऑफ इंडिया, न्यू दिल्ली. 2016.
24. यू.एस. जियोलॉजिकल सर्वे, 2006 मिनरल इयर बुक, यू.एस गवर्नेंस सोर्स, पब्लिक डोमेन.

अध्याय 18

भारत-अफ्रीका संबंध: अतीत और वर्तमान

प्रतीक कुमार सिंह
शोधछात्र
अफ्रीका अध्ययन विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय

डॉ. राघवेन्द्र प्रताप सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय

वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में किसी भी देश की विदेश नीति को निर्धारित करने में सत्तारूढ़ दल की विचारधारा तथा उसके मुखिया के विचारो का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है। साधारण शब्दों में कहा जाए तो वर्तमान समय में किसी भी देश की विदेश नीति में उस देश के राजनीतिक प्रमुख के विचार किसी न किसी रूप में प्रतिबिंबित होते है। विदेश नीति में राष्ट्र प्रमुखों के विचारो की बढ़ती हुई भूमिका का अध्ययन करने के पश्चात ही मोज़ (Mayoz) और शायर (Shyar) ने लिखा है कि किसी भी देश की विदेशनीति का अध्ययन करते समय उस देश के राजप्रमुख के व्यक्तिगत विचारों को दरकिनार नहीं किया जा सकता है। किन्ही दो देशों के मध्य सम्बन्ध कैसे होंगे यह बात दोनों देश के राजनीतिक दलों की विचारधारा एवं राष्ट्रप्रमुख की उस देश के प्रति निज़ी सोच पर भी काफी हद तक निर्भर करती है।

इस लेख में मुख्य रूप से भारत-अफ्रीका के संबंधों का संक्षिप्त इतिहास और मोदी के कार्यकाल के दौरान भारत-अफ्रीका सम्बन्धों में हुए बदलाव का अध्ययन किया गया है। लेख में इस बात की चर्चा भी कि गई है कि कैसे नरेंद्र मोदी सरकार द्वारा उठाए गए कदमों ने आज भारत-अफ्रीका सम्बन्धों को अब तक के सबसे बेहतर स्थिति में ला दिया है।

वर्तमान समय में भारत में सत्तारूढ़दल भारतीय जनता पार्टी के सर्वोच्चनेता एवं देश के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के विचारों का प्रभाव देश की विदेशनीति पर स्पष्टरूप से देखा जा सकता है । 2014 ई. में जब नरेंद्र मोदी ने देश के प्रधानमंत्री के तौर पर राष्ट्र की कमान अपने हाथों में लिया तब से देश की विदेशनीति में व्यापक परिवर्तन देखने को मिलता है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की प्राथमिकता थी की भारत के अपने पड़ोसी देशो के साथ -साथ विभिन्न अफ्रीकी देशों के साथ भी सम्बन्धों को मजबूत बनाया जाए। नरेंद्र मोदी के कार्यकाल में भारतीय विदेश नीति में अफ्रीका का महत्व बढ़ा है और इस दौरान (2014 से 2019 तक) सरकार ने कई ऐसी नीतियाँ अपनाई है जो भारत-अफ्रीका सम्बन्धों को बेहतर बनाने में मददगार साबित हुई है।

हम यदि भारत-अफ्रीका संबंधों की बात करे तो हम पाएंगे की भारत का अफ्रीका के साथ सांस्कृतिक संबंधों का इतिहास लगभग तीन सौ सालों से भी अधिक पुराना है। कई स्रोत इस ओर इशारा करते है कि प्राचीन समय में द्रविड़यंस और बेबीलोनिंस (बेबिलोनिया) के मध्य सम्बन्ध स्थापित थे। कई भारतीय शोधार्थियों

का मानना है की भारत और पूर्वी अफ्रीकी देशों के मध्य समुद्री मार्ग से निरंतर व्यापार एवं आवागमन प्राचीन काल से ही होता रहा है। कई उत्तरी अफ्रीकी देशों में भारतीय सभ्यता की छाप दिखाई देती है जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है की भारत और अफ्रीका के सम्बन्ध प्राचीन समय से ही बहुआयामी थे। आधुनिक युग में भारत तथा संप्रभु अफ्रीकी देशों के मध्य औपचारिक संबंधों की शुरुआत तब होती है जब दोनों देश अपने औपनिवेशिक शासकों से स्वाधीनता प्राप्त करते हैं। इस लेख में भारत-अफ्रीका के सम्बन्धों का अध्ययन चार स्तरों पर किया गया है, पहला- प्राचीन युग में भारत-अफ्रीका सम्बन्ध, दूसरा- औपनिवेशिक युग में भारत-अफ्रीका सम्बन्ध, तीसरा उत्तर-औपनिवेशिक काल में भारत-अफ्रीका सम्बन्ध, एवं चौथा- प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के कार्यकाल में भारत-अफ्रीका सम्बन्ध।

भारत-अफ्रीका के प्राचीन कालीन सम्बन्धों पर बहुत ही कम अध्ययन एवं शोध किया गया है। प्राचीन काल में आकर्षक व्यापार की तलाश में भारतीय व्यापारी अरब सागर के पार नए बाज़ार एवं सम्भावनाओं की तलाश में निरंतर यात्रा करते रहते थे और इसी क्रम में भारतीय व्यापारी अरब सागर से होते हुए अफ्रीका के तटीय इलाकों में पहुंचगए और दोनों क्षेत्रों के मध्य सम्बन्ध निर्माण की प्रक्रिया शुरू हुई। भारतीय महासागरीय व्यापारिक मार्ग की खोज होने के बाद भारतीय व्यापारी नियमित रूप से ज़ंज (ज़ैज़िबार) तट की ओर जाने लगे तथा वहा से जैतून का तेल, सोना, चांदी, तांबा, मसाले, गहने, हाथी दांत आदि ले कर भारत आते थे। इसके बदले में भारतीय व्यापारी अफ्रीका में विशेषकर पूर्वी अफ्रीका में कपडे, गेहूं, ज्वार, बाजरा, धातु के बर्तन, एवं कांच के सामान का निर्यात किया करते थे।

इतिहासकार आर. के. मजूमदार के अनुसार कई ऐतिहासिक साक्ष्य इस ओर भी इशारा करते हैं कि प्राचीन समय में लगभग सातवीं - आठवीं सदी में भारत और बेबीलोन सभ्यता के मध्य अत्यंत घनिष्ठ राजनैतिक तथा आर्थिक सम्बन्ध स्थापित थे। लगभग पांचवी- छठी शताब्दी ईसा पूर्व में गुजरात का सिंध क्षेत्र अफ्रीका से व्यापार के लिए व्यापारिक गतिविधि का मुख्य अड्डा बन चुका था। पूर्वी अफ्रीका के कई देशों में भारतीय मुद्रा तथा माप-तौल प्रणाली का प्रयोग होता था जिसे कि भारत-अफ्रीका संबंधों के प्रारम्भिक स्रोत के तौर पर भी देखा जा सकता है।

अफ्रीकी यात्री मार्को पोलो अपने यात्रा वृतांतों तथा लेखों में गुजराती तथा दक्षिण भारतीय व्यापारियों के अफ्रीका के पूर्वी तट पर आने तथा व्यापार करने का उल्लेख करता है। 1497 मे जब वास्कोडिगामा मालीन्दी में पहुंचता है तो उसने मोजांबिक, किलवा तथा मुंबासा में भारतीय व्यापारियों को देखा और अपने यात्रा वृतांतों में अफ्रीकी देशो में भारतीय व्यापारियों की उपस्थिति का विस्तृत वर्णन भी किया है। अतः मार्को पोलो, वास्कोडिगामा एवं अन्य यात्रियों के वृतांतो तथा लेखों आदि के माध्यम से हमें यह पता चलता है कि प्राचीनकाल में भारत के अफ्रीका से संबंध ना केवल स्थापित थे बल्कि प्रगाढ़ एवं मजबूत भी थे।

प्राचीन काल के बाद जब हम औपनिवेशिक युग में भारत-अफ्रीका सम्बन्धों को देखते है तो १६वीं-१७वीं सदी में औपनिवेशिक युग की शुरुआत ने दोनों देशों के संबंधो में एक परिवर्तन ला दिया है। औपनिवेशिक युग के इस दौर में भारत-अफ्रीका को एक-दूसरे से जोड़ने की मुख्य कड़ी व्यापार ही था परंतु इसका स्वरूप पहले की तुलना में पूर्णतया भिन्न था। अंग्रेजों या यूं कहा जाए कि औपनिवेशिक शासकों का मुख्य जोर दास व्यापार पर और यहाँ के प्राकृतिक संसाधनो का उपयोग सिर्फ और सिर्फ अपने हितों को पूरा करने

पर ही था और उन्होंने दास प्रथा को खूब बढ़ावा भी दिया। इस दौर में तटीय अफ्रीकी देशों से बड़ी मात्रा में दासों को भारत में भेजा जाता था इनमें से अधिकांश दास भारत के गुजरात, आन्ध्रप्रदेश आदि राज्यों में बस गए और बाद में भारतीय संस्कृति का अभिन्न हिस्सा बन गए।

१७वी-१८वी शताब्दी में पुर्तगालियों ने भारत से बड़ी संख्या में लोगों को (भारतीयों) अफ़्रीकी देशों में भेजा। इन लोगों ने विभिन्न अफ़्रीकी देशों में बतौर बैंकर, अकाउंटेंट और कुशल कारीगर आदि के रूप में कार्य किया। अंग्रेजों ने भी अफ्रीकियों को गुलाम के रूप में भारत भेजा और कृषि कार्यों, सड़क, रेलवे एवं प्रशासनिक इमारतों के निर्माण में उनके श्रम का प्रयोग किया। औपनिवेशिक काल के दौरान कई भारतीय सैनिकों को भी अफ्रीका में वहां की लड़ाकू प्रजातियों से लड़ने एवं कानून व्यवस्था को सुचारू रूप से बनाए रखने के लिए नियुक्त किया गया। इस प्रकार हम देखते हैं कि औपनिवेशिक काल के दौरान यूरोपीय शासकों ने अपनी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए भारत एवं अफ्रीका के प्राकृतिक और मानवीय संसाधनों का शोषण किया। इस दौर में कई भारतीय, अफ्रीका गए और कई अफ्रीकी लोग भारत आए और कालांतर में भारतीय और अफ्रीकी संस्कृति का हिस्सा बन गए।

भारत-अफ्रीका के मध्य राजनीतिक संबंधों की पृष्ठभूमि में मोहनदास करमचंद गांधी, स्वतंत्रता सेनानियों एवं प्रवासी भारतीयों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। महात्मा गांधी ने अफ्रीका महाद्वीप के एक देश दक्षिण अफ्रीका से ही सत्याग्रह का प्रयोग कर औपनिवेशिक प्रतिरोध की शुरुआत की तथा बाद में भारत आकर ब्रिटिश शासकों के खिलाफ व्यापक स्तर पर स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत कर उन्हें यहां से भगाया। 1890 के दशक में ब्रिटिश शासकों ने सूडान एवं इथियोपिया में भारतीय सैनिकों को भेजने का फैसला लिया तब भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों ने यह कहते हुए कड़ा विरोध किया की कि भारतीय सैनिक अफ्रीकी स्वतंत्र संग्राम को समर्थन देते है, और वह अपने अफ्रीकी भाइयों के विरुद्ध हथियार नहीं उठाएंगे। इस प्रकार हम देखते हैं कि महात्मा गांधी एवं स्वतंत्रता सेनानियों के प्रयासों ने कई अफ्रीकी नेताओं एवं आम जनमानस को अत्याचारी यूरोपीय औपनिवेशिक शासकों के खिलाफ खड़े होने और अपने अधिकारों एवं स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए लड़ने हेतु प्रेरित किया। बाद के वर्षों में विशेषकर 1964 के दशक में पंडित जवाहरलाल नेहरु ने भारत-अफ्रीका भाईचारे की बात कही और भारत-अफ्रीका के मध्य एक नए युग का सूत्रपात किया जिसका परिणाम यह हुआ कि कई अफ्रीकी देश गुटनिरपेक्ष आंदोलन में शामिल हुए और उन्होंने नेहरू, नासिर और टीटो द्वारा प्रतिपादित नैम (NAM) की संकल्पना को सफल बनाया।

1990 के बाद के दशक में हम देखते हैं कि भारत ने विभिन्न मंचों तथा स्तरों से अफ्रीकी स्वाधीनता संग्राम की वकालत की एवं उनकी स्वतंत्रता का समर्थन भी किया। भारत ने अफ्रीकी देशों को वैचारिक एवं वित्तीय समर्थन प्रदान किया जिसका प्रयोग उन्होंने स्वतंत्रता प्राप्त करने हेतु अपने औपनिवेशिक शासकों के विरुद्ध लड़ाई में किया। 1986 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी के नेतृत्व में स्थापित अफ्रीका कोष इसी दिशा में एक सराहनीय प्रयास था। बीसवीं शताब्दी में भारत-अफ्रीका संबंधों को संस्थागत करने का प्रयास किया गया। इस काल में भारत ने विभिन्न अफ्रीकी देशों के साथ बहुपक्षीय स्तर पर संबंध स्थापित करने का प्रयास किया (Dubey, 1987-88)। अफ्रीका फोरम समिट इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है। मोटे

तौर पर देखा जाए तो 2000 के बाद भारत सरकार ने अफ्रीका से सम्बन्ध स्थापित करने की दिशा में मुख्यतः निम्नलिखित रणनीतियों को अपनाया है-

1 पैन अफ्रीका स्तर पर साझेदारी

2 क्षेत्रीय संगठनों के साथ साझेदारी

3 इब्सा और ब्रिक्स के द्वारा विकासात्मक साझेदारी

4 आपसी संबंधों को बढ़ावा

5 भारतीय समुदायों एवं प्रवासी भारतीयों की भूमिका पर जोर (Dubey, 1989)

परन्तु वर्ष 2000 के बाद से लेकर 2014 तक भारत-अफ्रीका सम्बन्धों में कोई विशेष प्रगति देखने को नहीं मिलती है।इस दौर में सरकारों ने भारतीय विदेशनीति में अफ्रीकी देशों को कोई विशेष तरजीह नहीं दिया। इस दौर में भारत-अफ्रीका सम्बन्ध सिर्फ व्यापरिक गतिविधियों तक ही सीमित होकर रह गए थे। इस काल में चीन एवं अन्य देशों ने अफ्रीका में अपनी मौजूदगी को बढ़ा लिया और भारत के सम्बन्ध काफी सीमितहो गए है। अफ्रीका में चीन तथा अन्य देशों के बढ़ती मौजूदगी के कारण ही वैश्विक संगठनों में भारत को मिलने वाले सहयोग एवं समर्थन में भारी कमी आई।

वर्ष 2000 से 2014 के मध्य भारत-अफ्रीका सम्बन्धों में जो खाई उत्पन्न हुई उसे पाटने का काम 2014 में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने किया। मोदी सरकार के कार्यकाल में हमे भारत-अफ्रीका सम्बन्धों में विशेष प्रगति देखने को मिलती है। प्रधानमंत्री मोदी ने अफ्रीकी देशों के महत्व को समझते हुए भारत की विदेश नीति में अफ्रीका के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूत बनाने पर ज़ोर दिया है। जिसकी झलक हमे 24 जुलाई 2018 को युगांडा की संसद में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के द्वारा दिए गए सम्बोधन में देखने को मिलती है, अपने इस सम्बोधन में उन्होंने कहा था कि "अफ्रीका, भारतीय विदेश नीति की प्राथमिकता में सबसे ऊपर है" (Rej, 2019)। भूतपूर्व सरकारों की तुलना में वर्तमान मोदी सरकार ने अफ्रीका के देशों को संघर्षशील, गरीब एवं पिछड़ा हुआ देश न समझकर इस क्षेत्र को अपार संभावनाओं की भूमि के रूप में देखा, और यह प्रयास किया कि अफ्रीकी देशों के साथ भारत के राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों को नई उचाईयो तक पहुंचाया जा सके और अफ्रीका में भारत की मौजूदगी को बढ़ाया जाए।

भारत जो कि विश्व की बड़ी अर्थव्यवस्था में से एक तथा दक्षिण एशिया की सबसे बड़ी महाशक्ति है का आज (2014 में भारतीय जनता पार्टी के सत्ता में आने के पश्चात) विभिन्न अफ्रीकी देशों के साथ मजबूत सांस्कृतिक एवं आर्थिक सम्बन्ध पुनः स्थापित हुए है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने अफ्रीकी देशों के साथ भारत के सम्बन्धों को और अधिक मजबूत बनाने के लिए आर्थिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान पर ज़ोर दिया और इस भावना को मजबूत बनाया है की प्रत्येक भारतीय में थोड़ा अफ्रीका है और अफ्रीका के प्रत्येक भाग में थोड़ा सा भारत है (Ramchandani, 1990)। संभवतः नरेंद्र मोदी ऐसे पहले भारतीय प्रधानमंत्री है जिन्होंने अफ्रीका के साथ भारत के सम्बन्धों को और अधिक प्रगाढ़ बनाने पर ज़ोर दिया है और अफ्रीका विशेष को ध्यान में रखते हुए भारतीय नीति-निर्माताओं को नीति-निर्माण करने के लिए प्रोत्साहित किया

है। अफ्रीकी देशों के साथ भारत के सम्बन्ध को बेहतर बनाने के लिए नरेंद्र मोदी ने स्वयं व्यक्तिगत स्तर पर कई अफ्रीकी देशों की यात्राएं की और पुनः संवाद स्थापित करने का प्रयास किया।

अफ्रीकी देशों के साथ भारत के सम्बन्धों को मजबूत बनाने के क्रम में 7 जुलाई 2014 को नरेंद्र मोदी ने अफ्रीका का पांच दिवसीय दौरा किया, जहा उन्होंने चार अफ़्रीकी देशों (केन्या, तंजानिया , मोजांबिक, साउथ अफ्रीका) की यात्रा की (DeFreese,2014)। अपने इस पांच दिवसीय दौरे में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी सबसे पहले मोज़ाम्बिक पहुंचे (पिछले 34 वर्षो में मोज़ाम्बिक की यात्रा करने वाले पहले प्रधानमंत्री मोदी है) जहा उनका भव्य स्वागत किया गया, इसके बाद उन्होंने अन्य देशों की यात्राएँ की और कई महत्वपूर्ण समझौतो पर हस्ताक्षर किये।

जुलाई 2018 में काम्पाला में अपने सम्बोधन के दौरान प्रधानमंत्री मोदी ने कहा था कि "अफ्रीका भारत के लिए सर्वोच्च प्राथमिकताओं में से है और नियमित आदान-प्रदान के माध्यम से भारत-अफ्रीका सहयोग की गति को निरंतर बनाए रखा जाएगा" (MEA, 2018)। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने यह भी कहा कि अफ्रीकी वस्तुओ केलिए भारतीय बाजार सदैव खुले रहेंगे और साथ ही भारत ने अफ्रीका में डिजिटल क्रांति लाने के लिए सहयता देने की अपनी प्रतिबद्धता भी जाहिर की। इसके अलावा अफ्रीका की कृषि क्षमता में सुधार, जलवायु परिवर्तन की समस्याओं का मिलकर समाधान निकालने तथा समुद्री मार्ग को सुरक्षित बनाने के लिए प्रयास जारी रखने जैसे मामलों में भी भारत ने अफ़्रीकी देशों के साथ मिलकर काम करने की भारतीय प्रतिबद्धता को दोहराया।

इन सब के अतिरिक्त प्रधानमंत्री मोदी ने तंज़ानिया के साथ महत्वपूर्ण संविदा कृषि के समझौते को सहमति दी, इस समझौते के कारण भारत अपने खाद्य सुरक्षा एवं दाल की आपूर्ति को सुनिश्चित कर पाया है। अपनी इस यात्रा के दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने भारत के आर्थिक तथा सुरक्षा हितों को ध्यान में रखते हुए मॉरीशस के साथ, पाँच समझौतों पर सहमति दी, जिसमें भारत-मॉरीशस कर संधि और कृषि उत्पादों पर एक व्यापार समझौता शामिल है। तीसरी इंडिया-अफ्रीका फोरम समिट 2015 के दौरान प्रधानमंत्री मोदी ने अफ्रीका को 100 मिलियन डॉलर की भारतीय विकास निधि के साथ 10 बिलियन डॉलर की क्रेडिट और $ 500 मिलियन की अनुदान राशि के अलावा 50 लाख छात्रवृत्ति की घोषणा की। मोदी सरकार द्वारा की गई इन घोषणाओं ने अफ्रीकी देशों के साथ भारतीय जुड़ाव के नए दृष्टिकोण को चिन्हित किया (MEA, 2019)। इसने न केवल अफ्रीकी देशों में परियोजनाओं को वित्तपोषित करने में मदद की, बल्कि क्षमता निर्माण और शिक्षा में भी भारतीय योगदान को प्रदर्शित किया है।

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी द्वारा अफ्रीका महाद्वीप के देशों को अपनी विदेश नीति में विशेष स्थान देने के पीछे मुख्य उद्देश्य हिंद महासागर क्षेत्र में भारत की स्थिति को मजबूत बनाना, अफ्रीका के साथ अपने हितों को सुरक्षित रखना तथा अफ्रीका के विकास को सुनिश्चित करना भी है। 2014 के बाद से मोदी सरकार ने अफ्रीका के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूत बनाने की दिशा में कई अन्य महत्वपूर्ण कदम उठाए है। 2014 से लेकर अब तक, राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, और प्रधानमंत्री के स्तर की लगभग (विभिन्न अफ्रीकी देशों की) 29 यात्राएँ हुई हैं। वही दूसरी ओर अफ्रीका से पिछले चार से छह वर्षों में 32 से अधिक राष्ट्राध्यक्षों या सरकारी प्रतिनिधियों ने भारत का दौरा किया है। यहां तक कि अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (आईएसए) में,

आईएसए फ्रेमवर्क समझौते पर हस्ताक्षर की पुष्टि करने वाले 48 देशों में से, 25 देश अफ्रीका से हैं (ISA, 2018)। इन उच्च-स्तरीय यात्राओं की सफलता को देखते हुए। भारत सरकार ने 2018 से 2021, चार वर्षों की अवधि में अफ्रीका में कई योजनाओ को स्वीकृति भी दी है।

अफ्रीका में चीन के बढ़ते दखल के कारण आज भारतीय हितों को सुरक्षित रखना बहुत ही महत्वपूर्ण है। भारत में प्रधानमंत्री का पद सँभालने के बाद से ही नरेंद्र मोदी की रुचि भारत-अफ्रीका के व्यापार संबंधों और इस क्षेत्र (Africa) के साथ सुरक्षा सहयोग को गहरा करने पर रही है। मोदी सरकार द्वारा उठाए गए कदमों (जिनकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है) एवं अपनाई गई नीतियों का ही परिणाम है की इंडो-अफ्रीकी व्यापार 25 साल पहले जो सिर्फ 1 बिलियन डॉलर का था, वर्तमान में वह द्विपक्षीय व्यापार $60 बिलियन से अधिक मूल्य का हो गया है। मोदी सरकार को उम्मीद है कि दोनों देशों के मध्य 2023 तक $150 बिलियन का व्यापार होने लगेगा।

वर्तमान सरकार द्वारा आयोजित किये गए 3 तीन शिखर सम्मेलन, व्यापार में वृद्धि और सुरक्षा पर नव-सहमति सहयोग भारत की विदेश नीति में अफ्रीकी क्षेत्र के बढ़ते महत्व को प्रदर्शित करता है। आज भारत के कई अफ्रीकी देशों के साथ सम्बन्ध पहले से बेहतर हुए है जिसका सीधा असर भारत-अफ्रीका व्यापारिक सम्बन्धों पर पड़ा है। भारत, अफ्रीका का तीसरा सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है, 2017-18 में दोनों के मध्य होना वाला व्यापर $ 62.6 बिलियन तक पहुंच गया जो कि कुल अफ्रीकी व्यापार का 6.4 प्रतिशत है। वर्तमान युग में भारत-अफ्रीका के मजबूत होते सम्बन्धों का अन्य परिणाम यह हुआ की आज कई अफ्रीकी देश संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में भारत की स्थाई सदस्यता का समर्थन कर रहे है. दक्षिण अफ्रीका जैसा विकसित अफ्रीकी देश भारत को नाभिकीय सप्लायर ग्रुप की सदस्यता दिलाने का समर्थन करता है।

नरेंद्र मोदी सरकार ने अपनी विदेश नीति में व्यापक परिवर्तन लाते हुए अफ्रीकी देशों के साथ संबंधों को मजबूत बनाने, व्यापार में वृद्धि करने, कृषि भूमि तक पहुंच प्राप्त कर अपनी खाद्य (food) सुरक्षा को सुनिश्चित करने, समुद्री सुरक्षा पर सहयोग बढ़ाने तथा इस क्षेत्र में चीन के प्रभाव को कम करने जैसे उद्देश्य पर काम कर रही है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी अपनी नीतियों के माध्यम से अफ्रीकी देशों के साथ सम्बन्ध सुधार के जो प्रयास किये है उसे दक्षिण-दक्षिण सहयोग की भावना को मजबूत बनाने और पश्चिमी देशो पर विकासशील देशों की निर्भरता को कम करने की दिशा में किये जा रहे प्रयासों के रूप में भी देखा जाना चाहिए। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का यह मानना है की वर्तमान वैश्विक राजनीति में प्रत्येक राष्ट्र की संप्रभुता का सम्मान होना चाहिए एवं विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संगठनों में सभी राष्ट्रों की समान भागीदारी होनी चाहिए, अपने इन्ही राजनैतिक आदर्शों को भारतीय विदेश नीति का आधार बना कर आज प्रधानमंत्री मोदी भारत-अफ्रीका के सम्बन्धो को नई ऊंचाइयों तक पहुँचाने का सफल प्रयास कर रहे है।

आज अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में भारत की प्रतिष्ठा में वृद्धि हुई है एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की छवि एक जिम्मेदार, शक्तिशाली , मददगार , आत्मनिर्भर , तथा सही का साथ देने वाले राष्ट्र के रूप में बनी है। आज कई अफ्रीकी देश भी इस बात को भली-भांति जानते है कि वर्तमान समय में भारत ही एकमात्र ऐसा देश है जो अफ्रीका पर बिना कोई शर्त थोपते हुए निःस्वार्थ भाव से अफ्रीकी देशों की मदद कर सकता

है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की विश्वसनीयता एवं लोकप्रियता का ही यह प्रमाण है कि अपने पहले कार्यकाल में (2014 में प्रधानमंत्री चुने जाने के 1 साल बाद) भारत सरकार ने अक्टूबर 2015 में चौथे भारत-अफ्रीका मंच शिखर सम्मेलन की मेजबानी की स्वतंत्र भारत के इतिहास में ऐसा पहली बार था, नई दिल्ली में 40 अफ्रीकी प्रमुखों को एक साथ एक मंच पर देखा गया। नरेंद्र मोदी सरकार ने पिछले कुछ वर्षों में भारत-अफ्रीका सम्बन्धों को मजबूत बनाने के लिए कई अन्य महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं, जिसमें 2015 में अफ्रीकी राज्यों के लिए 10 बिलियन अमरीकी डॉलर का ऋण देना शामिल है। अफ्रीकी देशों के साथ सम्बन्धों को मजबूत बनाने के लिए डॉलर कूटनीति के अतिरिक्त कई वैकल्पिक तरीकों का सहारा भी लिया है जैसे, भारत ने 8 अफ्रीकी देशों के व्यापारियों को प्रशिक्षित करने और अपने देशों में रोजगार सृजित करने के लिए 'कौशल कूटनीति 'कार्यक्रम शुरू किया है। इसके अतिरिक्त भारत ने अफ्रीकी देशों के साथ डिजिटल कनेक्टिविटी बढ़ाने के लिए ई-विद्या भारती" (E-Vidyabharti)और "ई-आरोग्य भारती" टेली-एजुकेशन और टेली-मेडिसिन नेटवर्क का प्रयोग प्रारम्भ किया है। अतः इस प्रकार हम देखते है की 2014 के बाद के वर्षो में भारतीय विदेश नीति में व्यापक बदलाव आया है जिसका मुख्य उद्देश्य अफ्रीकी देशों के साथ भारत के व्यापारिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक सम्बन्धों को मजबूत बनाना है।

सन्दर्भसूची :

Asiedu, E. & LIEN, D. 2011. Democracy, Foreign Direct Investment and Natural Resources. Journal of International Economics, 84, 99-111.

Ayson, R & Taylor, B. 2008. Carrying China's Torch. Survival: Global Politics and Strategy, 50 (4), 5-10.

Bräutigam, D. 2011. Aid with Chinese characteristics': Chinese foreign aid and development finance meet the OECED- DAC Aid regime. Journal of International Development, 23 (5),752-76.

DeFreese. M. 2016. The Modi Doctrine and India-Africa Ties. The Diplomat, Retrived From https://thediplomat.com/2016/07/the-modi-doctrine-and-india-africa-ties/.

Dubey, A.k.1989. Indo-Africa Relations in the Post-Nehru Era: 1965-85. Delhi: Kalinga Publications.

Dubey, Ajay K., 1987-88. Indo-African Economic Relations (1965–85): A Case of South-South Interaction, Africa Quarterly 27(3-4). 49-79.

Edwards, L., and Jenkins, R., 2015. The Import of Chinese penetration on the South African Manufacturing Sector, Journal of Development Studies, 51(4).

Edinger, H, Herman, H &Jansson, J (eds). 2008. New impulses from the south: China's engagement of Africa. May 2008. Centre for Chinese Studies (CCS). Stellenbosch. Stellenbosch University.

ISA Prospective Member Countries, (2018), International Solar Alliance.

MEA. 2019. India-Uganda Relations, Retrived From http://www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/India-Uganda_2019.pdf.

MEA, 2019, Remarks by External Affairs Minister at the Africa Day Celebrations at Vibrant Gujarat 2019, Retrived from https://www.mea.gov.in/Speeches.

Nolan, P. 2014. Is China Buying the World? The World Financial Review. Retrived from http://www.worldfinancialreview.com/?p=3836. (Accessed 15 February 2017).

Ramchandani, R.R.. 1990. .India: Africa Relations Vol. II. Delhi: Kalinga Publications

Ramchandani, R.R., 1981. Aspects of India-Africa Economic Relations: A Positive Approach, Man and Development (Chandigarh) 3(4). 191-201.

Rej. A. 2019. Narendra Modis's re-election as Indias's Prime Minister: Implication for Africa, AfricaPortal, Retrived From https://www.africaportal.org/features/narendra-modis-re-election-indias-prime-minister-implications-africa/.

Vohra, N.N. & Mathews, K. Ed. 1997. Africa, India and South-South Cooperation. New Delhi: Haranand Publication.

Taylor, I & Williams, P. D. 2006. Understanding South Africa's multilateralism in Lee. D et al (eds). 2006. The new multilateralism in South African Diplomacy. Basingstoke: Palgrave Macmillan.

Wang Yong. 2012. South Africa's Role in the BRICS and the G-20: China's View. Occasional Paper, No 127. South African Institute of International Affairs, Johannesburg.

अध्याय 19

तालिबान 2.0 शासन में भारत-अफ़ग़ान संबंधों का भविष्य

डॉ. मोहन लाल जाखड़
सहायक प्रोफ़ेसर
डॉ बी.आर. अंबेडकर पी.जी. महाविद्यालय, जयपुर

अफ़ग़ानिस्तान दक्षिण एशिया में भारत का एक महत्वपूर्ण पड़ोसी देश है। दोनों देशों के बीच पारम्परिक रूप से मधुर और दोस्ताना संबंध रहे हैं। 1980 के दशक में भारत-अफ़ग़ान संबंधों को एक नई पहचान मिली, लेकिन 1990 के अफ़ग़ान गृहयुद्ध और तालिबान के सत्ता में आने के बाद संबंध कमजोर होते चले गए। इन संबंधों को एक बार फिर तब मजबूती मिली, जब 2001 में तालिबान सत्ता से बाहर हो गया और उसके बाद अफ़ग़ानिस्तान के लिये भारत मानवीय और पुनर्निर्माण सहायता का सबसे बड़ा क्षेत्रीय प्रदाता बन गया है।

अफ़ग़ानिस्तान में भारत के सहयोग से संचालित द्विपक्षीय सहायता कार्यक्रम देशभर में फैले हुए हैं, जिसमें 3 बिलियन डॉलर से अधिक का निवेश करके अफ़ग़ानिस्तान के बुनियादी ढाँचे शिक्षा, क्षमता निर्माण और संस्थानों का पुनर्निर्माण किया है। इसके अलावा अफ़ग़ानिस्तान के प्राकृतिक संसाधनों में निवेश को प्रोत्साहित करना; अफ़ग़ानिस्तान के निर्यात के लिए भारतीय बाजार में शुल्क मुक्त पहुँच प्रदान करना; अफ़ग़ान के नेतृत्व वाली, अफ़ग़ान के स्वामित्व वाली, अफ़ग़ान नियंत्रित, शांति और सुलह की समावेशी प्रक्रिया के लिए राजनीतिक समर्थन करता है और अंतर्राष्ट्रीय समुदाय से अफ़ग़ानिस्तान में मानवीय सहायता के लिए दीर्घकालिक प्रतिबद्धता की वकालत करता है।[1]

नियमित उच्च-स्तरीय आदान-प्रदान भारत-अफ़ग़ानिस्तान संबंधों की विशेषता रही है। दोनों देशों के नेताओं ने द्विपक्षीय यात्राओं के साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों के दौरान एक दूसरे से भेंट की। भारत के विदेश मंत्री ने अप्रैल और अगस्त, 2020 में अफ़ग़ानिस्तान के विदेश मंत्री के साथ द्विपक्षीय मुद्दों पर चर्चा की।[2] अफ़ग़ानिस्तान में राष्ट्रीय सुलह के लिए उच्च परिषद् के अध्यक्ष, अब्दुल्ला ने अक्टूबर, 2020 में भारत का दौरा किया।[3] अफ़ग़ानिस्तान सुलह के लिए अमेरिका के विशेष प्रतिनिधि राजदूत जालमय खलीलजाद ने मई और

सितम्बर, 2020 में भारत का दौरा किया।[4] भारत के विदेश मंत्री की 12 सितम्बर, 2020 को दोहा में अंतर-अफ़ग़ान शांति वार्ता में उपस्थिति यह इंगित करती है, कि भारत ने अफ़ग़ानिस्तान में जमीनी हकीकत एवं बदलते सत्ता समीकरणों को देखते हुए अपनी रणनीति बदल दी है।[5] उल्लेखनीय है, कि संयुक्त राज्य अमेरिका ने तालिबान के साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर किए जिसने अफ़ग़ानिस्तान से अमेरिकी सैनिकों की पूर्ण वापसी का मार्ग प्रशस्त किया और अफ़ग़ानिस्तान में 18 वर्ष के युद्ध को समाप्त करने का फैसला लिया। यह समझौता अफ़ग़ानिस्तान की शांति-प्रक्रिया के लिए व्यापक और स्थायी युद्ध विराम तथा भविष्य के लिये एक राजनीतिक रोड़मैप देने का एक बुनियादी कदम था। इस समझौते के बाद तालिबान ने अंतर-अफ़ग़ान वार्ता में कोई ज्यादा रूचि न दिखाकर उसने हिंसा और काबुल की तरफ बढ़ने का फैसला किया। हालाँकि, वह अन्तर्राष्ट्रीय दबाव के कारण अपनी शर्तों के आधार पर बीच-बीच में अंतर-अफ़ग़ान वार्ता में शामिल होते, लेकिन उनका उद्देश्य साफ था, अफ़ग़ानिस्तान पर शासन करना न कि शासन प्रक्रिया में सहभागिता करना। इस समझौते के 17 महीनों के भीतर ही तालिबान ने काबुल की सत्ता पर कब्जा कर लिया। इसका नतीजा ये हुआ, कि अमेरिका सहित दुनिया के तमाम देशों (चीन, रूस और पाकिस्तान को छोड़कर) ने अपने दूतावासों से कर्मचारियों और नागरिकों को आनन-फानन में निकाल लिया और अमेरिका के रहते ही तालिबान ने काबुल पर नियंत्रण कर लिया।[6] अमेरिका ने अफ़ग़ानिस्तान में तालिबान के साथ राजनीतिक समाधान के लिए दोहा में जिस वार्ता की शुरूआत की थी, उसका अब अंत हो गया।

अफ़ग़ानिस्तान पर तालिबान का कब्जा होने के बाद दुनिया के कई देशों के सामने असमंजस की स्थिति बन गई है, चिंता भारत की भी बढ़ी है। अफ़ग़ानिस्तान में भारत की आर्थिक मदद से 400 से ज्यादा प्रोजेक्ट में तीन बिलियन डॉलर के निवेश से ये परियोजनाएँ तैयार की गई हैं। भारत के प्रोजेक्ट बाकि देशों के प्रोजेक्ट की तरह नहीं हैं जहाँ पर भारत निवेश करें और वहाँ से कुछ लाभ की उम्मीद हो, यह दूसरे तरह के प्रोजेक्ट है। ये प्रोजेक्ट हैं, राष्ट्रीय-निर्माण के। वहाँ पर एक लम्बी लड़ाई और संघर्ष के बाद जैसे हालात बने थे उसको लेकर भारत ने हमेशा कहा है, कि वह वहाँ पर सेनाएं नहीं भेजेगा, लेकिन आधारभूत संरचना के क्षेत्र में कार्य करेगा जिससे वहाँ के लोगों का जीवन आसान हो फिर चाहे वो डैम हो जिसके जरिये लाखों लोगों को पेयजल की सुविधा मिले, एनर्जी प्रोजेक्ट, सड़कें, अस्पताल, शिक्षा इन सब में भारत ने पैसे खर्च करके बनाया है और अफ़ग़ानिस्तान को सौंप दिया।[7] अब तालिबान के आने के बाद इन प्रोजेक्टस का क्या होगा? मेरा मानना है, कि वहाँ कोई भी सरकार हो चाहे वह कितनी ही चरमपंथी क्यों न हो आखिर उसकी भी तो अपने राष्ट्र के

संसाधनों को लेकर कुछ तो जिम्मेदारी होगी। अब ये प्रोजेक्ट अफ़ग़ानिस्तान की धरोहर हैं, वे अब इनका किस तरह उपयोग करते है अब इसका बेहतर निर्णय वे स्वयं करेंगे।

भारत का उद्देश्य इन प्रोजेक्ट के माध्यम से लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना, क्षमता निर्माण कार्यक्रमों के जरिए लोगों को सक्षम बनाना, भारत-अफ़ग़ान लोगों के बीच जन से जन संपर्क (people to people contact) बढ़ाना ताकि आपसी संबंध मधुर रहें। वैसे भी अफ़ग़ानिस्तान के आम लोगों का रवैया भारत के प्रति बहुत अच्छा है और तालिबान में भी कुछ समूह के लोग भारत के साथ अच्छे संबंधों के पक्ष में हैं, क्योंकि पिछले 20 वर्षों में भारत ने अफ़ग़ानिस्तान में अपनी भूमिका निष्पक्ष एवं बिना किसी समूह या सरकार का समर्थन करते हुए अफ़ग़ानिस्तान के लोगों को ध्यान में रखते हुए पुनर्निर्माण कार्यों के माध्यम से अच्छी बनाई है, इसका लाभ भारत को आने वाले समय में आवश्यक मिलेगा।[8]

भारत के प्रमुख पुनर्निर्माण कार्य

अफ़ग़ानिस्तान में भारत के योगदान को हमेशा से ही अफ़ग़ानी जनता ने स्वीकारा और सराहा है। 2001 के बाद से, भारत ने अफ़ग़ानिस्तान में 3 बिलियन डॉलर से ज्यादा का निवेश किया है। भारत ने अफ़ग़ानी समाज, राजनीतिक व्यवस्था, अर्थव्यवस्था के लगभग हर क्षेत्र और सभी 34 प्रांतों में 400 से अधिक लघु विकास परियोजनाओं के माध्यम से मदद की है। भारत हमेशा से ही इस बात का पक्षधर रहा है, कि अफ़ग़ानिस्तान में शांति-प्रक्रिया अफ़ग़ानी नेतृत्व, अफ़ग़ानी स्वामित्व और अफ़ग़ानी- नियंत्रण वाली होनी चाहिए। दोनों देशों के बीच गर्मजोशी से भरी दोस्ती की इस विरासत को आगे बढ़ाते हुए भारत के विदेश मंत्री ने जिनेवा सम्मेलन में एक बार फिर से अफ़ग़ानिस्तान के लिए 286 मिलियन डॉलर की आर्थिक सहायता का वचन दिया।[9] इस मदद का इस्तेमाल शहतूत डैम के निर्माण में किया जाएगा जिससे काबुल के 20 लाख लोगों को पीने का शुद्ध पानी मिल सकेगा। इतना ही नहीं, भारत ने अफ़ग़ानिस्तान के सभी 34 प्रांतों में 150 उच्च प्रभाव वाली सामुदायिक विकास परियोजनाओं के लिए अलग से 80 मिलियन डॉलर की मदद का भी ऐलान किया है। इसके साथ-साथ भारत ने रणनीतिक सहयोग समझौते के तहत अफ़ग़ानिस्तान में चल रहे मौजूदा कार्यक्रमों के लिए भी संसाधन मुहैया कराने की घोषणा की है। इसमें भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद् द्वारा अफ़ग़ानी छात्रों को मुहैया कराई गई सालाना 2500 छात्रवृत्तियां भी शामिल हैं। इस प्रकार के कदमों से अफ़ग़ानिस्तान में शांति के लिए घरेलू प्रयासों में मदद मिलेगी, जिससे देश की महत्वपूर्ण संस्थाओं को मजबूत किया जा सकेगा और अफ़ग़ानिस्तान में आवश्यक सेवाओं के वितरण में सुधार आएगा।[10] हमारे लिए

 ISSN: 2321-0443

महत्वूपर्ण ये है, कि हमने जिस मेहनत से पिछले दो दशकों में इस मॉडल का निर्माण किया है, वे चाहे अफ़ग़ानिस्तान में तालिबान सरकार कितना भी प्रयास कर लें इस मॉडल से मुंह नहीं मोड सकती है। वहीं, भारत एक महत्वपूर्ण हितधारक के रूप में, एक शांतिपूर्ण, समृद्ध, संप्रभु, लोकतांत्रिक और एकजुट अफ़ग़ानिस्तान के लिए विश्व समुदाय के साथ काम कर रहा है। भारत अफ़ग़ानिस्तान के पाँच प्रमुख स्तम्भों में विकास सहयोग कर रहा है जो निम्न प्रकार से है:-

(1) आधारभूत ढ़ाँचा परियोजनाएँ;
(2) मानव संसाधन विकास और क्षमता निर्माण;
(3) मानवीय सहायता;
(4) उच्च प्रभाव सामुदायिक विकास परियोजनाएँ;
(5) सड़क एवं हवाई संपर्क।
(1) आधारभूत ढ़ाँचा परियोजनाएँ

अफ़ग़ानिस्तान संसद भवन - केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग द्वारा 90 मिलियन डॉलर की लागत से काबुल में संसद भवन का निर्माण जो बहुलता तथा लोकतंत्र में दोनों देशों की समान वचनबद्धता के प्रतीक के रूप में देखा गया है। प्रधानमंत्री ने 25 दिसम्बर, 2015 को काबुल यात्रा के दौरान राष्ट्रपति गनी के साथ भारत के सहयोग से निर्मित संसद भवन राष्ट्र को समर्पित किया।[11]

सलमा बांध - भारत द्वारा हेरात प्रान्त में हरीरुद नदी पर सलमा बांध का निर्माण किया है। यह बांध अफ़ग़ानिस्तान के सबसे बड़े बांधों में से एक है। चिश्ते-ए-शरीफ जिले के हेरात प्रान्त से 160 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। इस बांध की जल भण्डारण क्षमता 640 मिलियन क्यूबिक मीटर है; जो हजारों परिवारों को पानी, सिंचाई और बिजली प्रदान करता है।

जरांज-डेलाराम हाईवे - भारत द्वारा निमरोज प्रान्त में जरांज से डेलाराम तक 218 कि.मी. लम्बे राजमार्ग का निर्माण सीमा सड़क संगठन ने 2009 में पूर्ण करके अफ़ग़ानिस्तान को सौंप दिया। यह राजमार्ग डेलाराम जिले को ईरान की सीमा के पास जरांज से जोड़ता है। इस राजमार्ग का निर्माण हो जाने से भारत को अफ़ग़ानिस्तान में ईरान के रास्ते ट्रांजिट रूट मिल गया जिससे अफ़ग़ानिस्तान और मध्य एशिया के देशों में आसानी से पहुँच सकता है। इससे इन देशों के बीच द्विपक्षीय व्यापार को बढ़ावा मिलेगा।[12]

220 के.वी. डबल सर्किट ट्रांसमिशन लाइन - उज्बेकिस्तान से काबुल तक बिजली लाने के लिए 111 मिलियन डॉलर की लागत से पुल-ए-खुमरी से काबुल तक 220 के.वी. डबल सर्किट ट्रांसमिशन लाइन और चिमताला में 220/10/20 कि.वा. सब-स्टेशन का निर्माण कार्य किया गया।[13]

(2) मानव संसाधन विकास और क्षमता निर्माण

भारत ने अफ़ग़ानिस्तान में क्षमता निर्माण कार्यों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिसके तहत अध्यापकों, राजनयिकों, पत्रकारों, न्यायिक अधिकारियों, महिला उद्यमियों, सरकारी अधिकारियों, सुरक्षा बलों, एयर लाइन्स के कार्मिकों और डाक्टरों को प्रशिक्षित करने के कार्य में मदद की है। भारत ने अफ़ग़ानिस्तान में 200 से अधिक सार्वजनिक और निजी स्कूलों का निर्माण किया, 2500 से अधिक छात्रों को छात्रवृत्ति दी हैं, जबकि 17,000 से अधिक अफ़ग़ान छात्र भारत में अध्ययनरत है। अफ़ग़ानिस्तान के गाँवों में अफ़ग़ानी महिला संगठनों को अब तक हजारों सिलाई मशीनों की आपूर्ति करना। अफ़ग़ान नागरिकों के लिए विशेष छात्रवृत्ति योजना और कोविड-19 के दौरान ऑनलाइन अल्पकालिक क्षमता निर्माण पाठ्यक्रम संचालित करना।

(3) मानवीय सहायता

मानवीय सहायता के रूप में भारत ने अफ़ग़ानिस्तान को समय पर खाद्यानों की आपूर्ति की है। अभी तक कई मीट्रिक टन गेहूँ की आपूर्ति भारत अफ़ग़ानिस्तान को मानवीय सहायता के रूप में भेज चुका है। विश्व खाद्य कार्यक्रम के माध्यम से प्रोटीन युक्त बिस्कुट बाँटने की पहल स्कूल आहार कार्यक्रम में चल रही है। इस कार्यक्रम में अफ़ग़ानिस्तान के सभी प्रान्तों के करीब 5 मिलियन स्कूली बच्चे शामिल है। भारत ने कोविड़-19 महामारी के समय अफ़ग़ानिस्तान की खाद्य सुरक्षा को मजबूत करने के लिए चाबहार पोर्ट के माध्यम से अफ़ग़ानिस्तान को 75,000 मीट्रिक टन गेहूँ की मानवीय सहायता भेजी।

तालिबान के सत्ता में आने के बाद खराब स्वास्थ्य व्यवस्था से जूझ रहे अफ़ग़ानिस्तान को भारत ने मानवीय सहायता के रूप में स्वास्थ्य सामग्री की पहली खेप अशरफ गनी के सत्ता से बेदखल होने के बाद 11 दिसम्बर, 2021 को अफ़ग़ानिस्तान भेजी गई।[14] दिल्ली से सीधे काबुल के लिए उड़ान भरने वाले अफ़ग़ान एयरलाइन में 1.6 मीट्रिक टन स्वास्थ्य सामग्री भारत ने तालिबान शासित अफ़ग़ानिस्तान को भेजी। अफ़ग़ानिस्तान के स्वास्थ्य मंत्रालय ने भारत से मिली इस मदद का स्वागत किया, लेकिन कहा कि वर्तमान स्वास्थ्य संकट से

निपटने के लिए उन्हें और मदद की जरूरत है। ये तालिबान के सत्ता में वापसी के बाद भारत की ओर से भेजी गई पहली मानवीय मदद है।[15]

भारत ने 1 जनवरी, 2022 को अफ़ग़ानिस्तान को कोविड-19 टीकों की 5 लाख ख़ुराक वाली मानवीय सहायता की आपूर्ति करके नए साल की शुरूआत की है। विदेश मंत्रालय (एमईए) ने कहा कि यह खेप पाँच लाख वैक्सीन अतिरिक्त आपूर्ति का हिस्सा है जिसकी आने वाले हफ्तों में आपूर्ति की जाएगी। भारतीय विदेश मंत्रालय ने एक बयान जारी कर कहा, "अफ़ग़ानिस्तान में चुनौतीपूर्ण मानवीय स्थिति को देखते हुए, भारत सरकार ने आज दिल्ली से काबुल वापसी की उड़ान में 1.3 टन चिकित्सा आपूर्ति सहित मानवीय सहायता भेजी है। इन दवाओं को काबुल में विश्व स्वास्थ्य संगठन के प्रतिनिधियों को सौंपा जाएगा, जिनका इंदिरा गांधी चिल्ड्रेन हॉस्पिटल काबुल में इस्तेमाल होगा।" मानवीय सहायता के सामानों को ले जाने वाले बॉक्सों पर "भारत के लोगों की और से अफ़ग़ानिस्तान के लोगों को तोहफा" के स्टिकर लगाए गए थे।[16] शनिवार को भेजी गई मदद के साथ ही भारत, ईरान, कतर, संयुक्त अरब अमीरात, चीन, तुर्कमेनिस्तान और पाकिस्तान जैसे देशों की फेहरिस्त में शामिल हो गया, जिन्होंने तालिबान शासित अफ़ग़ानिस्तान को मानवीय सहायता भेजी है।

विदेश सचिव हर्ष श्रृंगला ने 22 फरवरी, 2022 को भारत-पाकिस्तान एकीकृत चेक पोस्ट (आईसीपी) से अफ़ग़ानिस्तान के लिए मानवीय सहायता के रूप में 2500 मीट्रिक टन गेहूँ ले जाने वाले 50 ट्रकों के काफिले को हरी झण्डी दिखाई जो लगभग 1000 ट्रक लोड़ में से पहला है, जो अगले कुछ हफ्तों में जलालाबाद पहुँचेगा।[17] यह सहायता संयुक्त राष्ट्र द्वारा अफ़ग़ानिस्तान को मानवीय सहायता के लिए की गई अपील के जवाब में भेजी गई है। काबुल में तालिबान द्वारा अधिग्रहण के बाद भोजन की कमी और आर्थिक पतन के कारण लोगों को संकट से निपटने में मदद मिलेगी। वहीं अमृतसर में व्यापारियों और ट्रक ड्राइवरों ने भी ट्रांस-शिपमेंट का स्वागत किया जो लगभग तीन वर्ष से निलबिंत है। व्यापारियों ने आशा व्यक्त की है, कि अफ़ग़ान सहायता के लिए मार्ग खुलने से भारत और पाकिस्तान व्यापार फिर से खुल जाएगा, जिसके बंद होने के कारण सीमावर्ती शहर में बड़े पैमाने पर आर्थिक नुकसान हुआ। शिपमेंट अफ़ग़ानिस्तान के लोगों के लिए 50,000 मीट्रिक टन गेहूँ की आपूर्ति करने के लिए भारत सरकार द्वारा की गई प्रतिबद्धता का हिस्सा कई खेपों में भेजा जाएगा। इसे अफ़ग़ानिस्तान के जलालाबाद में संयुक्त राष्ट्र विश्व खाद्य कार्यक्रम (डब्ल्यू.एफ.पी) को सौंप दिया जाऐगा।

(4) उच्च प्रभाव सामुदायिक विकास परियोजनाएँ

कृषि, ग्रामीण विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यावसायिक प्रशिक्षण आदि के क्षेत्रों में समुदाय आधारित लघु विकास परियोजनाओं का क्रियान्वयन किया जा रहा है। अफ़ग़ानिस्तान के विकास की कुंजी के रूप में कृषि के महत्व को समझते हुए भारत अफ़ग़ानी लोगों के लिए भारतीय विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर एवं पी.एच.डी कार्यक्रम और कृषि एवं उससे संबंधित क्षेत्रों में छात्रवृत्तियाँ प्रदान कर रहा है। भारत ने कंधार में अफ़ग़ान नेशनल एग्रीकल्चर साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी यूनिवर्सिटी की स्थापना की। अफ़ग़ानिस्तान के कृषि मंत्रालय को उन्नत बीजों की आपूर्ति, तकनीकी, कीटनाशक व अन्य संयत्रों की आपूर्ति करना और कृषि मशीनरी के प्रचालन व उपकरणों की जानकारी के लिए प्रशिक्षण देना। बामियान प्रान्त में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए बंद-ए-अमीर के लिए सड़क संपर्क और वापस आ रहे शरणार्थियों के लिए नंगरहार प्रांत में कम लागत वाले आवासों का निर्माण।

(5) सड़क एवं हवाई संपर्क

भारत अफ़ग़ानिस्तान में आसान पहुँच बनाने के लिए ईरान के रास्ते समुद्री और भूमि मार्गों का विकास कर रहा है। भारत ईरान में चाबहार बंदरगाह और भूमि मार्ग का विकास कर अफ़ग़ानिस्तान में अपनी आसान पहुँच बनाई है। वहीं वर्ष 2017 में इंडो-अफ़ग़ान एयर कॉरिडोर को शुरू किया गया जिससे दोनों देशों के मध्य व्यापार को बढ़ावा मिलेगा। भारत अफ़ग़ानी सामानों का बड़ा बाजार है। सड़क एवं हवाई संपर्क दोनों देशों के बीच व्यापारिक संबंधों को बढ़ावा देने के साथ चारों ओर भूमि से घिरे अफ़ग़ानिस्तान को भारत के बाजारों तक आसान पहुँच प्रदान करेगा।

तालिबान 2.0 शासन में भारत के विकास सहयोग का भविष्य

अफ़ग़ानिस्तान दशकों से युद्ध और गृह संघर्ष की आग में झुलसता रहा है, जिससे उसके हालात दुनिया के सबसे गरीब देशों में निम्नतम बने हुए है। आज 2.3 करोड़ लोग या देश की आधी आबादी गंभीर खाद्य सुरक्षा के संकट से जूझ रही है।[18] 2001 में संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व वाली सेना आक्रमण के बाद से अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने अफ़ग़ानिस्तान के पुनर्निर्माण के लिए काफी प्रयास किए हैं। सैन्य सहायता, बुनियादी ढांचे के विकास और अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करने पर महत्वपूर्ण संसाधन खर्च किए गए है। अब तक विश्व बैंक ने अफ़ग़ानिस्तान में विकास परियोजनाओं के लिए 5.3 बिलियन अमरीकी डॉलर से अधिक की राशि खर्च कर चुका है।[19]

भारत अफ़ग़ानिस्तान के पुनर्निर्माण विकास कार्यों में सबसे बड़े योगदानकर्ताओं में से एक रहा है। भारत ने बुनियादी ढांचे और संस्थागत विकास के लिए लगभग 3 बिलियन डॉलर का योगदान दिया है।[20] अन्य देशों की सहायता के साथ-साथ भारत के इन प्रयासों ने अफ़ग़ानिस्तान को लैगिंक समानता, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में कुछ हद तक प्रगति हासिल करने में मदद की है। उदाहरण के लिए बाल मृत्यु दर, 2000 में 90.2 प्रति 1,000 जीवित जन्मों से घटकर 2019 में 46.5 प्रति 1,000 जीवित जन्म हो गई।[21] हालाँकि, अभी भी अफ़ग़ानिस्तान को खराब मानवीय दशाओं का सामना करना पड़ रहा है।

अगस्त, 2021 में तालिबान की वापसी के बाद भारत के विकास सहयोग और अन्य अंतर्राष्ट्रीय भागीदारों द्वारा संचालित विकास परियोजना और साथ ही भविष्य की विकास परियोजनाओं पर एक दृष्टि डालती हैं। क्योंकि अमेरिकी सेनाओं की वापसी की शुरूआत और तालिबान के अफ़ग़ानिस्तान में बढ़ते नियंत्रण के बीच भारत ने जुलाई माह में कंधार में अपना वाणिज्य दूतावास बंद किया और इसके एक महीने बाद मजार-ए-शरीफ और अंत में तालिबान के काबुल पर कब्जे के बाद काबुल दूतावास भी बंद कर दिया और भारत के सभी कर्मचारी देश लौट आए।[22] यदि भारत तालिबान शासन में अफ़ग़ानिस्तान को सहायता प्रदान करता है, तो संभवतः वह मानवीय सहायता ही एकमात्र होगी।

हालाँकि, ऐसा करने के लिए भारत को एक "मानवीय सहायता गलियारा" बनाना होगा। यह देखते हुए कि कैसे पाकिस्तान, भारत और अफ़ग़ानिस्तान के बीच दो-तरफा मुक्त पारगमन की अनुमति नहीं देता। इसके लिए भारत को दुबई या इस्लामाबाद के माध्यम से संयुक्त अरब अमीरात के अधिकारियों को शामिल करके इस तरह के सहायता गलियारे की कल्पना की जा सकती है या अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियों, मुख्य रूप से संयुक्त राष्ट्र के गंभीर हस्तक्षेप के माध्यम से संभव हो सकता है। फिर भी पाकिस्तान के माध्यम से एक सहायता गलियारे के साथ भारत को अभी गेहूँ या चावल जैसे उच्च मात्रा में वस्तुओं के परिवहन के लिए राजी कर सकता है। जिससे भारत चिकित्सा सहायता के साथ-साथ लगभग 50,000 मीट्रिक टन गेहूँ अफ़ग़ानिस्तान को भेज सके।[23]

भारत के लगातार सकारात्मक प्रयासों का परिणाम यह रहा की दिसम्बर, 2021 में 1.6 टन आवश्यक मेडिकल सामग्री और सर्दियों के कपड़े मानवीय सहायता के रूप में भेज सका और नई साल पर 5 लाख कोवैक्सिन डोज अफ़ग़ानिस्तान को सौंपी। पूर्व में भुखमरी से निपटने के लिए अफ़ग़ानिस्तान के साथ भारत ने प्रतिबद्धता की थी, जिसके तहत 22 फरवरी, 2022 को 50 हजार मीट्रिक टन गेहूँ की आपूर्ति की पहली खेप पाकिस्तान के रास्ते

अफ़ग़ानिस्तान रवाना की गई[24] और हाल ही भारतीय विदेश मंत्रालय का एक शिष्टमंडल अफगानिस्तान के दौरे पर जाकर आया है जिसका नेतृत्व विदेश मंत्रालय के संयुक्त सचिव जे.पी. सिंह कर रहे थे। इस शिष्टमंडल का उद्देश्य अफ़ग़ानिस्तान के साथ राजनयिक संबंधों, व्यापार एवं मानवीय सहायता पर चर्चा करना और भारत को अफगानिस्तान में अपनी राजनयिक उपस्थिति और कांसुलर सेवाएँ फिर से शुरू करने पर जोर दिया गया। अफ़ग़ानिस्तान में तालिबान शासन के सत्ता में आने के बाद भारत के किसी सरकारी दल का ये पहला काबुल दौरा है।[25]

निष्कर्ष: काबुल पर तालिबान के कब्जे के सत्तरह महीने बाद भी अफ़ग़ानिस्तान में स्थिति अनिश्चित बनी हुई है। अफ़ग़ानिस्तान संकट के प्रति अंतर्राष्ट्रीय समुदाय को विकास सहयोग में प्राथमिकता देनी चाहिए। भारत को भी इस क्षेत्र में भू-उभरती राजनीतिक और भू-आर्थिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुए तालिबान के साथ अपने संबंधों पर पुनः विचार करने की आवश्यकता है। इसके लिए अफ़ग़ानिस्तान में नई दिल्ली की उपस्थिति के लिए बहुपक्षीय चैनल का उपयोग करना चाहिए और अफ़ग़ान लोगों को मानवीय सहायता गलियारा स्थापित करने के लिए काम करना चाहिए। इस प्रक्रिया में नागरिक समाज, विशेष रूप से जमीनी स्तर पर जुड़े संगठनों के साथ सहायता की जवाबदेही सुनिश्चित करना आवश्यक है, जिससे भारत गंभीर मानवीय संकट के समय अफ़ग़ान लोगों की और अधिक सहायता कर सके। भारत की मानवीय सहायता का यह अर्थ नहीं है कि भारत तालिबान शासन को मान्यता दे रहा है। हालाँकि, इस बात की संभावना है कि दोनों पक्षों के बीच चिकित्सा, शैक्षिक और अन्य प्रकार के आदान-प्रदान हो सकते है।

संदर्भ

---

1 https://mea.gov.in/bilateral-documents.htm?dtl/5383/Text+of+Agreement+on+Strategic+Partnership+between+the+Republic+of+India+and+the+Islamic+Republic+of+Afghanistan

2 https://www.mea.gov.in/

3 https://www.mea.gov.in/

4 https://newsonair.gov.in/News?title=S-Jaishankar-holds-discussions-with-US-Special-Representative-for-Afghanistan-Reconciliation-Zalmay-Khalilzad&id=399928

5 https://www.mea.gov.in/

[6] https://www.washingtonpost.com/world/2021/08/14/afghanistan-embassies/
[7] https://www.business-standard.com/article/current-affairs/india-invested-more-than-3-billion-in-afghanistan-mos-muraleedharan-122020500307_1.html
[8] https://www.mea.gov.in/
[9] https://www.mea.gov.in/press-releases.htm?dtl/33234/India+announces+major+commitments+at+Afghanistan+Conference+2020
[10] https://www.mea.gov.in/press-releases.htm?dtl/33234/India+announces+major+commitments+at+Afghanistan+Conference+2020
[11] https://www.mea.gov.in/bilateral-documents.htm?dtl/26247/Joint+Statement+between+India+and+Afghanistan+December+25+2015
[12] Annual Report 2009-2010 Ministry of External Affairs -MEA Govt. of India
[13] Annual Report 2014-2015 Ministry of External Affairs -MEA Govt. of India
[14] BBC World Service, "Taliban praised India But said More help is needed Now", December 12, 2021
[15] Tolo News Afghanisthan, Afghan Health Ministry Spokesman Javed Hazar, December 11, 2021
[16] https://www.newindianexpress.com/world/2022/jan/01/india-supplies-next-batch-of-humanitarian-assistance-to-afghanistan-mea-2401996.html
[17] https://www.thehindu.com/news/national/india-sends-first-consignment-of-aid-for-afghanistan/article65075046.ece
[18] "World must Act on 'make or break moment'- UN Chief", UN News, Afghanistan, October 11, 2021.
[19] The World Bank in Afghanistan
[20] Ministry of External Affairs, India-Afghanistan: A Development Partnership
[21] World Bank, Mortality Rate, Infant (per 1,000 live births)- Afghanistan
[22] Nayanima Basu, "India Unlikely to Reopen Kabul Embassy in Near Future, Only People-to-People links to Continue", The Print, September 6, 2021
[23] Sachin Parashar, "Afghanistan in Food Crisis, India Plans to Send 50,000MT of Wheat", The Times of India, October 19, 2021
[24] https://indianexpress.com/article/india/india-sends-2500-tonnes-of-wheat-to-afghanistan-via-pakistan-7786218/
[25] https://indianexpress.com/article/india/taliban-afghanistan-indian-team-in-kabul-7948678/

अध्याय 20

भारत-मंगोलियाँ संबंध : सहयोग के प्रमुख द्विपक्षीय मुद्दे

बृजेश चंद्र श्रीवास्तव
शोधार्थी
राजनीति विज्ञान विभाग
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय

मंगोलिया प्राचीन सभ्यता का एक क्षेत्र है। इसके लोगों ने विशेष रूप से ज्योतिष, चिकित्सा, दर्शन, वास्तुकला, हस्तशिल्प और अन्य क्षेत्रों में मानव प्रगति में एक ठोस योगदान दिया है। भारत ने हमेशा मंगोलिया के साथ द्विपक्षीय संबंधों के विकास को बहुत महत्व दिया है। मंगोलिया के साथ भारत के घनिष्ठ सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और आर्थिक संबंध प्राचीन काल से हैं। मंगोलिया की स्वतंत्रता ने मंगोलिया और भारत दोनों को अपने संबंध फिर से स्थापित करने का अवसर प्रदान किया। दिसंबर 1955 में मंगोलिया के साथ राजनयिक संबंध स्थापित करने वाला भारत सोवियत ब्लॉक के बाहर पहला देश था। भारत व्यापार और आर्थिक संबंधों को बढ़ावा देने के लिए मंगोलिया के साथ अपने सांस्कृतिक संबंधों को उजागर करता रहा है। इन संबंधों को मजबूत करने के लिए भारत ने तेजी से मंगोलिया को एक ऐसे क्षेत्र के रूप में संदर्भित किया है जिसके साथ वह कई सामरिक हितों को साझा करता है। द्विपक्षीय व्यापार और आर्थिक संबंधों को मजबूत और समर्थन देने के लिए व्यापार और अर्थशास्त्र और विज्ञान और प्रौद्योगिकी सहयोग पर भारत-मंगोल संयुक्त आयोग और संयुक्त व्यापार परिषद का गठन किया गया है। भारत और मंगोलिया दोनों के पास संसाधनों, जनशक्ति और बाजारों के संदर्भ में आर्थिक रूप से पूरक रूप से मौजूद हैं, जिनका यदि दोहन किया जाता है, तो दोनों देशों की क्षमता का अहसासकरने के लिए व्यापक सहयोग में अनुवाद किया जा सकता है। इस शोध पत्र में भारत और मंगोलिया के बीच व्यापक भू-रणनीतिक और आर्थिक रुझानों को समझने का प्रयास किया गया है। यह पेपर भारत-मंगोलिया नागरिक-परमाणु सहयोग की वर्तमान स्थिति से भी संबंधित है।-

प्रस्तावना :

भारत के पारंपरिक रूप से मंगोलिया के साथ घनिष्ठ और मजबूत आर्थिक और व्यापारिक संबंध थे। संपर्कों के विकास में एक मील का पत्थर भारत से मंगोलिया तक बौद्ध धर्म का प्रसार था। उनके बीच संबंध आमतौर पर 2700-3000 साल पहले शुरू हुए माने जाते हैं। बौद्ध धर्म सबसे पहले उन प्राचीन जनजातियों में फैला, जो मंगोलिया में बसे हुए थे - सिउंग-नु, सिएन-पी, टोबा, तुर्क और उइगर। ये संबंध मोटे तौर पर तिब्बत के माध्यम से मध्य एशिया और मंगोलिया में बौद्ध धर्म के प्रसार का परिणाम हैं। इसे ध्यान में रखते हुए, मंगोलिया और भारत को अक्सर बौद्ध चाप के दो सिरों पर माना जाता है: दक्षिणी और उत्तरी। उत्तरी भारत, अर्थात् सिक्किम और भूटान जैसे हिमालयी क्षेत्रों में मंगोलोइड लोगों की एक बड़ी जनसांख्यिकी शामिल है। इन मंगोलोइड लोगों को मंगोलियाई लोगों के पुराने प्रवासन के प्रमाण के रूप में उद्धृत किया जाता है जिसे अब भारतीय क्षेत्र माना जाता है।

भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद, भारत के पहले प्रधान मंत्री, जवाहरलाल नेहरू ने मंगोलिया को भारत के लिए बहुत महत्वपूर्ण माना। उन्हें इस देश में विशेष रुचि थी। उन्होंने 1947 में नई दिल्ली में आयोजित पहले एशियाई संबंध सम्मेलन में मंगोलियाई प्रतिनिधिमंडल का स्वागत किया। मंगोलिया की स्वतंत्रता ने मंगोलिया और भारत दोनों को अपने संबंध फिर से स्थापित करने का अवसर प्रदान किया। दिसंबर 1955 में मंगोलिया के साथ राजनयिक संबंध स्थापित करने वाला भारत सोवियत ब्लॉक के बाहर पहला देश था। भारत व्यापार और आर्थिक संबंधों को बढ़ावा देने के लिए मंगोलिया के साथ अपने सांस्कृतिक संबंधों को उजागर करता रहा है। इन संबंधों को मजबूत करने के लिए, भारत गणराज्य और मंगोलिया के बीच 1994 में मैत्रीपूर्ण संबंधों और सहयोग की संधि पर हस्ताक्षर किए गए थे। इसके अतिरिक्त, इन संबंधों को मजबूत करने के लिए, भारत ने मंगोलिया को एक ऐसे रणनीतिक हित के क्षेत्र के रूप में संदर्भित किया है जिसके साथ यह कई क्षेत्रों को साझा करता है। द्विपक्षीय व्यापार और आर्थिक संबंधों को मजबूत करने और समर्थन करने के लिए व्यापार, अर्थशास्त्र और विज्ञान व प्रौद्योगिकी सहयोग पर भारत-मंगोल संयुक्त आयोग और संयुक्त व्यापार परिषद का गठन किया गया है। भारत और मंगोलिया दोनों में संसाधनों, जनशक्ति और बाजारों के संदर्भ में आर्थिक पूरकताएं हैं, जिनका यदि दोहन किया जाता है, तो दोनों देशों की क्षमता का अहसासकरने के लिए व्यापक सहयोग में अनुवादित किया जा सकता है। बैंकिंग, बीमा, बुनियादी ढांचे, कृषि, ऑटोमोबाइल, पर्यटन, सूचना प्रौद्योगिकी, जैव-प्रौद्योगिकी, उच्च शिक्षा और फार्मास्यूटिकल्स में संयुक्त उद्यमों के लिए अवसर बहुत

हैं, जबकि दवाओं और बढ़िया रसायनों जैसी भारतीय वस्तुओं ने पहले ही मंगोलियाई बाजारों में अपनी पैठ बना ली है। अवसंरचना निर्माण और निर्माण गतिविधियों की संभावनाएं भी आर्थिक सहयोग के क्षेत्र हैं। इन संबंधों को मजबूत करने के लिए भारत और मंगोलिया के बीच कई द्विपक्षीय समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए हैं।

व्यापारिक और आर्थिक सहयोग :

यदि हम दुनिया भर में मंगोलिया के व्यापारिक संबंधों को देखें, तो चीन के साथ व्यापार मंगोलिया के कुल बाहरी व्यापार के आधे से अधिक का हिस्सा है। वहीं, रूस भू-आबद्ध देश को गैस और तेल का सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। एक ऐसे देश के रूप में जो रूस और चीन के बीच स्थित है, मंगोलिया विदेशी निवेश पर बहुत अधिक निर्भर करता है। दोनों पड़ोसी देश प्रमुख व्यापार भागीदार हैं और उभरती भू-आर्थिक और भू-राजनीतिक घटनाओं के साथ, मंगोलिया पड़ोसियों से परे विकल्पों की तलाश कर रहा है। 2011 में, यह विदेश नीति के साथ आया जिसका उद्देश्य तीसरे पड़ोसियों के साथ बेहतर संबंधों को बढ़ावा देना है, जिसे "थर्ड नेबर" नीति के रूप में भी जाना जाता है, जिसका उद्देश्य अपने संबंधों में विविधता लाना और अपने पड़ोसियों पर निर्भरता कम करना है। ऐसे में नई दिल्ली और उलानबटार के बीच आर्थिक संबंध बढ़ रहे हैं। हालांकि भारत ने प्रारंभ से ही मंगोलिया के साथ आर्थिक संबंधों के विकास पर बल दिया है और उसे चुना है।

आर्थिक क्षेत्र में मंगोलिया की मुख्य रूप से भारत के लिए दो गुना महत्वपूर्ण स्थिति है। सबसे पहले, मंगोलिया की 30 लाख आबादी जो एक उपभोक्ता बाजार का प्रतिनिधित्व करती है। दूसरे, इसके पास सीसा, तेल, सोना, फ्लोराइट, वोल्फ्राम और यूरेनियम जैसे प्राकृतिक संसाधनों का विशाल भंडार भी है, जिन्हें दोहन करने और मूल्य वर्धित उत्पादों में परिवर्तित करने की आवश्यकता है । 2014 में भारत में मोदी सरकार आने के साथ भारत और मंगोलिया के बीच संबंध और मजबूत हुए। प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने अपनी विदेश नीति में मंगोलिया को विशेष महत्व दिया। भारत और मंगोलिया के बीच सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत करने के लिए प्रधान मंत्री मोदी ने मई 2015 में मंगोलिया जाने का फैसला किया। इस संदर्भ में भारतीय प्रधान मंत्री का मानना है कि दोनों सभ्यताओं में विशेष रूप से बौद्ध धर्म की संस्कृति और इतिहास समान है। इस यात्रा में बौद्ध धर्म और भारत को यूरेनियम की

आपूर्ति पर विशेष महत्व दिया गया है। सौर ऊर्जा के लिए मंगोलिया द्वारा भारत से आग्रह किया जाता है, क्यूंकि भारत के पास सौर उर्जा प्रचुर मात्र में हैं और भारत अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन में अग्रणी दश बनकर उभरा है ।

मंगोलिया भारत के लिए निवेश के लिए एक ग्रीन जोन के रूप में काम कर सकता है और प्रौद्योगिकी में प्रगति से लाभान्वित हो सकता है जो भारत अपनी आधुनिकीकरण प्रक्रिया में पेश कर सकता है। भारत-मंगोलिया ने मंगोलिया से भारत को यूरेनियम के निर्यात के लिए 2009 में असैन्य परमाणु समझौते पर हस्ताक्षर किए। उलानबटार में समृद्ध यूरेनियम भंडार है जो नई दिल्ली की मदद कर सकता है। मंगोलिया के लिए, इसके संसाधनों की बढ़ती मांग ने इसे अपनी राजनयिक स्थिति में विविधता लाने और बढ़ाने का अवसर प्रदान किया है। देश ने जबरदस्त क्षमता दिखाई है, क्योंकि इसने 2011 में 17.5 प्रतिशत की वृद्धि दर दर्ज की थी। इस वृद्धि का श्रेय देश में तांबे और कोयला खनन में उछाल को दिया गया था। हालांकि, चूंकि देश में ऊर्जा क्षमता का काफी हद तक पता नहीं चला है, मंगोलिया के लिए अपने ऊर्जा बाजार में पूंजी को आकर्षित करने का एक बड़ा अवसर मौजूद है, और भारत अपनी उच्च ऊर्जा खपत के साथ इस उद्देश्य को पूरा कर सकता है। दोनों देशों के लिए सुरक्षा पहलू प्रमुख चिंता का कारण हैं, और सुरक्षा साझेदारी को बढ़ाने की क्षमता भी मौजूद है। दोनों राष्ट्र पहले से ही वार्षिक संयुक्त सैन्य अभ्यास का आयोजन करते हैं जिसे खानाबदोश हाथी के रूप में जाना जाता है और खान क्वेस्ट नामक एक शांति अभ्यास का आयोजन किया जाता है।

रक्षा और नागरिक परमाणु सहयोग

इस क्षेत्र में हाल की घटनाओं ने भारत को अपनी एक्ट ईस्ट पॉलिसी में विविधता लाने के लिए मजबूर किया है क्योंकि इसकी शुरुआत ने उत्तर-पूर्वी एशिया को इस क्षेत्र के लिए भारत की रणनीतिक दृष्टि में एक महत्वपूर्ण पहलू बना दिया है। हाल के दिनों में, भारत-मंगोलिया संबंधों को भारत की व्यापक पड़ोस नीति के विस्तार के रूप में देखा गया है। भारत और मंगोलिया दोनों गतिशील राजनीतिक और सांस्कृतिक संबंध साझा करते हैं। एक अधिक व्यापक क्षेत्रीय प्रणाली में, मंगोलिया भारत की 'लुक ईस्ट' और अब 'एक्ट ईस्ट' नीति के लिए मौलिक है। भारत ऐसा पहला देश है जो सोवियत ब्लॉक का हिस्सा

नहीं था जिसने 1955 में मंगोलिया को मान्यता दी और उलानबटार के साथ राजनयिक संबंध स्थापित किए। भारत ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन के साथ-साथ संयुक्त राष्ट्र में मंगोलिया की सदस्यता का समर्थन किया, और मंगोलिया ने हमेशा पारस्परिक समर्थन किया है, चाहे UNSC के लिए भारत की स्थायी उम्मीदवारी का समर्थन किया हो, या बांग्लादेश की मान्यता के लिए भूटान के साथ संयुक्त राष्ट्र में भारत के प्रस्ताव को सह-प्रायोजित किया हो।

वैश्वीकरण की दुनिया में, ऊर्जा आधुनिक अर्थव्यवस्था के गतिशील विकास की विशिष्ट गारंटी है। आज ऊर्जा संसाधन किसी क्षेत्र के भू-राजनीतिक महत्व के मुख्य पहलुओं में से हैं। वे देशों और क्षेत्रों के बीच पारस्परिक रूप से लाभप्रद राजनीतिक संबंधों को मजबूत करने के मुद्दे पर एक संपर्क कड़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं। प्रमुख वैश्विक अर्थव्यवस्थाओं की निरंतर बढ़ती आवश्यकता के कारण स्थिर ऊर्जा आपूर्ति की आवश्यकता आवश्यक हो गई है।

भारत दुनिया में ऊर्जा संसाधनों का छठा सबसे बड़ा आयातक है और इसकी जरूरतें बढ़ रही हैं। इसकी स्थिर आर्थिक वृद्धि और फलस्वरूप इसकी राष्ट्रीय सुरक्षा इसकी ऊर्जा आपूर्ति पर निर्भर करती है। भारतीय बिजली की मांग 2020 तक लगभग दोगुनी हो जाएगी, और परमाणु ऊर्जा भारत के लिए ऊर्जा सुरक्षा प्रदान करने के प्रमुख साधन के रूप में उभर रही है। ऊर्जा सुरक्षा और पर्यावरण संबंधी चिंताओं को सुधारने के लिए, भारत को परमाणु आपूर्ति, मुख्य रूप से यूरेनियम की आपूर्ति में वृद्धि की आवश्यकता है। भारत में यूरेनियम उत्पादन की वर्तमान क्षमता बेहद कम है, और उपलब्ध संसाधन निम्न गुणवत्ता वाले हैं। इस संदर्भ में मंगोलिया को संभावित स्थान के रूप में देखा जाता है। भारत तेजी से मंगोलिया को यूरेनियम के विश्वसनीय स्रोत के रूप में देख रहा है।

इस संदर्भ में मंगोलिया के उदय ने पूरी दुनिया की भू-राजनीति में एक नया रणनीतिक आयाम जोड़ा है और भारत के लिए और भी बहुत कुछ जोड़ा है । माना जाता है कि मंगोलिया में विशाल यूरेनियम भंडार हैं। एक मौजूदा अनुमान है कि मंगोलिया के पास 65000 टन प्रमाणित यूरेनियम संसाधन है। मंगोलिया दुनिया के यूरेनियम भंडार का 6 प्रतिशत होने का दावा करता है।

एक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र जहां भारत और मंगोलिया सहयोग कर सकते हैं, वह अंतरिक्ष अनुसंधान और सेना है। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) और मंगोलिया सरकार के बुनियादी ढांचा मंत्रालय

ने अंतरिक्ष गतिविधियों में एक-दूसरे की मदद और सहयोग करने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं। यह समझौता अंतरिक्ष विज्ञान, प्रौद्योगिकी और अनुप्रयोगों के क्षेत्रों में भारत और मंगोलिया के बीच सहयोग के लिए एक छत्र प्रदान करता है। यह अंतरिक्ष अनुसंधान और अनुप्रयोगों के लिए उपग्रहों, साउंडिंग रॉकेटों, गुब्बारों और जमीनी सुविधाओं के क्षेत्रों में गतिविधियों को कवर करेगा। समझौते में उपग्रह संचार से संबंधित अध्ययन भी शामिल हैं; उपग्रह आधारित सुदूर संवेदन और उपग्रह मौसम विज्ञान; उपग्रह ग्राउंड स्टेशन और उपग्रह मिशन प्रबंधन; प्रशिक्षण सुविधाएं और वैज्ञानिकों का आदान-प्रदान। इसी तरह, सैन्य संबंधों को मजबूत करने के लिए भारत और मंगोलिया के बीच रक्षा सहयोग पर संयुक्त कार्य समूह का निर्माण किया गया है। इसके अतिरिक्त, भारत और मंगोलिया के बीच नियमित रूप से संयुक्त सैन्य अभ्यास आयोजित किए जाते हैं।

सांस्कृतिक सहयोग

सांस्कृतिक कूटनीति, भारत के लिए पूर्वोत्तर में अपने संबंधों को बढ़ाने के लिए एक उपकरण के रूप में, अपनी विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गई है और मंगोलिया के साथ अपने संबंधों में उपयोगी साबित हो सकती है। बौद्ध धर्म और लोकतंत्र पर आधारित एक समान संस्कृति ने दोनों देशों के बीच सेतु का काम किया है। मंगोलिया के पूर्व प्रधान मंत्री चिमेद सैखानबिलेग ने भारत और मंगोलिया को "आध्यात्मिक पड़ोसी" कहा। दोनों देशों के सांस्कृतिक संबंध लगभग 2500 वर्ष पुराने हैं जो भारत से मंगोलिया तक बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ शुरू हुए थे। भारत और मंगोलिया के बीच आध्यात्मिक संबंध पारस्परिक लाभ के लिए सहयोग करने के लिए राष्ट्रों के लिए एक अतिरिक्त कारण के रूप में काम करते हैं।

फरवरी 2003 में मंत्रालय द्वारा स्थापित एक परियोजना, राष्ट्रीय पाण्डुलिपि मिशन के तहत भारत के पर्यटन और संस्कृति मंत्रालय ने मंगोलियाई कंजुर के सभी 108 संस्करणों के पुनर्मुद्रण की परियोजना शुरू की। इस परियोजना का उद्देश्य भारत की प्राचीन पांडुलिपियों की विशाल संपदा का पता लगाना और संरक्षित करना है। कंजूर पर काम प्रो लोकेश चंद्र की देखरेख में किया जा रहा है। सांस्कृतिक संवाद के प्रतीक के रूप में और राजनयिक संबंधों को मजबूत करने के साधन के रूप में पवित्र कैनन के संस्करणों को मंगोलिया और रूस में मठों में वितरित करने का इरादा है। मंगोलियाई कंजूर के पांच

खंडों का पहला सेट भारत के राष्ट्रपति राम नाथ कोविंद को 4 जुलाई 2020 को धम्म चक्र प्रचार (धर्म चक्र का पहला मोड़) के अवसर पर प्रस्तुत किया गया था, बौद्धों और हिंदुओं द्वारा समान रूप से अपने गुरुओं के प्रति सम्मान प्रकट करने का एक दिन जिसे गुरु पूर्णिमा के रूप में भी मनाया जाता है।

मंगोलियाई कंजुर (बुद्ध के अनुवादित शब्द) मंगोलियाई बौद्ध कैनन का तिब्बती से शास्त्रीय मंगोलियाई भाषा में अनुवादित पहला भाग है, और इसमें 108 खंड शामिल हैं। इसका अनुवाद 14वीं सदी में शुरू हुआ, जब तक कि 17वीं सदी में उत्तरी युआन वंश के खगान* लिगदान खान (1588-1634) के शासन में पूरे कंजूर का अनुवाद पूरा नहीं हो गया। मंगोलियाई कंजुर का यह संस्करण 1717-20 में किंग राजवंश के तीसरे सम्राट कांग्सी सम्राट (1654-1722) के तहत मुद्रित बोर्डों से बने 108-वॉल्यूम संस्करण का आधार बन गया।

मंगोलियाई कंजूर मंगोलिया के लिए सांस्कृतिक पहचान का एक स्रोत है और देश में हर मठ में प्रतियां संग्रहीत की जाती हैं। समाजवादी काल के दौरान, जाइलोग्राफ को आग के हवाले कर दिया गया और मठों को उनके पवित्र ग्रंथों से वंचित कर दिया गया। 1956-58 के दौरान, भारतीय भाषाविद्, विद्वान और प्रमुख राजनेता प्रो. रघु वीरा (1902-63) ने मंगोलिया की अपनी यात्रा के दौरान दुर्लभ कंजूर पांडुलिपियों की एक माइक्रोफिल्म प्रति प्राप्त की और उन्हें भारत ले आए, जहां उन्होंने उनका पुनर्मुद्रण शुरू किया। यह कार्य उनके पुत्र प्रो लोकेश चंद्र द्वारा पूरा किया जाना तय था। 1973 में, मंगोलियाई कंजुर को पुनर्प्रकाशित किया गया और दुनिया भर के पुस्तकालयों में वितरित किया गया। बुरयातिया, काल्मिकिया और ज़बाइकाल्य में रूसी बौद्धों को कई प्रतियां भी दान की गईं।

भारत के संस्कृति मंत्रालय द्वारा प्रकाशित मंगोलियाई कंजुर सितंबर 2021 में एक आधिकारिक भारतीय प्रतिनिधिमंडल की यात्रा के दौरान रूस में प्रस्तुत किया गया था। इस यात्रा का उद्देश्य बौद्ध संगठनों और शैक्षिक और सांस्कृतिक संस्थानों के साथ सहयोग स्थापित करना था। प्रतिनिधिमंडल में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक अध्ययन केंद्र, अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध परिसंघ और शांति के लिए एशियाई बौद्ध सम्मेलन के सदस्य शामिल थे। प्रतिनिधियों ने मास्को, सेंट पीटर्सबर्ग, चिता, बुर्यातिया, काल्मिकिया और तुवा का दौरा किया।

निष्कर्ष

वैश्वीकरण के इस युग में किसी भी द्विपक्षीय, त्रिपक्षीय और बहुपक्षीय सहयोग में अर्थव्यवस्था एक प्रमुख भूमिका निभाती है। भारत और मंगोलिया दोनों मित्रता और पारस्परिक रूप से लाभप्रद आर्थिक संबंधों की आवश्यकता के बारे में आम धारणा साझा करते हैं। इस क्षेत्र के साथ हमारे ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संबंधों और उनकी आर्थिक क्षमता के बावजूद, उनके साथ हमारे आर्थिक संबंधों का पैमाना मामूली रहा है। मंगोलिया के साथ किसी भी सार्थक व्यावसायिक संबंध स्थापित करने से पहले कई बाधाओं को दूर करने की आवश्यकता है। जमीनी हकीकत यह है कि भारतीय विनिर्माण और निवेश कंपनियां यहां मौजूद चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों के कारण इस क्षेत्र के अपरिचित बाजारों में प्रवेश करने को लेकर आशंकित हैं। मुख्य बाधाओं में से एक हार्ड करेंसी की अनुपलब्धता और खराब रूपांतरण सुविधाएं हैं। संचार संपर्क भी अपर्याप्त हैं। इसके अतिरिक्त, संबंधित सरकारों द्वारा मुख्य समाचार पत्रों के माध्यम से अपर्याप्त विपणन के साथ-साथ भाषा अवरोध ने भी दोनों देशों के बीच पर्यटन और व्यापार के विकास को प्रतिबंधित कर दिया। हालाँकि, कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए हैं, लेकिन वे केवल कागज पर मौजूद हैं। यहाँ जिम्मेदारी का एक अलग विभाजन भी है। सही तरह का माहौल बनाने की जिम्मेदारी सरकार की होती है, जिसमें भारतीय कारोबारी कारोबार कर सकें। इसलिए आर्थिक कूटनीति इस क्षेत्र के प्रति भारत की मूल नीति होनी चाहिए। इस देश के साथ हमारे व्यापार और आर्थिक व्यवहार में मंगोलिया पर ध्यान देने और उनसे निपटने के लिए रणनीति और नीतियां बनाने की तत्काल आवश्यकता है।

संदर्भ :

i. Bawden, C.R., *Modern History of Mongol*, London, 1989, p. 417.

ii. Peter Boone, ‘Grass Root Economic Reform in Mongolia’, conference on socialist economies in Transition, *Asia foundation*, May 1993.

iii. Mongolia –Annual Economic Development Report, Ulaanbaatar, May,1995, p. 2.

iv. Documents on the history of the People’s Revolution of 1921 (in Mongolia), Ulaanbaatar,1957, p.112.

v. See the Constitution of the MPRP, Revolutionary Measures of the People’s Government of Mongolia in 1923-24, Moscow, 1960, p. 192.

vi. Owen Lattimore, *Inner Asian Frontiers*, p. 92. See also Maiskii, *Sovremennaia*, p. 108. The scholars inform that the entire Mongolian trade was in the hands of Chinese and they were exploiting the resources of the country.

vii. Alicia. J. Campi, "Nomadic Cultural Values and their Influence on Modernization", in Ole Bruun and Ole Odgaard (Ed.), *Mongolia in Transition: Old Pattern and Challenges*, Britian,1996, p. 96.

viii. The year 1990 witnessed the collapse of the socialist system in Mongolia and consequently there was decline of the Soviet Union's influence in the every walk of life in the Mongolian society.

ix. Tsedendamba Batbayar, "Mongolia's New Identity and Security Dilema", *The Mongolian Journal of International Affairs* (Ulaanbaatar), No.8-9, 2002, p. 4.

x. Ranjan Gupta, *India and Mongolia:A Geostrategic Perspective, Regional Securities Issues and Mongolia* (Ulaanbaatar), No. 6, 1999, p. 30.

xi. Vasanta Iyer, "Cultural Perspectives in Modern Mongolia", in K. Warikoo and Dawa Norbu (Eds.), *Ethnicity and Politics in Central Asia* (New Delhi: South Asian Publishers, 1992), p. 268.

xii. David Murphy, "Go Go in the Gobi", Far Eastern Economic Review (Hong Kong), vol.167, no. 25, 24 June 2004.

xiii. Batra Sonal, "Bolstering Relations: India-Mongolia";SIMC WIRE at http//simcwire.edu.

xiv. India Mongolia sign Comprehensive Partnership Treaty; 16 Septeber 2009; Business Standard at business-standard.com

xv. Vyas Neena, "India Mongolia to expand Defence Cooperation"; 29 July 2011 ; The Hindu at www. http.thehindu.com.

xvi. Tripathi Sudhanshu; "Changing Geo-Politics of Central Asia and Implications for India", *India Quarterly*; vol. LK11; No.3; July-Sep 2006, p.112..

xvii. Central Asia Atlas of Natural Resources at www.careinstitute.org

xviii. Sachs Ram and Undraa Agvaanluvsan, " Fueling the Future:Mongolian Uranium and Nuclear Power Plant Growth in China and India", September 2009, p. 2, at www.docstoc.com.

xix. "India Mongolia sign Nuclear Agreement", in *Nuclear Power Daily*, 15 September 2009 at www.nuleardaily.com

xx. "India and Mongolia signs defence Pact", *Frontier India News Network*, 28 July 2011 at http.frontierindia.net.

अध्याय 21

भारत- अमेरिका संबंध: उत्पत्ति और विकास

भानु प्रताप सिंह
शोध छात्र, राजनीति विज्ञान विभाग
चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय
मेरठ

भारत और अमेरिका क्रमशः सबसे बड़े लोकतंत्र और सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था हैं। समकालीन दुनिया में भारत और अमेरिका के बीच संबंध को स्थिर विश्व व्यवस्था के लिए सबसे बड़ी प्रेरणा के रूप में देखा जाता है। समकालीन वैश्विक राजनीति में कई राज्य, गैर राज्य संगठन एवं गैर राज्य कर्ता कारक के रूप में उभर कर सामने आ रहे हैं । जिसके कारण विश्व मामलों के संदर्भ में भारत अमेरिका संबंध और अधिक महत्वपूर्ण बन गए हैं। भारत और अमेरिका 2010 से रणनीतिक साझेदार हैं और तब से वे संस्थागत और रणनीतिक बातचीत कर रहे हैं।[i] रणनीतिक साझेदारी के पांच स्तंभ इस प्रकार हैं:

1. रणनीतिक मुद्दे
2. ऊर्जा और जलवायु परिवर्तन
3. विज्ञान और प्रौद्योगिकी
4. स्वास्थ्य और नवाचार
5. शिक्षा और विकास

दोनों देशों के विभिन्न नेताओं ने अलग-अलग तरीकों से रिश्ते की व्याख्या की है। पूर्व भारतीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अमेरिका को भारत का स्वाभाविक सहयोगी[ii] कहा, वहीं पूर्व भारतीय प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंह ने अमेरिका को भारत का स्वाभाविक भागीदार[iii] कहा, वर्तमान भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने अमेरिका को भारत का प्राकृतिक वैश्विक साझीदार कहा, पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने भारत-अमेरिकी साझेदारी को 21 वीं सदी की सबसे अधिक पुष्ट साझेदारी[iv] माना, अमेरिका के पूर्व रक्षा सचिव एश्टन कार्टर ने भारत को अमेरिका का अमेरिका अप्रतिम साझेदार कहा, पूर्व अमेरिकी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट हिलेरी क्लिंटन ने कहा संयुक्त राज्य अमेरिका भारत पर रणनीतिक दांव लगा रहा है, अमेरिका के निवर्तमान राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प ने कोई विशेष टिप्पणी

नहीं की है जिसे भारतीय विरोधी समझा जा सकता है। तथ्यों के आलोक में हम यह कह सकते हैं कि भारत अब नए अमेरिकी राष्ट्रपति की ओर जिज्ञासावश देख रहा है।

प्रोफेसर अमिताभ मट्टू[v] के अनुसार भारत का अमेरिका विरोधी होना अतीत की बात हो गई है। भारत आज संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ लगभग एक अर्ध गठबंधन में है। भारत-अमेरिका साझेदारी अब गहरी होती जा रही है[vi]। प्रोफेसर हर्ष बी. पंत[vii] ने कहा है कि इस रिश्ते का परिवर्तित परिदृश्य विभिन्न कारकों के संयोजन के परिणामस्वरूप व्यवस्थित, राजनीतिक और व्यक्तिगत है। व्यवस्थित कारक द्विध्रुवीयता का अंत है, और चीन का उदय है। घरेलू कारक एक आर्थिक मजबूरी है और व्यक्तिगत कारक में वाजपेयी, वर्तमान प्रधानमंत्री मोदी, अमेरिका के नेता बुश और ओबामा जैसे व्यक्तियों की प्राथमिकता शामिल है। भारतीय अमेरिकी समुदाय की एक महत्वपूर्ण भूमिका है जो कि सबसे अमीर अमेरिकी समुदाय और सबसे मजबूत अमेरिकी समूह बन गया है। हम भारत के प्रति बुश प्रशासन के दृष्टिकोण को बदलने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले प्रसिद्ध भारतीय अमेरिकी विद्वान एशले टेलिस[viii] के बौद्धिक जीवन की भूमिका की उपेक्षा नहीं कर सकते जिससे भारत अमेरिकी संबंधों का डी- हाइफ़नेशन (दो राष्ट्रों के मध्य सम्बंध किसी तीसरे देश के साथ उनके संबंधों पर विचार किये बिना उनकी सम्बंधित योग्यताओं के आधार पर) हुआ है। आज भारत और अमेरिका बड़ी संख्या में मंचों पर परस्पर भूमिका का निर्वहन करते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका भारत का दूसरा प्रमुख व्यापारिक भागीदार बन गया है और उन कुछ देशों में शामिल है जिनके साथ हमारे व्यापार का सकारात्मक अनुकूल संतुलन है तथा युक्त राज्य अमेरिका का भारत के साथ 100 बिलियन डॉलर से अधिक में द्विपक्षीय व्यापार है, संयुक्त राज्य अमेरिका भी भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के प्रमुख स्रोतों में से एक है। संयुक्त राज्य अमेरिका की 'एशिया पुनर्संतुलन' और भारत की 'एक्ट ईस्ट नीति' के बीच एक अभिसरण है। वे उच्च समुद्रों पर सुरक्षा के लिए मिलकर काम कर रहे हैं। भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका समुद्र में मालाबार युद्ध अभियान जैसे नियमित सैन्य अभ्यास कर रहे हैं। भारत ने अमेरिका के प्रशांत कमान के नेतृत्व में 'रिम ऑफ़ पैसिफिक एक्सरसाइज' (रिमपैक) अभ्यास में भी भाग लिया है। भारतीय और अमेरिका की वायु सेना ने भी रेड फ्लैग के नाम से अभ्यास शुरू किया है।

आज संयुक्त राज्य अमेरिका भारत के लिए रक्षा उपकरणों के अग्रणी आयातक के रूप में उभरा है। रक्षा प्रौद्योगिकी व्यापार पहल एक नए स्तर पर संबंधों को ले जाएगी क्योंकि भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण, संयुक्त विकास और उत्पादन के लिए जा रहे हैं। हाल ही में संयुक्त राज्य अमेरिका ने भारत को एक प्रमुख रक्षा साझेदार का दर्जा दिया है, जिसके द्वारा भारत संयुक्त राज्य अमेरिका के निकटतम सहयोगी के रूप में रक्षा से संबंधित उच्च प्रौद्योगिकी के हस्तांतरण का पात्र हो जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका भारत के खिलाफ हुए परमाणु भेदभाव से काफी आगे बढ़ गया है। अमेरिका ऊर्जा दिशानिर्देशों से भारत को विशिष्ट छूट मिल सकती है। एमटीसीआर (मिसाइल टेक्नोलॉजी कंट्रोल रिजीम) में भारत का प्रवेश संयुक्त राज्य अमेरिका की स्वाभाविक पसंद हो गया है। संयुक्त राज्य अमेरिका संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य के रूप में भारत की सदस्यता

का पक्षधर रहा है। अन्य बिंदुओं पर विचारोपरांत हम कह सकते हैं कि संबंध गुणात्मक सुधार के दौर से गुजर रहे है, हालांकि, ट्रम्प प्रशासन के कारण अनिश्चितता सामने आई थी, जिसका एक बड़ा कारण ट्रम्प की अमेरिकी प्रथम और अमेरिकी भोगनीति की नीति है, जो दुर्भाग्य से उस समय आया है जब भारत अपने विनिर्माण क्षेत्र का विकास कर रहा है। यह देखना होगा कि दोनों देशों के नीति निर्माता अमेरिका और भारत के बीच सुदृढ सम्बंध स्थापित कर पाएंगे और पहले संबंधों को और मजबूत बना पाएंगे। जॉर्ज वर्गीज[ix] के अनुसार "ट्रम्प प्रशासन की विदेश नीतियों के दो पहलू हैं। अमेरिका का पहला वैचारिक, जो प्रकृति में इस्लामी-विरोधी है और दूसरा व्यवहारिक है जो प्रकृति में वाणिज्यिक है। हालांकि ऐसा लगता है कि नई दिल्ली में जो दक्षिणपंथी समूह के प्रभुत्व वाली सरकार और ट्रम्प प्रशासन के बीच एक वैचारिक साम्यता थी, परन्तु अब नई अमेरिकी सरकार में आखिरकार इसका आकार क्या होगा यह विचारणीय विषय है। अब तक कोई बयान नहीं दिया गया है, जिस पर यह विचार किया जा सकता है भारत विरोधी या भारत समर्थक के रूप में बयान है। यहां यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि निवेश, बौद्धिक संपदा अधिकारों, डब्ल्यूटीओ में कृषि क्षेत्र और जलवायु परिवर्तन के मुद्दों पर भारतीय अमेरिका के बीच एक बड़ा अंतर है।

लिसा कर्टिस के अनुसार, भारत की अमेरिका की रणनीतिक साझेदारी के अलावा हमें सहयोगी बनने के लिए भारत की अनिच्छा बयानबाजी को वास्तविक अर्थों में रणनीतिक के बजाय मुख्य रूप से लेन-देन समझा गया है। भारतीय नीति निर्माताओं द्वारा रणनीतिक स्वायत्तता के आह्वान के साथ भारत कई संरेखण के लिए जाना चाहता है। भारत के पास सुरक्षा सिद्धांत नहीं है और इसलिए भारत की संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ रणनीतिक साझेदारी के बारे में कम स्पष्टता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ भारत की रणनीतिक साझेदारी रक्षा उपकरण और प्रौद्योगिकी प्राप्त करने पर अधिक केंद्रित है। राकेश सूद[x] के अनुसार, हम न तो आधिपत्य की उम्र में जी रहे हैं और न ही बहुध्रुवीयता के युग में। भारत की विदेश नीति को कम सुर्खियों, अधिक चपलता और व्यावहारिकता की आवश्यकता है क्योंकि हम अनिश्चितता के युग में रह रहे हैं। मनोज जोशी के अनुसार भारत एशिया का एकमात्र देश है जो चीन के गुरुत्वाकर्षण खींचतान को दूर कर सकता है। भारत को बयानबाजी से अभिभूत होने की जरूरत नहीं है। भारत को राष्ट्रहित पर दृढ़ रहना होगा। जॉर्ज वर्गीज[xi] के अनुसार, 2017 तक भारत ट्रम्प प्रशासन की सर्वोच्च प्राथमिकता नहीं है। ट्रम्प ने कई युद्धक्षेत्रों को घरेलू और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तोड़ दिया है, भारत या तो कम रूपरेखा को बनाए रखेगा। या भारत स्वचालित मोड पर रणनीतिक साझेदारी छोड़ सकता है। ट्रम्प प्रशासन के तहत भारत के अमेरिकी संबंध गुणवत्ता के बावजूद अनिश्चितता के दौर से गुजरे हैं। यह स्पष्ट नहीं है कि संयुक्त राज्य अमेरिका एवं चीन संबंधों का भविष्य क्या होगा और एक बहुध्रुवीय दुनिया में ट्रम्प का और आतंकवाद का मुकाबला किस हद तक हुआ था। यहां यह भी ध्यान रखना दिलचस्प है कि पाकिस्तान, बहुपक्षीय मुद्दों, दोहा वार्ता और पेरिस जलवायु परिवर्तन और वैश्विक शासन जैसे मुद्दों के प्रति बिडेंस प्रशासन के दृष्टिकोण का भारत को अभी भी इंतजार है।

यदि हम भारत के अमेरिकी संबंधों के विकास को देखें तो हम इसे तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं।

भाग 1

आजादी से पहले

संयुक्त राज्य अमेरिका आत्मनिर्णय के अधिकार का एक समर्थक था, फिर भी अमेरिका ने भारतीयों को स्वतंत्रता देने के लिए कभी भी ब्रिटिशों को दबाव नहीं दिया। पंडित नेहरू का रुख प्रो- सोवियत और अमेरिकी विरोधी था। पंडित नेहरू ने चेतावनी दी थी कि अमेरिकी साम्राज्यवाद ब्रिटिश साम्राज्यवाद से भी बदतर होने वाला है।

स्वतंत्रता के बाद:

1960 में पहले चरण में, यह समानांतर संघर्ष और सहयोग का चरण था

1. अमेरिका ने कश्मीर मुद्दे पर यूनाइटेड नेशंस सिक्योरिटी काउंसिल में भारत का समर्थन नहीं किया।

2. भारत, साम्यवादी चीन को मान्यता देने वाला पहला गैर- साम्यवादी राष्ट्र बन गया।

3. भारत ने उत्तर कोरिया के खिलाफ संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व के प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया, जिसने चीन को आक्रामक भी कहा।

4. भारत संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में चीन को स्थायी सीट देने पर जोर देता रहा।

सहयोग के उदाहरण

1. 1962 के युद्ध में भारत ने अमेरिका का रुख किया और अमेरिका मदद भेजने को तैयार हो गया, लेकिन जब तक चीन ने भारत के खिलाफ एकतरफा युद्ध विराम की घोषणा कर दी।

2. 1965 में, पाकिस्तान के साथ युद्ध में अमेरिका ने दोनों देशों को आर्थिक और सैन्य सहायता निलंबित कर दी और पाकिस्तान के अमेरिका का सहयोगी होने के बावजूद पाकिस्तान का समर्थन नहीं किया।

3. संयुक्त राज्य अमेरिका ने खाद्य सुरक्षा के संकट को दूर करने में भारत की मदद की।

4. हरित क्रांति में भी अमेरिका ने भारत की मदद की।

इस चरण के दौरान, भारत ने अमेरिकी विरोधी बयानबाजी जारी रखी। भारत गुट निरपेक्षता पर जोर देता रहा। भारत, वियतनाम युद्ध में संयुक्त राज्य अमेरिका की भागीदारी के लिए बहुत महत्वपूर्ण था परन्तु भारत ने अमेरिका का कूटनीतिक साथ नहीं दिया । अंततः संयुक्त राज्य अमेरिका ने चीन और पाकिस्तान जैसे अधिक व्यावहारिक देशों के लिए भारत को छोड़ दिया। इसे नेहरू के प्रशासन और

नेहरू के समाजवादी धड़े के साथ गठबंधन की विफलता के रूप में देखा जा सकता है। इस समय के दौरान दक्षिण एशिया में अमेरिका ने अमेरिका-पाकिस्तान-चीन अक्ष विकसित किया।

दूसरे चरण में

1970 से 1990 तक:

यह एकमात्र संघर्ष का चरण है और कोई सहयोग नहीं-

1. भारत ने सोवियत रूस के साथ शांति और दोस्ती की संधि में प्रवेश किया।

2. एक नई धुरी विकसित हुई जो भारत- सोवियत रूस और वियतनाम थी।

3. अमेरिका और चीन दोनों ने 1971 के युद्ध में भारत को धमकी दी थी।

4. अमेरिका ने पोखरण के बाद भारत के खिलाफ भेदभाव का व्यवहार किया है।

पूरे चरण में, अमेरिका की दक्षिण एशिया नीति का ध्यान परमाणु अप्रसार पर था। भारत विपरीत खेमे में था, भारतीय अर्थव्यवस्था बंद थी इसलिए केवल विचार ही परमाणु प्रसार था।

तीसरे चरण के दौरान

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद से, भारत ने पहली बार 1989 के खाड़ी युद्ध में संयुक्त राज्य अमेरिका के युद्धविमानों को फिर से भरने की अनुमति दी थी, जबकि इराक के साथ भारत के करीबी संबंध थे। सोवियत रूस के विघटन ने न केवल भारत की अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया था, बल्कि भारत को पश्चिम की ओर देखने के लिए रणनीतिक वातावरण भी मजबूर कर दिया था। एशले टेलिस के अनुसार, वर्तमान भारत अमेरिकी रणनीतिक साझेदारी एशिया में बदलते परिदृश्य की पृष्ठभूमि पर आधारित है। अमेरिका शक्ति के संतुलन को बनाए रखने के लिए बढ़ते चीन के संदर्भ में भारत का समर्थन करने के लिए आया था। भारतीय अर्थव्यवस्था का खुलना संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए आर्थिक और रणनीतिक अनिवार्यता के बावजूद एक और मजबूत प्रोत्साहन था, क्लिंटन प्रशासन की प्रमुख चिंताओं में से एक था भारत का परमाणु अप्रसार संधि (एनपीटी) और व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि (सीटीबीटी) में शामिल होना। पोखरण 2 के बाद भारत और अमेरिका के संबंध बिगड़ गए थे और अमेरिका ने फिर से प्रतिबंध लगाए थे। उसके बाद अमेरिका भारत ने रणनीतिक भागीदार बनना शुरू कर दिया था।

श्रुब तलबोट और जसवंत सिंह की 1998 से 2000 तक की बातचीत[xii]

अमेरिका के डिप्टी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट और भारतीय विदेश मंत्री 2 साल में 3 बार मिले इस भेंट का उद्देश्य भारत को परमाणु हथियार सरेंडर करना और परमाणु अप्रसार संधि (एनपीटी) और व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि (सीटीबीटी)[xiii] में शामिल होना था। पहली बार, भारत और अमेरिका ने

एक-दूसरे को समझा। इसने रणनीतिक साझेदारी की नींव रखी इस साझेदारी की उपलब्धि यह थी कि पहली बार अमेरिका ने कारगिल संकट में कश्मीर पर एक संपूर्ण भारतीय रुख अपनाया और पाकिस्तान को संयम और एलओसी का सम्मान करने के लिए और उसी रूप में काम करने के लिए कहा। 2000 में अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन की भारत यात्रा ने रणनीतिक साझेदारी की नींव रखते हुए एक वक्तव्य जारी किया। वर्ष 2003 में, भारत ने चीन के साथ रणनीतिक साझेदारी की। वर्ष 2004 में, वाजपेयी ने अमेरिका का दौरा किया और रणनीतिक साझेदारी के पहले चरण के सफल समापन की घोषणा की और रणनीतिक साझेदारी में अगला कदम शुरू किया[xiv]| रणनीतिक साझेदारी के लिए अगले कदम के घटक असैन्य परमाणु समझौते, उच्च प्रौद्योगिकी और अंतरिक्ष में सहयोग, पारस्परिक चिंताओं के क्षेत्रों पर व्यापक परामर्श और बातचीत के संस्थागतकरण हैं।

वर्ष 2004 में प्रधान मंत्री वाजपेयी ने संयुक्त राज्य अमेरिका को भारत का स्वाभाविक सहयोगी[xv] कहा| वर्ष 2005 में, मनमोहन सिंह की यात्रा के दौरान 1,2,3 समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए, जहां संयुक्त राज्य अमेरिका को भारत का स्वाभाविक भागीदार बताया गया है। हालांकि ओबामा प्रशासन के तहत संस्थागत संवाद हुआ है, एवं यह एक रणनीतिक साझेदारी के रूप में प्रकट हुआ है परन्तु संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन प्रशासन के दौरान एक मुकाम तक पहुंच गया था। भारत और अमेरिका के बीच असहमति निम्नलिखित मामलों पर बनी रही

1. नियमित संवाद की कमी

2. जलवायु परिवर्तन

3. द्विपक्षीय निवेश संधि

4. बौद्धिक सम्पदा विषय

5. अफगानिस्तान में अमेरिका की नीति

6. मुंबई आतंकी हमले में शामिल लोगों के खिलाफ किसी भी कार्रवाई के लिए अमेरीका पाकिस्तान को धकेलने में नाकाम रहा

7. भारत-अमेरिका परमाणु मुद्दा

अमेरिकी विदेश नीति का आधार:

अमेरिका की विदेश नीति हंस जे. मोर्गन्थाऊ की पुस्तक 'राज्यों के मध्य राजनीति'[xvi] पर आधारित है। उनकी पुस्तक अमेरिकी विदेशी नीति निर्माताओं के लिए एक मैनुअल अर्थात एक दस्ती की तरह है। पश्चिम के अनुसार वह यथार्थवाद के जनक कहे जाते हैं। जिसमें उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के 6 कानूनों का उल्लेख किया है।

 ISSN: 2321-0443

1. मानव प्रकृति और राजनीति के बीच संबंध[xvii]:

सभी राजनीति की तरह, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति भी मानव स्वभाव पर आधारित है। मनुष्य एक शक्ति प्राप्त करने वाला प्राणी है। इसलिए अंतर्राष्ट्रीय राजनीति एक अखाड़ा है जहां राज्य अपनी शक्ति बढ़ाने की कोशिश करता है।

2. राष्ट्रहित[xviii]:

जैसे स्व-हित मानव जीवन के लिए मुख्य प्रेरणा है, वैसे ही राष्ट्रीय हित राज्य की विदेशी नीतियों के लिए मुख्य प्रेरणा है।

3. राष्ट्रीय हित की प्रकृति [xix]:

गतिशील अवधारणा के संदर्भ में राष्ट्रीय हित एक गतिशील अवधारणा है जो बदलती रहती है।

4. नैतिकता की प्रासंगिकता[xx]:

राजनीति में नैतिकता की कोई प्रासंगिकता नहीं है, राष्ट्र की इस दिशा के लिए कोई सार्वभौमिक मानक नहीं हैं व्यावहारिकता ही राजनीति की नैतिकता है। हमें यह देखना होगा कि दी गई स्थिति में क्या सही है और क्या सार्वभौमिक रूप से सही नहीं है।

5. **विचारधारा** की भूमिका[xxi]:

राष्ट्रों में एक विचारधारा होती है लेकिन विचारधारा की कोई प्रासंगिकता नहीं होती है। राष्ट्रों को नैतिक आकांक्षाओं के लिए अपनी विचारधारा दूसरों पर थोपने की कोशिश नहीं करनी चाहिए।

6. अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के क्षेत्र में[xxii]:

अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, न तो नैतिकता सामान्य है और न ही अर्थशास्त्र है, यह एक स्वायत्त क्षेत्र है जो इसे प्रेरणादायक बनाता है लेकिन यह है कि ऐसा ही है।

भारतीय विदेश नीति का आधार:

प्राचीन समय में

कौटिल्य के मंडल सिद्धान्त[xxiii]

1. विजिगीषु (आकांक्षी राजा)

2. अरी (विजिगीषु का शत्रु)

3. मित्र (विजिगीषु का मित्र)

4. अरि-मित्र (शत्रु का दोस्त)

5. मित्र - मित्र (मित्र का मित्र)

6. अरि-मित्र-मित्र (शत्रु का दोस्त)

7. पार्षनिग्रह (जो पीछे से हमला करता है)

8. आक्रान्द (पीछे का सहयोगी)

9. पार्थनिग्रहसार (पीछे के शत्रु का सहयोगी)

10. आक्रान्दसार (पीछे के सहयोगी का सहयोगी)

11. मध्यमा (अंतर-मध्यस्थ अवस्था)

12. उदासीन (तटस्थ अवस्था)

आधुनिक समय में:

नेहरू की गुटनिरपेक्ष नीति[xxiv]

"भारतीय स्वतंत्रता के शुरुआती वर्षों में जवाहरलाल नेहरू के अलावा कोई और होता तो भारत की विदेश नीति एक अलग रास्ता अपना सकती थी। 7 सितंबर 1946 को ऑल इंडिया रेडियो पर अपने पहले प्रसारण में, नेहरू ने विदेशी मामलों के बारे में अपने दृष्टिकोण का खुलासा किया है। हालांकि, महान शक्तियों के साथ सहयोग की मांग करते हुए, भारत ने स्पष्ट किया कि वह शक्ति की राजनीति में शामिल नहीं होगा। 'अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में नेहरू की भागीदारी उनके आदर्शवाद से प्रेरित थी। नेहरू ने स्वीकार किया कि भारत की घोषित तटस्थता ने शीत युद्ध में नायक की भूमिका निभाई थी। जून 1950 में कोरियाई युद्ध के प्रकोप के साथ पहली बार गुटनिरपेक्षता की उनकी नीति का गंभीर परीक्षण किया गया था। संयुक्त राष्ट्र में भारत का प्रतिनिधित्व करने के लिए कृष्ण मेनन की नियुक्ति ने भारत और पश्चिमी ब्लॉक के बीच सामयिक गलतफहमियों और तनाव को बढ़ा दिया।'

गुजराल सिद्धांत[xxv]**:**

गुजराल सिद्धांत, भारत के तत्काल पड़ोसियों , विशेष रूप से पाकिस्तान, के साथ विदेशी संबंधों के संचालन को निर्देशित करने के लिए पांच सिद्धांतों का एक सेट है जैसा कि गुजराल द्वारा लिखा गया है।

एक्ट ईस्ट पॉलिसी[xxvi]

भारत की एक्ट ईस्ट पॉलिसी विभिन्न स्तरों पर विशाल एशिया-प्रशांत क्षेत्र के साथ आर्थिक, रणनीतिक और सांस्कृतिक संबंधों को बढ़ावा देने के लिए एक राजनयिक पहल है। 1992 से देश ने पूर्ववर्ती राष्ट्रों की अपने समकालीन अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में इस क्षेत्र के महत्व को रेखांकित किया है। 'एक्ट ईस्ट' और

इसके शुरुआती स्वरूप, 'लुक ईस्ट' अलग नहीं है, बल्कि, वे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, जो दो अलग-अलग प्रतिनिधित्व करते हैं, लेकिन एशिया-प्रशांत क्षेत्र के प्रति भारत की नीति के विकास में चरणों को जारी रखते हैं। जब भारत ने 1991 में लुक ईस्ट नीति शुरू की, तो इसकी आर्थिक ताकत इसकी वैश्विक स्थिति और बाहरी वातावरण वे नहीं थे जो वर्तमान में हैं। अपने प्रक्षेपण के समय भारत एक राज्य-नियंत्रित आर्थिक शासन से अधिक उदारीकरण के लिए संक्रमण से जूझ रहा था। देश को नए उभरते आर्थिक परिवेश में समायोजित होने में कई साल लग गए। जब 2014 में, प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने 'एक्ट ईस्ट नीति' लॉन्च की, तो भारत की अर्थव्यवस्था अपेक्षाकृत मजबूत थी और दशकों पहले की तुलना में इसकी वैश्विक पहुँच अधिक थी। मोदी ने चीन की बढ़ती आर्थिक और सैन्य ताकत और विकसित क्षेत्रीय व्यवस्था के लिए इसके निहितार्थ पर भारत के साथ आम चिंताओं को साझा करने वाले देशों के साथ आर्थिक, रणनीतिक और राजनयिक संबंधों को तेज करने के लिए एक नया जोर दिया।

मोदी सरकार के तहत भारत और अमेरिका के बीच संबंध स्वाभाविक रूप से बढ़ रहे हैं। प्रधानमंत्री मोदी का अमेरिका के प्रति स्पष्ट झुकाव है। मोदी सरकार ने चिंताओं को दूर करने के लिए कदम उठाए हैं। प्रधानमंत्री मोदी ने पहले 2.5 वर्षों से भी कम समय में 4 बार[xxvii] अमेरिका का दौरा किया। प्रधानमंत्री मोदी ने 2017[xxviii] में अमेरिकी राष्ट्रपति के निमंत्रण पर फिर से उनसे मुलाकात की, फिर वर्ष 2019[xxix] में संयुक्त राज्य अमेरिका का दौरा किया और 2020 में अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रम्प[xxx] का भव्य स्वागत किया। प्रधानमंत्री मोदी की पहली अमेरिका यात्रा के दौरान मोदी और ओबामा ने 'चलें साथ साथ' (संयुक्त रूप से हम चलते हैं)[xxxi] नामक एक संयुक्त बयान जारी किया। मोदी सरकार ने असैन्य परमाणु मुद्दे, बौद्धिक सम्पदा विषय मुद्दे और निवेश के मुद्दों पर मतभेदों को दूर करने के लिए कार्य समूहों की स्थापना की। ओबामा गणतंत्र दिवस के अतिथि के रूप में आने वाले पहले अमेरिकी राष्ट्रपति बने। ओबामा की भारत यात्रा के दौरान, एक संयुक्त वक्तव्य जारी किया गया था जिसमें स्पष्ट रूप से कानून के शासन को परेशान करने के चीनी प्रयास के खिलाफ एशिया- प्रशांत में भारत-अमेरिका साझेदारी का उल्लेख किया गया था। ओबामा की भारत यात्रा और अमेरिका के रक्षा व्यापार और प्रौद्योगिकी के मुद्दे के दौरान अमेरिका ने भारत के साथ 'लोजिस्टिक्स एक्सचेंज मेमोरंडम ऑफ़ एग्रीमेंट' (एलईएमओए) पर हस्ताक्षर किए। अमेरिका ने भारत को मिसाइल प्रौद्योगिकी नियंत्रण व्यवस्था एमटीसीआा में प्रवेश दिया। भारत को एक प्रमुख रक्षा साझेदार का दर्जा दिया गया है। अब दो महान राष्ट्रों के उभरते संबंधों को बनाए रखने के लिए जो बाइडनऔर नरेंद्र मोदी पर दायित्व होगा।

संदर्भ सूची

[i]https://www.presidency.ucsb.edu/documents/agreed-principles-institutional-dialogue-between-the- united-states-and-india fe141 141 02/03/2021.

[ii] https://www.npr.org/templates/story/story.php?storyId=120712790 लिया गया 03/03/2021

[iii] वही

[iv] वही

[v]https://www.thehindu.com/opinion/lead/the-new-entente-with-the-us/article6831127.ece लिया गया 03/03/2021

[vi] वही

[vii] नयन, राजीव (2001) वाजपेयी विजिट एंड इंडो-अमेरिका रिलेशंस, आईडीएसए

[viii]https://carnegieendowment.org/2018/11/01/narendra-modi-and-us-india-relations-pub-77861 लिया गया 03/03/2021

[ix] वर्गीज, जॉर्ज के (2018), ओपन एम्ब्रेस इंडिया. अमेरिका टाई इन द एज ऑफ मोदी एंड ट्रम्प पेंगुइन विकी पृष्ठ 128

[x]https://www.google.com/amp/s/www.thehindu.com/opinion/lead/india-and-the-us-its-complicated/article24835445.ece/amp/ लिया गया 03/03/2021

[xi] वर्गीज, जॉर्ज के, 2018, ओपन एम्ब्रेस: इंडिया-अमेरिका टाई इन द एज ऑफ मोदी एंड ट्रम्प, पेंगुइन विकी पृष्ठ 165

[xii] https://www.mea.gov.in/articles-in-indian-media.htm?dtl/18633/The+ Indous engagement लिया गया 03/03/2021

[xiii] वही

[xiv] The Government of India, the Indian Embassy, Prime Minister Atal Bihari Vajpayee's Adress to the joint session of the United States Congress, September 14, 2000, Washington, DC. लिया गया 03 /03/ 2021

[xv]https://www.google.com/amp/s/m.economictimes.com/news/politics-and-nation/vajpayee-bushtook-our-ties-to-a-new-level-us-ambassasor/amp_articleshow/65447482.cms लिया गया 03/03/2021

[xvi] मॉर्गनथाउ, हंस जे (1948), पॉलिटिक्स इन नेशंस, हरियाणा साहित्य अकादमी, पृष्ठ 17-29

[xvii] वही

[xviii] वहीं

xix वही

xx वही

xxi वही

xxii वही

xxiii 'https://www.sansarlochan.in/kautilya-saptang-mandal-siddhant / लिया गया 03/03/2021

xxiv नंदा, बी. आर. (1998), जवाहरलाल नेहरू : रिबेल और स्टेट्समैन, पृष्ठ 01

xxv Ex-Prime Minister IK Gujral dies at 92". Tribune India. 1 December 2012. Retrieved 1 December 2012, लिया गया 03/03/2021

xxvi थॉमस लिंच और जेम्स जे प्रेजिस्ट अप, भारत-जापान सामरिक सहयोग और भारत एशिया-प्रशांत क्षेत्र में अमेरिकी रणनीति के लिए निहितार्थ (वाशिंगटन डीसी सेंटर फॉर स्ट्रेटेजिक रिसर्च इंस्टीट्यूट फॉर नेशनल स्ट्रेटेजिक स्टडीज, नेशनल डिफेंस यूनिवर्सिटी, 2017 पृष्ठ 10

xxviihttps://www.pmindia.gov.in/en/details-of-foreigndomestic-visits/ModivisitsAmerica लिया गया 03/03/2021

xxviii वही

xxix वही

xxxhttps://www.thehindu.com/news/national/watch-donald-trump-visit-to-india/article30887793.ecetrumpinindia लिया गया 03/03/2021.

xxxihttps://www.google.com/amp/s/www.hindustantimes.com/india/ahead-of-talks-modi-obama-say-chalein-seath-saath/story-EPcATоj2Zj8upSU6wOfi_amp.html_ लिया गया 03/03/2021

अध्याय 22

भारत-इजरायल संबंधों के नवीनतम आयाम

डॉ. भरत प्रताप सिंह
पोस्ट डॉक्टरेट फेलो,
इंडियन काउंसिलऑफ़ सोशल
साइंस रिसर्च (I.C.S.S.R.)

इजरायल और स्वतंत्र लोकतांत्रिक भारत का उदय एक ही वर्ष 1947 में हुआ था। हालांकि, आधिकारिक तौर पर इजरायल को स्वतंत्रता 1948 में मिली। दोनों देशों के शुरुआती संबंध अच्छे नहीं थे। 1947 में ही भारत ने इजरायल को एक राष्ट्र के तौर पर मान्यता देने के विरोध में वोट किया। इसी तरह से 1949 में एक बार फिर भारत ने संयुक्त राष्ट्र में इजरायल को सदस्य देश बनाने के विरोध में वोट किया था। इजरायल के उदय के साथ शुरुआती दों साल में भारत का पक्ष इजरायल के खिलाफ रहा।
भारत और इजराइल दोनों ही देशों ने ब्रिटेन से कुछ महीनों के अंतराल में ही स्वतंत्रता प्राप्त की थी। पर लगभग चार दशकों तक ये दोनों एक-दूसरे की विपरीत दिशा में आगे बढ़ते रहे। एक ओर भारत ने[1] एक नेता के रूप में अरब जगत और सोवियत संघ के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाए, वहीं दूसरी ओर इजराइल ने अमेरिका और पश्चिमी यूरोप के देशों के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किये।
1950 में पहली बार भारत ने बतौर स्वतंत्र राष्ट्र इजरायल को मान्यता दी। इसके साथ ही भारत ने इजरायल के काउंसल को मुंबई में एक स्थानीय यहूदी कॉलोनी में 1951 में नियुक्त किया। इसे 1953 में अपग्रेड कर काउंसलेट का दर्जा दिया। 1956 में स्वेज नहर के विवाद के बीच इजरायल के विदेश मंत्री मोशे शेरेट ने भारत का दौरा किया। जानकारों के अनुसार 1962 के चीन युद्ध के दौरान इजरायल ने पुरानी घटनाओं को एक सिरे से भुलाकर भारत की हथियारों और दूसरे युद्ध[2] साधनों से मदद की। उस वक्त भारत के प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने अपने इजरायली समकक्ष से पत्र लिखकर मदद मांगी थी। इजरायल के तत्कालीन प्रधानमंत्री बेन गुरियन ने हथियारों से भरे जहाज को भारत रवाना कर पत्र का उत्तर दिया। हालांकि, सार्वजनिक तौर पर दोनों देशों ने एक-दूसरे से दूरी ही बरती क्योंकि तेल अवीव की निकटता वॉशिंगटन से हमेशा रही।
दूसरी तरफ भारत गुट निरपेक्ष राष्ट्र था और 1961 में बनाए गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का संगठन उसूलन सोवियत रूस की तरफ झुका था। हालांकि सभी प्रमुख युद्धों में इजरायल ने भारत की भरपूर मदद की। 1971 में पाकिस्तान युद्ध और 1999 में करगिल युद्ध में भी इजरायल ने भारत को अत्याधुनिक हथियारों से मदद की। इतना ही नहीं इंदिरा गांधी ने जब भारत की खुफिया एजेंसी रॉ का गठन किया था तब भी इजरायल की खुफिया एजेंसी मोसाद ने भारत का व्यापक स्तर पर सहयोग किया।
पहली बार 1992 में भारत के प्रधानमंत्री पी. वी. नरसिम्हा राव ने भारत-इजरायल के बीच कूटनीतिक संबंध स्थापित किए। यहां यह भी बता दें कि अगस्त 1977 में मोरारजी देसाई के वक्त में इजराइली विदेश मंत्री मोशे दायान का भारत में एक गोपनीय दौरा हुआ था। इसके बाद से दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय संबंधों में गर्माहट आनी प्रारंभ हो गयी थी। 1992 में राजनयिक संबंध स्थापित होने के बाद से 2000 में पहली बार लालकृष्ण आडवाणी एक वरिष्ठ मंत्री की हस्ती से इजरायल गए थे।

उसी साल आतंकवाद पर एक इंडो-इजराइली संयुक्त कार्य समूह का गठन किया गया। 2003 में तत्कालीन राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ब्रजेश मिश्रा ने अमरीकी यहूदी कमिटी में एक भाषण दिया और उन्होंने इस्लामिक अतिवाद से लड़ने के लिए भारत, इजरायल और अमरीका के साथ आने की वकालत की। हालांकि, इस फैसले के पीछे बहुत से वैश्विक कारण थे, लेकिन भारतीय विदेश नीति में इजरायल का महत्व बढ़ना प्रारंभ हो गया था।

भारत इस बात की समीक्षा कर रहा था जैसे ही सोवियत रूस का विघटन हुआ और इजरायल- फलस्तीन के बीच शांति प्रक्रिया के शुरू हुई भारत ने इजरायल में अपना हस्तक्षेप बढ़ा दिया। इजरायल के साथ भारत के बदलते संबंधों की एक वजह जॉर्डन, सीरिया और लेबनान जैसे अरब मुल्कों ने भी भारत को अपनी रूस और अरब की ओर झुकी विदेश नीति पर सोचने के लिए मजबूर किया। पीएलओ (फलस्तीन की आजादी के लिए संघर्ष करनेवाली संस्था) के प्रमुख, यासिर अराफात के व्यक्तिगत तौर पर इंदिरा गांधी से अच्छे संबंध थे और कहा जाता है कि मुस्लिम वोटों के लिए वह इंदिरा के साथ रैली करने को भी तत्पर रहते थे लेकिन अराफात और लीबिया के तानाशाह कर्नल गद्दाफी हर समय भारत की कश्मीर नीति का विरोध किया और इसके कारण दुनिया के मंचों पर भारत की फजीहत होती रही।

इजरायल और भारत के बीच बदले संबंधों की असली कहानी सार्वजनिक तौर पर 2015 से नजर आने लगी। संयुक्त राष्ट्र में इजरायल में मानवाधिकार अधिकारों के हनन संबंधी वोट प्रस्ताव के वक्त भारत गैर-मौजूद रहा और इसी के साथ सार्वजनिक रूप से भारत ने इजरायल का साथ देना प्रारंभ कर दिया। इसके बाद किसी भारतीय प्रधानमंत्री का पहला दौरा इजरायल में 2017 में हुआ और पीएम नरेंद्र मोदी ने 3 दिनों का इजरायल दौरा किया। 2018 में बेंजामिन नेतन्याहू ने 6 दिनों का भारत का विस्तृत दौरा किया। हालांकि, संयुक्त राष्ट्र में भारत ने यरुशलम को इजरायल की राजधानी के तौर पर मान्यता संबंधी प्रस्ताव के विरोध में वोट डाले लेकिन अब जाहिर तौर पर इजरायल और भारत के बीच दोस्ती पक्की हो चुकी थी।

मोदी के प्रधानमंत्री बनते ही इस बात का अंदाजा लगने लगा था कि अब भारत की विदेश नीति बड़े पैमाने पर परिवर्तित होगी। मोदी जब गुजरात के मुख्यमंत्री थे तो 2006 में इजरायल जा चुके थे और जब वो प्रधानमंत्री के रूप में इसराइली पीएम नेतन्याहू से पहली बार मिले तो उन्हें बतौर राष्ट्र प्रमुख इजरायल आने का उन्होंने न्योता दिया। भारत में भी लोगों ने कहना शुरू कर दिया था कि मोदी काल में इजरायल और भारत के बीच रणनीतिक साझेदारी स्थापित मानदंडों से अलग होने जा रही है, लेकिन इसी महीने संयुक्त राष्ट्र की आम सभा में अमरीकी राष्ट्रपति डोनल्ड ट्रंप द्वारा यरूशलम को इजरायल की राजधानी के रूप में दी गई मान्यता को खारिज करने का प्रस्ताव आया तो भारत ने इजरायल के खिलाफ वोट किया।

भारत और इजरायल के संबंधों को लेकर कहा जाता है कि दोनों देशों के बीच गोपनीय प्रेम संबंध बहुत पहले से रहे हैं। इस मामले में पूर्व विदेश सचिव कंवल सिब्बल कहते हैं कि यह बात अब पुरानी हो गई। उन्होंने मानना है कि दोनों देश में अब खुला प्रेम संबंध हैं। भारतीय प्रधानमंत्री वहां जा रहे हैं, इजराइली प्रधानमंत्री यहां आ रहे हैं। मोदी और नेतन्याहू के बीच कई मुलाकातें हो चुकी हैं। दोनों देशों के बीच रक्षा सौदों में बढ़ोतरी हुई है। सिब्बल कहते हैं कि अब इसमें क्या गोपनीयता है?

नेहरूयुगीन विदेश नीति जिसमें तीसरी दुनिया की एकता और अहिंसा के सिद्धांत अहम हैं, के आधार पर भारत फलस्तीनियों का खुलकर समर्थन करता रहा है बावजूद इसके भारत ने 1950 में इजरायल को एक स्टेट के रूप में मान्यता दी थी। कई विशेषज्ञ इस बात को मानते हैं कि भारत जैसे-जैसे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक मजबूत किरदार के रूप में उभरता गया वैसे-वैसे अपने हित आधारित नीतियों को अपनाता गया। भारत इजराइल सम्बन्धों पर बहुत शोध कार्य हुए हैं किन्तु मेरा शोध पत्र समसामयिक है एवं 2014 एवं 2019 में नई सरकार बनने के बाद आये नये आयामों को दर्शाता है।

आर्थिक और वाणिज्यिक सम्बन्ध
पिछले 25 वर्षों में दोनों देशों के बीच द्विपक्षीय व्यापार 200 मिलियन डॉलर से बढ़कर 4 बिलियन डॉलर (रक्षा क्षेत्र के अतिरिक्त) हो गया है। इसके परिणामस्वरूप भारत इजराइल का 10वाँ सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार बन गया है।
भारत द्वारा इजराइल को कीमती पत्थरों एवं धातुओं, रासायनिक उत्पादों, टेक्सटाइल एवं टेक्सटाइल आर्टिकल्स, पौधों व वनस्पति उत्पादों तथा खनिज उत्पादों का निर्यात किया जाता है। भारत द्वारा इजराइल से कीमती पत्थरों एवं धातुओं, रसायनों (मुख्यतः पोटाश) और खनिज उत्पादों, बेस मेटल्स एवं मशीनरी तथा परिवहन उपकरणों का आयात किया जाता है।
कृषि
दोनों देशों के बीच कृषि क्षेत्र में सहयोग देने के लिए एक द्विपक्षीय समझौता (भारत-इजराइल कृषि परियोजना) हस्ताक्षरित किया गया। द्विपक्षीय एक्शन प्लान (2015-18) का उद्देश्य डेयरी और जल जैसे नए क्षेत्रों में सहयोग का विस्तार करना है।
भारत को बागवानी के मशीनीकरण, संरक्षित कृषि, बाग और कैनोपी प्रबन्धन, नर्सरी प्रबन्धन जैसे क्षेत्रों में इजराइली विशेषज्ञता और प्रौद्योगिकियों का लाभ हुआ है। हरियाणा और महाराष्ट्र जैसे राज्यों को सूक्ष्म सिंचाई एवं फसल कटाई के बाद के प्रबंधन में भी लाभ मिला है। भारत में अब इजराइली ड्रिप-इरीगेशन टेक्नोलॉजी और उत्पादों को व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।
रक्षा क्षेत्र एवं सुरक्षा
रूस और अमेरिका के बाद इजराइल भारत को हथियारों की आपूर्ति करने वाला तीसरा बड़ा देश है। भारत द्वारा इजराइल से महत्त्वपूर्ण रक्षा प्रौद्योगिकियों का आयात किया जाता है। दोनों देशों के सशस्त्र बलों और रक्षा कर्मियों के मध्य परस्पर नियमित सम्पर्क बना रहता है।
विज्ञान और प्रौद्योगिकी
दोनों देशों के बीच विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में कई प्रकार के समझौता ज्ञापनों 2 पर हस्ताक्षर हुए (जैसे: अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी) हैं। जनवरी 2014 में, भारत और इजराइल द्वारा भारत-इजराइल सहयोग निधि (कोऑपरेशन फण्ड) को स्थापित करने के लिए गहन अध्ययन किया जा रहा है। इसका उद्देश्य संयुक्त वैज्ञानिक और तकनीकी सहयोग के जरिये नवाचारों को बढ़ाना है।
5जी
भारत, इजरायल और अमेरिका ने विकास वाले क्षेत्रों तथा अगली पीढ़ी की उभरती प्रौद्योगिकियों में आपसी सहयोग से काम करना शुरू कर दिया है। तीनों देश पारदर्शी, खुले, विश्वसनीय और सुरक्षित फाइवजी संचार नेटवर्क पर भी काम कर रहे हैं। बेंगलुरु, सिलिकॉन वैली और तेल अवीव में इस टेक्नोलॉजी पर शोध होगा। यह तीनों ही शहर अपने-अपने देश में टेक्नोलॉजी हब के तौर पर जाने जाते हैं।
भारत-इजरायल के बीच का संबंध पांच बातों पर आधारित है। पहला स्टॉकहोम इंटरनेशनल पीस रिसर्च इंस्टीट्यूट के मुताबिक, इजरायल के लिए भारत शीर्ष हथियार खरीददारों में से एक है। साल 2012 से 2016 के बीच इजरायल द्वारा किए गए कुल हथियार निर्यात में 41 फीसदी हिस्सा केवल भारत का था। इजरायल भारत के लिए तीसरा सबसे बड़ा हथियारों का श्रोत है, जिसके तहत 2012 से 2016 के बीच हुए आयात में अमेरिका (14 प्रतिशत), रूस (68 प्रतिशत) के बाद इजरायल की 7.2 प्रतिशत की हिस्सेदारी थी। वैसे इन दोनों देशों के बीच सहयोग के शुरुआती संकेत 1962 में भारत-चीन युद्ध के दौरान देखने को मिले थे, जब इजरायल ने भारत को सैन्य सहायता प्रदान की थी। इजरायल ने पाकिस्तान के साथ दो युद्धों के दौरान भी भारत की सहायता की।

भारत के असैन्य हवाई वाहनों (यूएवी) का आयात भी अधिकांश इजरायल से होता है। इजरायल से खरीदे गए 176 यूएवी में से 108, खोजी यूएवी हैं और 68 हेरोन यूएवी हैं। अप्रैल 2017 में, भारत और इजरायल ने एक उन्नत मध्यम दूरी की सतह से हवा में मार करने वाली मिसाइल प्रणाली के लिए दो अरब डॉलर के सौदे पर हस्ताक्षर किए थे, जो भारतीय सेना को 70 किलोमीटर तक की सीमा के भीतर विमान, मिसाइल और ड्रोन को मार गिराने की क्षमता प्रदान करता है। भारत ने उस साल मई में इजरायल निर्मित स्पाइडर त्वरित प्रतिक्रिया युक्त सतह से हवा में मार करने वाली मिसाइल का सफलतापूर्वक परीक्षण किया था। भारतीय वायुसेना (आईएएफ) इस प्रणाली को अपनी पश्चिमी सीमा पर तैनात करने की योजना बना रही है। आतंकवाद के खिलाफ एक संयुक्त कार्यसमूह के माध्यम से भारत और इजरायल आतंकवाद के मुद्दों पर भी घनिष्ठ सहयोग करते हैं।

दूसरा कूटनीति, दोनों देशों के बीच राजनयिक संबंधों के 25 साल के प्रतीक के रूप में तीन भारतीय नौसैन्य जहाजों, विध्वंसक आईएनएस मुंबई, युद्धपोत आईएनएस त्रिशूल और टैंकर आईएनएस आदित्य ने मई 2017 में हाइफा बंदरगाह पर एक सद्भावना यात्रा की थी। तीसरा कृषि, 2015 से 2018 तक के लिए भारत-इजरायल कृषि कार्य योजना संचालित हो रही है और भारतीय किसानों के समक्ष नवीनतम तकनीक का प्रदर्शन करने वाले प्रस्तावित 26 कृषि उत्कृष्टता केंद्रों में से 15 इजरायल की मदद से विकसित किए जा रहे हैं। हरियाणा में करनाल के घरुंड में स्थित कृषि उत्कृष्टता केंद्र पर हर साल 20,000 से अधिक किसान जाकर लाभ लेते हैं। चैथा जल प्रबंधन, 28 जून, 2017 को कैबिनेट ने भारत में जल संरक्षण के राष्ट्रीय अभियान के लिए इजरायल के साथ समझौता ज्ञापन (एमओयू) को मंजूरी दी थी।

प्रौद्योगिकी निपुण इजरायल ने जल प्रबंधन प्रौद्योगिकियां विकसित की है, क्योंकि ताजा पेयजल के सीमित स्रोतों के साथ वह एक अर्ध-शुष्क क्षेत्र में स्थित देश है। इससे पहले भारत और इजरायल ने नवंबर 2016 में जल संसाधन प्रबंधन और विकास सहयोग पर समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए थे। पांचवा व्यापार, इजरायल 2016-17 में भारत का 38वां सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार रहा है, जिसके तहत 5.02 अरब डॉलर (33,634 करोड़ रुपये) का व्यापार हुआ, जो 2012-13 के मुकाबले 18 फीसदी कम था। भारत के पक्ष में व्यापार संतुलन 2016-17 में 1.10 अरब डॉलर (7,370 करोड़ रुपये) रहा था। भारत ने इजरायल को 2016-17 में 1.01 अरब डॉलर मूल्य के खनिज ईंधन और तेलों के निर्यात किए थे।

संबंधों का डी-हायफनेशन

डी-हायफनेशन[3] का अर्थ है दो संस्थाओं को डीलिंक करना अर्थात् उन्हें एक-दूसरे से स्वतंत्र रूप में देखना।अब इजराइल के साथ भारत के सम्बन्ध, फिलीस्तीनियों के साथ भारत के संबंधों में स्वंतत्र तथा अपने अलग आधारों पर विकसित होंगे। इससे भारत के राष्ट्रीय हितों को प्रभावी ढंग से संबोधित करने के लिए नए बाजारों तथा प्रौद्योगिकियों तक विविधतापूर्ण पहुँच के अवसरों को बल मिलेगा।

शीत-युद्ध के दौरान हायफनेशन एक अनिवार्यता थी, लेकिन बाद के दिनों में अरब जगत के रूठ जाने के डर से भारत द्वारा इस दृष्टिकोण को आगे बढ़ाया जाता रहा है।हालाँकि, अरब जगत में अशांति के कारण वे एक मजबूत विदेशी नीति को आधार प्रदान करने में असमर्थ रहे, जिससे भारत को इजराइल के साथ अपने संबंधों को आगे बढ़ाने में सरलता हुई।

फिलिस्तीन द्वारा इंटरपोल की सदस्यता प्राप्त की गई

हाल ही में, इंटरपोल द्वारा फिलिस्तीन राज्य को संगठन का सदस्य बनाए जाने से सम्बंधित प्रस्ताव पर मतदान कराया गया जिसे 2/3 से अधिक बहुमत के आधार पर स्वीकार कर लिया गया। इंटरपोल

अंतर्राष्ट्रीय पुलिस सहयोग की सुविधा प्रदान करने वाला एक अंतर्राष्ट्रीय संगठन है। इसमें 192 सदस्य देश हैं तथा इसका मुख्यालय लियोन, फ्रांस में स्थित है।

इजराइल द्वारा प्रस्ताव का इस आधार पर विरोध किया था कि फिलिस्तीन एक राज्य नहीं है और यह इंटरपोल की सदस्यता का पात्र नहीं हैं। अंतरिम इजराइल-फिलिस्तीन शान्ति समझौते के अंतर्गत, एक फिलिस्तीनी प्राधिकरण (अथॉरिटी) को अधिगृहित वेस्ट बैंक और गाजा पट्टी में सीमित स्वशासन की स्वीकृति प्रदान की गई थी।

2012 में, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने संयुक्त राष्ट्र में फिलिस्तीनी प्राधिकरण के पर्यवेक्षक के दर्जे में वृद्धि करते हुए उसे "निकाय" के बजाय से "गैर-सदस्यीय पर्यवेक्षक राज्य" (वेटिकन के समान) के रूप में मान्यता प्रदान की गई। इंटरपोल में अपनी सदस्यता के आधार पर, फिलिस्तीन इजराइल के नेताओं और[4] (इजराइल रक्षा बल) के सैन्य अधिकारियों के विरुद्ध अंतर्राष्ट्रीय वैधानिक कार्यवाही शुरू करने के लिए इंटरपोल का प्रयोग कर सकता है।

भारत का अमेरिका के विरुद्ध मतदान

संयुक्त राज्य अमेरिका की दबाव रणनीति के बावजूद भारत ने मतदान से अलग रहने के बजाय संयुक्त राज्य अमेरिका के विरुद्ध मतदान किया. यह निम्नलिखित पहलुओं को दर्शाता है: -

- यह भारत की गुटनिरपेक्ष नीति और फिलिस्तीनी पक्ष के समर्थन के अनुरूप है।
- यह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की स्थिति में "एक संतुलन शक्ति से एक अग्रणी शक्ति के रूप में परिवर्तन" का भी द्योतक है। इससे पूर्व भारत ने चागोस द्वीपसमूह पर मॉरिशस की संप्रभुता के दावे का समर्थन किया था और राज्य अमेरिका के विरोध के बावजूद[5] की सदस्यता ग्रहण की थी।
- फिलिस्तीन के समर्थन के माध्यम से भारत ने[6], जैसे[7] प्रमुख समूहों और प्रमुख यूरोपीय देशों के मत को समर्थन प्रदान किया।
- पश्चिमी एशियाई देशों की शांति और स्थिरता में भारत के महत्त्वपूर्ण हित अन्तर्निहित हैं जिसके कारण इस प्रकार के कदम उठाये जाने अनिवार्य हैं।

सहयोग के क्षेत्र

इजराइल की लचीली निर्यात नीति तकनीकी हस्तांतरित की भारतीय माँगों को पूरा करती है, जो सरकारों के समग्र विकास एजेंडे का एक महत्त्वपूर्ण भाग है।

इजराइल की तकनीकी क्षमता अपशिष्ट प्रबंधन और पुनर्संसाधन[8], अलवणीकरण, कृषि, अपशिष्ट जल पुनर्चक्रण[9], स्वास्थ्य, जैव प्रौद्योगिकी और नैनोटेक्नोलॉजी जैसे क्षेत्रों में काफी बेहतर है।

रूसी अर्थव्यवस्था एवं उसके रक्षा उद्योग में अनेक कमियाँ विद्यमान हैं तथा अमेरिका और यूरोप द्वारा भारत को रक्षा हथियारों की आपूर्ति[10] (पर भारत के हस्ताक्षर करने से इन्कार करने को देखते हुए) पर संदेह बना हुआ है। इस कारण इजराइल के महत्त्व में वृद्धि हुई है, क्योंकि भारत और इजराइल दोनों ही परमाणु शक्ति सम्पन्न देशों ने[11] पर हस्ताक्षर नहीं किये हैं।

भारत-इजराइल के मध्य आतंकवादरोधी सहयोग काफी मजबूत है और आतंकवाद पर एक संयुक्त कार्य समूह के माध्यम से पिछले कुछ वर्षों में यह निरंतर बढ़ा है। इस क्षेत्र में खुफिया जानकारी पर सहयोग इस साझेदारी का सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व रहा है।अमेरिका और इजराइल के मध्य घनिष्ठ सम्बन्धों से भारत को लाभ मिल सकता है।

पर्यटन भी द्विपक्षीय सम्बन्धों का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है। प्रत्येक वर्ष 30-35 हजार इजराइली व्यापारिक पर्यटन और अन्य उद्देश्यों के लिए भारत की यात्रा पर आते हैं और लगभग 40,000 भारतीय तीर्थ यात्रा के लिए प्रत्येक वर्ष इजराइल की यात्रा पर जाते हैं।

इरान के सम्बन्ध में मतभेद

जहाँ एक ओर इजराइल, ईरान को अपने अस्तित्व पर एक खतरा मानता है, वहीं दूसरी तरफ भारत के साथ ईरान के ऐतिहासिक सम्बन्ध हैं. भारत, ईरान को अफगानिस्तान और मध्य एशिया में प्रवेश के लिए चाबहार बंदरगाह के माध्यम से एक वैकल्पिक मार्ग की प्राप्ति और ऊर्जा की आपूर्ति पर सहयोग प्राप्त करने के लिए महत्त्वपूर्ण मानता है। इजराइल के अरब जगत के साथ अन्तर्निहित मतभेद हैं जबकि भारत के वहाँ महत्त्वपूर्ण हित विद्यमान हैं। संयुक्त राष्ट्र में भारत द्वारा किया गया मतदान येरुशलम पर अमेरिका के कदम के विरुद्ध है, जो अन्तर्निहित वास्तविकताओं की एक झलक है।

निष्कर्ष

भारत और इजराइल के मध्य द्विपक्षीय सम्बन्ध एशिया और मध्य-पूर्व में तेजी से विकसित हो रही भू-राजनीतिक वास्तविकताओं के आधार पर संचालित होंगे। ऐसे में इजराइल को एशियाई फलक पर अपनी प्रतिक्रिया पर विचार करना होगा. इसके बावजूद भारत-इजराइल के बीच संबंधों की व्यापकता और गहनता चीन-इजराइल सम्बन्धों जैसी नहीं है, जो मुख्य रूप से व्यापार और वाणिज्य से संचालित हैं. भारत को इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए कि आने वाले वर्षों में चीन का ही प्रभाव बढ़ेगा। अतः भारत-इजराइल सम्बन्धों में आर्थिक और व्यापारिक सम्बन्धों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद दुनिया ने नई करवट ली और भारत ने खुद को अंतरराष्ट्रीय परिधि के मध्य में लाया। मध्य-पूर्व में भी भारत ने अपने हितों के हिसाब से नीतियों को अपनाया। व्यवसाय, सुरक्षा, ऊर्जा और राजनयिक हितों के लिहाज से मध्य-पूर्व भारत के लिए काफी खास है। भारत के वाणिज्य मंत्रालय के अनुसार 2016-17 में अरब देशों से भारत का व्यापार 121 अरब डॉलर का रहा। यह भारत के कुल विदेशी व्यापार का 18.25 फीसदी हिस्सा है। वहीं इजरायल के साथ भारत का व्यापार पांच अरब डॉलर का था जो कि कुल व्यापार का एक फीसदी भी हिस्सा नहीं है। भारत का इजरायल के साथ सुरक्षा संबंध काफी गहरे हैं जबकि अरब के देश रोजगार, विदेशी मुद्रा और ऊर्जा के लिहाज से काफी अहम हैं। ऐसी परिस्थिति में भारत के लिए इजरायल का महत्व तो है लेकिन अरब देशों की शर्तों पर यह संभव नहीं हो सकता है।

भारत को वहां संतुलन बनाकर रखना होगा। मोदी काल में भारत, इजरायल और अमरीका इतने करीब आए कि इजरायल के पक्ष में कई लोग वोट की उम्मीद कर रहे थे। भारत में दक्षिणपंथी विचारधारा का इजरायल के साथ शुरू से ही सहानुभूति रही है। इसका एक मात्र कारण यह है कि भारत का बहुसंख्यक समाज मुसलमानों से आक्रांत है और इजरायल का गठन भी मुस्लिम समाज के खिलाफ जाकर ही हुआ है। यहूदी मुसलमानों के कारण ही अपने कथित मूल भूमि से हजारों साल तक कटे रहे।

हालांकि कारण चाहे जो भी कांग्रेस के शासन काल में प्रत्यक्ष रूप से न सही लेकिन परोक्ष रूप से भारत इजरायल का पक्ष लेता रहा है। यही कारण है कि भारत ने गुटनिरपेक्ष देशों के बीच कभी भी इजरायल विरोधी प्रस्तावों को हावी नहीं होने दिया। भारत नरेन्द्र मोदी और भाजपा के शासन काल में भी फिलिस्तीन के प्रति गंभीर है। यही कारण है कि जब फलस्तीनी राष्ट्रपति महमूद अब्बास भारत आए थे तो पीएम मोदी ने फिलिस्तीनी चिंताओं का समर्थन किया था। मोदी ने शांतिपूर्ण इजरायल के साथ संप्रभु, स्वतंत्र और एकजुट फिलिस्तीन की बात कही थी। गहराई से देखें तो इजरायल पर नीतियों को लेकर कांग्रेस के नेतृत्व वाली यूपीए सरकार और बीजेपी के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार में कोई फर्क नहीं है। एक साफ-साफ इजरायल का समर्थन करती दिख रही है तो दूसरा गहराई से समर्थन करती रही है। याद रहे विदेश, आर्थिक और कूटनीति में कोई भी देश अपना हित जरूर देखता है। सरकार चाहे जो भी रहे देश में विदेश नीति, आर्थिक नीति और कूटनीति में कोई फर्क नहीं आता है। कई विशेषज्ञ भारत की वर्तमान इजरायल नीति को बेहद सरल तरीके से देखते हैं। भारत के द्वारा इजरायल का खुले तौर पर समर्थन विदेश नीति की सहजता भी हो सकती है। सच पूछिए तो इजरायल के साथ मेलजोल बढ़ाने का मतलब, मुसलमान विरोधी होना नहीं है। कई विशेषज्ञ मानते हैं कि भारत का रुख

यथार्थवादी रहा है। जैसे-जैसे विश्व परिदृष्य में परिवर्तन आया है भारत अपनी नीतियों को और प्रगाढ बनाता चला गया है साथ ही अपने हितों के प्रति सक्रियता दिखाता चला गया है।
इसे हिन्दुत्व के साथ नहीं जोड़ा जाना चाहिए। भारत की वर्तमान विदेश नीति को स्वतंत्र विदेश नीति के रूप में स्थापित करने की कोशिश की जा रही है। भारत ने इजरायल का समर्थन कर खुले तौर पर यह संदेश देने की कोशिश की है कि वो विदेश नीति में किसी के मोतहत नहीं है और अपने हितों को ध्यान में रखकर वह अपनी नीतियां बना रहा है। मध्य-पूर्व में भारत एक खास स्थिति में है। भारत एक साथ इजरायल, ईरान और सऊदी तीनों के साथ संबंध रख रहा है और यही भारत के हित में भी है। यदि इसमें से एक भी देश नाराज होता है तो भारत का बहुत बड़ा नुकसान होगा।

<u>संदर्भ सूची:</u>

---

1 पफेफर, अनशेल (दिसंबर1, 2008). "इजराइल-इंडिया रिलेशन्स / स्ट्रांग, बट लो-की". हारेट्ज़. रिट्रीव मई 4, 2015.

2 हरेल, अमोस (फेब्रुअरी 18, 2015). "इजराइल-इंडिया स्ट्रेटेजिक टाइस आर नो लॉन्गर अ सीक्रेट". हारेट्ज़. रिट्रीव मई 4, 2015.

3 विल्क्स, टॉमी (फेब्रुअरी 18, 2015). "इसरायली डिफेंस मिनिस्टर लैंड्स अट् इंडिया एयर शो टू बूस्ट आर्म्स सेल्स"। रायटर्स। रिट्रीव अप्रैल 29, 2015.

4 जम्प उप टू: लाल, नीता (अप्रैल 21, 2009). "इंडियाज ऑय इन दा स्काई टेक्स ऐंम". एशिया टाइम्स ऑनलाइन। रिट्रीव नवंबर 5, 2015.

5 "वेलकम टू एम्बेसी ऑफ़ इंडिया, टेल अवीव, इजराइल". इंडेमबासी.को.इल. आर्चीवड फ्रॉम दा ओरिजिनल ओन 2017-07-14. रिट्रीव 2017-07-05.

6 "इंडिया ऑब्सटैंस फ्रॉम यूनचआरसी वोट अगेंस्ट इजराइल". दा हिन्दू. रिट्रीव 2017-07-05.

7 "इंडिया, इजराइल टू रीस्टार्ट फ्री ट्रेड एग्रीमेंट टॉकस – टाइम्स ऑफ़ इंडिया". दा टाइम्स ऑफ़ इंडिया. रिट्रीव 2017-07-05.

8 बासु, नयनीमा (2015-02-13). "इंडिया, इजराइल फटीए नॉट लइकेली टू बी सिग्रेड सून". बिज़नेस स्टैण्डर्ड इंडिया. रिट्रीव 2017-07-05.

9 "फ्रॉम इंडिया विद लव". वाईनेटन्यूज़. रिट्रीव 2017-07-05.

10 हनन्या गुडमैन (1994). बिटवीन जेरूसलम एंड बनारस: कम्पेरेटिव स्टडीज इन जूदाइज़्म एंड हिन्दुइस्म. सुनी प्रेस. पे. 28. ISBN 9780791417157.

11 दा बाइबिल इन बेसिक इंग्लिश. कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस. 1956. पे. 349.

अध्याय 23
भारत-यूरोपीय संघ संबंधः यूरोज़ोन संकट के संदर्भ में

सोहन लाल
शोधार्थी (पीएच.डी)
राजनीति विज्ञान विभाग
हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय

डॉ राजीव कुमार सिंह
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय

वर्तमान वैश्विक परिप्रेक्ष्य पर अगर दृष्टिपात किया जाए तो ये अंदाजा लगाया जा सकता है कि ये बहुआयामी और बहुध्रुवीय है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने विश्व के देशों को एक दूसरे के और नज़दीक लाकर खड़ा कर दिया है। परिणाम ये हुआ है कि विश्व में किसी एक स्थान पर घटित घटना का प्रभाव विश्व के दूसरे कोने में स्थित देशों पर भी अनुभव किया जाता है। उदारीकरण की प्रक्रिया तथा आर्थिक एकीकरण ने राज्यों के मध्य सहयोग को और बढ़ावा दिया है इसी संदर्भ ने क्षेत्रीय एकीकरण की प्रक्रिया का वर्णन भी समीचीन होगा। क्षेत्रीकरण को अक्सर, "एक क्षेत्र के अंतर्गत सामाजिक एकीकरण का विकास' के संदर्भ में परिभाषित किया जाता है और ये प्रक्रिया आर्थिक एकीकरण में भी वृद्धि करती है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात अनेक क्षेत्रीय समहों की स्थापना हुई है। इनमें मुख्यतः मर्कोसुर, उत्तर-अमेरिकी मुक्त व्यापार क्षेत्र (नाफ्टा), दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (आसियान), यूरोपीय समुदाय (ईयू) तथा यूराज़ोन मुख्य है। यूरोपीय समुदाय इस संदर्भ में सर्वाधिक सफल गुट कहा जा सकता है। क्षेत्रीयकरण ने आर्थिक लाभों को प्राप्त करने के लिए नया मंच भी प्रदान किया है।

21वीं. सदी में वैश्वीकरण ने विश्व अर्थव्यवस्थाओं के समक्ष चुनौतियों को प्रस्तुत किया है। यद्यपि जहां एक ओर इसने अवसरों में वृद्धि की है, वहीं आर्थिक संकट भी पैदा करने में भूमिका अदा की। वर्तमान संदर्भ में 2008 में उत्पन्न हुआ अमेरिकी सब-प्राइम संकट तथा यूरोज़ोन आर्थिक संकट का वर्णन इसी संदर्भ में किया जा सकता है।

इससे पहले कि हम यूरोज़ोन आर्थिक संकट का वर्णन करें, हमारे लिए भारत और यूरोपीय समुदाय के संबधों पर दृष्टिगत करना समीचीन होगा।

भारत और यूरोपीय संघ : भारत और यूरोपीय संघ के मध्य संबंध 1960 के दशक से ही चिन्हित किए जा सकते हैं जब भारत ने सर्वप्रथम स्थापित 'यूरोपीय आर्थिक समुदाय' (ईईसी) के साथ राजनायिक संबंधों की स्थापना की। भारत विकासशील राष्ट्रों में पहला राष्ट्र था, जिसने उस समय यूरोपीय आर्थिक समुदाय के साथ संबंधों की स्थापना की। लोकतंत्र में विश्वास, बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक तथा विश्व व्यवस्था का लोकतांत्रिकरण, ऐसे कई समान मुद्दे है, जिसके कारण भारत और यूरोपीय संघ एक दूसरे के निकट आ जाते हैं। हालांकि एक लंबे समय तक

दोनों के मध्य कोई बातचीत नहीं हो सकी, साथ ही यूरोपीय संघ ने भी दक्षिण एशिया में कोई रूचि नहीं दिखाई।[1]

जहाँ तक भारतीय विदेश नीति और यूरोपीय संघ की विदेश नीति का संबंध है, दोनों की विदेश नीति के भिन्न उद्देश्य है। जब भारत को 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्त हुई उस काल के दौरान भारतीय विदेश नीति के मुख्य लक्ष्य उपनिवेशिकरण का विरोध, निर्गुटता में विश्वास, गरीबी उन्मूलन थे। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भी भारत ने अपने आपको दोनों गुटों से अलग रखा, हालांकि इस दौरान कुछ यूरोपीय देश अमेरिका निर्मित नाटो के सदस्य थे। गहन विश्लेषण ये दर्शाता हे कि यूरोपीय विदेश नीति इसके आर्थिक उद्देश्यों से परिचालित रही है। वर्ष 1958 में हस्तांक्षरित 'रोम संधि' में विदेश नीति के उद्देश्यों को स्पष्ट नहीं किया गया था। यह केवल "यूरोपीय राजनीतिक सहयोग" (EPC) के अंतर्गत, जो कि एक विदेश नीति के लिए अलग तंत्र था, विदेश नीति निर्माताओं ने इस ओर सोचना प्रारंभ किया।[2] यदि हम यूरोपीय विदेश नीति के उद्देश्यों पर दृष्टिपात करें तो इसमें निम्न उद्देश्य समाहित हैं:

- मानव अधिकारों का संवर्धन
- क्षेत्रीय सहयोग व एकीकरण को बढ़ावा देना,
- सुशासन व लोकतंत्र का संवर्धन,
- अंतर्राष्ट्रीय अपराध के विरुद्ध संघर्ष[3]

मस्ट्रिख (Maastricht) में आयोजित अंतर-सरकारी सम्मेलन में एक मौलिक परिवर्तन देखा गया। पहली बार राज्यों ने "साझा विदेश व रक्षा नीति" (CFSP) का विचार रखा जिसे स्वीकार भी कर लिया गया। लिस्बन संधि को यूरोपीय संघ की विदेश नीति में मील का पत्थर कहा जा सकता है, इसके द्वारा यूरोपीय संघ की विदेश नीति में उग्र परिवर्तन प्रकट हुआ। विदेश मामलों के लिए अलग पद सृजित किया गया। मौलिक अधिकारों के चार्टर को विधिक रूप से बाध्यकारी बना दिया गया है। वर्ष 2009 में लिस्वन संधि कार्यान्वित हुई।

भारत - यूरोपीय संघ संबंध

भारत और यूरोपीय के बीच 15 चक्रों की शिखर वार्ताएँ हो चुकी हैं। 15 वां भारत और यूरोपीय संघ शिखर सम्मेलन 15 जुलाई 2020 को आभासी (Virtual) रूप में संपन्न हुआ। भारत का प्रतिनिधित्व प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा तथा यूरोपीय संघ का प्रतिनिधित्व यूरोपीय परिषद के अध्यक्ष चार्ल्स मिशेल और यूरोपीय आयोग के अध्यक्ष उर्सुला वॉन डेर लेयेन द्वारा किया गया।[4] हालांकि 15 दौर की शिखर वार्ताओं के बाद भी भारत व यूरोपीय संघ के मध्य मुक्त

---

1 शाज़िया अज़ीज वुल्बर्स, द पैराडॉक्स ऑफ ईयू-इंडिया रिलेसंसः मिस्ड ऑपरचुनीटिज़ इन पॉलिटिक्स, इकोनोमिक्स, डेवलपमेंटल कोऑपरेशन एंड कल्चर, लेविसंगहम, पृ. 18

2 पूर्वोक्त

3 केरेन ई स्मिथ, यूरोपीयन यूनियन फॉरेन पॉलिसी इन ए चैंजिंग वर्ल्ड, पॉलिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 2014, पृ. : 3

4 https://www.consilium.europa.en/en/press/press-release/2020/07/15/joint-statement-15th-eu-india-summit-15-july-2020

व्यापार समझौता सम्पन्न नहीं हो सका है। इन सबके बावजूद कुछ क्षेत्र ऐसे है जहाँ दोनों के मध्य संबंध अपेक्षित है।

भारत-यूरोपीय संघ के मध्य आर्थिक व व्यापारिक आयाम

वर्ष 1990 में भारत ने अपने आर्थिक क्षेत्र को विदेशों के लिए खोलने का निर्णय किया। वैश्वीकरण को आत्मसात् करना भारतीय विदेश नीति की बहुत बड़ी सफलता है। यूरोपीय संघ भारत के लिए एक बहुत बड़ा व्यापारिक साझेदार बनकर उभरा है। वर्ष 2019 के संदर्भ में अगर देखा जाए तो यूरोपीय संघ का भारत को वस्तुओं का निर्यात 38.2 बिलियन यूरो था जबकि यूरोपीय संघ का भारत से आयात 39.6 बिलियन यूरो रहा। इस तरह देख जाए तो दोनों के मध्य व्यापार भारत के पक्ष में रहा है। भारत का निर्यात ईयू को बढ़ा है जो कि भारत के व्यापार के संदर्भ में अच्छी शुरुआत है। हालांकि व्यापार की यह शुरुआत 1973 में भारत व यूरोपीय आर्थिक समुदाय के मध्य हस्ताक्षरित "सहयोग समझौते" से हुई थी। 1981 में इसी समझौते का उन्नयन करके आगे बढ़ाया गया। कुल व्यापार का 20 प्रतिशत केवल कपड़ा व हीरा उद्योग में होता है ईयू में जर्मनी भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक साझेदार है। व्यापार के अच्छी भागेदारी के बावजूद मुक्त व्यापार समझौते का अभी तक फलीभूत न होना चिंता का विषय है। ईयू भारत से कारों पर से शुल्कों में कमी की मांग करता है। साथ ही बैंकिग क्षेत्र खोलने की भी इच्छा उसने भारत सरकार से की है। हाल ही में दोनों के मध्य द्विपक्षीय व्यापार और निवेश संबंधों को मार्गदर्शन प्रदान करने और आपसी हित के बहुपक्षीय मुद्दों को हल करने के लिए मंत्री स्तर पर एक नियमित उच्च स्तरीय संवाद स्थापित करने पर भी सहमति प्रकट की गई है। इसका उद्देश्य व्यापार व निवेश समझौतों को बढ़ावा देना, व्यापार के मध्य आ रही अड़चनों को दूर करना होगा। यूरोपीय संघ और भारत वैश्विक आर्थिक प्रशासन पर समन्वय को बढ़ांएगे।

विकासात्मकलक्ष्य : ईयू का विकासात्मक ढांचा अफ्रीकी, कैरेबियाई और प्रशांत क्षेत्र के लिए लागू किया गया। ईयू की विकासात्मक सहायता नीति कई पहलुओं से होकर गुजरी है। यह "Yaounde system" से "Lome System" होते हुए 'Cotonou system' तक पहुंची है।[5] ये कई गरीब देशों को कवर करती है। हालांकि यूरोपीय समुदाय में आर्थिक संकट ने विकासात्मक नीतियों को भी प्रभावित किया है। इसलिए यूरोपीय संघ के 2014-20 के बजट में पहले बजट के मुकाबले बहुत सी नीतियों पर बजट कम किया गया है। सर्व शिक्षा अभियान व जिला प्राथमिक शिक्षा अभियान में ईयू का योगदान रहा है। 'राज्य भागीदारी कार्यक्रम' के तहत छत्तीसगढ़ व राजस्थान में संघ सहयोग कर रहा है।

रक्षा सहयोग : अमेरिका पर 11 सितंबर को हुए आंतकी हमने ने भारत और यूरोपीय संघ को निकट ला दिया है। जैसा कि विदित है, भारत 1980 के दशक से ही आतंकवाद का दंश झेल रहा है। आरंभ के दशकों में यूरोपीय संघ ने भारत के इस प्रश्न की ओर कोई ध्यान नहीं दिया

---

5 मिशेल स्मिथ, ईयू एक्सटर्नल रिलेशंस इन मिचेलेशिनी, निवेज़ पेरेज़ सोलोरज़ाने। बोरागन, यूरोपीयन यूनियन पॉलिटिक्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2013, पृ. 217

किंतु हाल में हुए यूरोपीय राजधानियोंपर आंतकवादी हमलों ने ईयू को ये अहसास करा दिया कि वे भी सुरक्षित नहीं है। 13 वी भारत-यूरोपीय संघ सम्मेलन में 'अंतरराष्ट्रीय आतंकवाद पर संयुक्त घोषणा' जो कि 2010 में आत्मसात् किया गया था, का नवीनीकरण किया गया।[6]

राजनीतिक सहयोग : "ईयू-भारत संयुक्त राजनीतिक विवरण" पर 1994 में हस्ताक्षर किए गए। पहली शिखर वार्ता 2000 में लिस्बन में सम्पन्न हुई। अब तक कुल 15 शिखर वार्ताएँ भारत-ईयू के मध्य सम्पन्न हो चुकी है। वर्ष 1994 में यूरोपीयन कमीशन ने अपनी नई नीति "एशिया की और नई नीति" की घोषणा की। इसका मुख्य उद्देश्य एशिया के साथ राजनीतिक वार्ताओं का विकास करना था। इसके अन्तर्गत पूर्वी व दक्षिणपूर्वी एशिया तथा दक्षिण एशिया को महत्व प्रदान किया गया।[7] अपनी 'नई एशिया नीति' में सार्क क्षेत्र को विशेष महत्व दिया गया। इसमें भारत पर विशेष फोकसकिया गया है। इसी संदर्भ में यूरोपीय संघ ने अपनी 'नई एशिया नीति ' में बदलाव किया तथा इसे अब "यूरोप और एशिया: बड़ी हुई साझेदारी के लिए एक राजनीतिक ढांचा" कहा गया है। इस नई रणनीति का उद्देश्य यूरोपीय समुदाय के आर्थिक और राजनीतिक उद्देश्यों को बढ़ाना है। हाल ही में हुई 15 वीं शिखर वार्ता में भारत और यूरोपीय संघ ने मानवाधिकारों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को भी दोहराया, जिसमें जीवन के सभी क्षेत्रों में लैंगिक समानता और महिला सशक्तीकरण शामिल हैं। इसी संदर्भ में प्रवासन और गतिशीलता पर संयुक्त एजेंडे पर संयुक्त घोषणा के कार्यान्वयन के भाग के रूप में छात्रों, शोधकर्ताओं, पेशेवरों, व्यापार व्यक्तियों और पर्यटकों सहित सक्रिय लोगों से लोगों के आदान-प्रदान का भी स्वागत किया गया।

कोविड-19 के संदर्भ में सहयोग : वर्तमान में व्याप्त कोविड-19 महामारी के संदर्भ में भारत-यूरोपीय संघ के मध्य संबंध अति महत्वपूर्ण हो जाते हैं। भारत-यूरोपीय संघ की जुलाई 2020 में सम्पन्न हुई 15वी. आभासी शिखर वार्ता में नेताओं ने सहमति व्यक्त की है कि जीवनरक्षा और महामारी के सामाजिक-आर्थिक परिणामों को कम करने के लिए वैश्विक सहयोग व एकजुटता आवश्यक है। दवाईयों, टीकों के उत्पादन, स्वास्थ्य सेवा अनुसंधान और विकास, उपचार में साझा क्षमता, अनुभव और ताकत के माध्यम से स्वास्थ्य क्षेत्र में आपसी तालमेल का उल्लेख किया। विशेष रूप से कोविड-19 महामारी से जुड़े स्वास्थ्य सुरक्षा और महामारी संकट की तैयारी और प्रतिक्रिया पर भारत और यूरोपीय संघ के बीच सहयोग को तेज़ करने पर भी सहमति व्यक्त की गई।

ईयू-भारत के मध्य रणनीतिक साझेदारी : वर्ष 2000 में आयोजित भारत-यूरोपीय संघ शिखर सम्मेलन में "नई रणनीतिक साझेदारी" पर ज़ोर दिया गया। अमेरिका, कनाडा, चीन, रूस, जापान, मेक्सिको ऐसे देश है जिनके साथ यूरोपीय संघ की रणनीतिक साझेदारी है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुपक्षीय सहयोग, विकास में सहयोग ताकि भारत सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों को प्राप्त

---

6 राबर्ट डॉवर, द यूरोपीयन यूनियन फॉरेन, सिक्योरिटी एण्ड डिफेंस पोलिसीज़ इन मिचेलेशिनी, निवेज़ पेरेज़ सोलोरज़ानो बोरागन, यूरोपीयन यूनियन पॉलिटिक्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस , 2013, पृ. 248

7 पास्कालइन विनंड, द राइज़ ऑफ एशिया एण्ड इंडिया फ्रॉम द 1990 टू द 21th सेन्चुरी इन पास्कालाइन विनंड, मारिका विज़ियानी तथा पूनम दातार, द यूरोपीयन यूनियन एण्ड इंडियाः रेट्रीक और मीनिंगफुल पार्टनरशिप, एडवर्ड एलगर, यूके, 2015 पृष्ठः 145.

कर सके, आर्थिक सहयोग को मजबूत करना, बौद्धिक व सांस्कृतिक आदान-प्रदान आदि रणनीतिक साझेदारी के मुख्य क्षेत्रा है। भारत और यूरोपीय समुदाय दुनिया के दो बड़े लोकतंत्र के रूप में, प्रभावी बहुत पक्षवाद और संयुक्त राष्ट्र के साथ एक नियम आधारित बहुपक्षीय विश्व व्यवस्था और विश्व व्यापार संगठन को बढ़ावा देने के अपने दृढ़ संकल्प की पुष्टि करते हैं। यूरोपीय समुदाय 2022 में भारत की जी-20 प्रेसीडेंसी और 2021-22 में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सदस्यता की उम्मीद करता है।

सांस्कृतिक व शिक्षा सहयोग : सांस्कृतिक व शैक्षिक सहयोग के अंतर्गत भारत व यूरोपीय संघ के मध्य कई समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए हैं। "यूरोपीय संघ-भारत अर्थिक पार सांस्कृतिक कार्यक्रम" की शुरुआत 1995 में हुई। इसका मुख्य उद्देश्य दोनों के मध्य विश्वविद्यालय, मीडिया तथा उच्च स्तर पर आपसी सहयोग को बढ़ाना है।[8] हाल में संपन्न 15 वीं. शिखर बैठक में 'प्रवासन और गतिशीलता पर संयुक्त एजेंडा' पर संयुक्त घोषणा के कार्यान्वयन के भाग के रूप में छात्रों, शोधकर्ताओं, पेशेवरों, व्यापारिक गतिविधियों में संलग्न व्यक्तियों और पर्यटकों सहित सक्रिय लोगों से लोगों के आदान-प्रदान का स्वागत किया है। उन्होंने "अप्रवासन और आने जाने पर उच्च स्तरीय संवाद" (HLDMM) के तहत प्रगति पर ध्यान दिया जो कि दोनों के मध्य लोगों का आवाजाही को व्यवस्थित करता है। भारत और यूरोपीय संघ के मध्य सांस्कृतिक आदान-प्रदान और शैक्षिक सहयोग को भी प्रोत्साहित किया गया।

वैश्विक चुनौतियाँ : भारत और यूरोपीय संघ दोनों बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था के समर्थक हैं। उभरती चुनौतियाँ जैसे कि बढ़ता आतंकवाद, गरीबी, बेरोजगारी, जलवायु परिवर्तन पर दोनों ही मिलकर कार्य कर रहे हैं। अगले पांच वर्षों में "यूरोपीय संघ-भारत सामाजिक भागीदारी : 2025 का रोडमैप" अपनाया गया है। वैश्विक शांति और सुरक्षा, निशस्त्रीकरण और अप्रसार के लिए अपनी मजबूत प्रतिबद्धता की पुष्टि की है और इसके वित्तपोषण और कट्टरतावाद का मुकाबला करने हेतु इसके सभी रूपों और आतंकवाद के प्रति चिंता व्यक्त की गई। हिंद महासागर में सुरक्षा और स्थिरता को बनाए रखने का संकल्प दोहराया गया। भारत और ईयू ने पेरिस जलवायु समझौते को लागू करने के लिए सहमति प्रकट की है। यूरोपीय संघ भारत सौर ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन अपने सहयोग को सुदृढ़ करेंगे। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अगर देखा जाए तो यूरोप में बढ़ता कट्टरतावाद और आंतकवादी गतिविधियाँ यूरोपीय राजनीतिक वर्ग के लिए चिंता का विषय है। इस संदर्भ में भारतीय धर्मनिरपेक्ष समाज से बहुत कुछ सीखा जा सकता है। यूरोपीय संघ और भारत के बीच आवागमन को बेहतर बनाने और हिंद-प्रशांत क्षेत्र सहित तीसरे देशों के साथ आवागमन पर सहयोग के बीच तालमेल बढ़ाने के लिए एक संभावित भविष्य की व्यापक आवागमन साझेदारी सहित ठोस पहलों का पता लगाने के लिए सहमति व्यक्त की गई।

यूरोज़ोन आर्थिक संकट ने यूरोपीय संघ की एकीकरण की प्रक्रिया पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। यूरोज़ोन संकट के कारण इसके अंतर्गत आने वाले देशों की अर्थव्यवस्थाएँ बुरी तरह से

---

8 शाज़िया अज़ीज वुल्बर्स, द पैराडॉक्स ऑफ ईयू-इंडिया रिलेसंसः मिस्ड ऑपरचुनीटिज़ इन पॉलिटिक्स, इकोनोमिक्स, डेवलपमेंटल कोऑपरेशन एंड कल्चर, लेक्सिंगटन, पृ. 52

प्रभावित हुई तथा एक लंबे समय तक आर्थिक वृद्धि दर लगभग शून्य बनी रही। चूंकि भारत यूरोपीय संघ का बड़ा व्यापारिक साझीदार है, इसलिए इस संकट का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था तथा निर्यात पर भी हुआ।

यूरोज़ोन: 19[9] सदस्य देशों का समूह यूरोजोन कहलाता है। 340 मिलियन की कुल आबादी के साथ पश्चिम से पूर्व व उत्तर से दक्षिण तक, यूरोज़ोन में यूरोप के अधिकांश भाग के सदस्य राज्य शामिल हैं। प्रारंभिक चरण में केवल 11 यूरोपीय संघ के सदस्य राज्यों ने जनवरी 1999 में यूरोज़ोन में शामिल होने की अर्हता प्राप्त की। यूरोपियन केन्द्रीय बैंक के पास एक मात्र अधिकार है, कि ये यूरोज़ोन के लिए मौद्रिक नीति को नियंत्रित करता है। ईसीबी का मुख्य कार्य मुद्रास्फीति को नियंत्रण में रखना है। यूरो समूह में यूरोज़ोन के वित्त मंत्री शामिल है, जो कि आर्थिक व वितीय नीतियों में समन्वय रखते हैं।

यूरोपीयन मौद्रिक संघ (ईएमयू) की स्थापना : यूरोपीय मौद्रिक एकीकरण की दिशा में पहला कदम 1948 में स्थापित 'यूरोपीय आर्थिक सहयोग के लिए संगठन' था। इसके बाद 'यूरोपियन पेमेंट यूनियन' की स्थापना की गई। ईपीयू को आगे चलकर 'यूरोपीय मुद्रा समझौते' द्वारा बदल दिया गया। इस समझौते का मुख्य उद्देश्य भागीदार देशों को वित्तीय सुरक्षा प्रदन करना था।[10] मौद्रिक संघ के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, **पियरे वर्नर** के तहत विशेषज्ञों की एक समिति का गठन किया गया। 'एकल यूरोपीय अधिनियम (एसईए) में पहली बार 'आर्थिक और मौद्रिक संघ' के बारे में उल्लेख किया गया। जून 1988 में हनोवर में एक बैठक आयोजित की गई और ये सहमति हुई कि ईएमयू को प्राप्त करने के लिए, आयोग के अध्यक्ष **जैक्स डेलर्स** के तहत एक समिति का गठन किया गया। दिसम्बर 1988 में समिति ने रिपोर्ट तैयार की और 1989 में मैड्रिड शिखर सम्मेलन में रिर्पोट को स्वीकार किया गया। मौद्रिक संघ को एक 'मुद्रा क्षेत्र' के रूप में परिभाषित किया गया। अन्य विशेषताएँ थीं 1. मुद्राओं की कुल और अपरिवर्तनीय परिवर्तनीयता 2. पूंजी बाज़ार का पूर्ण उदारीकरण वृहद आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए ये मुख्य शर्तें थी। ईएमयू को तीन चरणों में प्राप्त किय जाना था। पहला चरण एक जुलाई 1990 से शुरु होगा, दूसरा चरण एक जनवरी 1994 से तथा तीसरा चरण 1996 में शुरु होने वाला था।[11]

अभिसरण मानंदड (Convergence Criteria): अभिसरण मानदंड यह सुनिश्चित करता है कि सदस्य राज्य जो यूरो को अपनाने को तैयार है, उन्हें निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना होगा।

1. तीन सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने वाले राज्यों की मुद्रास्फीति दर का औसत सदस्य राज्य के लिए बैंचमार्क होगा और उन्हें मुद्रास्फीति की दर को नीचे रखना होगा।
2. सरकारी ऋण जीडीपी का 60 प्रतिशत से कम हो।

---

9 अस्ट्रिया, बेल्जियम, साइप्रस, एसटोनिया, फ्रांस, फिनलैंड, जर्मनी, ग्रीस, आयरलैंड, इटली, लाटविया, लिथुआनिया, लग्ज़ेमर्बग, नीदरलैंड, माल्टा, पुर्तगाल, स्लोवेनिया, स्लोवाकिया तथा स्पेन।

10 डेनियल ग्रोस तथा नील थाइगसेन, यूरोपीयन मॉनेटरी इंटीग्रेसनः फ्रॉम यूरोपीयन मॉनेअरी एग्रीमेंट टू यरोपीयन मॉनेटरी यूनियन, लांगमैन ग्रुप, 1992, पृ. 6

11 एस.एफ.गुडमैन, द यूरोपीयन यूनियन, मैकमिलन, ब्रिटेन , 1996, पृ. 208

3. सरकारी घाटा जीडीपी का 3 प्रतिशत से कम हो।
4. कम से कम दो साल के लिए अवमूल्यन के बिना, यूरोपीय विनिमय दर तंत्र में सामान्य उतार-चढ़ाव मार्जिन का पालन।[12]

तीसरे चरण के अंतर्गत 'एकल-मुद्रा' की ओर कदम बढ़ाया गया तथा ये निश्चित हुआ कि साझा मुद्रा का नाम 'यूरो' रखा जाएगा। इस तरह 2002 में यूरो बैंकनोट व सिक्के प्रचलन में आ गए।

यूरोज़ोन संकटः सबप्रइम ऋण के मद्देनज़र सुयंक्त राज्य अमेरिका से शुरु हुआ वित्तीय संकट यूरोप में भी फैल जाता है क्योंकि यूरोपीय बैंकों ने भी संयुक्त राज्य अमेरिका में मार्गज़ मार्किट में निवेश किया था। 2008 में यूरोज़ोन में शुरु हुई समस्या धीरे-धीरे 2009 तक अपने इष्टतम स्तर तक पहुँच गई। 2004-2006 के बीच संयुक्त राज्य अमेरिका में यूरोपीय बैंकों का कुल निवेश दो ट्रिलियन डॉलर था। जब लेहमैन ब्रदर्स के दिवालिएपन के बाद अमेरिका में एसेट बुलबुला फटा तो पता चला कि यूरोपीय बैंक भी खतरे में हैं। पहला संकेत फ्रांसीसी फर्म बीएनपी परिबास की ओर से आया जिसने एक प्रेस वार्ता के बाद, सब प्राइम संकट के बाद अमेरिका के साथ अपना व्यापार बंद कर दिया। अब ये स्पष्ट हो चुका था कि कई यूरोपीय बैंक अपूरणीय रूप से क्षतिग्रस्त हो चुके हैं। सहवर्ती मंदी के कारण राजकोषीय घाटे में अचानक वृद्धि हुई। यूरोज़ोन की परीधिय अर्थव्यवस्थाओं को इससे सबसे अधिक घाटा हुआ। जिसमें सबसे अधिक ग्रीस कमज़ोर कड़ी के रूप में उभरा। पुर्तगाल, स्पेन, इटली और ऑयरलैंड जैसे यूरोज़ोन के देश भी संकट में थे। यूरोज़ोन के कुछ सदस्य अत्यधिक ऋणी थे यहां तक कि अभिसरण मानदंड की सीमा पार कर गए थे। ऋण-जीडीपी अनुपात में तेज़ी से वृद्धि हुई। 2010 में यूरो क्षेत्र का कुल सरकारी ऋण 84.6 प्रतिशत था जो 2012 में लगभग 90 प्रतिशत तक पहुंच गया।[13] ग्रीस में सरकारी कर्ज सबसे अधिक लगभग 146.2 प्रतिशत 2010 में था जो कि 2017 में सर्वाधिक उच्चतम स्तर पर 176 प्रतिशत पहुंच गया। इटली में, जो कि यूरोज़ोन की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है, सरकारी ऋण 2010 में 119.7 प्रतिशत था।[14] पुर्तगाल में 2010 में 96.2[15] का प्रतिशत था। यूरोज़ोन के अधिकतर देश ऋण-जीडीपी अनुपात की सीमा का उल्लंघन कर रहे थे।

यूरोज़ोन के प्रत्येक देश में संकट के विशेष कारण थे। ग्रीस में संकट के कारणों में मुख्यतः ग्रीस द्वारा 2004 में ओलंपिक खेलों का आयोजन करना जिसमें की ग्रीस ने इस पर लगभग 4.6 बिलियन यूरो का खर्च किया। मतदाताओं को खुश करने की ग्रीस सरकार की नीति, भ्रष्ट सरकारें तथा पेंशन पर अत्यधिक खर्च कारण थे। निर्माण और रियल एस्टेट सेक्टर पर स्पेन में अत्यधिक खर्च कारण थे। निर्माण और रियल एस्टेट सेक्टर पर स्पेन में अत्यधिक निर्भरता

---

12 फिन लॉरेसन, द ईयू एंड द यूरोज़ोन क्राइसिसः पॉलिसी चेलेंनजिस एंड स्ट्रेजिक चॉइसिस, ऐशगेट, 2013, पृ. 10

13 heeps://ec.europa.eu/eurostat.

14 सामान्य सरकारी सकल ऋण वार्षिक डेटा; 2017 https://ec.europa.eu/eurostat/them/table/do?=table&init=&language=en&p=teinz 225%plergin=1.

15 पूर्वोक्त

घातकसिद्ध हुई।[16] इटली में इटली सरकार की निवेश को आकर्षित करने की अनिच्छा जिम्मेदार थी। चूंकि इटली सरकार का सरकारी ऋण इतना अधिक था जिसने वित्तीय घाटे को बढ़ाया। उस समय के इटली के प्रधानमंत्री सिल्वियो बर्लुस्कोनी ने राजकोषीय घाटे का सच जनता से छुपाया।

संकट का मार्क्सवादी दृष्टिकोण भी है। ये विद्वान संकट की संरचनात्मक प्रकृति पर अधिक जोर देते हैं। वे संकट को वैश्वीकरण से भी जोड़ते हैं। यूरोपीय नीति निर्माताओं की नव-उदारवादी नीतियां भी संकट के लिए उत्तरदायी थी। 1992 में यूरोपीय संघ का गठन मानव अधिकारों, पूंजीवाद और लोकतंत्र पर आधारित यूरोपीय नीति निर्माताओं का स्वप्न था। रियल एस्टेट क्षेत्र में अधिक संचय और अधिक निवेश की समस्या ने संकट को बढ़ा दिया।[17]

यूरोप के लिए संकट के निहितार्थ : यूरोज़ोन संकट का सबसे गंभीर प्रभाव रोजगार पर पड़ा। स्पेन में बेरोजगारी दर सबसे उच्चतम स्तर पर थी जो कि 2010 में 20 प्रतिशत थी। सबसे गंभीर रूप से प्रभावित 16 से 25 वर्ष तक की आयु वर्ग के लोग थे जिनमें की बेरोजगारी दर पचासप्रतिशत तक पहुँच गई थी। ऐसी ही स्थिति पुर्तगाल में भी थी जहां बेरोज़गारी की दर 2012 में 15 प्रतिशत थी। संकट से प्रभावित अर्थव्यवस्थाओं को कठोर मितव्ययिता शर्तों (austerity) का पालन करना पड़ा। राजनीतिक के संदर्भ में कई यूरोज़ोन देशों को अपनी सरकारों को खोना पड़ा। इन देशों में चुनाव हुए और नई सरकारों का गठन हुआ। ग्रीस में वामपंथी प्रधानमंत्री एलेक्सिस टिसप्रस सत्ता में आए। इटली में बर्लुस्कोनी को मारियो मोंटी द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। प्रभावित अर्थव्यवस्थाओं को राहत प्रदान करने के लिए यूरोपीय संघ, यूरोपीय केन्द्रीय बैंक तथा अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की मदद से संकट से उबरने हेतू को लेकर मतभेद भी उभरकर सामने आए। जर्मन चांसलर एंजेला मार्केल राहत पैकेज के बारे में सहमत नहीं थी। हालांकि बढ़ते दबाव को देखते हुए उन्हें इसके लिए तैयार होना पड़ा। चांसलर एंजेला मार्केल ने एक बयान में कहा कि, "अगर यूरो विफल होता है तो यूरोप विफल हो जाएगा।" संकट के बाद यूरोपीय शेयर बाजार तेजी से गिरा। संकट के दौरान ही एकल मुद्रा मॉडल पर प्रश्न चिन्ह भी लगा। एकल मुद्रा के निर्माण के पीछे यूरोपीय नेताओं का मुख्य उद्देश्य यूरोप का आर्थिक एकीकरण करना था। यूरोपीय मौद्रिक संघ के सदस्य देश का हिस्सालेने के लिए अभिसरण मानदंडों तथा स्थिरता और विकास संधि में उल्लिखित शर्तों का पालन अनिवार्य था। जो देश यूरो मुद्रा को अपनाता था उसकी मौद्रिक नीति का निर्धारण यूरोपीयन सेंट्रल बैंक करता था। दो अलग-2 क्षेत्र जिससे एक ओर उत्तरी अमीर राज्य तो दूसरी ओर दक्षिण के कम विकसित राज्य, दोनों ही ईसीबी के अंतर्गत आते हैं। सभी देश एक ही मानदंड के अंतर्गत आ गए। चूंकि जिन देशों ने यूरो को अपनाया, संकट के समय यूरो का अवमूल्यन करना संभव नहीं था। भिन्न क्षेत्रों के लिए 'वन-साइज़-फिट्स-ऑल' नीति लागू करना

---

16 जार्ज एर्बर, इटलीज़ फाईनेंशियल क्राइसिस, इंटरइकॉनोमिक्स, जर्मनी, वाल्यूम 46, नवंबर/दिसंबर 2011, पृष्ठ 332-339. https://archieve.intereconomics.eu/year/2011/06/italy's-fiscal-crisis.

17 बर्च बरबरोग्ल्यू, द ग्लोबल कौपिटलिस्ट क्राइसिस एंड इट्स आफ्टरमैथः द कॉसेस एंड कॉन्सीक्वैंसिस ऑफ द ग्रेट रिसेशन ऑफ 2008-2009, ऐशगेट, 2014, इंग्लैंड।

खतरनाक साबित हुआ और इसकी कीमत दक्षिण यूरोज़ोन के कम विकसित देशों को वित्तीय संकट के रूप में चुकानी पड़ी।

भारत के लिए संकट के निहितार्थ : रीइनहार्ट और रोगॉफ द्वारा वित्तीय संकट के प्रभाव पर किए गए एक हालिया अध्ययन ने एक अलग या धुंधली तस्वीर पेश की है। उन्होंने कहा, "वित्तीय संकट एक दीर्घकालिक मसला है।"[18] एक संकट कितना गंभीर होगा ये इस बात पर निर्भर करता है कि ये कितना दीर्घकालिक है। यूरो संकट ने विभिन्न भारतीय क्षेत्रों को भी प्रभावित किया है।

कपड़ा क्षेत्र पर प्रभाव : संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद यूरोप भारतीय कपड़ा क्षेत्र के लिए सबसे बड़ा बाज़ार है। यूरोज़ोन संकट ने भारतीय कपड़ा निर्यात को यूरोपीय गंतव्यों में कपड़ों की आपूर्ति के अपने अनुमानों को संशोधित करने के लिए विवश किय है। इटली और स्पेन यूरोज़ोन के भीतर भारत के कपड़ा निर्यात के प्रमुख गंतव्य है। 2009-10 में यूरोपीय संघ को भारत के निर्मित निर्यात में उच्च नकारात्मक वृद्धि दर्ज की गई। 2000-01 में कपड़ा निर्यात जो कि 29.2 प्रतिशत था, उसमें गिरावट दर्ज की गई और 2008-09 में 18.2 प्रतिशत रहा। अप्रैल-सितंबर 2010-11 में, संकट के दौरान ये 15.7 प्रतिशत रहा। 2009-10 की अवधि के दौरान वृद्धि दर - 6.7 प्रतिशत थी जो कि अप्रैल-सितंबर 2009-10 में -10.5 प्रतिशत रही तथा वित्तिय वर्ष 2010-11 में अप्रैल-सितंबर के बीच ये - 4.1 प्रतिशत थी।[19] यदि हम कपड़ा निर्यात का देश-वार विश्लेषण करें तो हमें पता चलता है कि वित्त वर्ष 2008-09 तथा 2009-10 में फ्रांस के संदर्भ में विकास दर नकारात्मक रही। ये -2.39 प्रतिशत थी। वर्ष 2010-11 और 2011-12 में जर्मनी के संदर्भ में विकास दर -10.6 प्रतिशत थी। ग्रीस के संदर्भ में उसी वर्ष विकास दर -25.03 प्रतिशत रही।

चमड़ा क्षेत्र पर प्रभाव : यूरोज़ोन संकट तथा यूरो के गिरते मुल्य के बाद यूरोपीय संघ के लिए भारत के निर्यात पर नकारात्मक प्रभाव पड़ने की संभावना है। 2015-16 में जर्मनी सहित यूरोपीय बाज़ारों में निर्यात में गिरावट का रूझान दर्शाता है। वैश्विक मंदी के कारण चमड़ा उद्योग में 5.41 प्रतिशत की नकारात्मक वृद्धि दर्ज की गई है। भारत में चमड़े के निर्यात में चमड़े के घटक, चमड़े के वस्त्र, चमड़े के सामान, हार्नस शामिल हैं। यूरोपीय समुदाय को वर्ष 2000-01 में प्रतिशत भागीदारी 11.40 प्रतिशत थी जबकि 2010-11 में अप्रैल-सितंबर के मध्य यह 5.90 प्रतिशत रही।[20] 2009-10 में वृद्धि पर -2.10 प्रतिशत थी। 2010-12 के दौरान ग्रीस को भारत का निर्यात नकारात्मक रहा। जबकि पुर्तगाल के संदर्भ में निर्यात स्थिर रहा।

भारतीय रत्न और आभूषण क्षेत्र पर प्रभाव : भारतीय निर्यात की प्रवृत्ति में विविधता आई है। अभियान्त्रिकी सामान, पेट्रोलियम उत्पाद तथा रासायनिक उत्पाद का हिस्सा बढ़ा है। इसी

---

18 टी टी राममोहन, द इंपैक्ट ऑफ द क्राइसिस ऑन इंडियन इकॉनोमी इन ग्लोबल इकोनामिक एंड फाइनेंशियल क्रांसिसः एसेज़ फ्रॉम इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, ओरियंट ब्लैक् स्वॉन, 2009, हैदराबाद, पृ. 171

19 आर्थिक सर्वेक्षण, भारत सरकार, वित्त मंत्रालय, नई दिल्ली, 2010-11, पृ. 167।

20 एन.आनंद, यरोज़ोन क्राइसिस टू टेक इट्स टॉल ऑन लेदर इंडस्ट्री, द हिन्दू, जून 2012

संदर्भ में रत्न और आभूषण तथा कपड़ा व्यापार का हिस्सा घटा है।[21] यूरोपीय बाज़ारों में भारत के रत्नों और आभूषणों की हिस्सेदारी का प्रतिशत 2008 से 2010-11 की अवधि में कम रहा। 2008-09 से पिछले पांच वर्षों में भारतीय निर्यात की वृद्धि दर कई उतार-चढ़ाव देखे है। नवंबर 2013 से जनवरी 2014 के बीच निर्यात वृद्धि में कमी रही। 2013-14 में रत्न और आभूषणों के निर्यात गिर गया।

भारत के अभियान्त्रिकी निर्यात पर प्रभाव : अभियान्त्रिकी क्षेत्र भारत में सबसे बड़ा रोज़गार प्रदाता क्षेत्र है। जो लगभग चार मिलियन कुशल व अर्ध-कुशल मजदूर प्रदान करता है। 2009-10 में यूरोपीय संघ के अभियान्त्रिकी निर्यात के संदर्भ में उच्च नकारात्मक वृद्धि दर्ज की गई। अमेरिका और यूरोपीय संघ को अभियांत्रिकी सामानों के निर्यात के कामले में 2009-10 में तेज़ गिरावट दर्ज हुई। दुनिया में भारतीय अभियान्त्रिकी निर्यात का हिस्सा 2008 में 0.8 प्रतिशत था।[22] देशानुसार निर्यात में भी गिरावट आई। ग्रीस के संदर्भ में सीएजीआर -8.79 प्रतिशत रहा। स्पेन के संदर्भ 2015-16 में अभियांत्रिकी की मुख्य आइटम जिनमें लोहा और इस्पात में सबसे अधिक 37 प्रतिशत नकारात्मक वृद्धि होगी।

भारत सरकार और भारतीय रिर्जव बैंक द्वारा संकट की स्थिति में किए गए उपाय:भारत सरकार ने राजकोषीय प्रोत्साहन पैकेज प्रदान करके संकट से निपटने की कोशिश की। लागत में कमी करने के लिए निर्माताओं को सरकार द्वारा छूट प्रदान की गई। सरकार लैटिन अमेरिका और अफ्रीका जैसे नए गंतव्यों के साथ व्यापार में विविधता लोने के बारे में विचार कर रही है। घरेलू इस्पात पर सीमा शुल्क की पांच प्रतिशत से बढ़ाकर साढ़े सात प्रतिशत कर दिया था। बुनियादी ढांचे में निवेश की सुविधा के लिए केन्द्रीय बजट 2013-14 में कई उपायों की घोषणा की गई। वित्तीय क्षेत्र विधायी सुधार आयोग की स्थापना मार्च 2011 में की गई। इसका मुख्य उद्देश्य भारतीय वित्तीय प्रणाली में परिवर्तन लाने के लिए सुझाव देना था। आयोग ने कई कानूनी और संस्थागत स्तर पर बदलावों का प्रस्ताव किया।

निष्कर्ष: सन् 1952 में स्थापित यूरोपीय कोयला और इस्पात समुदाय से क्षेत्रीय एकीकरण के संदर्भ में यूरोपीय संघ विशिष्ट राजनीतिक निर्माण है। अपने समृद्ध इतिहास, बहुभाषा तथा मानवीय पूजी के साथ विविधता से परिपूर्ण है। किंतु यूरोज़ोन संकट दो यूरोपीय एकीकरण पर प्रश्न चन्ह आरोपित कर दिया है। यूरोपीय संघ आज एक चुनौतीपूर्ण समय से गुजरा रहा है। एकीकृत मुद्रा, यूरो ने क्षेत्र में समृद्धि तो पैदा की किंतु संकट ने उस परिदृश्य को बदल दिया है। यूरो क्षेत्र के देश मितव्ययिताकी शर्तो के अधीन भयंकर दबाव में है। उन्हें सामाजिक क्षेत्र की योजनाओं पर बजट कम करना पड़ा है, कई देश उच्च बेरोजगारी दर से पीड़ित है जो कि कुछ देशों में 25 प्रतिशत तक है। यूरोप एक ऐसे अनिश्चितता के क्षेत्र में आ गया है जहां इसका प्रभाव इसके समाज, अर्थव्यवस्था तथा राजनीति पर पड़ा है। यूरोपीय मौद्रिक संघ में कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं का अभाव है जो कि एक आर्थिक संघ के लिए आवश्यक होता है। यूरो को अपनाने से मौद्रिक नीति केन्द्रीकृत हो गई जबकि राजकोषीय नीतियाँ राष्ट्रीय सरकारों के

---

21 वैश्विक मंदी का भारतीय निर्यात तथा रोज़गार पर प्रभव, अंकटाड, 2013 https://unctad.org/en/publicationlibrary/webdictctincil 2009 dl_en.pdf.ved =2an UKela.

22 आर्थिक सर्वेक्षण, भारत सरकार, वित्त मंत्रालय, नई दिल्ली, 2010-11, पृ. 166

हाथों में ही रही। इस द्वंद्ववाद ने आर्थिक झटके को समायोजित करना मुश्किल बना दिया जिसने सदस्य राज्यों को अलग-अलग तरीके से प्रभावित किया। यूरोजोन संकट ने न केवल यूरोपीय नीतियों को प्रभावित किया बल्कि भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्थाओं को भी प्रभावित किया है। ईयू भारतीय निर्यात के लिए बड़ा बाज़ार है तथा यूरोपीय बाज़ारों में किसी भी प्रकार के झटके का प्रभाव भारत पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में पड़ना स्वाभाविक है। हालांकि भारतीय सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक ने भी भारतीय अर्थव्यवस्था को बचाने के लिए ठोस व टिकाऊ कदम उठाए जिनका सकारात्मक प्रभाव देखा भी गया।

अध्याय 24

संयुक्त राष्ट्र के शांति अभियानों में भारत का योगदान

डॉ. नियाज़ अहमद अन्सारी
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
शासकीय आदर्श महाविद्यालय
उमरिया

अजय कुमार
शोधार्थी
राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
झालावाड़

संयुक्त राष्ट्र की स्थापना की 75वीं वर्षगांठ के अवसर पर महासभा के 75वें सत्र का आभासी आयोजन सितम्बर 2020 को सम्पन्न हुआ। इस वैश्विक संगठन के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ है कि इसके सदस्य देशों के राष्ट्राध्यक्षों या शासनाध्यक्षों ने अपने-अपने निवास से ही अपना आडियो और वीडियो भाषण दिया। आभासी कार्यक्रमों के तहत ही सर्वप्रथम तुर्की के राजनीतिक **वोल्कन बोजकिर** ने 16 सितम्बर 2020 को महासभा के अध्यक्ष के रुप में कार्यभार ग्रहण किया। इसके तत्पश्चात संयुक्त राष्ट्र के महासचिव एंटोनियो गुटरेस ने उद्घाटन सत्र को संबोधित किया।[1] इस महत्वपूर्ण सत्र में संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों के राष्ट्रप्रमुखों के भाषणों की शुरुआत 22 सितंबर 2020 को अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प के वीडियो संबोधन के साथ हुई। 26 सितम्बर 2020 को भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने महासभा को हिन्दी में संबोधित किया। यह उनका महासभा को हिन्दी में संबोधित करने का तीसरा अवसर है। श्री मोदी ने अपने भाषण में संयुक्त राष्ट्र के विकास में भारत की महती भूमिका का स्मरण किया और संयुक्त राष्ट्र के सभी शान्ति प्रयासों के अभियानों में भारत के समग्र योगदान पर प्रकाश डाला।[2] इसके साथ ही उन्होंने संयुक्त राष्ट्र में सुधारों की मांग करते हुए सुरक्षा परिषद के लोकतंत्रीकरण हेतु इस परिषद की स्थायी सदस्यता का दावा भी दोहराया।

संयुक्त राष्ट्र के शांति प्रयास और भारत-

भारत ने अब तक संयुक्त राष्ट्र के 71 में से 49 शांति सेनाओं और अंतर्राष्ट्रीय अभियानों में यथासंभव अपनी सेनाओं के 2,00,000 से अधिक सैनिक भेजकर महत्वपूर्ण भूमिका और अपनी सशक्त जिम्मेदारी का सतत निर्वहन किया है। [3] यद्यपि संयुक्त राष्ट्र के घोषणा पत्र में कहीं भी शान्ति रक्षक दस्तों का उल्लेख नहीं हैं, तदापि हमें स्वीकार करना पड़ता, कि विश्व के कई संघर्षरत स्थलों पर गृहयुद्ध जैसी स्थिति निर्मित होने पर इन दस्तों ने लाखों मानव जीवन को बचाया है। [4] वस्तुतः संघर्षों को नियंत्रित करने की प्रभावी प्रक्रिया के रूप में इन दस्तों की वृद्धि और औचित्य को अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने कालान्तर में स्वीकार कर लिया गया।

उल्लेखनीय है कि संयुक्त राष्ट्र की शांति सेनाओं द्वारा निम्नलिखित तीन उपायों का प्रयोग करके शांति स्थापना या शांति बहाली की जाती है- [5]

शांति स्थापना या बहाली के उपाय

शांति स्थापना *के तहत युद्ध में संलग्न देशों एवं पक्षों के मध्य शांति स्थापना हेतु संयुक्त राष्ट्र के बैनर तले नीले रंग की वर्दीधारी सैनिक तैनात किए जाते है जो अस्त्र-शस्त्र का प्रयोग नही करते। अब इनके साथ चिकित्सकों की भी तैनाती की जाती है। नीली वर्दी के कारण इन सैनिकों को* ***ब्लू हैलमेट*** *भी कहा जाता है।*

शांति निर्वहन *प्रक्रिया के अंतर्गत दो पक्षों के मध्य संघर्ष उत्पन्न होने से पहले ही कूटनीतिक प्रयासों से शांति स्थापना की जाती है। इस प्रकार पीस मेकिंग द्वारा भविष्य में होनेवाली हिंसा को रोका जाता है। पीस मेकिंग को* ***निवारणात्मक*** *कूटनीति भी कहा जाता है। शांति स्थापना हेतु सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के निर्माण हेतु संघर्षरत् या तनावग्रस्त स्थलों पर शिक्षा एवं स्वास्थ्य की सुविधाएं उपलब्ध कराकर आधारभूत संरचना विकसित की जाती है। इस प्रक्रिया को ही* ***शांति निर्माण*** *कहा जाता है। शांति निर्माण से ही वहां लोकतांत्रिक संस्थाओं का निर्माण कर रोजगार सृजन पर बल दिया जाता है। अतः विश्व शान्ति की स्थापना की दिशा में संयुक्त राष्ट्र के शान्ति अभियानों में दिए गए भारतीय योगदान एवं पर्यवेक्षक के रूप में किए गए कार्यों को इन बिन्दुओं के तहत आसानी से समझा जा सकता है, जो कि शांति सेनाओं में योगदान (तालिका-1) और पर्यवेक्षक के रूप में किए गए महत्वपूर्ण कार्यों को* ***(तालिका-2)*** *के करते है-*

संयुक्त राष्ट्र शान्ति मिशनों में भारत का योगदान [6] (तालिका-1)

क्र.	मिशन कोड	देश	वर्ष	भारतीय योगदान
1	अप्राप्त	कोरिया	1953-54	6000 सैनिक
2	अप्राप्त	वियतनाम	1954-70	7000 सैनिक
3	अप्राप्त	लाओस	1964-68	चिकित्सा दल
4	UNEF - I	सिनाई द्वीप (मिस्त्र)	1956-57	11 बटालियन सैनिक
5	ONUC	कांगो	1960-64	1200 सैनिक
6	UNFICYP	साइप्रस	1964	3 फोर्स कमाण्डर
7	UNEF-II	मिस्त्र	1974-79	अप्राप्त
8	UNDOF	गोलन पहाड़ी, सीरिया	twu 1974	अप्राप्त
9	UNTAG	नामीबिया	1989-90	अंतरिम सहायता समूह में शामिल

10	UNOMIL	लाइबेरिया	1991	125 महिला सैनिक
11	UNPROFOR	यूगोस्लाबिया	1992	फोर्स कमाण्डर
12	ONUMOZ	मोजम्बिक	1992	अप्राप्त
13	UNOSOM	सोमालिया	1993-95	66 ब्रिगेड सैनिक
14	UNAMIR	रबाण्डा	1994	अप्राप्त
15	UNAVEM	अंगोला	1995	500 सैनिक और चिकित्सा दल
16	UNIOSIL	सियरा-लियोन	1999	3060 सैनिक
17	UNMEE	इथोपिया-इरीट्रिया	2000	1200 सैनिक
18	UNMIS	सूडान	2005	2400 सैनिक
19	MNDKO	कांगो	2005	3000 सैनिक

विश्व शान्ति की स्थापना की दिशा में संयुक्त राष्ट्र के शान्ति अभियानों में दिए गए भारत के उपर्युक्त तथ्यात्मक योगदान एवं पर्यवेक्षक के रूप में किए गए कार्यों को विस्तृत रूप में समझना आवश्यक है जिनका विवरण निम्नलिखित बिन्दुओं में दिया गया है-

संयुक्त राष्ट्र द्वारा संचालित शान्ति निर्वहन संक्रियाएँ/गतिविधियां-

भारत ने संयुक्त राष्ट्र द्वारा संचालित सभी शान्ति निर्वहन संक्रियाओं (अनुरक्षण प्रचालनों) का समर्थन किया और आवश्यकता पड़ने पर उनके साथ पूरा सहयोग किया। संयुक्त राष्ट्र निर्देशित इन सेनाओं ने किसी देश के विरुद्ध आक्रामक कार्यवाही तो नहीं की, परन्तु उनका उपयोग अवश्य किया है। निश्चय ही ऐसा राष्ट्रों के मध्य या फिर किसी राज्य के भीतर विभिन्न समुदायों के मध्य संघर्ष को नियंत्रित और समाप्त करवाने के लिए किया गया है। संयुक्त राष्ट्र के अस्तित्व के प्रथम 60 वर्षों (1945-2005) में लगभग 55 शान्ति निर्वहन कार्य संचालित किये गये हैं। वस्तुतः संयुक्त राष्ट्र द्वारा भारत को सौंपा गया प्रथम महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व था। कोरिया के लिए तटस्थ राष्ट्रों का युद्ध-बन्दी प्रत्यावर्तन आयोग की अध्यक्षता करना जिसे भारत ने स्वीकार किया और पूर्ण मनोयोग से निभाया भी। इस आयोग का कार्य युद्ध बन्दियों को अपनी हिरासत में रखना था। [7]

इसके पूर्व 1950 में, सुरक्षा परिषद् के आहवान पर उत्तरी कोरिया द्वारा दक्षिणी कोरिया पर किये गये आक्रमण के दौरान सैन्य बल से मुक्त कराने के लिए सामूहिक सुरक्षा के अधीन कई देशों ने अपनी सेनाएँ भेजी थी। उस समय भारत ने सुरक्षा परिषद् के प्रस्ताव का सम्मान करते हुए अपनी सेना का एक चिकित्सा दल कोरिया भेजा। इस प्रत्यावर्तन आयोग के अध्यक्ष के रूप में भारत ने युद्ध-बन्दियों की अदला-बदली के कार्य को प्रशंसनीय रूप से संचालित किया। इसी प्रकार, 1954 में हुए हिन्द चीन सम्बन्धी जिनेवा समझौते के अनुसार उस देश में

सुचारू व्यवस्था स्थापित करने के लिए एक निरीक्षण एवं नियन्त्रण अन्तर्राष्ट्रीय आयोग गठित किया गया था। भारत ने कुशलतापूर्वक इस आयोग की भी अध्यक्षता की। तत्कालीन अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत के इन कार्यों को कूटनीतिज्ञ रूप में सराहा गया।

भारत द्वारा शान्ति निर्वहन संक्रियाओं में सहयोग का एक अन्य उदाहरण 1956 में सामने आया, जब स्वेज नहर के प्रश्न को लेकर ब्रिटेन, फ्रांस और इजराइल द्वारा मिस्र पर आक्रमण किया गया। इससे स्थिति जटिलतम बन गई। अमेरिका और सोवियत संघ के प्रस्ताव पर सुरक्षा परिषद् ने पश्चिम एशिया में युद्धविराम की घोषणा करते हुए संयुक्त राष्ट्र आपातकालीन बल गठित कर दिया। इस बल का कार्य युद्धविराम का पर्यवेक्षण करना था और जिसके तटस्थ रूप में सम्पन होना था। इस बल में कनाडा, डेनमार्क, फिनलैण्ड, नॉर्वे, स्वीडन, ब्राजील, कम्बोडिया, भारत, इण्डोनेशिया तथा यूगोस्लाविया के सैनिक शामिल हुए। स्वेज नहर सम्बन्धी पश्चिम एशिया के इस विवाद में, भारत सहित सभी उपर्युक्त देशों को तटस्थ माना गया था। इस बल ने प्रभावी ढंग से युद्धविराम बनाये रखा तथा सिनाई द्वीप और गाजा पट्टी को इजराइल से खाली करवाया। काफी समय तक इस बल ने 273 किलोमीटर लम्बी मिस्र-इजराइल सीमा रेखा पर गश्त लगायी। इस कार्य में भी भारत ने संयुक्त राष्ट्र के साथ पूर्ण सहयोग किया। बाद में 1979 में वाशिंगटन के निकट कैम्प डेविड नामक स्थान पर अमेरिकी राष्ट्रपति जिमी कार्टर ने इजराइल और मिस्र में समझौता कराने में सफलता प्राप्त की। इस समझौते के तहत दोनों देशों के मध्य 1948 से चले आ रहे अरब-इजराइल युद्ध को विराम दिया गया। [8]

शान्ति-व्यवस्था का एक अन्य महत्वपूर्ण कार्य 1960-63 में भारत को सौंपा गया था। यह कार्य कांगो में भारत के स्वतंत्र ब्रिगेड ने पूर्ण किया था। इस अभियान में भारतीय सैनिकों ने प्रमुख भूमिका निभाई थी। कांगो गणतंत्र (जो बाद में कई वर्षों तक जायरे कहलाया था) को बेल्जियम के औपनिवेशिक शासन से जून, 1960 को स्वतंत्रता प्राप्त हुई। शीघ्र ही इस नवोदित देश में हिंसा भड़क उठी तो बेल्जियम ने यूरोपियन लोगों की सुरक्षा और वापसी के लिए अपनी सेना वहाँ भेजी। कांगो सरकार की प्रार्थना पर सुरक्षा परिषद ने महासचिव को अधिकार दिया कि वह 48 घण्टे में पूर्व कांगो को सैनिक सहायता उपलब्ध करायें। महासचिव की इस पहल पर शीघ्र ही एशिया एवं अफ्रीका के कई देशों ने अपनी सेनाएँ काँगो भेजी।

भारत के सैनिक इस शान्ति सेना में काफी बड़ी संख्या में शामिल हुए। जब स्थिति गम्भीर हो गयी और पूर्व प्रधानमन्त्री **लुमुम्बा** की कटंगा में हत्या कर दी गयी तो कटंगा प्रान्त ने देश से पृथक् होने का प्रयास किया। तब ऐसी जटिल परिस्थिति में शान्ति सैनिकों की संख्या बढ़ाकर 20,000 तक कर कर दी गई। फरवरी 1963 में कटंगा का कांगो में पुनः एकीकरण हो गया तो शान्ति सैनिकों को वापस बुलाना आरंभ हुआ। शान्ति सेना में सम्मिलित भारत के अधिकारियों और जवानों की भूमिका की सराहना संयुक्त राष्ट्र के तत्कालीन महासचिव **हैमरशौल्ड** ने की थी। भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती **इंदिरा गांधी** ने संयुक्त राष्ट्र के विकास और सभी शान्ति अभियानों में भारत के योगदान और अपनी विदेश नीति के भावी लक्ष्यों को स्पष्ट करते हुए महासभा में कहा था,

"जब तक एशिया और अफ्रीका के स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए संघर्षरत क्षेत्रों-अंगोला, मोजाम्बिक, गिनी आदि को स्वतंत्रता नहीं मिल जाती, हमारी स्वतंत्रता अधूरी है"।[10]

1992 में हिंसा से ग्रस्त पूर्व युगोस्लाविया ने संयुक्त राष्ट्र और उसके अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति के आदर्श के सम्मुख गम्भीर चुनौती प्रस्तुत की। शीतयुद्ध की समाप्ति और सोवियत संघ के विघटन ने पूर्व यूगोस्लाविया में जातीय भावनाओं को उग्र बना दिया। वहाँ न केवल यूगोस्लाविया का कई राज्यों में विभाजन हो गया तो सर्बिया और बोस्निया के मुसलमानों के मध्य जातीय हिंसा ने भयंकर रूप ले लिया। सर्बिया के लोगों ने बोस्निया में जातीय-निर्मूलन का नारा देकर वहाँ के मुसलमानों को निशाना बनाया। क्रोशिया में भी जातीय भावना भड़क उठी। बोस्निया में कई अग्निकाण्ड हुए और बड़ी संख्या में हजारों लोग हताहत होकर अनाथ और बेघर हो गये। यह संघर्ष तीन वर्ष से भी अधिक समय तक भीषण रूप से चलता रहा। युद्ध विराम के अनेक प्रयास असफल किये गये। युद्ध विराम के प्रयासों में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा बल को पूर्व यूगोस्लाविया के प्रदेशों में शान्ति स्थापना के कार्य में अनेक कठिनाइयों उत्पन्न हुई। इस महत्वपूर्ण सुरक्षा बल का नेतृत्व भारतीय सेना के एक वरिष्ठ अधिकारी ने किया। इस बार भी भारत ने शान्ति स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

भारतीय विदेश नीति की पर्यवेक्षकीय एवं कूटनीतिज्ञ भूमिका

संयुक्त राष्ट्र की शान्ति सेनाओं की भूमिका दो कारणों से लगतार चुनौतीपूर्ण और जटिल होती गई है। वर्तमान में चार्टर के अध्याय-6 के अंतर्गत शान्ति सेना का क्षेत्राधिकार क्रमश: शांति रखरखाव से शांति प्रवर्तन होता जा रहा है जिसे सामूहिक सुरक्षा के रूप में विश्व समुदाय ने स्वीकार भी किया है। संयुक्त राष्ट्र के घोषणा पत्र के अध्याय-7 में धारा 39 से 51 तक सामूहिक सुरक्षा विषयक प्रावधान विस्तारपूर्वक वर्णित हैं। [11]

संयुक्त राष्ट्र के शान्ति स्थापना के प्रयासों में भारतीय योगदान के दूसरे रूप, पर्यवेक्षकीय कार्य के तहत भारत का मूल्यांकन किया जा सकता है जो कि तालिका-2 में वर्णित है-[12]

शान्ति पर्यवेक्षक के रूप में भारत की भूमिका (तालिका-2)

क्र.	समय	स्थान/देश	मिशन का नाम
1	जनवरी, 1949	पाकिस्तान	**सैन्य पर्यवेक्षक ग्रुप** (UNMOGIF)
2	1958	लेबनान	UNOGIL
3	1963	यमन	UNYOM
4	1965	डोमिनियन रिपब्लिक	DOMREP

5	सित.1965-मार्च 1966	पाकिस्तान	UNIPOM
6	1984	अरब-इजराइल	**युद्ध विराम पर्यवेक्षण संगठन**-UNSO
7	1987	ईरान-इराक	UNIMOG
8	1988-1990	अफगानिस्तान-पाक.	UNGDMAP
10	1989	मध्य अफ्रीका	ONUCA
11	1992	कम्बोडिया	**चुनाव पर्यवेक्षक**

मार्च 1998 में संयुक्त राष्ट्र महासचिव **कोफी अन्नान** ने भारत के प्रकाश शाह को ईराक में अपना विशेष प्रतिनिधि नियुक्त किया। ईराक के साथ फरवरी में अन्नान ने एक महत्वपूर्ण समझौते पर हस्ताक्षर किये जिससे इराक में अस्त्र-शस्त्र भण्डारण का निरीक्षण किया जा सके। यह निरीक्षण संयुक्त राष्ट्र के एक विशेष आयोग को आस्ट्रेलिया के **रिचर्ड बटलर** की अध्यक्षता में करना था। इस समझौते से ईराक पर अमरीकी आक्रमण की भावना टल गयी। राजदूत प्रकाश शाह को प्रत्यक्ष रूप से संयुक्त राष्ट्र के तत्कालीन महासचिव **कोफी अन्नान** के प्रति उत्तरदायी बनाया गया, बटलर के प्रति नहीं। प्रकाश शाह के शब्दों में उनका कार्य ईराकी नेतृत्व और महासचिव के बीच राजनीतिक कड़ी की भूमिका निभाने का था। महासचिव द्वारा भारत के एक राजनयिक में पूर्ण विश्वास व्यक्त करना, चाहे पश्चिमी देशों को अच्छा न लगा हो, फिर भी इससे भारतीय विदेश नीति की भूमिका में वृद्धि अवश्य हुई। 13 इन शान्ति मिशनों के अलावा संयुक्त राष्ट्र ने भारत को शान्ति निरीक्षण आयोगों, सामूहिक उपाय समितियों और अन्य विश्वास बहाली के प्रयासों में पर्यवेक्षक भी नियुक्त किया है। भारतीय विदेश नीति सदैव अंतर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान खोजने की प्रबल पक्षधर रही है क्योंकि भारतीय संविधान के अनुच्छेद-51 में भी अंतर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान निकालने और सामूहिक समृद्धि का लक्ष्य रखा गया है।

उपर्युक्त दोनों तालिकाओं के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि भारत ने कदम-कदम पर शान्ति एवं चिकित्सा दल के रूप में संयुक्त राष्ट्र के कार्यों में यथासंभव सहयता जारी रखी है। व्यापक दृष्टि से देखा जाए तो भारत ने अब तक 60 से ज्यादा छोटे-बड़े स्थानों पर शान्ति सेनाएं भेजी हैं या बड़ी सेनाओं में सहभागिता की है। जहां इन सैनिकों में से सैकड़ों सैनिक और सैन्य अधिकारी अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत और सम्मानित हुए, वहीं सैंकड़ों भारतीय सैनिक वीरगति को भी प्राप्त हुए हैं।

संयुक्त राष्ट्र के शांति प्रयासों का मूल्यांकन

 ISSN: 2321-0443

संयुक्त राष्ट्र के प्रायः सभी शान्ति अभियानों एवं कार्यक्रमों को अधिकतम सफलताएं ही मिली हैं, भले ही विभिन्न मंचों पर उनकी आलोचनाएं भी होती रहीं हों। संयुक्त राष्ट्र के शान्ति स्थापनामूलक कार्यों के संबंध में अमेरिकी राष्ट्रपति **आइजनहावर** ने अपने एक संबोधन में कहा है, "संयुक्त राष्ट्र तो मानव सभ्यता की संगठित आशा का प्रतिनिधित्व करता है जो युद्ध स्थलों को समझौता स्थलों में बदलने की अद्भुत क्षमता रखता है।" क्लार्क आइक्लवर्जर ने भी लिखा है, "कुछ राष्ट्रों ने भले ही कुछ समय कि लिए संयुक्त राष्ट्र की उपेक्षा की हो, परंतु कालांतर में वे देर-सबेर संयुक्त राष्ट्र के शान्ति कार्यों में सहभागी बनकर ही गौरव का ही अनुभव किया है।"[14] वास्तव में संयुक्त राष्ट्र के उक्त शान्तिमय अभियानों के परिणामस्वरूप विश्व की अनेक समस्याओं का जो शांतिपूर्ण समाधान निकला है वह स्वतः ही इसके महत्व और भावी आशाओं को प्रकट करता है।

निष्कर्ष-

अंतर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा की स्थापना के उद्देश्य को लेकर कार्यरत् संयुक्त राष्ट्र के प्रायः सभी शान्ति अभियानों एवं कार्यक्रमों में भारत के उपर्युक्त योगदान के विवेचन के आधार पर निष्कर्षः कहा जा सकता है कि भारत और संयुक्त राष्ट्र ने इस दिशा में एक और एक ग्यारह के रूप में उक्त कार्यों को पूर्ण करके महत्वपूर्ण उपलब्धियां अर्जित की है। इससे प्रोत्साहित होकर भारत की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति और विदेश नीति दोनों लगातार पल्लवित और विकसित होती गई है। अतः संयुक्त राष्ट्र की स्थापना के 75 वर्ष (हीरक जयंती) के उपलक्ष्य में भारत को संयुक्त राष्ट्र में समुचित महत्व और स्थान मिलना ही चाहिए, क्योंकि भारत ने वैश्विक महामारी कोविड-19 के कठिन समय में भी 150 देशों को दवाईयां उपलब्ध कराईं हैं। भारत ने सदैव संयुक्त राष्ट्र द्वारा संचालित सभी शांति निर्वहन संक्रियाओं का समर्थन किया है। अब तक भारत ने इस प्रकार के शान्ति स्थापना के वैश्विक रचनात्मक कार्यों में लगातार आवश्यकतानुसार पूर्ण सहयोग किया है। उल्लेखनीय है कि भारत संयुक्त राष्ट्र को सैन्य बल उपलब्ध कराने के मामले में विश्व में दूसरा स्थान रखता हैं।

भारत ने 4 महाद्वीपों में अपनी शान्ति सेनाएं और प्राकृतिक आपदाओं में राहत एवं चिकित्सा सामग्री भेजकर या उनमें शामिल होकर अद्वितीय भूमिका का भी निर्वहन किया है। आज भी जिन स्थानों या देशों में तनाव या संघर्ष बना हुआ है, वह दो राष्ट्रों में संघर्ष न होकर एक ही देश के दो या अधिक समूहों में आपसी झगड़ा, जातीय संघर्ष या धार्मिक उन्माद का परिणाम सिद्ध हो रहा है। अधिकतर मामलों में पड़ोसी देशों की संलग्नता और पक्षपातपूर्ण व्यवहार से संकट जटिलतम बने हैं। इसका भुक्तभोगी स्वयं भारत भी रहा है जिसे पाक समर्थित आतंकवाद और चीन द्वारा नेपाल को भड़काकर शान्ति को भंग करने के लगातार प्रयासों से उत्पन्न तनाव के रूप में सहन करना पड़ रहा है। इसके बावजूद भारत ने पड़ोसी देशों के साथ स्थापित पंचशील सिद्धांतों की शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की नीति अपनाकर विश्व शान्ति की स्थापना में अपना योगदान देना अनवरत जारी रखा है। भारत की विदेश नीति सदैव विश्व स्तर पर शांति और सौहार्द स्थापित करने हेतु तत्पर रही है। आज भी

अपनी सैन्य विशेषज्ञता, संवेदनशीलता और संयमित व्यवहार के कारण संयुक्त राष्ट्र शांति सेना में भारतीय सैन्य बलों का विशिष्ट स्थान बना हुआ है।

संदर्भ सूची

1. न्यू इण्डिया समाचार, 16-31 अक्टूबर, 2020 (ऑनलाईन), नई दिल्ली, पृ. 28
2. प्रतियोगिता दर्पण, नवम्बर 2020, उपकार प्रकाशन, आगरा, पृ. 17
3. ओझा, एन. एन., अंतर्राष्ट्रीय संबंध, 2019, क्रानिकल बुक्स प्रा. लि. , नई दिल्ली, पृ. 385
4. पंत, पुष्पेश, अंतर्राष्ट्रीय संगठन, 2008, टाटा मैक्ग्रा हिल पब्लिशिंग कं., नई दिल्ली, पृ. 29
5. मिश्रा, राजेश, भारतीय विदेश नीति: भूमंडलीकरण के दौर में, 2019, ओरियंट ब्लैकस्वान लि., हैदराबाद, पृ. 270
6. भारद्वाज, रामेदव, अंतर्राष्ट्रीय संबंध, 2018 म.प्र. हि.ग्रं. अकादमी भोपाल, पृ. 461
7. जैन, श्रीपाल, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, 1995 मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ. 205
8. श्रीवास्तव, सी. पी. , भारत और विश्व: बदलते परिदृश्य, 2002, किताब महल, इलाहाबाद, पृ. 319
9. ओझा, एन.एन. , अंतर्राष्ट्रीय संबंध, 2019, क्रानिकल बुक्स प्रा. लि. , नई दिल्ली, पृ. 388
10. बग्गा, एस. एस. , भारत और आधुनिक विश्व, 1996, विद्या भवन प्रकाशन, इन्दौर, पृ. 133
11. पंत, पुष्पेश, 21वीं सदी में अंतर्राष्ट्रीय संबंध, 2018, टाटा मैक्ग्रा हिल पब्लिशिंग कं., नई दिल्ली, पृ. 50
12. कुमार, अशोक, राजनीति विज्ञान, उपकार प्रकाशन, आगरा, पृ. 751
13. मिश्रा,राजेश, भारतीय विदेश नीतिःभूमंडलीकरण के दौर में, ओरियंट ब्लैकस्वान प्रा. लि.,हैदराबाद, पृ.270
14. जैन, एम. एल. , अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, 1991, विद्या भवन प्रकाशन, इन्दौर, पृ. 160
15. प्रतियोगिता दर्पण, नवम्बर 2020, उपकार प्रकाशन, आगरा, पृ. 45
16. https://news.un.org/events/unga75 एवं अन्य राष्ट्रीय स्तर के समाचार पत्र-पत्रिकाएं ।

अध्याय 25

भारतीय जलवायु परिवर्तन नीति पर संयुक्त राष्ट्र संघ की समझौता-वार्ताओं के संदर्भ में एक अवलोकन

डॉ संजय शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
राजनीति और अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन विभाग
पांडिचेरी विश्वविद्यालय

मानव इतिहास में औद्योगिक क्रांति विकास का एक नया प्रतिमान थी। इसके विभिन्न परिणामों में से एक परिणाम पर्यावरणीय क्षय है। पर्यावरणीय क्षय के एक पक्ष को जलवायु परिवर्तन तथा वैश्विक ताप के रूप में जाना जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 1972 में 'मानव पर्यावरण' विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया। इस संगोष्ठी से एक वैश्विक पर्यावरण अभिशासन का आरंभ हुआ। भारत 1972 की संगोष्ठी से ही इस वैश्विक अभिशासन (Global Governance) का एक सक्रिय सदस्य रहा है। भारतीय नेतृत्व ने आरंभ से ही यह पक्ष रखा कि भारत जैसे विकासशील देशों के लिए विकास ही प्राथमिकता है। विकसित देशों द्वारा पर्यावरणीय आधारों पर इस विकास प्रक्रिया में गतिरोध उत्पन्न नहीं करना चाहिए। भारत ने जलवायु परिवर्तन के वैश्विक अभिशासन में न केवल योगदान किया है अपितु एक सशक्त नेतृत्व व दिशा भी प्रदान की है। इस शोध-पत्र में इसी पृष्ठभूमि में जलवायु परिवर्तन की समझौता-वार्ताओं में भारतीय पक्ष का विश्लेषण किया गया है। जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र संघ फ्रेमवर्क कन्वेंशन (United Nations Framework Convention on Climate Change), कॉन्फ्रेंस आफ पार्टीज (Conference of Parties) तथा जलवायु परिवर्तन पर अन्तर-सरकारी पैनल (Intergovernmental Panel on Climate Change) में भारतीय सहभागिता व पक्ष का विश्लेषण किया गया है। यह शोध-पत्र उतर-प्रत्यक्षवाद तथा व्याखात्मक शोध पद्धति पर आधारित है। मुख्यतः इसमें जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र संघ फ्रेमवर्क कन्वेंशन, भारत सरकार, कार्फ्रेस आफ पार्टीज तथा जलवायु परिवर्तन पर अन्तर-सरकारी पैनल की रिपोर्ट को प्राथमिक स्रोत के रूप में प्रयोग में लाया गया है। इसके अतिरिक्त इसमें द्वितीय स्रोतों व अधिकारिक वेब स्रोतों को भी प्रयोग में लाया गया है।

प्रस्तावना :

मनुष्य के द्वारा पृथ्वी को राजनीतिक आधार पर तो बांटा जा सकता है परन्तु पर्यावरण अविभाज्य है। जलवायु परिवर्तन किसी एक देश की नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानव-जाति की समस्या है। हालांकि इस संबंध

में यह समझना आवश्यक है कि जलवायु-परिवर्तन की समस्या के लिए सभी देश समान रूप से जिम्मेदार नहीं हैं। भारत जैसे विकासशील देशों द्वारा जलवायु परिवर्तन के वैश्विक अभिशासन की समझौता वार्ताओं में यह तर्क रखा गया कि वैश्विक उत्तर (Global North) के विकसित देश इस समस्या के लिए अधिक उत्तरदायी है। क्यूंकि जलवायु परिवर्तन में इनका योगदान वैश्विक दक्षिण (Global South) की तुलना में कहीं अधिक है। इसके अतिरिक्त विकासशील देश विकास के उस चरण में है जिसे विकसित देश पूर्ण कर चुके हैं। इन्ही तर्कों के आधार पर भारत ने अपनी जलवायु परिवर्तन की नीति की नींव रखी जिसमें कि अंतर्राष्ट्रीय समझौता वार्ताओं में भारत ने अपने विकास को प्राथमिकता दी तथा स्वाभाविक न्याय (Equity) जैसे सिद्धांतों के संदर्भ में यह तर्क प्रस्तुत किया कि प्रत्येक देश अपने योगदान के अनुसार ही अपना उत्तरदायित्व तय करें। इसके विपरीत वैश्विक उत्तर के द्वारा विकसित तथा विकासशील देशों में समान उत्तरदायित्व को प्रोत्साहित किया जाता है। विशेषकर भारत के संदर्भ में यह तर्क रखा जाता है कि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में योगदान की दृष्टि से चीन व अमेरिका के पश्चात भारत का तीसरा स्थान है। इसी आधार पर समझौता वार्ताओं में भारत पर समान भागीदारी व उत्तरदायित्व के लिए दबाव बनाया जाता है।

इस शोध-पत्र को अध्ययन के दृष्टिकोण से चार भागों में विभाजित किया गया है। प्रथम भाग में जलवायु परिवर्तन के अंतर्राष्ट्रीय अभिशासन तथा जलवायु परिवर्तन समझौता-वार्ताओं के अभ्युदय का विश्लेषण किया गया है। दूसरे भाग में कान्फ्रेंस आफ पार्टीस के अंतर्गत विभिन्न जलवायु परिवर्तन समझौता-वार्ताओं तथा उसमें भारतीय भागीदारी व कूटनीति का विश्लेषण किया गया है। शोध पत्र के तीसरे भाग में भारत की जलवायु परिवर्तन की नीति की निरंतरता व परिवर्तन का अवलोकन किया गया है तथा चौथे व अन्तिम भाग में शोध-पत्र के विश्लेषण का निष्कर्ष किया गया है।

I

जलवायु परिवर्तन व अंतर्राष्ट्रीय अभिशासन

जलवायु परिवर्तन पर अंतर्राष्ट्रीय अभिशासन का आरम्भ वर्ष 1992 में 'संयुक्त राष्ट्र संघ पर्यावरण व विकास संगोष्ठी' के आयोजन से हुआ। यह आयोजन ब्राजील के रियो-डी-जेनेरियो में हुआ तथा इस संगोष्ठी को रियो पृथ्वी संगोष्ठी के नाम से भी जाना जाता है। इस संगोष्ठी का एक मुख्य परिणाम जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क संधि (UNFCCC) की स्थापना है। इस संधि का मुख्य उद्देश्य एक ऐसे मंच की सुविधा प्रदान करना है जहां विभिन्न सदस्य देश समझौता वार्ता के द्वारा ग्रीन हाउस गैसों के उत्र्सजन को कम करने पर आपसी सहमति विकसित कर सकें जलवायु परिवर्तन पर अन्तर सरकारी पैनल की पहली आकलन रिपोर्ट-1990 में यह कहा गया है कि "जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिए विकसित व विकासशील देशों का सामूहिक उत्तरदायित्व है (अंतर सरकारी

पैनल, 1990: 141)।" भारत तथा अन्य विकासशील देशों द्वारा इस प्रकार के प्रयासों का विरोध कर कहा गया कि यह स्वाभाविक न्याय के सिद्धांत के विरूद्ध हैं। विकासशील व विकसित देशों में बनी आपसी सहमति को सामूहिक परंतु विभेदित उत्तरदायित्व के सिद्धांत (Common but Differential Responssibility) के रूप में स्थापित किया गया। जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क संधि में विकसित व विकासशील देशों के मध्य हुए वाद व समझौतों को निम्न तीन बिन्दुओं में समझा जा सकता है :-

i विकासशील देशों के लिए कानूनी रूप से बाध्य कोई भी नियम नहीं होगें;

ii स्वाभाविक न्याय 'equity' के सिद्धांत को अपनाया जाएगा; तथा

iii विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों को आर्थिक सहायता दी जाएगी (क्योटो प्रोटोकाल, 1997: 9) ।

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन के सदस्यों द्वारा प्रत्येक वर्ष कॉन्फ्रेन्सऑफ पार्टीज-कॉप (Conference of Parties-COP) के रूप में मिलना तय हुआ। वर्ष 1993 से वर्ष 2020 तक कॉप के 25 के सम्मेलन हो चुके है।

II
जलवायु परिवर्तन समझौता-वार्ताएं तथा भारतीय भागीदारी व कूटनीति

क्योटो से मॉन्ट्रियल:उत्तर-दक्षिण विवाद का आरम्भः

भारत की जलवायु परिवर्तन की नीति के प्रति तर्कों, वाद तथा भविष्य योजना के बिन्दुओं को समझने हेतु वैश्विक उत्तर तथा वैश्विक दक्षिण के मध्य अन्तर को समझना आवश्यक है। इस अन्तर को वैश्वीकरण के माध्यम से समझा जा सकता है। एंथनी मैकग्रयू के अनुसार "वैश्वीकरण एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है जिसमें मनुष्यों के विभिन्न संगठनों का वृहद विस्तार होता है जिससे दूरस्थ समुदायों में संपर्क स्थापित होता है तथा शक्ति संबंधों का विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों तक विस्तार होता है।" वंदना शिवा जैसे विकासशील देशों के विद्वानों द्वारा यह कहा गया है कि उत्तर ने वैश्वीकरण किया तथा दक्षिण का वैश्वीकरण हुआ है। अर्थात इस वैश्वीकरण में वैश्विक उत्तर के देशों के हाथ में शक्ति व नियंत्रण है। दूसरी ओर वैश्विक दक्षिण के देशों के संसाधनों व बाजारों का शोषण उत्तर द्वारा किया जा रहा है। वैश्विक उत्तर द्वारा यही प्रयास जलवायु परिवर्तन के विषय में किया जा रहा है। यद्यपि वैश्विक उत्तर के देश ही जलवायु परिवर्तन के लिए प्रमुख रूप से उत्तरदायी हैं तथापि यह उत्तर व दक्षिण के मध्य एक सामूहिक उत्तरदायित्व लागू करवाना चाहते हैं तथा इनके द्वारा स्वाभाविक न्याय तथा जलवायु न्याय (Climate Justice) जैसे सिद्धांतों की निरंतर अवहेलना की जाती है। वैश्विक उत्तर यह चाहता है कि

दक्षिण के देशों द्वारा भी जलवायु परिवर्तन को रोकने या कम करने के प्रयासों में समान भागीदारी की जाए। परंतु भारत जैसे विकासशील देशों का मानना है कि वर्तमान में भी हमारी प्रति व्यक्ति उत्सर्जन की मात्रा अत्यधिक न्यून है तथा जलवायु परिवर्तन के लिए प्राथमिक रूप से वैश्विक उत्तर के देश ही उत्तरदायी हैं जिसके कारण सामूहिक परंतु विभेदित उत्तरदायित्व तथा स्वाभाविक न्याय जैसे सिद्धांतों की अवहेलना नहीं की जा सकती है।

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र के फ्रेमवर्क कन्वेंशन -1992 के पश्चात जर्मनी में वर्ष 1995 में पार्टियों का सम्मेलन (कॉप-I) हुआ। इस सम्मेलन में उत्तर द्वारा सामूहिक परंतु विभेदित उत्तरदायित्व के सिद्धांत में संसोधन कर दक्षिण को एक समान उत्तरदायित्व देने का प्रयास किया गया। भारत ने इस सम्मेलन में जी-72 की स्थापना की तथा लघु द्वीप समूह राज्यों की संधि (Alliance of Small Island States) के साथ मिलकर यूरोपीय संघ व जर्मनी को मनाया कि दक्षिण के विकासशील देशों पर कार्बन उत्सर्जन के न्यूनीकरण हेतु मात्रा निर्धारण लक्ष्य न लगाए जाए। दक्षिण की इस मांग को बर्लिन घोषणापत्र में मान लिया गया (बर्लिन मेनडेट, 1995: 5)।

जापान के होन्शु द्वीप के क्योटो शहर में वर्ष 1997 में कॉप-3 का आयोजन हुआ। इसे क्योटो प्रोटोकॉल के नाम से भी जाना जाता है। इस सम्मेलन में भारत तथा विकासशील देशों के इस तर्क को माना गया कि जलवायु परिवर्तन के लिए मुख्यत: विकसित देश उत्तरदायी हैं। इस तर्क को मानते हुए क्योटो प्रोटोकॉल में सम्पूर्ण सदस्य देशों को दो श्रेणियों: परिशिष्ट-I (विकसित) तथा परिशिष्ट-II (विकासशील) में बांटा गया। परिशिष्ट-I की श्रेणी में आने वाले देशों को 2008-2012 तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को 1990 की तुलना में औसत 5 प्रतिशत तक कम करना था। दूसरी ओर विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों पर ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 'स्वैच्छिक कटौती' के लिए दबाव बनाया गया। परंतु भारत, चीन व जी-72 द्वारा इसका पुरजोर विरोध किया गया तथा उत्तर-दक्षिण के मध्य यह सहमति बनी कि परिशिष्ट-II के देश अपनी क्षमता के अनुसार ही ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती करेंगे। क्योटो सम्मेलन में भारतीय प्रतिनिधि सैफुद्दीन सोज़ द्वारा 'प्रति व्यक्ति अभिसरण' (Per Capita Convergence) नामक एक योजना सुझाई गई। इस योजना के अनुसार विकसित देशों को अपना प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन कम करना चाहिए जिससे कि एक समयावधि के पश्चात विकासशील देशों के बढ़े हुए उत्सर्जन से इसका अभिसरण हो जाए (सोज़, 1997)

कॉप-4 से कॉप-6 तक क्योटो प्रोटोकॉल के प्रारूप व इसे लागू करने के तौर-तरीकों पर समझौता वार्ताएं की गई। अंत में कॉप-7 में क्योटो प्रोटोकॉल को औपचारिक तौर पर मर्राकेश समझौता (Marrakesh Accord) के रूप में अपनाया गया। इसके अतिरिक्त कॉप-7 में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने के लिए एवं अनुकूलन निधि (Adaptation Fund) की स्थापना की गई। इसके पश्चात कॉप-10 में

जलवायु परिवर्तन पर समझौता-वार्ताओं का एक नया चरण आरंभ हुआ जिसमें की क्योटो प्रोटोकॉल के पश्चात जलवायु परिवर्तन को रोकने के उपायों पर व्यूह संरचना बनाने की चर्चाएं हुई। कॉप-10 में ब्युनस आयर्स कार्य योजना (Buenos Aires Plan of Action) अपनाया गया। इस कार्य योजना का मुख्य उद्देश्य विकासशील देशों द्वारा जलवायु परिवर्तन पर अनुकूलन प्राप्त करने की तकनीकों की खोज करना था। कॉप-11 वर्ष 2005 में कनाडा के मॉन्ट्रियल शहर में हुई। इस सम्मेलन में उत्तर-दक्षिण के देशों के मध्य समान उत्तरदायित्व को लेकर वाद पुर्नजीवित हुआ। उत्तर का तर्क था कि अमेरिका, चीन व भारत वर्ष 2015 तक विश्व के शीर्ष उत्सर्जक की श्रेणी में आ जाएंगे। इसी कारणवश उत्तर के देशों द्वारा यह कहा गया कि क्योटो के उत्तरार्ध में कोई भी जलवायु परिवर्तन संबंधी समझौता केवल उसी स्थिति में हो सकता है जब अधिक विकासशील देशों पर भी उत्सर्जन हेतु कानूनी बाध्यता लगाई जाए। इसके अतिरिक्त मॉन्ट्रियलसमझौता-वार्ता में इस पर जोर दिया गया कि भविष्य में न केवल उन विकसित देशों को, जैसे कि अमेरिका व आस्ट्रेलिया को शामिल किया जाए जो क्योटो प्रोटोकॉल से बाहर रहे अपितु इसमें विकासशील देशों की अधिकाधिक भागीदारी को भी सुनिश्चित किया जाए।

केन्या से कोपनहेगन स्वाभाविक न्याय व विभेदन को चुनौतीः-

इसके पश्चात कॉप-12 नैरोबी, केन्या में हुआ जिसमें उत्तर-दक्षिण के मध्य वार्ता का कोई विशेष परिणाम नहीं आया। कॉप-13 वर्ष 2007 एक सफल सम्मेलन रहा तथा इसका परिणाम वाली कार्य योजना के रूप में आया। कार्य योजना में कहा गया कि दीर्घकालीन सहकारी कार्ययोजना (Long Term Cooperative Action-LCA) के अन्र्तगत उत्र्सजन कटौती तथा वित्तीय सहायता के संदर्भ में उत्तर-दक्षिण देशों के मध्य कॉप-14 कोपनहेगन तक एक विस्तृत समझौता हो जाना चाहिए। कॉप-13 में भारत व अन्य विकासशील देशों द्वारा तीन मुख्य बिन्दुओं पर जोर दिया गया: i) सामूहिक तथा विभेदित उत्तरदायित्व के सिद्धांत में कोई संशोधन नहीं होना चाहिए; ii) विकसित देशों द्वारा वित्तीय तथा तकनीकी सहायता प्रदान करने पर ही विकासशील देश जलवायु परिवर्तन का शमन कर सकते हैं; iii) तथा विकासशील देशों में अंतर्राष्ट्रीय जाँच, सत्यापन व प्रतिवेदन (MRV) केवल उन्हीं परियोजनाओं का होना चाहिए जो विदेशी सहायता प्राप्त हों। हालांकि कोपनहेगन सम्मेलन तक उत्तर-दक्षिण देशों के मध्य इन विषयों पर कोई सहमति नहीं बनी। कॉप-15 में विकसित व विकासशील देशों के मध्य तीव्र बहस हुई।

इसी दौरान जहां भारत ने अपना मत सामूहिक तथा विभेदित उत्तरदायित्व पर बनाए रखा, वहीं दूसरी ओर भारत ने कार्बन उत्र्सजन में स्वैच्छिक कटौती की घोषणा भी की। संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन में जयराम रमेश पर्यावरण मंत्री बने। इन्होंने भारत की जलवायु परिवर्तन के नियंत्रण के लिए अपनी प्रतिबद्धता को दोहराया। उनके अनुसार भारत को अंतर्राष्ट्रीय समझौता-वार्ताओं हेतु अपनी क्षमता को और अधिक बढ़ाना होगा। जयराम रमेश ने कॉप-15 के दौरान स्वैच्छिक रूप से घोषणा की कि भारत

2020 तक अपनी घरेलू उत्पाद की उत्सर्जन तीव्रता को 2005 की तुलना में 20-25 प्रतिशत तक कम करेगा। भारतीय नेतृत्व द्वारा यह कार्य घरेलू स्तर पर जलवायु परिवर्तन के शमन व अनुकूलन के लिए किया गया। इसके अतिरिक्त जयराम रमेश ने यह भी कहा कि भारत को अपनी वैज्ञानिक क्षमता को बढ़ाना होगा जिससे भारतीय अर्थव्यवस्था की विभिन्न इकाइयों तथा भारत के भौगोलिक क्षेत्रों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का आकलन किया जा सके। (द हिन्दू, 22 दिसम्बर 2009)

डर्बन से पेरिस: एक नई शुरूआत

कॉप-17 वर्ष 2011 में डर्बन में सम्पन्न हुआ। आश्चर्यजनक रूप से कॉप-17 में वह सब आश्वासन तोड़े गए जो कि उत्तरी देशों द्वारा दक्षिणी देशों को बाली, कोपेनहेगन तथा कानकून में दिए गए थे। कॉप-17 से पहले तीन विषयों पर उत्तर-दक्षिण के मध्य एक वृहत्तर समझ विकसित हुई थी। यह विषय थे : i) सामूहिक परंतु विभेदित उत्तरदायित्व के सिद्धांत को मान्यता; ii) विकासशील देशों के लिए कार्बन उत्सर्जन में कटौती हेतु कोई वैधानिक बाध्यता नही: तथा iii) विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों को आर्थिक सहायता, जिससे वह जलवायु परिवर्तन का शमन व अनुकूलन कर सके।

कॉप-18 वर्ष 2012 में दोहा में सम्पन्न हुआ जिसमें क्योटो प्रोटोकॉल को दूसरे चरण 2012-2020 के लिए लागू किया गया। कॉप-19 वर्ष 2013 में वार्ता में सम्पन्न हुआ इसमें सभी सदस्य देशों से कहा गया कि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती हेतु अपनी कार्य योजनाओं को तैयार करें। वस्तुत: इसे राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (Intended Nationally Determined Contributions, INDCs) के रूप में जाना जाता है। कॉप-20 वर्ष 2014 में लीमा में सम्पन्न हुई। इस सम्मेलन में एक समान विचार वाले विकासशील देशों (Like Minded Developing Countries) के समूह का निर्माण हुआ। भारत ने ब्राजील, दक्षिणी अफ्रीका, चीन तथा समान विचार वाले विकासशील देशों के समूह के साथ मिलकर सामूहिक तथा विभेदित उत्तरदायित्व के प्रति अपनी प्राथमिकताओं पर जोर दिया। उत्तर तथा दक्षिणी देशों को मध्य वार्ताओं का परिणाम यह निकला कि लीमा उद्घोषणा में यह कहा गया कि 2015 के अपेक्षित समझौतों में सामूहिक तथा विभेदित उत्तरदायित्व के सिद्धांत को विभिन्न देशों की क्षमताओं के आधार पर लागू किया जाएगा। इस प्रकार कॉप-20 में यह निर्णय लिया गया कि 2015 तक सभी सदस्य देश अपने योगदान के लक्ष्यों को निर्धारित करेगें तथा इसे राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान (INDCs) के रूप में प्रस्तुत किया जाएगा। यह निर्धारित योगदान प्रतिज्ञा व समीक्षा के सिद्धांत पर संपादित होंगे अर्थात प्रत्येक देशों को अपने योगदान के कार्यान्वयन को अंतर्राष्ट्रीय समीक्षा के लिए प्रस्तुत करना होगा।

इसी दौरान भारत में राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन की सरकार की स्थापना हुई तथा माननीय नरेन्द्र मोदी जी ने प्रधानमंत्री का कार्यभार सम्भाला। भारत ने कॉप-21 में अपने राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान प्रस्तुत किए तथा इसके साथ ही मोदी जी ने फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों के साथ मिलकर

अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन की उद्घोषणा की। इसके अतिरिक्त भारत ने स्वघोषित कटौती से आगे बढ़ते हुए जलवायु परिवर्तन की दिशा में अपने सकल घरेलू उत्पाद की उत्सर्जन तीव्रता को 2020 तक 2005 की तुलना में 30-35 प्रतिशत तक कम करने की घोषणा की।

केटोविस और मेड्रिड: पेरिस समझौते का कार्यान्वयन व उत्तर-दक्षिण मतभेद :-

कॉप-22 में पेरिस समझौतों को स्वीकृति दी गई तथा यह निर्धारित किया गया कि इस समझौते की कार्य योजना अर्थात पेरिस विधि पुस्तिका : 2018, कॉप-24 तक तैयार कर ली जाएगी। पेरिस समझौते के विस्तृत उद्देश्य निम्नलिखित हैं :-

(i) वैश्विक तापमान की वृद्धि को पूर्व-औद्योगिक काल की तुलना में 2^0C से कम रखना तथा यह प्रयास करना कि पूर्व- औद्योगिक काल से यह वृद्धि 1^0C से कम रखी जाए;

(ii) जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों के प्रति अनुकूलन को बढ़ाना; ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करना तथा जलवायु प्रतिरोध क्षमता बढ़ाना जिससे की खाद्य उत्पादन की सुरक्षा को सुनिश्चित किया जा सके; तथा

(iii) वित्त प्रवाह का उचित प्रबंधन जिससे की ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी के साथ सतत् विकास को भी सुनिश्चित किया जा सके।

कॉप-24 में विभिन्न विषयों पर निर्णय लिए गए इनमें से निम्न मुख्य विषय थे:

i) राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान; ii) ग्लोबल स्टॉक-टेक (Global Stock-take); iii) पारदर्शिता व उत्तरदायित्व फ्रेमवर्क; iv) जलवायु वित्तपोषण; v) अनुपालन समिति; vi) समीक्षा युक्ति; तथा vii) तलानोआ संवाद।

भारतीय नेतृत्व ने कॉप-24 में विभिन्न विषयों पर अपनी प्रतिक्रिया रखी। ग्लोबल स्टॉक-टेक में सभी सदस्य राष्ट्रों को अपने लक्ष्यों व समयावधि की रिपोर्टकरनी होती है। भारत ने अपना मत प्रकट किया कि विकसित व विकासशील देशों की रिपोर्टके प्रारूप व समयावधि समान नहीं हो सकते हैं। विधि पुस्तिका में भारतीय मत का संज्ञान लेते हुए यह माना गया कि विकासशील देश अलग प्रारूप में रिपोर्टकर सकते हैं। भारत ने यह भी कहा की ग्लोबल स्टॉक-टेक के संबंध में स्वाभाविक न्याय को भी लागू करके यह देखना चाहिए कि विकासशील व विकसित देशों द्वारा किस मात्रा में लक्ष्य तय किए गए हैं। परंतु विकसित देशों द्वारा सामूहिक तौर पर इस मांग का विरोध किया गया जिससे यह निर्धारित हुआ कि ग्लोबल स्टॉक-टेक में सामूहिक प्रयासों का ही आकलन किया जाएगा। भारत तथा ब्राजील जैसे

विकासशील देशों द्वारा यह विषय भी उठाया गया कि इन देशों के पास लम्बे समय से कार्बन क्रेडिट एकत्रित हैं तथा इनके विक्रय के लिए व्यवस्था स्थापित की जाए परंतु विकसित देशों के विरोध के चलते विधि-पुस्तिका में कार्बन क्रेडिट के विक्रय के लिए किसी भी तंत्र की स्थापना नहीं हो पाई। अंततः भारतीय नेतृत्व के द्वारा विधि पुस्तिका के अनुच्छेद 9 पर आपत्ति जताई गई क्योंकि इस अनुच्छेद के अनुसार विकसित देश अनुदान के अतिरिक्त ऋण को भी जलवायु वित्तपोषण में दर्शा सकते हैं। भारत के अनुसार यह विकसित देशों का एक बहुत बड़ा छल है क्योंकि वह अपने जलवायु वित्तपोषण के उत्तरदायित्व के साथ समझौता करके जलवायु परिवर्तन को नियंत्रित करने का अधिकांश उत्तरदायित्व विकासशील देशों पर डाल रहे हैं। वास्तव में यह 1992 में जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र संघ के फ्रेमवर्क कन्वेंशन के स्वीकृत नियमों, सामूहिक तथा विभेदित उत्तरदयित्व व स्वाभाविक न्याय की पूर्ण अवहेलना है।

कॉप-25, चिली की अध्यक्षता में मेड्रिड में 2-13 दिसम्बर वर्ष 2019 को सम्पन्न हुई। यह सम्मेलन कई दृष्टिकोण से अप्रभावी रही क्योंकि विकसित देशों द्वारा जलवायु परिवर्तन पर प्रभावी निर्णयों को लगातार टालने का प्रयास किया गया। भारत ने कॉप-25 के सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन के प्रति अपनी प्रतिबद्धता की गम्भीरता को दर्शाया तथा अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की उत्सर्जन रिक्ति रिपोर्ट(Emission Gap Report) में विश्व के प्रमुख देशों में केवल भारत ही है जो ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जक के अपने लक्ष्य को न केवल पूर्ण कर रहा है अपितु अपने लक्ष्य से 15 प्रतिशत आगे है। क्लाइमेट एक्शन ट्रेकर (Climate Action Tracker) के अनुसार यदि सभी देश भारत के पद चिन्हों पर चलें तो अंतर्राष्ट्रीय तापमान में वृद्धि को 2^0C से नीचे रखा जा सकता है। भारतीय नेतृत्व की ओर से कहा गया कि यदि विकसित देशों द्वारा जलवायु परिवर्तन की दिशा में वित्तीय सहायता व अन्य आयामों पर निर्णय नही लिया गया तो वह भारत से भी इस क्षेत्र में अपेक्षा रखना छोड़ दें। वर्तमान समय में भारत न केवल अपने लक्ष्यों की पूर्ति कर रहा है अपितु समझौता-वार्ताओं में विकासशील देशों के हितों को भी एक प्रभावी नेतृत्व प्रदान कर रहा है।

III

भारत की जलवायु परिवर्तन की नीति में निरंतरता व परिवर्तन

भारत की जलवायु परिवर्तन की नीति को लगभग पाँच दशक हो गए है। भारत की जलवायु परिवर्तन की नीति कुछ सिद्धांतों के प्रति प्रतिबद्ध रही है तो समय व परिस्थिति के अनुसार इसमें कुछ परिवर्तन भी आए हैं। भारत की जलवायु परिवर्तन की नीति को मुख्यतः तीन चरणों में बाँटा जा सकता है। प्रथम संयुक्त राष्ट्र संघ की मानव पर्यावरण पर संगोष्ठी-1972 से कॉप-13 बाली कार्य योजना-2007, द्वितीय

कॉप-15 कोपेनहेगन, 2009 से कॉप-19 वार्ता, 2013 तथा तृतीय कॉप-20 लीमा, 2014 से कॉप-25 मैड्रिड, 2019।

भारत संयुक्त राष्ट्र संघ की मानव पर्यावरण पर संगोष्ठी-1972 से ही जलवायु परिवर्तन की समझौता वार्ताओं में एक सक्रिय सदस्य रहा है। भारत द्वारा पर्यावरण क्षय तथा विकास के वाद में विकास को प्राथमिकता दी गई। भारत के इस पक्ष को समझने के लिए भारतीय इतिहास का अवलोकन आवश्यक है। भारत वर्ष 1947 में स्वतंत्र हुआ। भारत लगभग 200 वर्षों तक ब्रिटेन का एक उपनिवेश रहा। इन 200 वर्षों में ब्रिटेन ने भारत का आर्थिक शोषण किया। इसी कारणवश भारत का मुख्य उद्देश्य अपने विकास द्वारा अपनी गरीबी को दूर करना था। आरम्भ में संयुक्त राष्ट्र संघ की मानव पर्यावरण पर संगोष्ठी भारत को एक छद्म योजना लगी जिसका उद्देश्य विकासशील देशों को अपने मूल उद्देश्य गरीबी व अन्य आर्थिक समस्याओं से दिग्भ्रमित करना था। स्टॉकहोम संगोष्ठी के अध्यक्ष मारिस स्ट्रोंग के अनुसार 'विकासशील देश इस संगोष्ठी को बहिष्कार करने की योजना बना रहे थे' (रिचर्ड, 1992: 1)। परंतु भारत जैसे विकासशील देशों ने इस संगोष्ठी का बहिष्कार करने की अपेक्षा इसमें अपने पक्ष को मुखरता से रखा। इस संगोष्ठी में एक ओर तो भारत द्वारा विकास के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दशाई गई तो दूसरी ओर कहा गया कि विकसित देशों को अपनी पर्यावरणीय समस्या से जूझते हुए विकासशील देशों को दी जाने वाली सहायता में कटौती नहीं करनी चाहिए, अपितु भविष्य में पर्यावरणीय समस्याओं को देखते हुए इस सहायता में वृद्धि की जानी चाहिए (यूनाइटेड नेशंस, 1973)। भारतीय नेतृत्व ने अपने इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निम्नलिखित बिन्दुओं को केन्द्र में रखते हुए विभिन्न समझौता वार्ताओं को सम्पन्न किया:-

(i) भारत के विकास पथ पर जलवायु परिवर्तन द्वारा नकारात्मक प्रभाव नही डालना चाहिए क्योंकि भारत के लिए विकास व गरीबी हटाना प्राथमिक उद्देश्य है;

(ii) जलवायु परिवर्तन की समस्या के लिए विकसित देश मुख्य रूप से उत्तरदायी है जिससे की भारत को ग्रीन हाउस गैसों में कटौती हेतु कोई वैधानिक कटौती नही अपनानी चाहिए तथा;

(iii) अंतर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन की संधियां स्वाभाविक न्याय सामूहिक तथा विभेदित उत्तरदायित्व पर आधारित होनी चाहिए।

भारत की जलवायु परिवर्तन की नीति का दूसरा चरण कॉप-15, कोपेनहेगन वर्ष 2009 से कॉप-19, वार्सा ,पौलेंड वर्ष 2014 तक का है। इस चरण में भारत तथा अन्य विकासशील देशों द्वारा यह माना गया कि जलवायु परिवर्तन एक महत्वपूर्ण चुनौती है तथा वैश्विक तापमान वृद्धि को 2^0C से नीचे रखना मानवता की रक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक है। इस दौरान भारत ने स्वैच्छिक आधार पर दो महत्वपूर्ण निर्णय लिए। प्रथम यह कि भारत अपने प्रति व्यक्ति कार्बन को विकसित देशों की तुलना में अधिक वृद्धि नही होने देगा। दूसरा, कोपेनहेगन सम्मेलन में जयराम रमेश, तत्कालीन केन्द्रीय पर्यावरण मंत्री ने कहा की

भारत अपनी सकल घरेलू उत्पाद में उत्सर्जन की तीव्रता को 2005 की तुलना में 2020 तक 20-25 प्रतिशत तक कम करेगा। भारत ने इन दोनों निर्णयों में किसी कानूनी रूप से उत्सर्जन में कटौती की अवहेलना करते हुए स्वैच्छिक रूप से इन्हे अपनाया। भारत के इस स्वैच्छिक योगदान के पीछे निम्नलिखित कारक समझे जा सकते है:-

(i) भारतीय नेतृत्व जलवायु परिवर्तन की चुनौती की गम्भीरता को समझ चुका था तथा इसके लिए विकास के लक्ष्य के साथ स्वैच्छिक योगदान हेतु तैयार था;

(ii) वर्ष 2010 में पर्यावरण व वन मंत्रालय ने 'जलवायु परिवर्तन व भारत: एक 4×4 क्षेत्रीय व प्रादेशिक मूल्यांकन व विश्लेषण-2030' नामक एक रिपोर्ट प्रकाशित की। इस रिपोर्टमें भारत के विभिन्न भौगोलिक प्रदेशों व आर्थिक क्षेत्रों पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन किया गया तथा भारतीय नेतृत्व को नीति-निर्माण के लिए इनपुट मिला (जलवायु परिवर्तन व भारत, 2010) ।

(iii) विश्व के दस सर्वाधिक प्रदूषित शहरों की सूची में भारत के छः शहरों के नाम है। पर्यावरण की स्थिति सुधारने के लिए स्वच्छ ईधन, उत्तम स्वास्थ्य सुविधाओं तथा तकनीकी हस्तांतरण की आवश्यकता है। भारत इसे स्वैच्छिक योगदान द्वारा अंतर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन की समझौता वार्ताओं में इसे प्राप्त करना चाहता है; तथा

(iv) जी8+5 सम्मेलन से ही वैश्विक उत्तर का वैश्विक दक्षिण देशों विशेषकर भारत, चीन व ब्राजील तथा दक्षिणी अफ्रीका पर दबाव बना रहा है कि विश्व तालिका में उच्च कार्बन उत्सर्जक होने के कारण इन देशों को भी अपने उत्सर्जन में कटौती कर जलवायु परिवर्तन को रोकने में अपना योगदान देना चाहिए।

भारतीय जलवायु परिवर्तन नीति का तीसरा चरण कॉप-20, लीमा-वर्ष 2014 से लेकर कॉप-25, मैड्रिड-वर्ष 2019 तक का है। इस चरण का आरंभ भारत में केन्द्रीय सरकार में सत्ता परिवर्तन से आरंभ होता है। वर्ष 2014 में भारत में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन के स्थान पर राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन की सरकार बनी तथा नरेन्द्र मोदी देश के प्रधानमंत्री बने। इस दौरान नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत ने न केवल स्वैच्छिक योगदान की ओर कदम बढ़ाया बल्कि भारत ने जलवायु परिवर्तन को रोकने में एक अग्रिम भूमिका निभाई। मोदी जी ने जलवायु परिवर्तन पर पेरिस समझौते में भारत के स्वैच्छिक योगदान की समीक्षा करते हुए घोषणा की कि भारत 2020 तक अपने सकल घरेलू उत्पादन की उत्सर्जन तीव्रता को 2005 की तुलना में 30-35 प्रतिशत तक कम करेगा। इसके अतिरिक्त मोदी जी ने फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों के साथ वर्ष 2015 में अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन की स्थापना की। यह जलवायु परिवर्तन के प्रति प्रभावों को शमन करने का एक प्रभावी प्रयास है। अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन के अन्तर्गत वर्ष 2030 तक 1000 गीगावाट से अधिक सौर उत्पादन की क्षमता के साथ सौर ऊर्जा हेतु लगभग 1000 बिलियन की राशि को जुटाना है। भारत ने 23 सितंबर, 2019 को न्यूयार्क, अमेरिका में जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र संघ के शिखर सम्मेलन के दौरान मोदी जी ने आपदा प्रबंधन अवसंरचना पर

अंतर्राष्ट्रीय गठबंधन (International Coalition for Disaster Resilient Infrastructure, CDREI) की स्थापना की। इसका मुख्य उद्देश्य एक ऐसे मंच के रूप में कार्य करना है जहां जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन व अवसंरचना के विविध आयामों के संबंध में जानकारी जुटाकर इसका आदान-प्रदान किया जाएगा (भारत सरकार, 2019)। भारत के जलवायु परिवर्तन के प्रति इन सकारात्मक कार्यों के परिणाम स्वरूप भारत पर्यावरण सुरक्षा मिशन में उच्चतम 10 देशों की श्रेणी में आ गया है। कॉप-25 वर्ष में 10 दिसंबर, 2019 को जलवायु परिवर्तन प्रदर्शन सूचकांक (Climate Change Performance Index-CCPI) प्रस्तुत किया गया। इस सूचकांक में भारत को 9वाँ स्थान प्रदान किया गया है। मोदी जी के इन प्रयासों के फलस्वरूप वर्ष 2018 में उन्हें तथा फ्रांस के राष्ट्रपति इमैनुएल मैक्रों को संयुक्त रूप से 'चैपिंयन ऑफ द अर्थ' पुरस्कार प्रदान किया गया। इस प्रकार भारत वर्ष 2014 के पश्चात् स्वैच्छिक योगदान से आगे बढ़कर जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में एक प्रभावी नेतृत्व की भूमिका में आ गया है जिसका श्रेय वर्तमान भारतीय नेतृत्व को जाता है।

IV

निष्कर्षः-

जलवायु परिवर्तन वर्तमान काल की एक महत्वपूर्ण चुनौती है। इस चुनौती की जितनी अधिक अवेहलना की जाएगी इसके आकार व प्रकार में उतनी ही वृद्धि होती जाएगी। भारत समेत विश्व के विभिन्न देश जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को अनुभव कर रहे है। भारत में वर्ष 2020 में ही पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय द्वारा प्रकाशित रिर्पोट में भारत के विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों व भौगोलिक प्रदेशों पर जलवायु परिवर्तन के पड़ने वाले प्रभावों का आकलन किया गया है। इस रिपोर्टमें कहा गया है कि जलवायु परिवर्तन से हमारी कृषि, नदियों, समुद्र के जल स्तर तथा तापमान पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। भारत ने आरंभ से ही जलवायु परिवर्तन की समझौता वार्ताओं में यह मत रखा कि भारत पर्यावरण व जलवायु परिवर्तन जैसे मुद्दों पर संवेदनशील है परंतु भारत की प्रथम आवश्यकता विकास के पथ पर आगे बढ़कर गरीबी को मिटाना है। इसी कारणवश इंदिरा गांधी ने मानव पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र की संगोष्ठी-1972 में कहा कि "गरीबी प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण है।" इसके अतिरिक्त स्वाभाविक न्याय के सिद्धांत के आधार पर भारत ने तर्क दिया कि जलवायु परिवर्तन की समस्या विकसित देशों में हुई औद्योगिक क्रांति की देन है जिससे की इसके प्रति प्रथम उत्तरदायित्व विकसित देशों का बनता है। भारत ने 1972 से लेकर 2009 तक अपनी नीति में निरंतरता बनाए रखी परंतु 2009 के पश्चात विभिन्न कारणों से भारत की जलवायु परिवर्तन की नीति स्वैच्छिक योगदान की ओर उन्मुख हुई। परंतु इसका यह अर्थ नही था कि भारत ने स्वाभाविक न्याय व सामूहिक तथा विभेदित उत्तरदायित्व की अपनी मांग को छोड़ दिया अपितु, इन सिद्धांतों के प्रति भारत की प्रतिबद्धता कभी कम भी नही हुई। वर्तमान में भारत ने स्वैच्छिक योगदान से आगे बढ़कर जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में एक प्रभावी नेतृत्व प्रदान किया है। भारत न केवल

समझौता वार्ताओं व अंतर्राष्ट्रीय संधियों में सक्रिय रहा है, अपितु अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन-2015 तथा आपदा प्रबंधन अवसंरचना पर अंतर्राष्ट्रीय गठबंधन-2019 की भी स्थापना कर चुका है। भारत, पेरिस समझौते की विधि पुस्तिका के निर्माण को लेकर भी विकासशील देशों के हितों का पक्षधर रहा है तथा विधि पुस्तिका के अनुच्छेद 9 जलवायु वित्तपोषण तथा अनुच्छेद 6 कार्बन क्रेन्द्रित के तंत्र में अस्पष्टता को लेकर मुखर है। वर्तमान में भारतीय नेतृत्व जलवायु परिवर्तन के क्षेत्र में न केवल अपने हितों की साधना में लगा है, अपितु विकासशील देशों के हितों का रक्षक भी है तथा विकासशील व विकसित देशों के मध्य एक समन्वयक का कार्य भी प्रभावशाली रूप से कर रहा है।

<u>संदर्भ सूची</u>

1. एक्सप्रेस, इंडियन (2020). केपिटलस एयर कॉलिंग इन एमरजेंसी लेवल फोर ओवर 48 ऑवर, नो रेसपाइट. न्यू डेली: एक्सप्रेस न्यूज सर्विस, 11 नवम्बर, 2020.
2. टाइम्स, द न्यू योर्क (2020). वाय डज केलिफोर्निया हेव सो मेनी वाइल्ड फायरस. न्यू योर्क. रिट्राइवड फ्रॉम https://www.nytimes.com/article/why-does-california-have-wildfires.html
3. आग्रेनाइजेशन, वर्ल्ड हेल्थ (2019). टेन थ्रेट्स टू ग्लोबल हेल्थ इन 2019. रिट्राइवड फ्रॉम https://www.who.int/news-room/spotlight/ten-threats-to-global-health-in-2019
4. चेन्ज, इन्टरगर्वमेन्टल पैनल ओन (2018). ग्लोबल वार्मिंग ऑफ 1.5^{0}C. यू.के: आईपीसीसी.
5. चेन्ज, इन्टरगर्वमेन्टल पैनल ओन (1990). फर्स्ट असेस्मेंट रिर्पोट ऑफ आईपीसीसी क्लाइमेट चेंज: द 1990 एण्ड 1992. कनाडा: यूनाइटेड नेशंस इन्वायरमेंट प्रोग्राम.
6. प्रोटोकाल, क्योटो (1997). रिर्पोट ऑफ द क्राफ्रेंस ऑफ पार्टीज ऑन इटज थर्ड सेशन. क्योटो: यूनाईटेड नेशंस पब्लिकेशन.
7. मेनडेट, बर्लिन (1995). रिर्पोट ऑफ दा क्राफ्रेंस ऑफ दा पार्टीस ऑन इटस फर्स्ट सेशन. बर्लिनः यूनाईटेड नेशंस फ्रेमवर्क कनवेंशन ऑन कलाइमेट चेंज.
8. सोज़, सैफुद्दीन (1997). भारतीय मंत्री का क्योटो में अभिभाषण. क्योटो 8 दिसम्बर, 1997.
9. रिव्यू, इंडिया (2007). इंडिया अटेंडेंट जी-8 समिट एण्ड मीटिंग ऑफ G8+5 इन जर्मनी. काबुल: खंड-3, अंक-7.
10. द हिन्दू (2009). कोपनहेगन समझौते पर राज्य सभा में जयराम रमेश का अभिभाषण. 22 दिसम्बर, 2009.

 ISSN: 2321-0443

11. ब्लेक रिचर्ड (1992). स्टाकहोम: बर्थ ऑफ ग्रीन जनरेशन. रिट्राइवड फ्रॉम https://www.bbc.com/news/science-environment-18315205
12. नेशंस, यूनाइटेड (1973). रिपोर्ट ऑफ द यूनाइटेड नेशंस काफ्रेंस ऑन हयूमन इनवायरमेंट-1972. न्यू योर्क: यूनाइटेड नेशंस पब्लिकेशन.
13. सरकार, भारत (2010). जलवायु परिवर्तन व भारत: 4x4 एक क्षेत्रीय व प्रादेशिक मूल्यांकन व विश्लेषण-2030. दिल्ली: पर्यावरण व वन मंत्रालय.
14. सरकार, भारत (2019). आपदा प्रबंधन अवसरंचना पर अंतर्राष्ट्रीय गठबंधन. रिट्राइवड फ्रॉम https://pib.gov.in/Pressreleaseshare.aspx?PRID=1594191

अध्याय 26

भारत की परमाणु नीति: निरंतरता और परिवर्तन

डॉ सुमन मौर्य
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

1947, स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर भारत में होमी जहाँगीर भाभा के नेतृत्व में परमाणु कार्यक्रम की शुरुआत की गई। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू परमाणु शक्ति के सैन्य उपयोग के पक्षधर नहीं थे, फलतः आरंभ में परमाणु कार्यक्रम को सिर्फ असैन्य उपयोग तक ही सीमित रखा गया। द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् धीरे-धीरे अमेरिका, ब्रिटेन, रूस तथा फ्राँस ने परमाणु शक्ति हासिल कर ली। वर्ष **1962** में चीन के साथ युद्ध, वर्ष **1964** में चीन द्वारा परमाणु परीक्षण तथा वर्ष **1965** में पाकिस्तान से युद्ध आदि घटनाक्रम के पश्चात् भारत को अपनी नीति में बदलाव के लिये विवश होना पड़ा। इस नीति में बदलाव के साथ भारत ने पोखरण में वर्ष **1974** में प्रथम परमाणु परीक्षण किया। यह परीक्षण इसलिये भी आवश्यक था कि वर्ष **1965** के पश्चात् ऐसे देश जो परमाणु शक्ति संपन्न थे, उनको छोड़कर किसी अन्य को परमाणु क्षमता हासिल करने पर रोक लगा दी गई थी।[1]

1963 में आंशिक परीक्षण प्रतिबंध संधि अस्तित्व में आई । जिसके अनुसार पृथ्वी के ऊपर, समुद्र के अंदर तथा वायुमंडल में परमाणु परीक्षण नहीं किए जाएंगे, लेकिन इसमें भूमिगत परमाणु परीक्षणों को अनुमति प्रदान की गई बशर्ते कि उस परीक्षण से पड़ोसी देश को कोई हानि ना हो । भारत ने इस संधि पर हस्ताक्षर किए । इसलिए मई **1974** में पोखरण में परमाणु परीक्षण किया तो वह इस संधि के अनुसार हुआ था । जब भारत ने अपना पहला परमाणु परीक्षण पोखरण में किया तो पड़ोसियों ने इसकी कड़ी निंदा की । लेकिन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने इस कार्य को उचित ठहराया और कहा कि भारत शांतिपूर्ण और रचनात्मक कार्यों के लिए परमाणु परीक्षण का समर्थन करता है । भारत ऐसे परीक्षण नहीं करेगा, जिससे वह परमाणु बम बनाए । भारत ऐसे परीक्षण करेगा जिनसे विद्युत उत्पादन हो, लेकिन प्रधानमंत्री श्री वाजपेई के समय परिस्थितियां बहुत बदल गई । चीन की गुप्त सहायता से पाकिस्तान ने परमाणु शस्त्र, मिसाइले बनायी अर्थात पाकिस्तान का भयानक मंतव्य चिंता

का विषय बनता चला गया, इसलिए मई **1998** में दूसरी बार भारत ने पोखरण में सफल परमाणु परीक्षण किया। अब प्रधानमंत्री वाजपेयी ने यह स्पष्ट कर दिया कि भारत अपनी सुरक्षा से समझौता नहीं करेगा, आवश्यक हुआ तो भारत परमाणु हथियार भी बनाएगा लेकिन इसका पहले प्रयोग नहीं करेगा।

परमाणु अप्रसार संधि, **1968** के अनुसार कोई भी देश न वर्तमान में और न ही भविष्य में परमाणु हथियारों का निर्माण करेगा हालाँकि सदस्य देशों को परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग की अनुमति होगी। परमाणु अप्रसार संधि के संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि भारत ने निशस्त्रीकरण की स्थापना हेतु इस संधि को प्रस्तुत करने वाला एक प्रमुख सहयोगी देश था, जिसमें कि निम्न शर्ते रखी गई- परमाणु तकनीकी के हस्तांतरण पर पूर्ण रोक, परमाणु क्षमता का गैर परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्रों पर प्रयोग हेतु निषेध, निशस्त्रीकरण की दिशा में प्रयास किया जाएगा, जिसमें मुख्य रुप से व्यापक परमाणु निषेध संधि व हथियारों की पूर्ण समाप्ति तथा गैर परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्र भी परमाणु शक्ति का हथियार प्राप्त नहीं करने का आश्वासन देंगे। नवंबर **1965** में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा तय किए गए सिद्धांतों का भी भारत ने समर्थन किया परंतु जब **1968** में इस संधि पर हस्ताक्षर हुए, तो भारत ने पाया कि ये सिद्धान्त न तो उसके द्वारा निर्धारित मानदंडों तथा न ही महासभा से सहमत सिद्धांतों के अनुरूप है, इसलिए भारत ने इस संधि पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया, क्योंकि यह एक पक्षपातपूर्ण बन गई, जो राष्ट्रों को परमाणु संपन्न तथा परमाणु विहीन राष्ट्रों में बांटती थी। इसका उद्देश्य परमाणु संपन्न राष्ट्रों का वर्चस्व एकाधिकार तथा शक्ति संपन्नता को बरकरार रखना है तथा इस शक्ति समुच्चय में अन्य राष्ट्रों के प्रवेश को रोकना है ।[2]

व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि जिनेवा के निःशस्त्रीकरण सम्मेलन के पश्चात अस्तित्व में आई। इस संधि पर वर्ष **1996** में हस्ताक्षर किए गए। यह संधि व्यापक नहीं है क्योंकि इसके अंतर्गत सभी प्रकार के परमाणु परीक्षणों को निषेध नहीं किया गया। इस संदर्भ में सीटीबीटी परमाणु शस्त्रों के निर्माण हेतु सभी परीक्षणों पर रोक लगाती है, परंतु कंप्यूटर में किए गए ऐसे किसी भी सिमुलेशन परीक्षण पर रोक नहीं लगाती है। वस्तुत: इस संधि का उद्देश्य परमाणु शक्ति सहित राष्ट्रों को परमाणु परीक्षण करने से रोकना है। ज्ञातव्य है कि परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्र **P5** पहले से इतने हथियार बना चुके हैं कि उनको अब हथियारों के विकास हेतु नए परीक्षण करने की आवश्यकता ही नहीं है। इस संधि को व्यापक इसलिए कहा गया है क्योंकि यह आंशिक परमाणु निषेध संधि की तुलना में सभी प्रकार के परीक्षणों पर रोक लगाती है।

इस संधि को परमाणु निशस्त्रीकरण से नहीं जोड़ा गया। यह संधि परमाणु शक्ति संपन्न और परमाणु शक्ति विहीन राष्ट्रों के मध्य भेदभाव करती है। अतः भारत ने इस संधि पर इन आधार पर हस्ताक्षर करने से इंकार कर दिया क्योंकि यह भारत के राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित व संरक्षित रखने का

प्रतिकार करती है। भारत की परमाणु नीति आणविक अस्त्र नियंत्रण के ऐसे उपायों तथा संधियों का विरोध करती है जो पक्षपातपूर्ण है । यही कारण है कि एनपीटी **1968** तथा सीटीबीटी **1996** संधि पर भारत ने हस्ताक्षर नहीं किए।

भारत का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम

स्वतंत्रता के बाद से ही भारत ने यह स्पष्ट कर दिया था कि वह परमाणु दौड़ में शामिल नहीं होगा । जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि परमाणु ऊर्जा का दुरुपयोग नहीं करेंगे। परमाणु ऊर्जा अधिनियम, **1948** बनाया गया । इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च की स्थापना **1945** में की गई। भारत में **1954** में परमाणु ऊर्जा विभाग की स्थापना की गई। **1967** में भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र बनाया गया । इससे पूर्व **1948** में परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना हो चुकी थी । लाल बहादुर शास्त्री जी ने परमाणु नीति बनाने की प्रतिबद्धता से मुक्त किया। उन्होंने कहा कि हमारी परमाणु नीति परिवर्तनशील विकासात्मक होनी चाहिए। जब **1998** में पोखरण-**2** का परीक्षण किया तो परमाणु नीति में परमाणु बम से ही फायदा नहीं होता उसमें कई प्रणालियों का भी उपयोग होता है। मिसाइल टेक्नोलॉजी का भी प्रयोग किया जाता है। भारत की परमाणु नीति में बदलाव **1965** में देखने को मिला जब निशस्त्रीकरण आयोग ने कहा कि वह परमाणु ऊर्जा के अंतरराष्ट्रीय नियंत्रण के संदर्भ में भारत की परमाणु नीति में हमेशा इस आधार पर बल दिया कि परमाणु ऊर्जा के आर्थिक उपयोग की आजादी सबको हो और इसे निशस्त्रीकरण से जोड़ा जाए। परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम का उपयोग शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए किया जाएगा।[3]

भारत ने अपना नागरिक परमाणु कार्यक्रम शुरू कर दिया था। हम परमाणु तकनीक का नागरिक प्रयोग हेतु ही उपयोग करेंगे । इसकी प्रतिबद्धता पारंपरिक रूप से हमने दिखाई **1968** में जब भारत ने **NPT** पर हस्ताक्षर करने से इनकार किया क्योंकि यह संधि विभेदकारी है क्योंकि **5** परमाणु शक्ति संपन्न देशों के पास परमाणु शक्ति बनी रहेगी परंतु अन्य देशों को परमाणु शक्ति हासिल करने पर रोक लगाती है।**1965** में चीन ने न्यूक्लियर वेपन टेस्ट किया । **1970** के दशक में पाकिस्तान ने भी न्यूक्लियर टेस्ट किए। इस कारण भारत मिसाइल टेक्नोलॉजी कंट्रोल रेजीम (एमटीसीआर), वासेनार अरेंजमेंट और ऑस्ट्रेलिया समूह का सदस्य बन गया है।

भारत के परमाणु कार्यक्रम में अनुसंधान केंद्र के रूप में भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई, इंदिरा गांधी परमाणु अनुसंधान केंद्र, कलपक्कम, उन्नत तकनीकी केंद्र, इंदौर, वेरिएबल एनर्जी साइक्लोटरों केंद्र, कोलकाता, परमाणु पदार्थ अन्वेषण अनुसंधान निदेशालय, हैदराबाद के पास परमाणु केंद्र कार्य कर रहे है। देश में इस समय **21** नाभिकीय ऊर्जा रिएक्टर काम कर रहे हैं। **7000** मेगावाट बिजली उत्पादन हो रहा है। इस तरीके से सैन्य और असैन्य दोनों तरीके से परमाणु कार्यक्रम चल रहा है। इससे भारत **8000** अतिरिक्त बिजली उत्पादन करने की क्षमता विकसित करेगा ।[4]

विश्व परमाणु उद्योग स्थिति रिपोर्ट, **2017** से पता चलता है कि स्थापित किये गए परमाणु रिएक्टरों की संख्या के मामले में भारत का विश्व में तीसरा स्थान है। भारत अपने परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के तहत **2024** तक **14.6** गीगावाट बिजली का उत्पादन करेगा, जबकि वर्ष **2032** तक बिजली उत्पादन की यह क्षमता **63** गीगावाट हो जाएगी। फिलहाल भारत में **21** परमाणु रिएक्टर सक्रिय हैं, जिनसे लगभग **7** हज़ार मेगावाट बिजली का उत्पादन होता है। इनके अलावा **11** अन्य रिएक्टरों पर विभिन्न चरणों में काम चल रहा है और इनके सक्रिय होने के बाद **8** हज़ार मेगावाट अतिरिक्त बिजली का उत्पादन होने लगेगा। भारत का लक्ष्य है कि वर्ष **2050** तक देश के **25%** बिजली उत्पादन में परमाणु ऊर्जा का ही योगदान हो।

चूँकि भारत अपने परमाणु हथियार कार्यक्रम के कारण परमाणु अप्रसार संधि में शामिल नहीं है। अतः **34** वर्षों तक इसके परमाणु संयंत्रों अथवा पदार्थों के व्यापार पर प्रतिबंध लगा दिया गया था, जिस कारण यह वर्ष **2009** तक अपनी सिविल परमाणु ऊर्जा का विकास नहीं कर सका। पूर्व के व्यापार प्रतिबंधों और स्वदेशी यूरेनियम के अभाव में भारत थोरियम के भंडारों से लाभ प्राप्त करने के लिये परमाणु ईंधन चक्र का विकास कर रहा है। भारत का प्राथमिक ऊर्जा उपभोग वर्ष **1990** और **2011** के मध्य दोगुना हो गया था।[5]

वर्ष **1998** में पोखरण में दूसरे परमाणु परीक्षण के पश्चात् भारत ने स्वयं को परमाणु क्षमता संपन्न देश घोषित कर दिया, इसके साथ ही एक परमाणु नीति की आवश्यकता महसूस की गई। वर्ष **1999** में परमाणु नीति का ड्राफ्ट प्रस्तुत किया गया तथा इसके तीन वर्ष से भी अधिक समय पश्चात् सुरक्षा पर कैबिनेट समिति **(CCS)** ने परमाणु नीति की घोषणा की। इस नीति में सुरक्षा के लिये न्यूनतम परमाणु क्षमता के विकास की बात कही गई। भारत की परमाणु नीति का आधार 'नो फर्स्ट यूज़' यानी परमाणु अस्त्रों का पहले उपयोग नहीं करना रहा है, लेकिन हमला होने की स्थिति में कड़ा जवाब दिया जाएगा। भारत किसी दूसरे परमाणु शक्ति संपन्न राष्ट्र के खिलाफ अपने परमाणु हथियारों का पहला इस्तेमाल कब करेगा, इसको लेकर पूर्ण स्पष्टता नहीं है।[6]

भारत की परमाणु नीति निम्न बिंदुओं पर आधारित है:

1 भारत एक न्यूनतम नाभिकीय निवारक बनाए रखेगा ।

2 भारत की किसी भी खुले उद्देश्य के कार्यक्रम अथवा शस्त्रों की होड़ में शामिल होने की मंशा नहीं है ।

3 भारत नाभिकीय हथियारों का पहले प्रयोग ना करने की नीति का अनुमोदन करता है ।

4 **13** मई **1998** को नाभिकीय परीक्षण पर एक स्थगन की घोषणा की गई । अभी भारत व्यापक परीक्षण प्रतिबंध संधि सहित व्यापक परमाणु मसले पर बातचीत करता रहेगा ।

5 भारत निशस्त्रीकरण सम्मेलन में सच्ची भावना से नाभिकीय हथियार तथा अन्य परमाणु विस्फोटक यंत्रों के निर्माण के उद्देश्य से विखंडनीय सामग्री के उत्पादन पर रोक लगाने के लिए संधि वार्ता में शामिल रहेगा ।

6 भारत नाभिकीय अप्रसार के प्रति अपनी वचनबद्धता प्रदर्शित करने के लिए नाभिकीय हथियारनिर्माण सामग्री एवं प्रौद्योगिकी का हस्तांतरण नहीं करेगा तथा नाभिकीय नियंत्रण की एक कठोर प्रणाली का पालन करेगा।

7 भारत का परमाणु बटन नागरिक अधिकार नियंत्रण में है ।

8 एक राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद की स्थापना की गई है तथा इसे सामरिक प्रतिरक्षा की समीक्षा करने के लिए कहा गया है ।[7]

भारत की परमाणु नीति कंट्रोल कमाण्ड, कम्युनिकेशन, कम्प्यूटिंग ,इंटेलिजेंस तथा इनफार्मेशन पर आधारित है । भारत में प्रतिरक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण पहल करते हुए अपनी पहली सामरिक परमाणु व मिसाइल कमाण्ड प्राधिकरण का **4** जनवरी, **2003** को गठन किया । प्राधिकरण में राजनीतिक व कार्यकारी परिषद शामिल होंगी । वस्तुतः परमाणु बटन भारत के प्रधानमंत्री के हाथ में रहेगा । परमाणु हथियारों का इस्तेमाल पहले हमले के बजाए जवाबी कार्यवाही के रूप में किया जाएगा । **4** जनवरी **2003** को मंत्रिमंडलीय सुरक्षा समिति की बैठक में परमाणु तथा सामरिक बलों के प्रबंधन एवं प्रशासन के लिए कमांडर-इन-चीफ की नियुक्ति को स्वीकृति दी गई । भारत ने **8** परमाणु सिद्धांत की घोषणा की तथा यह कहा गया कि भारत परमाणु हथियारों का इस्तेमाल नहीं करेगा बल्कि जवाबी कार्यवाही में ही परमाणु विकल्प इस्तेमाल करेगा । राजनीतिक नेतृत्व ही परमाणु व मिसाइल कमाण्ड प्राधिकरण के माध्यम से जवाबी परमाणु हमले के लिए अधिकृत करे सकेगा।[8]

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी की प्रथम पुण्यतिथि पर वर्तमान रक्षा मंत्री द्वारा दिये गए एक वक्तव्य ने भारत की परमाणु नीति को फिर से चर्चा का विषय बना है। ध्यातव्य है कि बाजपेयी सरकार में ही वर्ष **2003** में सर्वप्रथम परमाणु नीति को अमलीज़ामा पहनाया गया था। रक्षा मंत्री के अनुसार, भारत ने पहले हमला न करने की परमाणु नीति का अच्छी तरह से पालन किया किंतु भविष्य में इस नीति में क्या बदलाव होता है यह परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। ध्यान देने योग्य है कि

वर्ष **2014** के आम चुनाव में भारत की परमाणु नीति चर्चा में रही थी, हालाँकि अब तक इस नीति में किसी भी प्रकार का बदलाव नहीं किया गया है।[9]

चीन ने परमाणु परीक्षण के पश्चात् विश्व में सर्वप्रथम पहले हमला न करने की परमाणु नीति की घोषणा की थी। इसके बाद भारत ने वर्ष **2003** में इसी प्रकार की नीति की घोषणा की। भारत एवं चीन के अतिरिक्त किसी भी परमाणु संपन्न देश ने इस नीति को नहीं अपनाया। हालाँकि रूस ओर अमेरिका सुरक्षा के लिये इसके उपयोग की बात करते रहे हैं।

इस नीति का विरोध करते हुए तर्क दिया जाता है कि इससे पारंपरिक युद्ध एवं हथियारों की दौड़ में वृद्धि होगी। साथ ही यदि ऐसा देश जिसकी नीति पहले हमला न करने की परमाणु नीति नहीं है, हमला करता है तो इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि अन्य देश हमले का जवाब देने की स्थिति में हों। अतः इस नीति को व्यावहारिक नहीं माना जा सकता। वहीं इस नीति के पक्षधरों का मानना है कि नो फर्स्ट यूज़ की नीति परमाणु हथियारों की दौड़ को तेज कर देती है तथा विभिन्न देशों के मध्य अविश्वास में वृद्धि कर सकती है। साथ ही नो फर्स्ट यूज़ की नीति ऐसे देशों के लिये कारगर नहीं हो सकती जो फर्स्ट स्ट्राइक में पूर्णतः सक्षम न हों। इसके अतिरिक्त नो फर्स्ट यूज़ की नीति परमाणु हथियारों के साथ-साथ अन्य प्रकार की क्षमताओं के निर्माण में भी खर्च को बढ़ाती है। भारत द्वारा वर्ष **1974** तथा वर्ष **1998** में परमाणु परीक्षण किये गए। इन परीक्षणों के पश्चात् भारत को अत्यधिक आलोचना एवं प्रतिबंधों का सामना करना पड़ा। लेकिन भारत ने वर्ष **2003** में 'नो फर्स्ट यूज की' नीति को अपना लिया तथा विभिन्न मौकों पर इस नीति का पालन भी किया। कारगिल युद्ध में कयास लगाया जा रहा था कि यह युद्ध परमाणु संघर्ष में तब्दील हो जाएगा लेकिन भारत ने संयम दिखाते हुए पारंपरिक तरीके से ही युद्ध में विजय हासिल की। मौजूदा वक्त में परमाणु हथियारों को लेकर भारत की छवि एक ज़िम्मेदार राष्ट्र की बनी है तथा **NTP** पर हस्ताक्षर के बिना ही भारत **MTCR (Missile Technology Control Regime)**, वासेनर अरेंजमेंट तथा ऑस्ट्रेलिया समूह का हिस्सा बन चुका है। इसके अतिरिक्त भारत **NSG (Nuclear Supplier Group)** की सदस्यता के लिये भी प्रयास कर रहा है। **NSG** समूह की सदस्यता सिर्फ उन्ही राष्ट्रों को मिल सकती है जो **NPT** के हस्ताक्षरकर्ता हैं। इसी आधार पर भारत की सदस्यता में चीन बाधा बन रहा है हालाँकि अन्य देशों के समर्थन से भारत का पक्ष सदस्यता के लिये मजबूत है। यह समूह विश्व में यूरेनियम की आपूर्ति को नियंत्रित करता है लेकिन **NSG** ने भारत को यूरेनियम आयात करने की छूट प्रदान की है ताकि भारत अपने असैन्य उपयोग के लिये यूरेनियम की प्राप्ति को सुनिश्चित कर सके।[10]

भारत के रक्षा मंत्री के वक्तव्य के बाद यह अनुमान लगाया जा रहा है कि आने वाले समय में भारत की परमाणु नीति में बदलाव देखने को मिल सकता है। अब तक की 'नो फर्स्ट यूज की नीति' भारत के संदर्भ में उपयोगी साबित हुई है। यदि भारत इस नीति में परिवर्तन करता है तो अन्य वैश्विक समीकरणों को यदि कुछ समय के लिये छोड़ भी दिया जाए तो घरेलू स्तर पर आने वाली समस्याएँ चुनौती प्रस्तुत कर सकती हैं। अमेरिका जैसे देश फर्स्ट यूज़ की नीति का अनुकरण करते हैं लेकिन अमेरिका के पास ऐसे हथियार उपलब्ध हैं जिससे कुशलतापूर्वक स्ट्राइक की जा सकती है लेकिन भारत को इस प्रकार के उपकरण एवं बुनियादी ढाँचे का निर्माण करना अभी शेष है। यह ध्यान देने योग्य है कि रक्षा क्षेत्र से संबंधित प्रौद्योगिकी अत्यधिक महँगी होती है एवं कोई भी देश ऐसी तकनीकी को किसी को नहीं देना चाहता। ऐसे में भारत की बजटीय क्षमता को देखते हुए इस प्रकार के बुनियादी ढाँचे एवं अत्याधुनिक उपकरणों का निर्माण आर्थिक रूप से व्यावहारिक नहीं है।

कई रिपोर्टों में खुलासा हुआ है कि पाकिस्तान लगातार अपनी परमाणु क्षमता में इज़ाफा कर रहा है तथा उसके पास वर्तमान में भारत से भी अधिक परमाणु हथियार मौजूद हैं। वहीं दूसरी तरफ भारत का दूसरा पड़ोसी चीन भी परमाणु शक्ति संपन्न हैं। ऐसे में भारत की नीति में परिवर्तन इस क्षेत्र में परमाणु हथियारों की दौड़ को तीव्र कर देगी।

भारत और पाकिस्तान आपसी संबंधों के मामले में पहले ही कड़वाहट के दौर से गुज़र रहे हैं तथा चीन के साथ भी भारत के संबंध उतार-चढ़ाव वाले रहे है । इसके साथ ही इन देशों के साथ भारत का युद्ध का इतिहास भी रहा है। ऐसे में भारत की परमाणु नीति में बदलाव युद्ध एवं सैनिक संघर्ष के समय पहले से ही मौजूद विश्वास की कमी को और बढ़ाएगा, साथ ही यह भी संभव है कि इस प्रकार के सैनिक संघर्ष परमाणु युद्ध में तब्दील हो जाए।[11]

निष्कर्ष

भारत की बैलिस्टिक मिसाइल क्षमता वाली परमाणु पनडुब्बी **INS** अरिहंत ने अपना पहला अभियान पूरा किया। इस अभियान के पूरे होने के साथ ही भारत उन देशों की कतार में शामिल हो गया जिनके पास परमाणु ट्राइडेंट मौजूद है। इस उपलक्ष्य में भारत के प्रधानमंत्री ने अपनी परमाणु प्रतिबद्धता को दोहराते हुए कहा था कि नो फर्स्ट यूज़ भारत की परमाणु नीति का अखंड भाग है। लेकिन कुछ समय पूर्व दिये गए रक्षा मंत्री के बयान ने परमाणु नीति पर दोबारा बहस छेड़ दी । परमाणु नीति का निर्माण कई वर्षों के विश्लेषण एवं मूल्यांकन के पश्चात् ही किया गया था। ऐसे में यदि सरकार इस नीति में कोई भी बदलाव करना चाहती है तो नीति में बदलाव से पूर्व इसके प्रभावों एवं परिणामों का गहन

मूल्यांकन आवश्यक है। साथ ही सरकार को उपरोक्त बयान के पश्चात् नीति को दोबारा स्पष्ट करना चाहिये, क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में अस्पष्टता कई बार गंभीर परिणाम उत्पन्न कर सकती हैं।

भारत की परमाणु नीति इस बात पर आधारित है कि भारत परमाणु ऊर्जा के केवल शांतिपूर्ण प्रयास का समर्थक है। उसका मानना है कि प्रत्येक राष्ट्र का यह अधिकार है कि वह अपनी राष्ट्रीय विकास हेतु परमाणु ऊर्जा का उपयोग बिना किसी बाहरी हस्तक्षेप के तथा स्वयं की संप्रभुता को सुरक्षित रखते हुए कर सके। इसलिए भारत का परमाणु कार्यक्रम परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण प्रयोग हेतु विकसित व संचालित किया जा रहा है। भारत की परमाणु नीति की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि परमाणु अस्त्रों के संग्रह का विरोधी है तथा परमाणु शस्त्रों के व्यापक व सार्वभौमिक निशस्त्रीकरण का समर्थन करता है।

भारत हमेशा से एक शांतिप्रिय देश रहा है वसुधैव कुटुंबकम यानी शांतिपूर्ण सह अस्तित्व की नीति हमारी परंपरा का हिस्सा रही है। लेकिन आधुनिक दौर में शांति के रास्ते पर चलकर ही अपना अस्तित्व बचाए रखना आसान नहीं है वरन भारत की एक कठोर परमाणु नीति भी होनी आवश्यक है क्योंकि हमारे पड़ोस में चीन और भारत ने परमाणु क्षमता हासिल कर ली है। भारत की परमाणु नीति का आधार नो फर्स्ट यूज यानी कभी भी हम किसी पर परमाणु हमला नहीं करेंगे यदि हम पर हमला हुआ तो हम इस पर करारा जवाब देंगे । हमारा परमाणु कार्यक्रम मिसाइल कार्यक्रम का हिस्सा है। हम अपने परमाणु कार्यक्रम के माध्यम से हमारी ऊर्जा आवश्यकताओं और रक्षा आवश्यकता की पूर्ति निरंतर करते रहेंगे।[12]

एक वैश्विक परिदृश्य के अंतर्गत वर्तमान गृहमंत्री राजनाथ सिंह ने वर्तमान सुरक्षा आवश्यकता को मद्देनजर रखते हुए कहा कि भारत के नो फर्स्ट यूज के सिद्धांत को संशोधित करने की आवश्यकता है तथा भारत इस नीति के संदर्भ में पुनर्विचार कर सकता है। वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार पूर्व के सिद्धांतों को परिवर्तित किया जा सकता है। भारत की परमाणु नीति का यह आधार भी है कि परमाणु निशस्त्रीकरण के क्षेत्रीय प्रयास अधूरे है। अतः इनका निशस्त्रीकरण सार्वभौमिक और व्यापक स्तर पर होना चाहिए क्योंकि परमाणु हथियारों की मारक क्षमता वैश्विक स्तर की है तथा इसमें केवल सैनिक अड्डे ही नहीं बल्कि पूरी सभ्यता के विनाश का खतरा है।

संदर्भ

1. एम. एल. शर्मा, “अंतरराष्ट्रीय संबंध” कॉलेज बुक डिपो ,जयपुर, 2007
2. आर. एस. यादव, “भारत की विदेश नीति”, पीयरसन पब्लिकेशन ,नई दिल्ली, 2013
3. जॉर्ज शावरजनबर्गर, पावर पॉलिटिक्स, ए स्टडी ऑफ इंटरनेशनल सोसायटी, न्यूयॉर्क, 1951

4. पुष्पेश पंत, भारतीय विदेश नीति, टाटा मैकग्राहिल, नई दिल्ली,1999
5. जे.एन.दीक्षित, भारतीय विदेश नीति, प्रभात पेपर बैक्स, नई दिल्ली, 1999
6. के.के.पाठक, न्यूक्लियर पॉलिसी ऑफ इंडिया, जनता गवर्नमेंट रिस्पांस,गीतांजलि प्रकाशन, नई दिल्ली, 1980
7. द सीटीबीटी डिबेट , स्ट्रैटेजिक डाइजेस्ट वॉल्यूम 26,1996
8. टी.वी.पॉल,इंडिया द इंटरनेशनल सिस्टम एंड न्यूक्लियर वेपंस, सरदेसाई एवं थॉमस ,न्यूक्लियर इंडिया इन द ट्वेंटी फर्स्ट सेंचुरी ,2002
9. सुमित गांगुली,फीयरफुल सिमेट्री: इंडिया-पाकिस्तान क्राइसिस इन द शैडो ऑफ न्यूक्लियर वेपंस, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2005
10. भरत कर्नाड, न्यूक्लियर वेपंस एंड इंडियन सिक्योरिटी: द रियलिस्ट फाउंडेशन ऑफ स्ट्रेटजी, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड ,नई दिल्ली, 2002
11. एस.एल. कपूर, डेंजरस डिटेरेंट न्यूक्लियर प्रोलाइफरेशन एंड कनफ्लिक्ट्स इन साउथ एशिया, स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस,2007
12. हर्ष पन्त, योगेश जाशी, इण्डियन न्यूक्लियर पाॅलिसी, ओक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2018

अध्याय 27

भारतीय परमाणु नीति के परिवर्तन में आंतरिक कारकों की भूमिका

डॉ अभय कुमार
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

डॉ शालिनी प्रसाद
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
इलाहबाद विश्वविद्यालय

इस अध्ययन का उद्देश्य शीत युद्ध की समाप्ति के बाद से भारत की परमाणु नीति के परिवर्तन को समझना, इसका वर्णन और विश्लेषण करना है। भारत द्वारा खुद को परमाणु संपन्न राज्य घोषित करने के दृष्टिकोण के संदर्भ में अपनी परमाणु नीति में परिवर्तन और वैश्विक परमाणु निशस्त्रीकरण में सभी राज्यों की संप्रभु समानता पर आधारित नैतिक सिद्धांतों में एक परिवर्तन के रूप में देखा जा सकता है। इस अध्ययन का उद्देश्य उन कारकों को उजागर करना भी है जो इस परिवर्तन को लाने में सहायक थे। इसकी प्राप्ति के लिए, यह अध्ययन आंतरिक कारकों का विश्लेषण करने का प्रयास करता है।

आंतरिक और घरेलू कारकों ने परमाणु नीति में बदलाव की दिशा में हमेशा योगदान दिया है। राष्ट्रीय सुरक्षा का खतरा भारत के लिए एक निरंतर चिंता का विषय रहा है, लेकिन यह भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) सरकार थी जिसने आखिरकार परमाणु परीक्षण करने का फैसला लिया। इसके मुख्य कारण के रूप में भाजपा का वैचारिक दृष्टिकोण, वैज्ञानिक समुदाय की भूमिका, निर्णय निर्माताओं की भूमिका, भाजपा का राजनीतिक अस्तित्व और घरेलू कारक हैं।

भारत का मई 1998 में परमाणु परीक्षण करने का निर्णय और औपचारिक रूप से परमाणु हथियार राज्य घोषित करना भारत की विदेश नीति में एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक परिवर्तन का प्रतीक है। 1974 में परमाणु विस्फोट और 1998 में हुए परमाणु परीक्षणों के बीच चौबीस वर्षों का अंतर देश की

परमाणु नीति में शायद सबसे बड़ा परिवर्तन था। इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत की परमाणु नीति के परिवर्तन में रणनीतिक अनिवार्यता की प्रमुख भूमिका थी लेकिन आंतरिक कारकों की भूमिका को कम करके नहीं आंका जा सकता। आंतरिक कारक भी परमाणु नीति के परीक्षण में एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में योगदान करते हैं। इस लेख में चर्चा की गई है कि कैसे आंतरिक कारकों ने भारत को परमाणु संपन्न राज्य बनने में सहयोग किया।

भारतीय परमाणु नीति पर भाजपा का वैचारिक प्रभाव

भाजपा के हिंदुत्व की अवधारणा से उसकी वैचारिक प्राथमिकताओं का पता लगता है। इस हिंदुत्व विचारधारा का प्रमुख उद्देश्य एक मजबूत भारत का निर्माण करना है। भारत को एक मजबूत राष्ट्र बनने के लिए सांस्कृतिक और राजनीतिक रूप से एकजुट होने की आवश्यकता है।[i] भाजपा हिंदुत्व की विचारधारा को एक मजबूत राष्ट्र बनाने के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में देखती है जो भारत के लिए एक राष्ट्रीय पहचान और सामाजिक सामंजस्य बनाने में मदद करेगी। भाजपा के दो लक्ष्य हैं: (1) हिंदू पुनरुत्थानवाद को राष्ट्रवाद का आधार बनाना और (2) राष्ट्रीय मिथक और उपलब्धि के प्रतीक के रूप में एक सुदृढ़ सुरक्षित राष्ट्रीय राज्य का निर्माण करना है। उन्होंने एक भव्य, शक्तिशाली और सुदृढ़ सुरक्षित राष्ट्रीय राज्य का निर्माण करने की आवश्यकता पर बल दिया है।[ii]

यह विचारधारा भाजपा की विदेश नीति को दर्शाती है। भाजपा भारत की स्थिति और प्रतिष्ठा को बढ़ाना चाहती है और भारत को अंतर्राष्ट्रीय पटल पर एक महान शक्ति के रूप में स्थापित करना चाहती है। भाजपा की हिंदुत्व की विचारधारा नेहरू द्वारा प्रचारित नैतिक विश्वास शांति, धर्मनिरपेक्षता और वैश्विक निशस्त्रीकरण से अलग थी। भाजपा की विचारधारा अपने पहले के राजनीतिक दलों से अलग थी क्योंकि इसकी दृष्टि इसे 'हार्ड कोर' यथार्थवादी धारणा को स्थापित करना था जहां भारत की विदेश नीति राष्ट्रीय हित और शक्ति की धारणा पर आधारित होगी।

अटल बिहारी वाजपेयी, उनकी पार्टी बीजेपी और उसकी मातृ संगठन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) परमाणु परीक्षण करने एक परमाणु संपन्न राष्ट्र बनाने में विश्वास रखते थे।[iii] उन्हें कोई शक नहीं था कि भारत के पास परमाणु शस्त्र होने से अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था में भारत की स्थिति मजबूत होगी।[iv]

यह तथ्य भी है कि 1964 में चीन द्वारा परमाणु परीक्षण के बाद भाजपा के पूर्ववर्ती दल जनसंघ भी परमाणु परीक्षण करने का समर्थक था।[v] 1974 में, शांतिपूर्ण परमाणु परीक्षणों के बाद वाजपेयी ने संसद में इंदिरा गांधी की प्रशंसा की, लेकिन उन्होंने साथ ही यह मांग भी की थी कि काँग्रेस पार्टी को पूर्ण परमाणु परीक्षण करना चाहिए था।[vi]

1985 के चुनाव में भाजपा ने अपने चुनावी घोषणा पत्र में परमाणु परीक्षण करने का आश्वासन दिया था। 1996 में, वाजपेयी के नेतृत्व में भाजपा 13 दिनों के लिए सत्ता में आई थी और यह ज्ञात है कि भाजपा वास्तव में उस समय परमाणु परीक्षण के लिए प्रतिबद्ध थी। लेकिन दुर्भाग्य से, वाजपेयी को परमाणु परीक्षण के निर्णय को कुछ समय के लिए टालना पड़ा जब यह स्पष्ट हो गया कि उनकी सरकार ज्यादा दिनों तक नहीं रहेगी।[vii]

भाजपा की रणनीतिक संस्कृति

सामरिक संस्कृति को "सामाजिक रूप से निर्मित, परम्पराओं और सञ्चालन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है"।[viii] किसी राज्य की राष्ट्रीय सुरक्षा उस देश के नेताओं की रणनीतिक भविष्यवाणियों, या व्यवहारों के द्वारा समझा जा सकता है, जो वे अपने देश की रणनीतिक संस्कृति को समझने में और देश की सुरक्षा को परिभाषित करने के लिए प्रभावित कर सकते हैं।[ix]

जैसा कि रणनीतिक संस्कृति, मानदंडों, विचारों और मूल्यों जैसे वैचारिक कारकों के माध्यम से राष्ट्रीय सुरक्षा के विचार को प्रभावित करती है, यह भारत की विदेश नीति में स्पष्ट रूप से दिखता है। भारत की राष्ट्रीय पहचान और आदर्शवादी विचारधारा ने परमाणु नीति को बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इस राष्ट्रीय पहचान के माध्यम से भारत विश्व राजनीति में दो लक्ष्य हासिल करना करना चाहता था, पहला, भारत को अंतरराष्ट्रीय राजनीति में प्रमुख शक्ति के रूप में स्थापित करना चाहता था और दूसरा, भारत को विश्व राजनीति में एक प्रमुख स्थान दिलाना चाहता था।[x]

भाजपा ने सांस्कृतिक रूप से एकजुट राज्य पर बहुत महत्व दिया। बीजेपी नेता अटल बिहारी वाजपेयी विश्व स्तर पर भारत की गरिमा और प्रतिष्ठा की विचारधारा का अनुसरण करते थे और उसे हासिल करने का सबसे महत्वपूर्ण तरीका देश की सैन्य ताकत को मजबूती प्रदान करना था। यह सैन्य

शक्ति भाजपा के अनुसार क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा करेगी जो केवल परमाणु परीक्षण से ही हासिल की जा सकती है। जैसा कि प्रधान मंत्री वाजपेयी कहते हैं, "भारत ने कभी भी सैन्य शक्ति को राष्ट्रीय शक्ति का अंतिम उपाय नहीं माना है," बल्कि, "यह राष्ट्रीय शक्ति का एक आवश्यक घटक है" जो वैश्विक पटल पर भारत की स्थिति को मजबूती प्रदान करेगा।[xi]

<u>भाजपा की राजनीतिक संस्कृति</u>

भाजपा ने खुद को इस तरह लोगों की नजर में स्थापित किया है कि भारत में अन्य दलों की तुलना में अपनी नीतियों के स्तर पर खुद को अलग वैचारिक पृष्ठभूमि में रख सकें। 1984 से 1998 में सत्ता में आने तक इन्होने सदैव एक शक्ति के स्रोत के रूप में परमाणु परीक्षण करने की बात दोहराते रहते थे। भाजपा ऐतिहासिक रूप से परमाणु परीक्षणों के पक्ष में सदैव थी क्योंकि भाजपा ने अपने चुनावी घोषणापत्र में स्पष्ट रूप से परमाणु परीक्षण का समर्थन करते रहे थे। इसलिए जब 1998 में सत्ता में आये तो परमाणु परीक्षण करने अपने वादे को पूरा किया।

राजनीतिक संस्कृति के स्तर पर, हम देखते है कि भाजपा इस विचारधारा से प्रभावित दिखती है कि यह एक ऐसा संगठन है, जो परमाणु परीक्षण को पूरा करके अपने वादे को पूरा किया, चाहे राजनीतिक रूप से उसे नुकसान ही क्यों न उठाना पड़े क्योंकि राज्य का एक बड़ा समुदाय परमाणु परीक्षण को उतना आवश्यक नहीं समझता था, यहाँ तक कि कांग्रेस पार्टी ने संसद में यह बात उठाई कि इस समय परमाणु परीक्षण करने की क्या आवश्यकता थी। यह दिखाता है कि अन्य राजनीतिक दलों के पास एक रणनीतिक दूरदृष्टि का अभाव था।[xii]

<u>निर्णय निर्माताओं की भूमिका</u>

भारत के आंतरिक राजनीतिक घटनाक्रम ने भारत की परमाणु नीति में परिवर्तन को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भाजपा के सत्ता में आने से भारत की परमाणु नीति में बदलाव की उम्मीद की जा रही थी कि जो कि परमाणु समर्थक सभी अन्य राजनीतिक दलों से अलग होगी। भाजपा परमाणु परीक्षण की सबसे मुखर वकालत करने वाली पार्टी थी और एक राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति को नहीं बनाने के लिए पिछली भारतीय सरकारों की उसने कठोर आलोचना की थी।

इसलिए, जब सत्ता बदली, तो नीतिगत परिवर्तन भी आवश्यक हो गई थी। ताकि भारत को एक सुरक्षित परमाणु संपन्न राष्ट्र बनाया जा सके।

यह तर्क दिया जाता है कि भाजपा परमाणु परीक्षण पर विचार करने वाली पहली सरकार नहीं थी। इंदिरा गांधी सरकार ने 1974 में परमाणु परीक्षण किया और पी. वी. नरसिम्हा राव सरकार ने 1995 के अंत में परमाणु परीक्षण करने की योजना बनाई थी। 1974 के परमाणु परीक्षण को एक शांतिपूर्ण परमाणु परिक्षण के रूप में घोषित किया गया था और 1995 में नरसिम्हा राव के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार पर इस परीक्षण को टालने के लिए बाहरी शक्तियों द्वारा सरकार पर दबाव डाला गया था। आर्थिक प्रतिबंधों के डर से, राव सरकार को आर्थिक सुरक्षा का लाभ उठाने के लिए राजी कर लिया गया। लेकिन भाजपा के सत्ता में आने के बाद नीतियों में एक बदलाव देखने को मिलता है जो आर्थिक प्रतिबंधों के खतरे को टालते हुए परमाणु परीक्षण को मंजूरी दी।[xiii]

भाजपा के विचार कांग्रेस पार्टी से भिन्न है। यह केवल भाजपा ही थी जिसने परीक्षण करने का निर्णय लिया। इसलिए परमाणु नीति में बदलाव सत्ताधारी सरकार की प्राथमिकताओं पर निर्भर करता है।

भाजपा की राजनीतिक और रणनीतिक संस्कृति ने यह लगभग तय कर दिया कि सत्ता में किसी भी समय पार्टी परमाणु परीक्षण और एक परमाणु हथियार कार्यक्रम के निर्माण के प्रति प्रतिबद्ध रहेगी, वाजपेयी ने परमाणु परीक्षण करने का निर्णय आखिर क्यों लिया। वास्तव में, वाजपेयी की व्यक्तिगत राजनीतिक अस्तित्व और खुद को एक मजबूत नेता के रूप में बढ़ावा देने की इच्छा परमाणु परीक्षण करने के निर्णय में एक महत्वपूर्ण कारक था। वाजपेयी ने 1996 में परीक्षण करने का फैसला लिया लेकिन गठबंधन सरकार की अस्थिरता के कारण सरकार ने परीक्षण रद्द कर दिया। 1998 में फिर से वाजपेयी ने सत्रह अन्य राजनीतिक दलों के साथ गठबंधन में सरकार बनाई, जिसे राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के रूप में जाना जाता है। इसलिए यह माना जा सकता है कि यदि उन्होंने परमाणु परीक्षण करने का आदेश जल्दी नहीं दिया तो गठबंधन की सरकार किसी भी समय गिर सकती थी।[xiv]

इससे पहले कि हम आगे बढ़ें, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि 1998 में परमाणु परीक्षण का निर्णय वाजपेयी और उनके मुख्य सलाहकार, ब्रजेश मिश्रा द्वारा लिया गया था। वाजपेयी व्यक्तिगत

रूप से भारत को परमाणु शक्ति बनाने के लिए प्रतिबद्ध थे, और सरकार के भीतर एक विस्तृत नीति की समीक्षा के बिना परमाणु परीक्षणों के साथ आगे बढ़ गए। उन्होंने वरिष्ठ वैज्ञानिकों और कुछ वरिष्ठ भाजपा नेताओं से परामर्श करने के बाद अपने दम पर परमाणु परीक्षण का निर्णय लिया।[xv] 20 मार्च, 1998 को, वाजपेयी ने जिस दिन प्रधानमंत्री पद की शपथ ली थी; वह फिर से भारत के परमाणु वैज्ञानिकों से मिले और भारत के परमाणु कार्यक्रम के बारे में जानकारी मांगी। 9 अप्रैल को, पाकिस्तान की गौरी मिसाइल के परीक्षण के तीन दिन बाद, उन्होंने संकेत दिया कि वैज्ञानिकों को आगे बढ़ना चाहिए और परमाणु परीक्षण के लिए मिश्रा के साथ एक तारीख तय करनी चाहिए।[xvi] परमाणु परीक्षण करने का कारण सरकार की स्थिरता को दिया गया। और यह तर्क दिया गया है कि एक गठबंधन सरकार का नेतृत्व करने वाली पार्टी को अपने अस्तित्व को बचाने के लिए परमाणु परीक्षण करना पड़ा।[xvii]

वाजपेयी को आश्वासन दिया गया था कि परमाणु परीक्षणों की एक श्रृंखला भारत की स्थिति को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर और राष्ट्रीय स्तर पर मजबूती प्रदान करेगी।

<u>वैज्ञानिक समुदाय की भूमिका</u>

भाजपा की वैचारिक और चुनावी घोषणाओं ने इसे भारत के सुरक्षा नीति को तय करने में मदद की। नागरिक नौकरशाही, थिंक टैंक, मीडिया और सशस्त्र बलों के वर्गों से युक्त यह प्रतिष्ठान परमाणु परीक्षण को भारत की महान शक्ति का एक अनिवार्य तत्व मानता था।

पीटर लावॉय के अनुसार, "एक राज्य के परमाणु संपन्न राष्ट्र बनने की संभावना है जब राष्ट्रीय अभिजात वर्ग जो परमाणु हथियार विकसित करना चाहता है, वह देश की असुरक्षा या उसकी असंतोषजनक स्थिति पर जोर देता है ताकि मिथक को लोकप्रिय बनाया जा सके कि परमाणु बम अंतरराष्ट्रीय राजनीति में सैन्य सुरक्षा और शक्ति प्रदान करेगा।[xviii]

भारत के रणनीतिक अभिजात वर्ग ने परमाणु हथियारों, बैलिस्टिक मिसाइलों और अन्य उच्च तकनीक वाले हथियारों को आधुनिकता और तकनीकी उत्कृष्टता के प्रतीक के रूप में माना है जो भारत को दुनिया के सबसे विकसित देशों की बराबरी में रखता है। यह भारत के आधुनिकीकरण की

दिशा में आगे बढ़ने के कदम को परिलक्षित करता है, यह वह प्रयास है जिसने भारत को पश्चिमी देशों की श्रेणी में एक मजबूत स्थान प्रदान किया है।[xix]

इस प्रकार, भारत के सामरिक समुदाय का देश की परमाणु नीति पर प्रभावशाली प्रभाव पड़ा जो 1974 और 1998 के परीक्षणों में देखा गया है।

निष्कर्ष

इस लेख का मुख्य उद्देश्य इस दावे के समर्थन में साक्ष्य प्रदान करता है कि एनडीए सरकार के तहत भारत की विदेश नीति परमाणु के क्षेत्र में एक परिवर्तनकारी सोच से प्रेरित थी। एनडीए सरकार के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा का विषय अति महत्वपूर्ण विषयों में से एक था और साथ ही आंतरिक राजनीति ने निश्चित रूप से भारत में परमाणु परीक्षण के निर्णय में एक प्रमुख भूमिका निभाई है। यह इस तर्क को साबित करता है कि निर्णय निर्माताओं ने अराजक दुनिया में अपने अस्तित्व को सुनिश्चित करने के लिए परमाणु परीक्षण को प्रमुखता प्रदान की है और इस निर्णय के द्वारा कांग्रेस के आदर्शवादी विचारधारा से अलग एक यथार्थवादी विचारो को प्रमुखता दी जिसकी जरुरत हर मजबूत राष्ट्र को होती है और साथ ही भाजपा के हिंदुत्ववादी विचारधारा ने परमाणु नीति के परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भाजपा के राष्ट्रवादी सुरक्षा एजेंडे से पता चलता है कि सभी परिस्थितियों में भारत की एकता और अखंडता की रक्षा करना इस राजनितिक दल का प्रमुख विषय रहा है। इन तरह से शीत युद्ध की समाप्ति के बाद से भारत की परमाणु नीति के परिवर्तन को समझा जा सकता है।

संदर्भ सूची

---

[i] Bidwai, Praful and Achin, Vinaik (1999), *South Asia on a Short Fuse: Nuclear Politics and the Future of Global Disarmament,* New Delhi: Oxford University Press.

[ii] Kampani, Gaurav (1998) "From Existential Deterrence to Minimum Deterrence: Explaining India's decision to Test"; *Non Proliferation Review*/Fall.

[iii] Chengappa, Raj (2000), *Weapons of Peace: The Secret Story of India's Quest To Be A Nuclear Power*, India: HarperCollins Publishers.

[iv] Malik, Priyanjali (2010), *India's Nuclear Debate Exceptionalism and the Bomb*, New Delhi: Routledge Taylor and Francis Group.

[v] Mirchandani, G.G (1968), *India Nuclear Dilemma*, New Delhi: Popular Book Services.

[vi] Chengappa, Raj (2000), *Weapons of Peace: The Secret Story of India's Quest To Be A Nuclear Power*, India: HarperCollins Publishers.

[vii] Ayoob, Mohamed (2000), "India's Nuclear Decision: Implications for Indian-US Relations" in Raju G. C. Thomas and Amit Gupta *India's Nuclear Security,* New Delhi: Vistaar Publication.

[viii] Gray, Colin (1999), *Modern Strategy*, Oxford: Oxford University Press.

[ix] Ibid

[x] Perkovich, George (1999), *India's Nuclear Bomb: The Impact on Global Proliferation*, Los Angeles: University of California Press.

[xi] Chaulia, S. Shreeram (2002), "BJP, India's Foreign Policy and the "Realist Alternative" to the Nehruvian Tradition", *International Politics* 39(6): 215-234.

[xii] Bajpai, Kanti (2009), "BJP and Bomb", in Scott D. Sagan (eds.) *inside Nuclear South Asia,* California: Stanford University Press.

[xiii] Joeck, H. Neil (1999),"Nuclear Developments in India and Pakistan" *Access Asia*, 2(2): 5-45.

[xiv] Chengappa, Raj (2000), *Weapons of Peace: The Secret Story of India's Quest To Be A Nuclear Power*, India: HarperCollins Publishers.

[xv] Bajpai, Kanti (2009), "BJP and Bomb", in Scott D. Sagan (eds.) *inside Nuclear South Asia,* California: Stanford University Press.

[xvi] Ibid

[xvii] Mehta, Bhanu Pratap (1998), "India: the nuclear politics of self-esteem", *Current History,* 97 (623): 403-406.

[xviii] Ibid

[xix] Nandy, Ashish (1989), "The Political Culture of the Indian State", *Daedalus,* 118(4): 1-26

अध्याय 28

"भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा और मोदी सरकार की रणनीति"

डॉ. अशोक कुमार
सहायक प्रोफेसर (गेस्ट)
राजनीति विज्ञान विभाग
पटना कॉलेज
पटना विश्वविद्यालय, पटना

भारत की विदेश नीति में राष्ट्रीय सुरक्षा केन्द्रीय विषय है । भारत ने भी अपने विदेश नीति के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में राष्ट्रीय सुरक्षा को प्रभावी बनाने का प्रयास किया है। भारत की विदेश नीति की आधारभूत विशेषता तथा सिद्धान्त गुटनिरपेक्षता को माना जाता रहा है। वस्तुतः गुटनिरपेक्षता भारत की विदेश नीति का सबसे महत्वपूर्ण और विलक्षण सिद्धान्त माना जा सकता है। जिस समय अमरीका और पूर्व सोवियत संघ, दोनों महाशक्तियाँ शीत युद्ध की नीति का अवलम्बन कर रही थीं तथा पूँजीवादी और साम्यवादी गुट अपनी-अपनी शक्ति को मजबूत बनाने के लिए विभिन्न राष्ट्रों के साथ गठजोड़ कर रहे थे, तब भारतीय नीति-निर्माताओं, विशेषतया पं॰ जवाहर लाल नेहरू ने विश्व शान्ति के साथ-साथ भारतीय सुरक्षा तथा आवश्यकताओं के हित में यही उचित समझा कि भारत को इस शक्ति राजनीति से अलग ही रखा जाय। गुटनिरपेक्ष संगठन का प्रथम शिखर सम्मेलन 1-6 सितम्बर, 1961 को बेलग्रेड (युगोस्लाविया) में आयोजित किया गया।[1] उस समय से लेकर अब तक 18 शिखर सम्मेलन सम्पन्न हुए हैं। यह उल्लेखनीय है कि भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के बनने के बाद दो गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन सम्पन्न हुए है।

गुटनिरपेक्षता की नीति विकासशील देशों की राष्ट्रीय सुरक्षा के साथ-साथ विश्व समाज के प्रति भी समान रूप में सचेत एवं सक्रिय रही है। स्पष्टतः भारत की विदेश नीति का लक्ष्य जिस प्रकार राष्ट्रीय सुरक्षा की अवधारणा है, ठीक उसी प्रकार गुटनिरपेक्ष की नीति और उद्देश्य भी है। यह अलग बात है कि समय व परिस्थिति के सन्दर्भ में गुटनिरपेक्षता का विकास हुआ है। गुटनिरपेक्षता नीति के शुरूआती दिनों में साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का विरोध तथा दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद नीति का विरोध रहा, हालांकि शस्त्रीकरण को भी शुरू से ही गुटनिरपेक्षता ने राष्ट्रीय सुरक्षा और सामूहिक सुरक्षा के मार्ग में बाधा माना है। गुटनिरपेक्षता के विकास का द्वितीय चरण वर्ष 1973 से 1990-91 तक माना जाता है, जिसमें नवीन आर्थिक व्यवस्था का सिद्धान्त प्रभावी रहा। यह उल्लेखनीय है कि 3-9 सितम्बर, 1979 को हवाना (क्यूबा) में छठा गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन सम्पन्न हुआ।[2] उसी सम्मेलन में क्यूबा के राष्ट्रपति फिदेल कास्त्रों ने पूर्व सोवियत संघ को विकासशील देशों का स्वाभाविक कहा था। गुटनिरपेक्षता के विकास का तीसरा और वर्तमान चरण वर्ष 1992 से प्रारम्भ माना जाता है। इस चरण में गुटरिनरपेक्षता स्वयं अपनी प्रासंगिकता की खोज में संलग्न है, क्योंकि 1990 के दशक में अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के

स्वरूप में व्यापक परिवर्तन हुआ है; शीतयुद्ध का अन्त हो गया है; वैचारिक तनाव तो खत्म हो गया है, परन्तु आतंकवाद ने विश्व समान के सामने राष्ट्रीय सुरक्षा और विश्व शांति व सौहार्द के मार्ग में सबसे बड़ा खतरा उत्पन्न कर दिया है। गुटनिरपेक्षता की नीति में ही बदलाव नहीं हुआ है, बल्कि नेहरू से लेकर वर्तमान समय तक प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी तक का दृष्टिकोण भी बदलता रहा है। भारत के प्रधानमंत्रियों के दृष्टिकोण का परिवर्तन भारत के सामरिक एवं राष्ट्रीय हित को परिवर्तित परिप्रेक्ष्य में पूरा करना बताया जा सकता है। गुटनिरपेक्षता के प्रतिनिधि विचारक, निर्माणक तथा भारत के प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने गुटनिरपेक्षता को 'शांति का समर्थक' कहा तथा शांति और निःशस्त्रीकरण पर बल दिया, जो विश्व शांति और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए समान रूप में अनिवार्य था। नेहरू ने कहा था कि गुटनिरपेक्षता महाशक्तियों का विरोध नहीं, अपितु स्वतंत्रता के विस्तार की माँग है।[3] नेहरू के बाद इंदिरा ने गुटनिरपेक्षता के यथार्थवादी आयाम पर बल दिया। इंदिरा गाँधी ने गुटनिरपेक्षता की नीति के साथ सामूहिक सुरक्षा के साथ-साथ भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा, राष्ट्रीय एकता, अखण्डता एवं सम्प्रभुता जैसे मुद्दे को महत्वपूर्ण बताया। गुटनिरपेक्षता के 16वाँ शिखर सम्मेलन वर्ष 2012 में ईरान की राजधानी तेहरान में सम्पन्न हुआ, जिसमें मनमोहन सिंह के द्वारा शांति और न्याय पर बल दिया गया। उस समय यह कहा गया कि शांति एवं न्याय के पक्ष में प्रभावी पहल की आवश्यकता आज विश्व महसूस कर रहा है।[4]

वर्ष 2016 में गुटनिरपेक्षता का सत्रहवाँ शिखर सम्मेलन लैटिन अमरीकी देश वेनेजुएला के पोर्लामर में सम्पन्न हुआ, जिसमें भारत का प्रतिनिधित्व उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी ने किया।[5] यह प्रथम अवसर था नरेन्द्र मोदी के कार्यकाल में तथा उसमें उन्होंने भाग नहीं लिया।[6] वर्ष 2019 के शिखर सम्मेलन में भी नरेन्द्र मोदी ने भाग नहीं लिया। यह उल्लेखनीय है कि 1979 में कार्यवाहक प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह ने भी गुटनिरपेक्ष सम्मेलन में भाग नहीं लिया था।[7] गुटनिरपेक्षता के प्रति भारत का दृष्टिकोण पूर्व की भाँति सकारात्मक ही रहा है, हालांकि नरेन्द्र मोदी ने भारत को अंतर्राष्ट्रीय पहचान दिलाने के लिए इसे केवल विकासशील देशों से सम्बद्ध करके नहीं रखना चाहते हैं। यदि अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के विश्लेषकों की बात माने तो नरेन्द्र मोदी गुटनिरपेक्षता की नीति से अलग होकर भारत की राष्ट्रीय हित की पूर्ति हेतु अमरीका के समीप अधिक जाना चाहते हैं। इसके बाद भी भारत का दृष्टिकोण विश्व शांति के प्रति पूर्व के समान प्रतिबद्ध है। भारत सीमापर आतंकवाद को मानवाधिकार हनन के लिए सबसे बड़ा खतरा मानता है। इन बातों को भारत के नरेन्द्र मोदी का दृष्टिकोण माना जा सकता है।

भारत की विदेश नीति के मूल में निःशस्त्रीकरण की अवधारणा हमेशा ही उपस्थित रही है, जो सामूहिक सुरक्षा तथा राष्ट्रीय सुरक्षा, दोनों के लिए ही महत्वपूर्ण है। वर्ष 1963 के आंशिक परमाणु परीक्षण निषेध संधि पर भारत ने हस्ताक्षर करके इस दिशा में अपनी प्रतिबद्धता को व्यक्त कर दिया था, हालांकि वर्ष 1968 के परमाणु अप्रसार संधि का भारत की आपत्ति का मूल कारण विभेदपूर्ण निःशस्त्रीकरण की नीति ही थी। वर्ष 1996 में व्यापक परमाणु परीक्षण निषेध संधि **(CTBT)** की भी भेदभावपूर्ण स्थिति ने भारत को आपत्ति दर्ज करने पर बाध्य कर दिया। आज 183 देशों ने सी.टी.बी.टी. पर भले ही हस्ताक्षर कर दिया है, लेकिन भारत, पाकिस्तान और उत्तर कोरिया के द्वारा हस्ताक्षर नहीं किया गया है। भारत के अनुसार सी.टी.बी.टी. केवल विकासशील देशों के परमाणु कार्यक्रम को प्रतिबंधित करता है, जो अन्याय है तथा वास्तविक निःशस्त्रीकरण से दूर है। इसलिए भारत ऐसे संधि पर हस्ताक्षर

नहीं करता। भारत को विश्व शांति पर पूर्ण विश्वास है, परन्तु विभेदपूर्ण आचरण को यह ठीक नहीं मानता। भारत कहता है कि सी.टी.बी.टी. के द्वारा विकासशील देशों को तकनीकों से भी वंचित करने का प्रयास किया गया है। भारत का निःशस्त्रीकरण, विश्व शांति, सामूहिक सुरक्षा में राष्ट्रीय सुरक्षा की अवधारणा को समावेशित करने पर अधिक बल है। परमाणु प्रसार रोकने के लिए परमाणु आपूर्तिकर्ता समूह (एन.एस.जी.) की स्थापना वर्ष 1974 में हुई[8], जब भारत ने प्रथम पोखरण किया था। एन.एस.जी. का प्रावधान है कि जिन देशों ने एन.पी.टी., 1968 पर हस्ताक्षर किये हैं, उनको ही परमाणु ईंधन और तकनीक उपलब्ध कराया जायेगा।

भारत के प्रति प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्रित्व काल में वैश्विक दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन हुआ है। भारत भले ही सी.टी.बी.टी. पर हस्ताक्षर नहीं किया है, परन्तु नरेन्द्र मोदी के प्रयास से उसे एन.एस.जी. से रियायत मिल रही है। भारत विश्व का अकेला ऐसा देश बन गया है, जिसे परमाणु अप्रसार सधि पर हस्ताक्षर किए बिना 'ट्रिगर लिस्ट' से सामग्री प्राप्त करने की छूट प्रदान की गई है।[9] नरेन्द्र मोदी के प्रयास से भारत को एन.एस.जी. से लगातार महत्व प्राप्त हो रहा है। चौथा नाभिकीय सुरक्षा सम्मेलन 31 मार्च से 1 अप्रैल, 2016 को वाशिंगटन **(USA)** में आयोजित किया गया।[10] इस सम्मेलन पर मोदी के व्यक्तित्व का प्रभाव था। यह अलग बात है चीन के द्वारा लगातार भारत का विरोध किया जा रहा है। वासेनार समूह की स्थापना वर्ष 1996 हालैंड के वासेनार शहर में आयोजित हुई, जिसका उद्देश्य परम्परागत हथियारों के निर्यात तथा दोहरे तकनीकी इस्तेमाल को रोकना हैं। भारत इस संगठन का प्रभावी सदस्य है। इसके 41 सदस्यों में चीन को छोड़कर लगभग सभी सदस्य वही देश हैं जो एन.एस.जी. में है। चीन इसकी सदस्यता चाहता है, जिसका भारत अप्रत्यक्ष विरोध करता है। इसे नरेन्द्र मोदी की कूटनीतिक विजय ही कहा जायेगा। वर्ष 2016 में वाशिंगटन सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसका मूल उद्देश्य परमाणु आतंकवाद को समाप्त करना रहा है। भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने उक्त सम्मेलन में भाग लेकर भारतीय दृष्टिकोण को प्रभावी रूप में प्रस्तुत किया है, जिससे भारत की अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में कूटनीतिक विजय प्राप्त हुई है। जुलाई, 2019 में नरेन्द्र मोदी के प्रयास से अमरीका ने भारतीयों के लिए बीजा व निवास को आसान बनाया है।

भारत की परमाणु नीति तथा सामरिक रणनीति हमेशा ही महत्वपूर्ण रही है। विश्व में भारत की सामरिक नीति अपना वैशिष्ट्य है। क्योंकि इसमें विश्व शांति व सौहार्द तथा राष्ट्रीय सुरक्षा की अवधारणा को समान रूप में महत्व प्रदान किया गया है। भारत के द्वारा अपनी सामरिक अभिक्षमता की वृद्धि के लिए लगातार प्रयास किया जाता रहा है तथा देश परमाणु ऊर्जा के विकास में भी लगातार कार्य करता रहा है। भारत के इसी प्रयास का प्रतिफल है कि वर्ष 1974 में प्रथम पोखरन तथा वर्ष 1998 में द्वितीय पोखरन सम्पन्न किया गया। द्वितीय पोखरन के परिणाम स्वरूप भारत ने परमाणु बम का सफल परीक्षण किया। ऐसे भारत परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में स्वतन्त्रता प्राप्ति के तुरन्त बाद से ही प्रयासरत रहा है। भारत ने अपनी सामरिक नीति के अन्तर्गत स्वतन्त्रता प्राप्ति से लेकर 1974 के पूर्व तक असैन्य परमाणु रिएक्टरों का आयात किया, जबकि 1974 से लेकर 20वीं शताब्दी के अन्तिम वर्ष तक कुछ अपवादों के साथ असैन्य परमाणु रिएक्टरों के आयात पर विराम लगाना शुरू किया। 21वीं शताब्दी के शुरू से ही पुनः भारत ने परमाणु ऊर्जा के आयात को प्रारम्भ कर दिया। मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद सामरिक क्षेत्र में बहुत अधिक प्रगति दिख रही है।

नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद 6 मार्च, 2017 को भारतीय नौ-सेना में सेवारत रहे विमानवाहक युद्धपोत आई.एन.एस. विराट को सेवामुक्त कर दिया, जो मई 1987 से कार्य कर रहे थे।[11] 29 मार्च, 2017 को नौ-सेना के समुद्री गश्ती विमान टीयू-142 एम को भी भारतीय नौ-सेना से हटा दिया गया।[12] नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्रित्व काल में भारत के सामरिक सशक्तीकरण के दिशा में लगातार प्रयास हो रहा है। नरेन्द्र मोदी ने राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए लगातार राजनीतिक प्रतिबद्धता का परिचय दिया है। नरेन्द्र मोदी के शासन काल में स्वदेश निर्मित पनडुब्बी आई.एन.एस. खंडेरी का जलावतरण प्रारम्भ हुआ। पहली पनडुब्बी आई.एन.एस. कलवरी का जलावतरण अप्रैल, 2015 में किया तथा 12 जनवरी, 2017 को खंडेरी द्वितीय का जलावतरण मुम्बई के मझगाँव डॉक से अरब सागर में किया गया।[13] नरेन्द्र मोदी के प्रयास से ही पहली बार नागरिक उड्डयन से सम्बन्धि प्रदर्शन का एयरो इंडिया को आयोजित किया गया। रक्षा मंत्रालय के तत्वावधान में 11-18 फरवरी, 2017 को 'एयरो इंडिया 2017' का आयोजन किया गया।[14]

नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद से लगातार सीमा-पार आतंकवाद से राष्ट्रीय सुरक्षा को चुनौती मिल रही है। अब तक के आतंकी हमले में जम्मू-कश्मीर में उड़ी में सैन्य ठिकाने पर हमला सबसे बड़ा माना जा सकता है। वस्तुतः उड़ी में पाकिस्तान समर्थित आतंकवादियों ने 18 सितम्बर, 2016 को कश्मीर में उड़ी में भारतीय सेना पर हमला कर 18 सैनिकों को मारने का दुःसाहस किया, जिसका बदला भारतीय सेना ने 10 दिन के भीतर ले लिया। शीर्ष रणनीतिक निर्णय के तहत सेना में पूर्णतः सफल सर्जिकल स्ट्राइक (सीमित सैन्य कार्यवाही) 28 सितम्बर, 2016 की रात्रि की गई इसमें राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रति भारत की प्रतिबद्धता उजागर हुई। इससे भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रति प्रतिबद्धता दिखती है।

जम्मू-श्रीनगर राष्ट्रीय राजमार्ग पर पुलवामा में 14 फरवरी, 2019 को पाक समर्थित बर्बर आतंकी हमले में सी.आर.पी.एफ. के 42 जवान शहीद हो गये।[15] इस हमले के 13वें दिन 26 फरवरी, 2019 को भारतीय वायु सेना ने पाक सीमा के भीतर 80 किमी. भीतर जाकर बालाकोट में जैश-ए-मोहम्मद के कैम्पों को नेस्तनाबूद कर दिया। इससे भी मोदी सरकार की दृढ़ इच्छा शक्ति दृष्टिगोर होती है।[16]

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के प्रयास से फ्रांस से 36 लड़ाकू राफेल विमानों की खरीद हेतु समझौता पर हस्ताक्षर सम्पन्न हुआ तथा नेत्र प्रणाली वायुसेना में शामिल हुई। स्वदेश निर्मित तेजस विमान भारतीय वायुसेना में शामिल किया गया। इसके अतिरिक्त भारतीय वायुसेना का सैन्याभ्यास आयरन फिस्ट-2016, एक्सो एटमॉस्फीयरिक इंटरसेप्टर मिसाइल परीक्षण, अग्नि-V एवं अग्नि-VI का सफल परीक्षण तथा राष्ट्रीय युद्ध स्मारक की स्थापना आदि महत्वपूर्ण कार्य नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्रित्व काल में ही सम्पन्न हुआ है। फ्रांसीसी रक्षा मंत्री जीन यवेन ली ड्रियान (Jean Yves Le Drian) व भारतीय रक्षा मंत्री मनोहर पार्रिकर के अतिरिक्त राफेल की निर्माता कम्पनी डसॉल्ट के मुख्य कार्यकारी अधिकारी की उपस्थिति में 8.85 अरब डॉलर के इस सौदे पर हस्ताक्षर 23 सितम्बर, 2016 को किए गए।[17]

भारतीय वायुसेना की युद्धक क्षमता में विस्तार फरवरी 2017 में विकसित एयरबोर्न अर्ली वर्निंग एण्ड कन्ट्रोल सिस्टम (**AEW and C**) को वायुसेना में शामिल करके किया गया। रक्षा अनुसंधान

एवं विकास संगठन **DRDO** की प्रयोगशाला में विकसित इस प्रणाली को नेत्र नाम दिया गया है, जिसमें 300 किमी के क्षेत्र में शत्रु के विमान एवं प्रक्षेपास्त्र आदि को जमीन, आकाश व समुद्र में खोजने की क्षमता है।[18] स्वदेश निर्मित हल्के लड़ाकू विमान **(Light Cobat Aircraft-LCA)** 'तेजस' को 1 जुलाई, 2016 को भारतीय वायुसेना में औपचारिक रूप से शामिल किया गया है। यह हिन्दुस्तान एयरोनॉटिक्स को सौंपा गया है।[19]

मोदी के प्रधानमंत्रित्व काल में भारतीय नौ-सेना ने अब तक का अपना सबसे बड़ा शक्ति प्रदर्शन अंतर्राष्ट्रीय बेड़ा समीक्षा बंगाल की खाड़ी में 6 फरवरी, 2016 को विशाखापतनम के तट पर किया था। अभी चीन से तनाव के कारण भी अक्टूबर, 2020 के प्रथम सप्ताह तक यह मजबूत स्थिति दिख रही है।

भारतीय नौ-सैना ने अपनी सामुद्रिक सामरिक शक्ति को बढ़ावा देने के लिए मध्यम दूरी की सरफेस टु एयर मिसाइल बराक का विमान-वाहक युद्धपोत आई.एन.एस. विक्रमादित्य से परीक्षण 21-23 मार्च, 2017 के दौरान किया। वस्तुतः इस युद्धपोत से मिसाइल बराक का यह पहला ही परीक्षण था।[20]

भारत के रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन ने इजरायल के सहयोग से भारत में विकसित की जा रही महत्वपूर्ण मिसाइल के दो सफल परीक्षण 20 सितम्बर, 2016 को व एक अन्य परीक्षण 21 सितम्बर, 2016 को किया गया। सतह से आकाश में LR-SAM मार करने वाली इस अत्याधुनिक मिसाइल का परीक्षण ओडिशा के बालासोर जिले के चाँदीपुर स्थित एकीकृत परीक्षण रेंज से मोबाइल लांचार के माध्यम से किए गए खतरे की चेतावनी देने वाले रडार व मल्टी फंक्शनल सर्वीलांस सिस्टम से युक्त इस मिसाइल ने खतरे का संकेत मिलते ही 'मानवरहित लक्ष्य विमान' को बंगाल की खाड़ी के ऊपर अपना निशाना बना लिया था। LR-SAM (Long Range Surface to Air Missilpe) मिसाइल इजरायल की बराक-8 मिसाइल है। भारत में इस मिसाइल का विकास इजरायल के सहयोग से हो रहा है।[21]

भारत की रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन DRDO ने मिसाइल विकास कार्यक्रम के तहत एक बड़ी उपलब्धि 11 फरवरी, 2017 को उसने, जब किसी 'आक्रामक मिसाइल को स्वदेशी एक्सो-एटमॉस्फीयरिक इंटरसेप्टर के द्वारा आकाश में ही लगभग 100 किमी. ऊँचाई पर नष्ट करने में सफलता प्राप्त की। उस तरह की बैलिस्टिक मिसाइल सुरक्षा कवच (Balistic Missile Defence-BMD) की क्षमता अभी तक अमरीका रूस व इजरायल के पास ही मौजूद थी तथा ऐसी उपलब्धि वाला भारत विश्व का चौथा राष्ट्र हो गया है।[22]

भारतीय सेवा के सामरिक बल कमान व रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन ने देश की सुरक्षा व्यवस्था की मजबूती के लिए अग्नि-V के उपयुक्त परीक्षण से पूर्व स्वदेश निर्मित विभिन्न मिसाइलों का परीक्षण नवम्बर, 2015 में किया था। इनमें रूस के सहयोग से निर्मित सुपर सोनिक क्रूज मिसाइल, ब्रह्मोस तथा रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन द्वारा विकसित एवं निर्मित स्वदेशी पृथ्वी-II, अग्नि-I एवं अग्नि-IV के अतिरिक्त शत्रु की आक्रमक मिसाइल को उसके लक्ष्य तक पहुँचने से पूर्व

आकाश में ही नष्ट करने वाली इंटरसेप्टर मिसाइल के परीक्षण शामिल था। इन परीक्षणों के तहत नवम्बर, 2015 में निर्णय लिया गया था। ब्रह्मोस मिसाइल का पहला परीक्षण हुआ था। मोदी सरकार की दृढ इच्छा शक्ति से ही भारत व रूस के संयुक्त उद्यम के तहत भारत में निर्मित क्रूज मिसाइल ब्रह्मोस का यह परीक्षण राजस्थान के जैसलमेर जिले में पोखरण रेंज में 7 नवम्बर, 2015 को किया गया था।

'पिनाका' (PINAKA) एक मल्टी बैरल रॉकेट लांचर है। भारत के रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन DRDO द्वारा विकसित इस लांचर का प्रयोग भारतीय सेना द्वारा किया जाता है। कारगिल युद्ध के समय भी इसका उपयोग सेना द्वारा किया गया था। मोदी सरकार में इसके विकसित संस्करण 'गाइडेड पिनाक' का सफल परीक्षण DRDO ने 24 जनवरी, 2017 को ओडिशा में चाँदीपुर स्थित एकीकृत परीक्षण रेंज (ITR) से किया, नवविकसित गाइडेड पिनाक की मारक क्षमता पहले से अधिक है तथा नेवीगेशन, गाइडेंस व कंट्रोल किट से युक्त होने के कारण यह अधिक शुद्धता के साथ लक्ष्य को निशाना बनाने में पूर्ण रूप में सक्षम है।[23]

भारत ने स्वेदश निर्मित अपनी सर्वाधिक शक्तिशाली अन्तर्महाद्वीपीय मिसाइल अग्नि-V का एक सफल परीक्षण 25 दिसम्बर, 2016 को किया, जिसके एक सप्ताह बाद ही अग्नि-V का एक नया परीक्षण 2 जनवरी, 2017 को किया। यह दोनों परीक्षण ओडिशा में बालासोर के तट के निकट अब्दुल कलाम द्वीप (व्हीलर द्वीप) स्थित एकीकृत परीक्षण रेंज (ITR) से सम्पन्न किए गए।[24] इससे भी मोदी की राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रति प्रतिबद्धता दृष्टिगोचर होती है। भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए बाह्य सीमाओं की सुरक्षा हेतु तथा सामरिक रणनीति हेतु सशक्तिकरण आवश्यक है। दूसरी ओर आन्तरिक सुरक्षा भी कम महत्वपूर्ण नहीं होती है। भारत में जहाँ बाह्य राष्ट्रीय सुरक्षा का प्राथमिक दायित्व रक्षा मंत्रालय पर होता है, वही आन्तरिक मामलों में राष्ट्रीय सुरक्षा का दायित्व गृह मंत्रालय के पास होता है। राष्ट्रीय सुरक्षा में रक्षा मंत्रालय तथा गृह मंत्रालय के मंत्री, प्रधानमंत्री के निर्देशन, समन्वयन और नियन्त्रण में कार्य करते हैं। आन्तरिक सुरक्षा के अन्तर्गत राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता को सुनिश्चित करना, आन्तरिक शांति एवं सौहार्द को बनाए रखना, कानून-व्यवस्था को बनाए रखना आदि महत्वपूर्ण है, जिनमें राष्ट्रीय अभिकरणों के साथ-साथ राज्य की मशीनरी की भूमिका भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के मार्ग में आतंकवाद के अतिरिक्त वामपंथ, उग्रवाद, सम्प्रदायवाद और अलगाववाद जैसी समस्याएँ हैं। भारत के छतीसगढ़, मध्यप्रदेश, झारखण्ड, बिहार, आन्ध्र प्रदेश जैसे राज्यों में नक्सल गतिविधियाँ लगातार आन्तरिक रूप में राष्ट्रीय सुरक्षा को चुनौती प्रदान कर रही है। नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के पहले भी ऐसी गतिविधियाँ प्रबल रूप में राष्ट्रीय सुरक्षा के समाने चुनौती थी तथा उनके प्रधानमंत्री बनने के बाद भी यह चुनौती बनी हुई है। जम्मू-कश्मीर समस्या के साथ-साथ पूर्वोत्तर राज्यों का उग्रवाद भी राष्ट्रीय सुरक्षा के मार्ग में एक समस्या है। भारत में आतंकी गतिविधियों का लम्बा और भयावह इतिहास है, हालांकि भारत सरकार की प्रतिबद्धता इसको समाप्त करने में है तथा नरेन्द्र मोदी की सरकार ने सीमापार आतंकवाद तथा आन्तरिक आतंकवाद को समाप्त करने के लिए दृढ़ निश्चय कर रखा है। इसके लिए जम्मू-कश्मीर में 'ऑल आउट' ऑपरेशन चलाया जा रहा है। नरेन्द्र मोदी की सरकार ने आतंकवाद को कमजोर करने के साथ-साथ भारत में आर्थिक भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए नोटबंदी का निर्णय लिया। भारत में आतंकी गतिविधियों को नियंत्रित करने के लिए नरेन्द्र मोदी के

कुशल नेतृत्व से राष्ट्रीय जाँच एजेन्सी, नेटग्रिड, मैक, एन.एस.जी. के चार स्थापित नवीन केन्द्र आदि बेहतर ढंग से कार्य कर रहे हैं।

भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर विश्व के अधिक-से-अधिक देशों को पाकिस्तान के विरोध में खड़ा किया है तथा आतंकवाद के विरोधी और मानवतावाद के नेतृत्वकर्ता एवं समर्थक देश के रूप में स्वयं को स्थापित किया है। आज भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के मार्ग में सामरिक रणनीति के साथ-साथ घरेलू नीति में भी बदलाव लाया जा रहा है। निश्चित रूप में भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा में अलगाववाद, नक्सलवाद, कालाधन, गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार आदि कई समस्याएं और बाधाएं हैं, जिनके सम्बन्ध में मोदी सरकार की रणनीतिक कार्य-प्रयास संचालित हो रहे हैं। राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रश्न पर मोदी सरकार सशक्त है तथा इसकी सामरिक रणनीति भी सफल हो रही है।

सन्दर्भ सूची :

1. गांधी जी राय, भारती भवन पब्लिशर्स एण्ड अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, द्वितीय संस्करण, 2014, पृष्ठ -134
2. तथैव, पृष्ठ-134 एवं 136
3. डॉ. मदोदर रावत, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, रावत प्रकाशन, हरियाणा, 2011, पृष्ठ-149
4. गांधीजी राय, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, पृष्ठ-141
5. दैनिक समाचार हिन्दुस्तान, पटना-14 सितम्बर, 2016
6. दैनिक समाचार हिन्दुस्तान, पटना-14 सितम्बर, 2016
7. डॉ. मदोदर रावत, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, रावत प्रकाशन, हरियाणा, 2011, पृष्ठ-152
8. अनीश भसीन, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, प्रभात पेपरबैक्स प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2017, पृष्ठ-245
9. तथैव, पृष्ठ-247
10. तथैव, पृष्ठ-247
11. प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक, समसामयिकी वार्षिकी Vol.-II, 2017, पृष्ठ-52
12. तथैव, पृष्ठ-52
13. तथैव, पृष्ठ-52 तथा 53
14. तथैव, पृष्ठ-53
15. तथैव, पृष्ठ-53
16. प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक, समसामयिकी वार्षिकी Vol.-II, 2019,
17. प्रतियोगिता दर्पण अतिरिक्तांक, समसामयिकी वार्षिकी Vol.-II, 2017, पृष्ठ-54
18. तथैव, पृष्ठ-55
19. तथैव, पृष्ठ-55
20. तथैव, पृष्ठ-56
21. तथैव, पृष्ठ-56
22. तथैव, पृष्ठ-56

23. तथैव, पृष्ठ-57
24. तथैव, पृष्ठ-57

अध्याय 29

भारत और यूरोपीय संघ के संबंध: बहुआयामी परिप्रेक्ष्य

शाईस्ता
शोधछात्रा
युरोपियन और लैटिन अमेरिकन अध्ययन केंद्र
जामिया मिल्लिया इस्लामिया

आबिदा बानो
381/22 E, 4th फ्लोर
जाकिर नगर
नई दिल्ली- 110025

प्रस्तावना

भारत और यूरोपियन संघ के बीच सम्बन्ध बहुयामी है। भारत और यूरोपियन संघ राजनीतिक, आर्थिक, रणनीतिक आदि संबंधों को साझा करते है। भारत और यूरोपियन संघ के संबंध काफी पुराने है, सन् 2022 में यूरोपियन संघ एवं भारत के रिश्ते को साठ वर्ष हो जांएगे। भारत पहला एशिया देश था जिसने 1960 में ही यूरोपियन आर्थिक समुदाय जो की छः पश्चिमी यूरोपियन देशों (बेल्जियम, फ़्रांस, जर्मनी, इटली, नीदरलैंड, क्ज़मबर्ग) द्वारा निर्मित किया गया था, के साथ राजनयिक संबंध स्थापित किए थे, जबकि यूरोपियन संघ अपने वर्तमान स्वरूप में स्थापित भी नहीं हुआ था। इसके बाद ही दोनों ने 1962 में एक राजनयिक उद्देश्य के लिए साझेदारी की थी। अपने वर्तमान स्वरूप में यूरोपियन संघ 1993 में संगठित हुआ। यूरोपियन संघ और भारत के बीच कई वार्ता, सम्मलेन, एंव समझौते आदि हुए है जो इनके बीच के रिश्तों की व्याख्या करते है।[1]

भारत ने यूरोपियन संघ के साथ पहले सहयोग समझौते पर 1994 में हस्ताक्षर किए थे और पहला शिखर सम्मेलन वर्ष 2000 में आयोजित किया गया था। तब से, विभिन्न द्विपक्षीय समझौते एंव ज्ञापन हो चुके है जैसे:- विज्ञान और प्रौद्योगिकी समझौता 2001 और 2007, संयुक्त वक्तव्य सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सहयोग को बढ़ावा देने के लिए 2001, सीमा शुल्क सहयोग समझौता 2004, रोजगार और सामाजिक मामलों में सहयोग के लिए समझौता 2006, क्षैतिज नागरिक उड्डयन समझौता 2008, परमाणु संलयन ऊर्जा अनुसंधान समझौता 2009, संयुक्त समझौता संस्कृति के क्षेत्र में 2010, ऊर्जा में संवर्धित सहयोग पर संयुक्त घोषणा 2012, आदि (विदेश मंत्रालय, 2013)।[2] भारत

और यूरोपीय संघ के बीच संबंध न केवल व्यापार के संचालन के लिए है, बल्कि राजनीतिक, संसदीय, नागरिक समाज, सांस्कृतिक और शैक्षिक क्षेत्र में भी स्थापित किए गए है। आधी सदी से भी ज़्यादा पुराने दोनों के बीच के संबंध उतार-चढ़ाव भरे रहे है। भारत और यूरोपियन संघ के बीच संबंध चाहे कितने भी उतार चढ़ाव भरे क्यों ना रहे हो। दोनों ही कुछ मूल्य एंव विचारों को साझा करते है। दोनों ही लोकतान्त्रिक प्रक्रिया में विश्वास रखते है एंव विश्व की सबसे बड़ी लोकतान्त्रिक व्यवस्थाएं हैं, मानव अधिकारों के समर्थक है, बहुलवादी, बहुभाषी और बहु-जातीय हैं, विश्व शांति के समर्थक है, आदि। भारत एंव यूरोपियन संघ जलवायु परिवर्तन को लेकर जागरूक एंव प्रतिबद्ध है। इसके साथ ही आर्थिक दृष्टिकोण से भारत के लिए यूरोपियन संघ से अच्छे संबंध महत्वपूर्ण है। यूरोपियन संघ, भारत के सबसे बड़े आर्थिक सहयोगिओं में से एक है। भारत की व्यापारिकभागीदारी में दूसरे नंबर पर यूरोपियन संघ आता है। दोनों के बीच आम जनता के स्तर पर संबंधो के ओर भी पक्ष देखने को मिलते है जो इनके बीच सहयोग को बढ़ाते है जैसे की लाखों की संख्या में भारतीय प्रवासी यूरोपियन संघ के देशों में रहते है, लाखों छात्र यूरोपियन संघ के देशों में उच्च शिक्षा ले रहे है। यूरोपियन संघ ने भी भारत को रणनीतिक भागीदारों के रूप में चुना है। भारत, यूरोपियन संघ के लिए आर्थिक और राजनीतिक दोनों, ही दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है भारत यूरोपियन संघ का महत्वपूर्ण सहयोगी है जैसे:- ऊर्जा, नवाचार के मुद्दों पर भागीदार, वैज्ञानिक अनुसंधान आदि।

भारत एंव यूरोपियन संघ

भारत दक्षिण एशिया में स्थित विकासशील देशों में से एक है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। यह क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व का सातवां बड़ा देश है। भारत अपनी सीमा पश्चिम में पाकिस्तान, उत्तर में नेपाल, भूटान और चीन, पूर्व में बांग्लादेश और म्यांमार के साथ साझा करता है। इसके उत्तर में हिमालय पर्वत एंव दक्षिण में हिंद महासागर स्थित है। हिंद महासागर में, दक्षिण में श्रीलंका, दक्षिण पश्चिम में मालदीप, दक्षिण-पूर्व में इंडोनेशिया से भारत की समुद्री सीमा लगती है और दक्षिण-पूर्व में बंगाल की खाड़ी तथा पश्चिम में अरब सागर स्थित है। अपनी भूगोलिक स्थिती के कारण भारत महत्वपूर्ण है, इसके साथ ही दुनिया का दूसरा सबसे बड़ी आबादी वाला देश भी है। संयुक्त राष्ट्र के अनुमान के मुताबिक, यह 2028 तक चीन को पीछे छोड़कर दुनिया का सबसे अधिक आबादी वाला देश बन जाएगा। भारत सबसे ज़्यादा युवा जनसंख्या वाला देश है और इस जनसंख्या का एक बड़ा

हिस्सा कामगार वर्ग के अंतर्गत आता है। साथ ही भारत का मध्यम वर्ग बहुत बड़ा है जो एक बड़े बाजार का प्रतिनिधित्व करता है। यह विदशी कंपनीयों के निवेश के लिए एक अच्छा स्थान है। 2019 में भारत की जी.डी.पी 2.83 ट्रिल्यन यू.एस.डी. थी। आर्थिक दृष्टि से भी भारत की स्थति मजबूत है। यूरोपीय संघ 27 यूरोपीय देशों का एक संगठन है। ब्रेक्सिट, (ब्रिटेन द्वारा यूरोपियन संघ की सदस्यता छोड़ना) से पहले यूरोपीय संघ में कुल मिलाकर 28 सदस्य थे, अब इसमें 27 सदस्य रह गए हैं। यूरोपियन संघ द्वितीय विश्व युद्ध (1934-1945) के बाद धीरे-धीरे अस्तित्व में आया।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, यूरोपीय मंच पर यूरोप की सामूहिक पहचान की अवधारणा सामने आई। युद्ध की इतनी क्रूरता और आर्थिक बर्बादी के बाद, राजनीतिक नेताओं ने शांति बनाए रखने और यूरोपीय देशों के बीच आर्थिक संबंध बढ़ाने के उद्देश्य से यूरोप को एकजुट करने के बारे में सोचा। स्पेन, फ्रांस और बेल्जियम जैसे देशों ने एक ऐसा संगठन बनाने का फैसला किया जो शांति बनाए रखेगा और उनके बीच अच्छे संबंध विकसित करेगा और यह भी सुनिश्चित करेगा कि इन राष्ट्रों के बीच आगे कोई युद्ध न हो। शुरुआत में यूरोपीय संघ एक संगठन नहीं था, यह सिर्फ एक सामुदायिक प्रणाली थी और इसे यूरोपीय कोयला और इस्पात समुदाय (1951-1958) कहा जाता था। शुरुआत में, छह देश इसके सदस्य बने - बेल्जियम, फ्रांस, इटली, लक्समबर्ग, नीदरलैंड और पश्चिम जर्मनी। मास्टरिचट संधि के साथ 1993 में यूरोपीय संघ नामक संगठन सामने आया। इसने आर्थिक, राजनीतिक जैसे हर पहलू में काम करना शुरू किया। मूल रूप से यह एक राजनीतिक और आर्थिक संगठन था।[3] यूरोपियन संघ के भीतर एकल बाजार के कारण एकल मुद्रा 'यूरो' का उद्घाटन हुआ। यूरोपीय संघ के 19 देशों के सदस्य ने ‘यूरो’ को मंज़ूरी दी और इसका इस्तेमाल किया। यह अमेरिकी डॉलर के बाद दुनिया की दूसरी सबसे मजबूत मुद्रा है। यूरोपीय संघ की जीडीपी विकास दर बहुत अच्छी है जो यूरोपीय संघ के सदस्यों को स्थिर आर्थिक स्थिति प्रदान करती है। यूरोपीय संघ ने सीमा रहित यूरोप की शुरुआत की। यूरोपीय देशों के लिए एक वीजा या पासपोर्ट ही काफी है लेकिन सभी देशों ने इसे स्वीकार नहीं किया। सीमा रहित यूरोप श्रम या काम, शिक्षा, पर्यटन और यूरोपीय संघ की एकता के लिए महत्वपूर्ण है।

यह यूरोपीय देशों के लिए आर्थिक, राजनीति, मानव अधिकार, मानवीय सहायता, विदेशी मामलों आदि जैसे कई क्षेत्रों में काम करता रहा है। यूरोपीय संघ के कार्यों का क्षेत्र इतना विशाल और विस्तृत है कि

इन सभी कार्यों को करने के लिए इसे अनेक समितियों और विभिन्न निकायों की आवश्यकता होती है। यूरोपियन संघ के कुछ महत्वपूर्ण निकाय हैं: - यूरोपीय परिषद, यूरोपीय संसद, यूरोपीय संघ की परिषद, लेखा परीक्षकों का न्यायालय, यूरोपीय आयोग, यूरोपीय संघ का न्यायालय, यूरोपीय सेंट्रल बैंक। [4]

भारत और यूरोपियन संघ के संबंध

1. राजनीतिक संबंध

भारत और यूरोपियन संघ के संबंध आधी सदी से भी ज़्यादा पुराने है। भारत उन पहले देशों में से एक है जिसने यूरोपियन आर्थिक समुदाय के साथ 1960 में रणनीतिक संबंध स्थापित किए थे।[5] भारत का यूरोपियन आर्थिक समुदाय से संबंध स्थापित करने का प्राथमिक उद्देश्य मज़बूत आर्थिक रिश्ते कायम करना था साथ ही इन संबंधों के माध्यम से एक बड़े बाजार में प्रवेश करने का रास्ता बनाना। आर्थिक उद्देशयों के लिए की गई पहल ने राजनीतिक संबंधों की शुरुआत भी की। भारत एंव यूरोपियन संघ के बीच उच्च स्तरीय मंत्रियों, राजनयको, और प्रशासनिक स्तर पर कई समझौते एंव सम्मेलन हुए। 1973 में यूरोपियन आर्थिक समुदाय ने भारत के साथ औपचारिक व्यापारिक समझौता किया। 1983 के बाद से भारतीय विदेश मंत्री और यूरोपीय समुदाय के सदस्य के बीच वार्ता होती रही है, 1990 के दशक की शुरुआत से भारत ने यूरोपीय संघ से अपने राजनीतिक संबंध सुधारने की दिशा में कार्य करना शुरू किया क्योंकि अब यूरोपीय संघ सिर्फ एक व्यापारिक समुदाय से अधिक भूमिका निभाने वाला था। यह पूरे पश्चिमी यूरोप के देशों के लिए राजनयिक केंद्र बन रहा था।[6]

भारत एंव यूरोपियन संघ ने 1993 में 'संयुक्त राजनीतिक वक्तव्य' पर हस्ताक्षर किए जिसे 1994 में लागू किया गया और जिसने द्विपक्षीय संबंधों को मजबूत करने का कार्य किया। संयुक्त राजनीतिक वक्तव्य में दोनों पक्षों ने कहा कि वे अपने राजनीतिक, आर्थिक, तकनीकी और सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत और गहरा करना चाहते हैं।[7] 1997 में, दोनों ने राजनीतिक संवाद का विस्तार करने का निर्णय लिया गया जिसके लिए पांच नए उपाए किए गए, जो इस प्रकार है:- (1) वरिष्ठ अधिकारियों की बैठकें; (2) आयोग और भारतीय योजनाकारों के बीच बैठकें; (3) बहुपक्षीय मंचों पर द्विपक्षीय बैठकें; (4) विशेषज्ञों के कार्यकारी समूह; निर्यात नियंत्रण, आतंकवाद विशेषज्ञ, और कांसुलर आदि (5) थिंक-टैंक नेटवर्क की शुरुआत। भारत और यूरोपियन संघ के बीच पहले शिखर सम्मेलन (वर्ष 2000 में) के बाद से दोनों के राजनीतिक रिश्ते में कुछ हद तक गति देखी जा सकती है। इस शिखर सम्मेलन में तय

किया गया कि वर्ष में एक बार मंत्रिस्तरीय बैठकें, वर्ष में दो बार वरिष्ठ अधिकारियों की बैठकें, और शिखर सम्मेलन को "नियमित आधार पर" आयोजित की जाएंगी।[8]

15वां शिखर सम्मेलन 2020 में वर्चुअली किया गया। कोरोना महामारी के कारण तकनीक की मदद लेकर दोनों पक्षों ने बैठक की। भारत का प्रतिनिधित्व माननीय प्रधान मंत्री, नरेंद्र मोदी जी ने किया और यूरोपीय संघ का प्रतिनिधित्व यूरोपीय परिषद के माननीय अध्यक्ष, चार्ल्स मिशेल, और यूरोपीय आयोग के माननीय अध्यक्ष, उर्सुला वॉन डेर लेयेन, ने किया था। भारत के विदेश मंत्री, डॉ. एस जयशंकर, और विदेश मामलों और सुरक्षा नीति के उच्च प्रतिनिधि और उपाध्यक्ष श्री जोसेफ बोरेल ने भी शिखर सम्मेलन में भाग लिया।[9]

शिखर सम्मेलन में चर्चा किए गए विषयों में बहुपक्षवाद, अंतर्राष्ट्रीय संगठनों और विकास के मुद्दों पर चर्चा, रणनीतिक क्षेत्र में सहयोग एंव साझेदारी, कोविड महामारी के लिए एक संयुक्त प्रतिक्रिया, भारत-यूरोपीय संघ की सामरिक साझेदारी और इसके विभिन्न आयामों को मजबूत करना, आदि शामिल थे, साथ ही आने वाले समय में की जाने वाली वार्ता, संधियों, आदि का भी खाका तैयार किया गया।[10]

2. आर्थिक संबंध

अर्थव्यवस्था किसी भी राज्य का आधार होती है; कोई भी राज्य स्थिर आर्थिक व्यवस्था के बिना बहुत लम्बे समय काम नहीं कर सकता। प्राचीन काल से ही राज्य के लिए वित्त महत्वपूर्ण रहा है। कौटिल्य (प्राचीन भारतीय दार्शनिक, विचारक, अर्थशास्त्री) ने वित्त को राज्य का सबसे महत्वपूर्ण अंग माना है। उनके अनुसार खजाना(वित्त) राज्य का रक्त है और चूंकि मानव शरीर रक्त के बिना काम नहीं कर सकता है, इसलिए राज्य बिना खजाने के टिक नहीं सकता।[11] वैश्वीकृत दुनिया में वित्त का महत्व अधिक बढ़ गया है जिसने देशों को मजबूत आर्थिक संबंधो बनाने के लिए प्रेरित किया है।

आर्थिक दृष्टिकोण से देखा जाए तो भारत और यूरोपीय संघ दुनिया की दो सबसे बड़ी अर्थव्यवस्थाएं हैं जो दोनों को व्यापार और निवेश के अवसर प्रदान करते हैं। पिछले एक दशक में भारत की तीव्र आर्थिक वृद्धि ने देश को वैश्विक स्तर पर नाममात्र (नॉमिनल) सकल घरेलू उत्पाद के हिसाब से सातवां सबसे बड़ा और क्रय शक्ति समानता (पीपीपी) के हिसाब से चौथा सबसे बड़ा देश बनने में मदद की है। संपन्न मध्यम वर्ग सहित देश की 1.3 अरब आबादी इसे निवेश के लिए एक आकर्षक गंतव्य बनाती है। दूसरी ओर, यूरोपीय संघ के 27 सदस्य देश दुनिया का सबसे बड़ा एकल बाजार बनाते हैं जिसमें

450 मिलियन नागरिक शामिल हैं साथ ही, €100 बिलियन से अधिक के द्विपक्षीय व्यापार (वस्तुओं और सेवाओं) के साथ वस्तुओं और सेवाओं में भारत का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है। यूरोपीय संघ भारत का तीसरा सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है, जो चीन (12%) और अमेरिका (11.7%) के बाद आता है। इसने वर्ष 2019 में €77.90 बिलियन मूल्य के माल का व्यापार किया। संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद यूरोपीय संघ भारतीय निर्यात (कुल का 14%) के लिए दूसरा सबसे बड़ा गंतव्य है। भारत यूरोपीय संघ का एक बड़ा व्यापारिक साझेदार है। वर्ष 2019 में यूरोपीय संघ के कुल व्यापार में भारत का 1.8% हिस्सा था, जो चीन (16.1%), यूएसए (15.2%), और यूके (12.2%) से काफी पीछे है। भारत के यूरोपीय संघ को निर्यात के सबसे बड़े क्षेत्रों में इंजीनियरिंग सामान, फार्मास्यूटिकल्स, रत्न और आभूषण, अन्य विनिर्मित सामान और रसायन शामिल हैं। [12]

“भारत यूरोपीय संघ का 2019 में वस्तुओं के कुल द्विपक्षीय व्यापार में 10वां सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है जो की यूरोपीय संघ के कुल द्विपक्षीय व्यापार का 1.8% हिस्सा है। 2019, में भारत और यूरोपीय संघ ने वस्तुओ के द्विपक्षीय व्यापार में, 77.79 बिलियन यूरो का व्यापार किया है। (भारत से 39.55 बिलियन यूरो का निर्यात और भारत में 38.23 बिलियन यूरो का आयात)। वस्तुओं के व्यापार में भारत-यूरोपीय संघ द्विपक्षीय व्यापार हाल के वर्षों इस प्रकार है”(बिलियन यूरो)[13]

वर्ष	**भारतीय निर्यात**	**भारतीय आयात**	**कुल व्यापार**
2017	36.00	37.05	73.05
2018	37.82	40.11	77.93
2019	39.55	38.23	77.79

स्रोत: विभिन्न स्रोतों पर आधारित लेखिका द्वारा निर्मित

“भारत और यूरोपीय संघ का 2019 के दौरान सेवाओं के क्षेत्र में द्विपक्षीय व्यापार 32.6 बिलियन यूरो था (भारत से 17.7 अरब यूरो का निर्यात और 14.8 अरब यूरो का आयात)। द्विपक्षीय व्यापार में वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 5% की वृद्धि दर्ज की गई। कुल मिलाकर वस्तुओ और सेवाओं के व्यापार के क्षेत्र में यूरोपीय संघ भारत का दूसरा सबसे बड़ा भागीदार है। हाल के वर्षों में सेवाओं के क्षेत्र में भारत और यरोपीय संघ के द्विपक्षीय व्यापार का विवरण इस प्रकार है।”(बिलियन यूरो)[14]

वर्ष	भारतीय निर्यात	भारतीय आयात	कुल व्यापार
2017	14.04	13.57	27.61
2018	16.12	14.90	31.02
2019	17.75	14.83	32.58

स्रोत: विभिन्न स्रोतों पर आधारित लेखिका द्वारा निर्मित

पिछले दशक में यूरोपीय संघ भारत के लिए प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का सबसे बड़ा स्रोत बन कर उभरा है। भारत में विदेशी निवेश प्रवाह में यूरोपीय संघ की हिस्सेदारी 8% से 18% (दोगुनी से अधिक) हो गई है। अप्रैल 2000 से सितंबर 2020 के दौरान, यूरोपीय संघ से भारत में कुल प्रत्यक्ष विदेशी निवेश $81.3 बिलियन हुआ। भारत में करीब 6,000 यूरोपीय कंपनियां मौजूद हैं, जो की प्रत्यक्ष रूप से 1.7 मिलियन नौकरियां और अप्रत्यक्ष रूप से 5 मिलियन नौकरियां विभिन्न क्षेत्रों में प्रदान कर रही है। यूरोपीय संघ में भारतीय निवेश लगभग 50 बिलियन यूरो है। भारत और यूरोपीय संघ ने एक निवेश सुविधा मैकेनिज्म (IFM,2017) भी स्थापित किया है जिसके तहत इन्वेस्ट इंडिया नाम से भारत में निवेश की चाह रखने वाली यूरोपीय संघ की कंपनियों के लिए सिंगल विंडो एंट्री पॉइंट बनाया गया है। यूरोपियन इनवेस्टमेंट बैंक ने भारत में कई परियोजनाओ में निवेश किया तथा ऋण प्रदान किया है जैसे की- भोपल, कानपुर, लखनऊ में मेट्रो रेल परियोजनाएं, आदि।[15]

2. (I) द्विपक्षीय व्यापार और निवेश समझौता

भारत और यूरोपियन संघ एक-दूसरे के महत्वपूर्ण व्यापारिक साझेदारों में से एक है। भारत और यूरोपियन संघ में 2007 ने द्विपक्षीय व्यापार और निवेश समझौता पर वार्ता शुरू की थी। यह समझौता मुक्त व्यापार के नियमों एंव सिद्धांतों पर आधारित है। मुक्त व्यापार समझौता दो या फिर इससे ज्यादा देशों के बीच किया जाता है। यह व्यापार संबंधों को मजबूत बनाने के लिए उत्पादों और सेवाओं के आयात और निर्यात में रुकावटों को दूर करने का एक समझौता है। इसके द्वारा देश एक दूसरे के उत्पादों पर कोटा, प्रशुल्क, छूट या फिर प्रतिबंध आदि को कम या ज्यादा करने पर फैसला लेते हैं। इससे व्यापार के लिए चीजों के आदान-प्रदान में आसानी होती है और देशों के बीच व्यापार बढ़ता है। द्विपक्षीय व्यापार और निवेश समझौते का उद्देश्य दोनों देशों के लिए नया बाजार खोलना और व्यापार को

बढ़ावा देना है। साथ ही दोनों को सभी क्षेत्रों में वस्तुओं और सेवाओं के व्यापार और निवेश में बाधाओं और मतभेदों को दूर करना था।[16]

भारत और यूरोपियन यूनियन के बीच व्यापार और निवेश के नियमों को लेकर मतभेदो के कारण द्विपक्षीय व्यापार और निवेश समझौते पर 2013 से ही वार्ता रद्द है। 15वें भारत एंव यूरोपियन संघ के शिखर सम्मेलन में दोनों के बीच तय हुआ की इस समझौते पर बात आगे बढ़ाने के लिए एक उच्च स्तरीय निवेश एंव व्यापार वार्ता (HLDTI) की जाए। एच.एल.डी.टी.आई की पहली बैठक 5 फरवरी 2021 को और दूसरी वार्ता का आयोजन 29 अप्रैल 2021 को आयोजित की जाएगी।[17] वार्ताओं के दौरान दोनों पक्षों ने द्विपक्षीय व्यापार और निवेश संबंध, पारस्परिक हित के बहुपक्षीय मुद्दे, बाजार तक पहुंच के मुद्दे, दोनों पक्षों के व्यापारियों और निवेशकों के लिए स्थितियों में सुधार, साथ ही आपूर्ति श्रृंखला को मजबूत करना जैसे मुद्दे पर चर्चा की। भविष्य में दोनों पक्षों के बीच समझौते को लेकर ओर सुधार की उम्मीद की जा सकती है, जो की दोनों को लाभ पहुंचाएंगी।

3. रणनीतिक संबंध

रणनीतिक संबंध कोई सरल व्याख्या नहीं है। संक्षिप्त शब्दों में यह अंतरराष्ट्रीय संबंधों का एक रूप है जो विभिन्न पक्षों के बीच होने वाले समझौते और उनकी आकांक्षाओं को दर्शाता है। यह सामान्य द्विपक्षीय संबंधों से अधिक प्रतिबद्धता प्रदर्शित करता है परंतु दोनों ही पक्षों की ओर से यह प्रतिबद्धता एक सैन्य गठबंधन बनाने की सीमा तक नहीं होती है। दूसरे शब्दों में, रणनीतिक साझेदारी अंतरराष्ट्रीय संबंधों में किन्ही दो पक्षों के बीच हितों के बंधन और अंतर्संबंध को मापने का एक पैमाना है, जो दोस्ती और सहयोग से ज़्यादा है, लेकिन जो कानूनी रूप से बाध्यता की सीमा तक प्रतिबद्धित नहीं है। रणनीतिक संबंध किसी पक्ष के दूसरे पक्ष के साथ संबंधों के वृहत क्षेत्र को दर्शाता है।[18]

भारत और यूरोपियन संघ एक दूसरे के लिए रणनीतिक क्षेत्र में लाभदायक साबित हो सकते है। हालाँकि दोनों के बीच ये संबंध पुराने नहीं है। यह कहा जा सकता है इन दोनों के बीच रणनीतिक संबंध पिछले दो दशकों में बढ़े है। 2002 तक, यूरोपियन संघ और भारत के संबंध का मुख्य बिन्दु आर्थिक सहयोग और विकास था। हालांकि, 2003 के शुरुआत के साथ यूरोपियन संघ अपनी सुरक्षा रणनीति में बड़े बदलाव कर रहा था। सामान्य रूप से यूरोपीय संघ दुनिया के साथ अपने संबंधों को नए तरीके से परिभाषित कर रहा था और विशेष रूप से भारत के साथ अपने रिश्ते बदलने पे जोर दे रह था।[19] सुरक्षा

रणनीति के नजरिए से यूरोपियन संघ ने समकालीन अंतरराष्ट्रीय राजनीति में महत्व और देशों के भविष्य की भूमिका को देखते हुए भारत सहित छह देशों की पहचान की, जिनके साथ उसने रणनीतिक साझेदार के रूप में संबंध बनाने पर जोर दिया।

2004 के बाद से, भारत और यूरोपीय संघ के बीच रणनीतिक साझेदारी विकसित हुई है। एक संयुक्त कार्यवाही योजना के द्वारा यूरोपियन संघ चार क्षेत्रों में रणनीतिक साझेदारी विकसित करने की दिशा में अग्रसर हुआ। रणनीतिक साझेदारी सहयोग के चार क्षेत्र है जो इस प्रकार है:- i) राजनीतिक संवाद और सहयोग; विवादों की रोकथाम के लिए सहयोग, आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष, जनविनाश के हथियारों पे रोक ii) सामरिक सहयोग iii) आर्थिक सहयोग, व्यापार और पर्यावरण iv) बोद्धिक एंव सांस्कृतिक सहयोग, सामाजिक और नागरिक समाज सहयोग।[20]

यूरोपियन यूनियन ने भारत के महत्व को स्वीकार किया और बहुत से क्षेत्रों में भारत के साथ मजबूत संबंध स्थापित करने की दिशा में अग्रसर हुआ। भारत का महत्व रणनीतिक क्षेत्र में बढ़ता जा रह है। भारत की बड़ी आबादी (एक अरब तीस करोड़ के आंकड़े को पार करते हुए), मध्यम वर्ग का विस्तार (अमेरिकी जनसंख्या का आकार से ज़्यादा), तीव्र आर्थिक विकास के साथ-साथ एक मजबूत अर्थव्यवस्था, मानव अधिकारों का समर्थन, कार्यात्मक लोकतंत्र में आस्था और वैश्विक सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आई.सी.टी) क्षेत्र में इसका नेतृत्व, रक्षा क्षेत्र में आधुनिकीकरण, भारत को एक उभरती राजनीतिक, आर्थिक और सैन्य शक्ति के रूप में आकार दे रहे हैं।[21]

2020 में, यूरोपीय संघ और भारत के 15वें शिखर सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में दोनों पक्षों के नेताओ के द्वारा रणनीतिक भागीदारी के लिए अगले पांच वर्षों का रोडमैप बनाया था। यूरोपीय संघ और भारत सुरक्षा, समृद्धि और सतत विकास के क्षेत्र में साझा हित रखते हैं। साथ में, वे दुनिया को सुरक्षित, अधिक स्थिर बनाने की अपनी भूमिका को समझते है। परिणामस्वरूप, वह इस रोडमैप के अनुसार विभिन्न क्षेत्रों जैसे कि विदेश नीति और सुरक्षा सहयोग, अनुसंधान और नवाचार, रोजगार और सामाजिक नीति, सूचना व संचार तकनीक, आदि में अपनी रणनीतिक भागीदारी के विकास को आगे बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध हैं।[22]

निष्कर्ष

वैश्विक स्तर पर भू-राजनीतिक परिदृश्य में बदलाव ने यूरोपियन संघ और भारत के रिश्तों में भी बदलाव किया है। स्वतंत्रता भारत और यूरोपियन संघ का रिश्ता, यूरोपियन संघ के वर्तमान स्वरूप में आने से पहले से है। शुरुआत में इनके बीच संबंध केवल आर्थिक मामलों तक सीमित थे। धीरे-धीरे ये संबंध राजनीतिक स्तर पर मजबूत हुए। उच्च स्तरीय वार्ता की शुरुआत दोनों पक्षों के राजनीतिक प्रमुख, मुख्य प्रशासनिक अधिकारी एंव मंत्रीओ की बातचीत से शुरू हुई। वर्ष 2000 में, प्रत्येक वर्ष शिखर सम्मेलन करने के निर्णय से दोनों के बीच के राजनीतिक संबंधो में बढ़ोत्तरी देखी गई, जिसका प्रभाव बाकी क्षेत्रों में भी देखा जा सकता है। द्विपक्षीय व्यापार समझौते पे दोनों पक्षों के बीच मदभेद होने के कारण इस समझौते पर वार्ता काफी समय से रद्द थी, हालाँकि दोनों ही पक्षों ने इस मुद्दे को सुलझाने की कोशिश दुबारा करने की सोची है।

रणनीतिक क्षेत्र में भारत की बढ़ती हुई भूमिका को यूरोपियन संघ ने पहचाना है, साथ ही कई संधियाँ एंव समझौते विभिन्न क्षेत्रों में किए गए है ताकि रणनीतिक साझेदारी को मजबूती मिल सके। 15वें शिखर सम्मेलन में 2025 तक की रणनीतिक साझेदारी का रोड़मॅप बनाया गया जिसमें सरकार से लेकर आम नागरिकों को प्रभावित करने वाले सभी विषय शामिल है। देखा जाए तो भारत और यूरोपियन संघ के संबंध उतार-चढ़ाव भरे रहे हैं और बदलती वैश्विक परस्थितिओं में दोनों को एक दूसरे की जरूरत है। भारत की वैश्विक मंच पे बढ़ती हुई भूमिका एंव शक्ति को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। दूसरी ओर भारत के लिए भी 27 देशों के यूरोपियन संघ के साथ अच्छे संबंध बनाए रखना और साथ ही भविष्य में इन रिश्तों को मजबूत करना जरूरी है। दोनों को ही उन क्षेत्रों एंव मुद्दों की पहचान करनी होगी जिसमें साझेदारी और सहयोग का फायदा दोनों पक्षों को हो।

संदर्भ सुची

[1] जॉन प्राइड(2008). द यूरोपियन यूनियन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

[2] मनोहर समाल. इंडिया-यूरोपियन यूनियन रिलेशन: फ्री ट्रैड एग्रीमेंट एण्ड आलाइड इशु. इंडियन इंटेरनेशल लॉ प्रोजेक्ट-पॉलिसी ब्रीफ़. https://www.researchgate.net/publication/353121637

[3] मेररियम जॉन. अ हिस्ट्री ऑफ मॉडर्न यूरोप. डब्ल्यू.डब्ल्यू. नॉर्टन कंपनी.

[4] जॉन प्राइड(2008). द यूरोपियन यूनियन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

[5] इंडिया-ई.यू. रिलेशन 2013, https://www.mea.gov.in/Portal/ForeignRelation/India-EU_Relations.pdf

[6] https://www.eeas.europa.eu/india/european-union-and-india_en?s=167#6733------
द यूरोपियन यूनियन एण्ड इंडिया–ई.यू. रिलेशन विद इंडिया.

[7] • अरुण एस. नायर. इंडिया-ई.यू. कानेक्टिविटी पार्टनर्शिप: पोटेंशल एण्ड चैलेंज. विकासशील देशों की अनुसंधान एंव सूचना प्रणाली. https://www.ris.org.in/sites/default/files/Publication/DP%20250%20Arun%20S%20Nair_1.pdf

[8] जॉन प्राइड(2008). द यूरोपियन यूनियन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

[9] ई.यू. 2020. ई.यू. इंडिया स्ट्रटीजिक पार्टनर्सशिप: अ रोडमेप टू 2025. (<https://www.consilium.europa.eu/media/45026/eu-india-roadmap-2025.pdf)

[10] वही

[11] द सपतांग थ्योरी: एलिमेंट्स ऑफ स्टेट. https://www.iilsindia.com/study-material/366411_1606765435.pdf

[12] बर्ट गेन्स और एम्मा हकह,(2020). रेकलिबरटींग ई.यू.- इंडिया रिलेशन- अ शिफ्ट अवेय फ्रॉम अ ट्रैड- बेस्ड पाटनरशिप. फिननिश इंस्टिट्यूट ऑफ इंटरनेशनल अफेर. https://www.fiia.fi/wp-content/uploads/2020/09/bp289_recalibrating-eu-india-relations.pdf

[13] मिनिस्ट्री ऑफ एक्सटर्नल अफेरयर्स(जून,2020). एम्बसी ऑफ इंडिया ब्रुसेल्स, इंडिया-ई.यू. बाइलैटरल ब्रीफ़. https://indianembassybrussels.gov.in/pdf/India_EU_Relations_unclassified.pdf

[14] वही

[15] वही

[16] वेनेसा फिरिर्र,(2016).मुक्त व्यापार समझतों (एफ.टी.ए) द्वारा व्यापार का उदारीकरण.फोकस इंडिया प्रकाशन दिसम्बर.

[17] मिनिस्ट्री ऑफ एक्सटर्नल अफेरयर्स(जून,2020): एम्बसी ऑफ इंडिया ब्रुसेल्स, इंडिया-ई.यू. बाइलैटरल ब्रीफ़.https://indianembassybrussels.gov.in/pdf/India_EU_Relations_unclassified.pdf

[18] स्ट्रटीजिक पार्टनर्सशिप: अ फ्रैम्वर्क ऑफ फॉरेन रिलेशन इन द ऐज ऑफ ग्लोबलिज़ैशन. वियतनाम लॉ लीगल फोरम. https://vietnamlawmagazine.vn/strategic-partnership-a-framework-of-foreign-relations-in-the-age-of-globalization-3437.html

[19] अरनों डोहमेन(2020). इंडिया पर्सेप्शन ऑफ द ई.यू.- इंडिया फ्री ट्रैड एग्रीमेंट एण्ड मिलिटरी कॉपरेशन विद इन द ई.यू. इंडिया स्ट्रटीजिक पार्टनर्सशिप. https://fid4sa-repository.ub.uni-heidelberg.de/4418/1/Indias%20perception%20of%20EU.pdf

[20] शांतनु चक्रबर्ती. इंडिया एण्ड द यूरोपियन यूनियन: स्ट्रटीजिक येट डिस्टन्ट पार्टनर्स?. https://sslkolegia.sgh.waw.pl/pl/KES/struktura/kue/publikacje/Documents/INDIA%20AND%20THE%20EUROPEAN%20UNION%20STRATEGIC%20YET%20DISTA

[21] राजेन्द्र जैन एण्ड गुलशन सचदेवा. इंडिया-ई.यू. स्ट्रटीजिक पार्ट्नर्शिप अ न्यू रोडमॅप. एशिया यूरोप जर्नल. https://doi.org/10.1007/s10308-019-00556-0

[22] ई.यू. एफ.टी.ए टॉकल्स लाइक्ली टू रेस्यूम ऑन पी.म.नरेंद्र मोदी पुश, द इंडियन एक्स्प्रेस 2015.http://indianexpress.com/article/business/business-others/eu-ft a-talks-likely-to-resume-on-pmnarendra-modi-push/ [accessed on 01.08.2015]

अध्याय 30

चीन की हिन्द महासागर रणनीति तथा भारतीय प्रतिक्रिया

क्षिप्रा शर्मा
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
कानोडिया पी. जी. महिला महाविद्यालय
जयपुर

वर्तमान समय में विश्व का सर्वाधिक व्यस्ततम व्यापारिक मार्ग, मलक्का व होर्मुज जैसे महत्त्वपूर्ण चोक पाइंट्स का केंद्र हैं, खनिज तेल, गैस व अन्य संसाधनों से समृद्ध हिन्द महासागर विश्व अर्थव्यवस्था व राजनीति के गुरूत्व केन्द्र के रूप में सम्पादित हो रहा है। जहाँ चीन व भारत के समानान्तर उभार अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था में एक प्रतिमान परिवर्तन है। हिन्द महासागर में निर्बाध परिवहन भारत व चीन दोनों के राष्ट्रीय हितों के लिए आवश्यक है। इसीलिए दोनों ही देश अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के साथ-साथ प्रतिक्रियात्मक रूप में भी अपनी नीतियाँ निर्धारित कर रहे हैं। चीन व भारत की महत्त्वाकांक्षाओं व क्षमताओं की प्रवृत्ति इस समय संभावित परिणामों को ध्यान में रखते हुए ठोस नीति प्रस्तुत करने का प्रयास कर रही है।

चीन की हिन्द महासागर की रणनीति

अपनी इन कमजोरियों को दूर करने के लिए चीन हिन्द महासागर में अन्य देशों के साथ आर्थिक व राजनीतिक संबंध मजबूत बनाने का प्रयास कर रहा है और इस क्षेत्र में अपना वर्चस्व बढ़ाने मे लिए हवाई और नौसैनिक क्षमताओं का विस्तार कर रहा है। साथ ही भूमि परिवहन लिंक बढ़ा रहा है। चीन की हिन्द महासागर के प्रति दृष्टिकोण परिवर्तन राष्ट्रपति हु जिन्ताओं के "सैन्य युद्ध हेतु नौसैनिक साझेदारी" के आह्वान से और मुखरित हो गया। साथ ही रसद विभाग के निदेशक ने भी इस विषय में यह कहते हुए ध्यान आकर्षित किया कि "चीन अब हिन्द महासागर को केवल भारतीय महासागर के रूप में स्वीकार नहीं कर सकता हम इस क्षेत्र में सशक्त संघर्ष को ध्यान में रख रहे हैं।1"

समुद्री हित सुरक्षित करने के प्रयासों को चीन की मिलिट्री स्ट्रेटजिक डॉक्यूमेंट, 2015 के द्वारा देखा जा सकता है जो तीन तत्वों पर निर्भर है-

पहला- 'वन बेल्ट वन रोड नीति' जो उसके आर्थिक हितों की रक्षा करने पर केन्द्रित है।

दूसरा-नौसेना के आधुनिकीकरण का कार्य करना जो उसकी सैनिक शक्ति को बढ़ाने पर केन्द्रित है। चीन की नौसेना ने एक समुद्र यानि की प्रशान्त महासागर पर केन्द्रित अपनी नीति को दो समुद्रों यानि प्रशान्त महासागर व हिन्द महासागर पर केन्द्रित किया है।

तीसरा-हिन्द महासागर के बंदरगाहों तक अधिक पहुँच बनाना है इसके लिए वह आर्थिक सहायता प्रदान कर इस क्षेत्र के देशों को 'ऋण जाल' में फंसाकर अपनी नौसेना की उपस्थिति दर्ज कर रहा है।

सिल्क रोड़ परियोजना चीन की एक महत्वाकांक्षी रणनीति है। यह बुनियादी ढांचा विकास परियोजना चीन को लगभग पूरी दुनिया के साथ भूमि और समुद्र से जोड़ती है। इस रणनीति के दो घटक है- प्रथम "बेल्ट अर्थात् सिल्क रोड इकोनोमिक बेल्ट (एसआरईबी) दितिय, है मेरिटाइम सिल्क रोड़ (एमएस आर)।2

2013 में घोषित इस क्षेत्र में योजना के प्रथम हिस्से, 'बेल्ट'में रेलवे, सड़क, गलियारों और पाइपलाइनों की मदद से चीन की पश्चिम एशिया होते हुए, यूरोप से जोड़ने की विशाल योजना है।

दूसरा भाग चीन की सिल्क रोड़ रणनीति का सामुद्रिक आयाम है जिसमें चीन के तटीय भाग दक्षिण चीन सागर को हिन्द महासागर होते हुए यूरोप से जोड़ने की योजना है। यह दक्षिण पूर्व में मध्यचीन से उत्तरी ईरान, पश्चिमी ईराक, सीरिया व तुर्की पहुँचेगा। सिल्क रोड़ इस्तांबुल को यूरोप से जोडेगा। यूरोप में बुल्गारिया, रोमानिया, चेक रिपब्लिक और जर्मनी आपस में जुडेंगे। जर्मनी से यह नीदरलैण्ड जाएगा जो 'बेल्ट' मेरिटाइम रोड़, से जुड़ेगा। विजय सखूजा के अनुसार मेरिटाइम सिल्क रोड़ परियोजना ने भारत के लिए एक दुविधा पैदा कर दी है। जहाँ एक तरफ विदेशी निवेश को आकर्षित करना, विशेष रूप से निर्माण उद्योग में, वर्तमान मोदी सरकार की मुख्य नीति है और एम.एस.आर. परियोजना भारत के लिए विकास के अवसर ला सकती है वहीं दूसरी तरफ, भारतीय नीति निर्माताओं की, यह सोच कि एम.एस.आर. भारत के लिए एक खतरा है, भारत सरकार की इस बारे में सतर्कता को बढ़ा रही है।3

मेरिटाइम सिल्क रोड ग्वांग्झो से शुरू होगी जो ग्वांग्झो, बिहाई और हाइकू हैनान होते हुए मलक्का स्ट्रेट के निकट मलेशिया तक जाएगा। यहां से इसे भारत के कलकत्ता को प्रस्तावित करना पडेगा। वहां से श्रीलंका के कोलम्बों और हिन्द महासागर को पार करते हुए केन्या पहुँचेगा। केन्या से उत्तर में चलता हुआ हार्नआफ अफ्रीका, लालसागर व भूमध्यसागर पार करता हुए एथेंस होता हुआ इटली के वेनिस पहुँचेगा। 4 इस महत्वाकांक्षी परियोजना में लगभग 65 देश भागीदार है जो विश्व की लगभग 60 प्रतिशत लगभग 44 अरब जनसंख्या तथा विश्व जीडीपी का 29 प्रतिशत भाग रखते है। बेल्ट रोड़ योजना के तहत 6 गलियारें प्रस्तावित है-

1. चीन पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (सीपीईसी)
2. न्यू यूरेशियन लैण्ड ब्रिज
3. चीन-मध्य-एशिया-पश्चिम एशिया आर्थिक गलियारा।

4. चीन-मंगोलिया-रूस-आर्थिक गलियारा
5. चीन-इंडोचाइना-प्रायद्वीप आर्थिक गलियारा
6. बांग्लादेश-चीन-भारत-म्यांमार आर्थिक गलियारा

भू-सामरिक संदर्भ में समुद्री सिल्करोड़ का उद्देश्य चीन तक कच्चे माल की बेरोकटोक आपूर्ति सुनिश्चित करने हेतु महत्वपूर्ण समुद्री व्यापार मार्गों और विभिन्न विदेशी स्थलों पर बींजिग का नियंत्रण स्थापित करना है।5

चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (सी.पी.ई.सी.)

चीन की सामरिक रणनीतियों को क्रियान्वित करने के लिए पाकिस्तान सबसे महत्त्वपूर्ण देश है जो परम्परागत रूप से भारत का विरोधी रहा है। चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा (सी.पी.ई.सी.) एक जमीनी परिवहन गलियारा है जो ग्वादर को अरब सागर से होते हुए चीन के काशगर शहर तक जोड़ता है। इस गलियारा के निर्माण से भारत चिन्तित है क्योंकि यह कश्मीर के इस हिस्से से गुजरेगा जिसे भारत विवादास्पद मानता है। भारत यह भी मानता है कि चीन ग्वायर में अपना नौसैनिक आधार बना लेगा जिससे भारत की हिन्द महासागर क्षेत्र पर पकड़ कमजोर जाएगी।

मोतियों की माला रणनीति

हिन्द महासागर में चीन के रणनीतिक उद्देश्यो को पूरा करने की दिशा में स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्सएक बड़ी छलांग है जिसके द्वारा चीन द्वारा हिन्द महासागर के तटीय देशों नौसैनिक रूप में अपने आपको स्थापित करने का प्रयास कर रहा है जैसे ग्वादर (पाकिस्तान), हंबनटोटा (श्रीलंका), क्यूपक्को वकोकोद्वीप (म्यांमार) जिसके पोर्ट, मराओ द्वीप (मालद्वीप), चटगांव (बंग्लादेश), सेशल्स, जिबूती, बागामोयों (तंजानिया), लामू (केन्या) आदि।

मोतियों की माला (स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स) मोतियों की माला हिन्द महासागर में चीन से सम्बन्धित एक भू-राजनीतिक सिद्धान्त है। भू-राजनीतिक सिद्धांत के रूप में इसका प्रयोग अमेरिका के रक्षा विभाग का आन्तरिक प्रतिवेदन ''एशिया में उर्जा का भविष्य' में किया गया। अवधारणात्मक रूप में सबसे पहले यह अमेरिकी चिंतन मण्डल के बुद्धिजीवी बूज एलन हेमिल्टन की परिकल्पना के रूप में 2005 में सामने आयी जिसमें यह माना गया कि चीन हिन्द महासागर रिम के आसपास आधारभूत ढांचे का निर्माण कर यहां अपनी नौसैनिक उपस्थिति को बढ़ाने का प्रयास करेगा।6 चीन की इस रणनीति को वास्तव में भारत के चारों और नौसैनिक उपस्थिति बढ़ाने और बन्दरगाहों की स्थापना द्वारा, भारत को घेरने की कोशिश के रूप में देखा जा रहा हैः-

हिन्द महासागर में भारतीय प्रयास

भारत ने चीन की इस रणनीति का जबाव देने के लिए मुख्यतः तीन कदम उठाए है:
-

पहला, अमेरिका व उसके मित्र राष्ट्र (जापान व आस्ट्रेलिया) से मजबूत संबंध बनाना। इन देशों के साथ भारत द्विपक्षीय व बहुपक्षीय स्तर पर लगातार प्रयासरत है। द्विपक्षीय स्तर पर भारत 2.2 वार्ता के माध्यम से प्रयास कर रहा है। 2.2 वार्ता दो देशों के बीच विदेश

व रक्षा क्षेत्रों के सहयोग हेतु होती है। भारत की वार्ता मंत्री स्तर पर जापान व अमेरिका तथा सचिव स्तर पर आस्ट्रेलिया के साथ होती है। भारत व अमेरिका के विदेश मंत्रियों एवं रक्षा मंत्रियों के बीच आयोजित प्रथम 2.2 वार्ता 6 सितम्बर, 2018 को नई दिल्ली में हुई जिसमें"कम्यूनिकेशन कंपोर्टेबिलिटी एण्ड सिक्योरिटी एग्रीमेंट पर करार हुआ।7 भारत व अमेरिका के बीच संयुक्त नौ सैनिक अभ्यास भी 1992 से चल रहा है जिसमें 2015 में जापान को स्थायी सदस्य के रूप में शामिल किया गया तथा आस्ट्रेलिया व सिंगापुर इसमें अस्थायी सदस्य हैं भारत व जापान को नौसैनिक अभ्यास 'जिमैक्स', रक्षा अभ्यास धर्मरक्षक और वायुसेना अभ्यास शिन्भुमित्र, तथा आस्ट्रेलिया के साथ असिडेंक्स द्विपक्षीय अभ्यास भी इस दिशा में भारतीय प्रयासों के बड़े उदाहरण हैं।

भारत की रणनीति का दूसरा पहलू अपने पड़ोसीदेशों व हिन्द महासागर मे द्वीपीय देशों से संबंध सुधारना है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी भारतीय विदेश नीति में लंबे समय से चली आ रही वर्जनाओं को तोड़ रहे हैं तथा 2014 में अपने प्रथम कार्यकाल के प्रारम्भ में सार्क और 2019 में द्वितीय कार्यकाल के प्रारंभिक उत्सव में बिम्सटेक देशों को बुलाकर अपनी ' पड़ोसप्रथम नीति' का अनुपालन कर इस क्षेत्र के देशों को महत्त्व प्रदान करके यहाँ साझेदारी की दिशा में कदम बढ़ाया है। अपनी विदेश नीति में सेशल्स व मॉरीशस जैसी द्वीपीय देशों को महत्त्व प्रदान किया तथा भारत अपने आप को यहाँ शुद्ध सुरक्षा प्रदाता/नेट सिक्योरिटी प्रोवाइडर के रूप में स्थापित करने का प्रयास कर रहा है। जिसकी अभिव्यक्ति 2009 के शंगरी विधि संवाद में भी की गई।

भारत की रणनीति का तीसरा पहलू उसकी आन्तरिक सैनिक शक्ति को मजबूत करना है। भारत में आज एक अच्छी तरह स्थापित मिसाइल विकास कार्यक्रम है जिसमें एंटी नाग मिसाइल से लेकर इंटरकांटिनेंटल अग्नि मिसाइल प्रणाली भी शामिल है। परमाणु क्षमता विकास के साथ-साथ बैलेस्टिक मिसाइल रक्षा तकनीकी, सेटेलाइट तकनीकी का विकास किया है। भारतीय नेवी के प्रमुख वाइज एडमिरल श्री मुरूगेरून ने स्पष्ट किया है कि भारत की 2027 तक 200 नौसेना जहाज शामिल करने की योजना है। हिन्द महसागर में निहित खतरे को देखते हुए क्षमता वृद्धि हुई 'आईएनएस विक्रमादित्य, आईएनएस विक्रान्त, आईएनएस अरिहन्त, आईएनएस चक्र जैसी पनडुब्बियों को शामिल किया गया है हाल ही में 2018 में आईएनएस 'करंज' की मंजूरी दी है तथा अंडमान निकोबार को भारतीय सशस्त्र बलों की पहली और एकमात्र थियेटर कमान की स्थापना की है ताकि मलक्का जलडमरूमध्य की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके।

एशिया अफ्रीका ग्रोथ करिडोर-

भारत चीन के बेल्ट एवं रोड प्रोजेक्ट से मुकाबला करने के लिए जापान के साथ मिलकर भी प्रयास कर रहा है एएजीसी भारत व जापान की महत्वकांक्षी परियोजना है जिसका उद्देश्य अफ्रीका में गुणवत्ता के बुनियादी ढांचें को विकसित करने के लिए भारत जापानी सहयोग है जो डिजिटल कनेक्टिविटी का पूरक हैं इस कोरिडोर में चार मुख्य घटक प्रस्तावित हैः-

- पहला, विकास और सहयोग परियोजनाएं
- दूसरा, गुणवत्ता के बुनियादी ढांचे और संस्थागत कनेक्टिविटी
- तीसरा, क्षमता व कौशल विकास
- चैथा, लोगों की साझेदारी (पीपल टू पीपल कनेक्टिविटी)

डिजिटल कनेक्टिविटी एशिया और अफ्रीका के बीच नवीन प्रौद्योगिकी और सेवाओं के विकास का भी समर्थन करेगी। एशिया और अफ्रीका के बीच विकास के अपने अनुभवों को साझा करने की गुंजाइश है।

अन्तर्राष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारा

आई एन टी सी नई दिल्ली की चीन की बी आई आर नीति के समानान्तर संयोजकता पहल के रूप में चलने वाला गलियारा है जो भारत को ईरान के माध्यम से यूरोप से जोड़ेगा और भारत तथा यूरोशिया के बीच सामानों के परिवहन में लगने वाले समय और लागत को काफी कम कर देगा।

यह गलियारा भूमि और समुद्र आधारित 7200 किलोमीटर लंबा नेटवर्क है जिसमें रेल, सडक और जल मार्ग शामिल है जिसका उद्देश्य रूस, ईरान, मध्य एशिया भारत और यूरोप के बीच व्यापार को बढ़ावा देने के लिए माल दुलाई के लिए लागत और यात्रा के समय को कम करना हैं। यह भारत, रूस व ईरान की त्रिपक्षीय परियोजना है, जो 2002 में शुरू की गई।

भारत लुक ईस्ट से एक्ट ईस्ट की ओर - भारत ने चीन के भारत को घेराव की नीतियों को देखते हुए अपने पड़ोसीऔर सुदूर पड़ोससे बेहतर सम्बन्धों की दिशा में अपने इस कदम बढ़ने के लिए, अपनी नीति को 'लुक ईस्ट से एक्ट ईस्ट' में परिवर्तित किया है। भारत की पूर्व की ओर देखो नीति 1991 में नरसिम्हाराव सरकार द्वारा दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अर्थव्यवस्था को एकीकृत करने के प्रयास के रूप में शुरू किया गया था। जिसे 2001-02 में नीति के दूसरे चरण में सुदूर पूर्व अर्थात प्रशान्त क्षेत्र तक बढा दिया गया क्योंकि यह क्षेत्र पूर्वोत्तर भारत की सांस्कृतिक विरसत से जुडा है। एडमिरल प्रकाश के अनुसार भारत के घेराव की चीन की नीति की, जबसे उपयुक्त प्रतिक्रिया पड़ोसीदेशों से आत्मीयता पूर्ण सम्बन्धों का निर्माण करना है।8 नवम्बर 2014 में पूर्व एशिया शिखर सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने एक्ट ईस्ट एशिया नीति की घोषणा की। यह एशिया प्रशान्त क्षेत्र में विस्तारित पड़ोस पर केन्द्रित है। इसका उद्देश्य एशिया प्रशान्त क्षेत्र के देशों के साथ आर्थिक सहयोग, सांस्कृतिक संबंधों को बढ़ावा देना तथा रणनीतिक संबंधों को विकास करना हैं।9 उत्तर-पूर्वी क्षेत्र के राज्यों में उच्च स्तरीय जुड़ाव हेतु द्विपक्षीय, क्षेत्रीय व बहुपक्षीय स्तरों पर संलग्नता को बढ़ाना है।

भारत का उत्तर पूर्व, एक्ट ईस्ट एशिया की प्राथमिकता मे है यह नीति भारत के उत्तर पूर्व और आसियान क्षेत्र के बीच एक अंतरफलक प्रदान करता हैं इस नीति की प्रमुख परियोजनाओं में कलादान मल्टी-मीडिया मॉडल प्रोजेक्ट, भारत म्यांमार-थाइलैण्ड त्रिपक्षीय राजमार्ग और रि-टिडिम रोड परियोजना आदि शामिल है। आसियान रोजनल फोरम

(एआरएफ) और पूर्वी एशियाई शिखर सम्मेलनके अलावा भी भारत बिम्सटेक, एशिया सहयोग संवाद (एसीडी), मेकांग गंगा सहयोग, और हिन्द महासागर तटीय सहयोग संगठन जैसे मंचों पर सक्रिय भूमिका निभाता रहा है। भारत इस नीति के क्रियान्वयन की दिशा में लगातार प्रयासरत है। भारत के प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति द्वारा निरन्तर पूर्वी एशियाई, आसियान देशों में यात्रा कर साझेदारी को बढ़ने के प्रयास किये जा रहे है। भारत ने म्यांमार, थाइलैण्ड तथा अन्य आसियान देशों के साथ आर्थिक साझेदारी व विस्तार को बढ़ावा देने पर जोर दिया हैं आसियान से परे अपने भौगोलिक प्रभाव क्षेत्र का निस्तार करने हेतु जापान, प्रशान्त द्विपीय राष्ट्र, दक्षिण कोरिया, और मंगोलिया जैसे देशों को शामिल करने हेतु निरन्तर प्रयासरत है। (बीसीआईएम) भूटान, चीन, भारत, म्यांमार आर्थिक गलियारा भी इस दिशा में एक प्रभावी प्रयास हैं जो भारत के कोलकता को चीन के यूनान प्रांत में कुनमिंग से जोडता है।

कलादान मल्टी मॉडेल प्रोजेक्टः-

कलादान प्रोजेक्ट भारत की एक्ट ईस्ट एशिया के क्रियान्वयन का प्रभावी उदाहरण है। इस परियोजना के माध्यम से मुख्य भूमि को परिवहन, समुद्र, और सडक के तीनों साधनों के माध्यम से उत्तर पूर्व से जोडा जाएगा परियोजना के ढांचे पर हस्ताक्षर 2 अप्रैल 2008 को किये गये थे के उपरांत इस परियोजना के तहत सड़क निर्माण कार्य अप्रैल 2018, से प्रारंभ किया गया है जो विदेशी भूमि पर भारत की सबसे बड़ी सफल विकासात्मक गतिविधि है।

एक्ट ईस्ट एशिया नीति से भारत की रणनीति में अभियान व हिन्द व प्रशान्त क्षेत्र के राष्ट्रों के साथ भारतीय संबंधों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा हैं भारत म्यांमार, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया, खाडी सहयोग परिषद के देशो के साथ नौसैनिक व सैन्य संबंधों को प्रगाढ बनाने के प्रयास कर रहा है।10

प्रोजेक्ट मौसम, स्पाइस रूट-

भारत सरकार हिन्द महासागर में प्राचीन साझा सांस्कृतिक विरासत के आहवान द्वारा भी इस क्षेत्र के देशों के साथ सहयोगात्मक संबंध सत्यापित करने की दिशा में प्रयासरत है। “मेरेटाइम रूट्स एंड कल्चरल लेंडस्केप प्रोजेक्ट” (मौसम) के तहत भारत समान इतिहास और साझा संस्कृति के आधार पर हिन्द महासागर के देशों को बांधने का आहवान कर रहा हैं ऐतिहासिक संबंधों का आहवाहन कर रहा है।

इस प्रोजेक्ट के जरिये पूर्वी एशियाई देशों, श्रीलंका, भारतीय उपमहाद्वीप, पूर्वी अफ्रीका, अरब प्रायद्वीप आदि के साथ संबंध विस्तार की संभावनाओं की तलाश किया जाना है। जून 2014 में विश्व सांस्कृतिक समिति की 38 वीं बैठक में पहली बार प्रोजेक्ट की शुरूआत हुई जिसमें हिन्द महासागर के उन देशों को शामिल किया हैं जैसे श्रीलंका, पाकिस्तान, चीन, काट, ओमान, मोजाम्बिक, मलेशिया, मालदीव, लेबवान, मेजगास्कर, जोईन, कुवैत, ईरान, केन्या, ईराक, कोमोरोस, इंडोनेशिया, बंग्लादेश, कंबोडिया, बहरीत, बांग्लादेश आदि।

परियोजना के दो लक्ष्य हैः-

- वृहद स्तर पर, इसका लक्ष्य हिन्द महासागर के देशों के मध्य सांस्कृतिक सरोकारों और मूल्यों की बेहतर समझ विकसित करने हेतु इन देशों को संचार से जोडना।
- सूक्ष्म स्तर पर, सामूहिक वातावरण में राष्ट्रीय संवर्धनको समझना व प्रोत्साहित करना है।

इसी तरह की एक अन्य पहल केरल राज्य सरकार की "स्पाइस रूट परियोजना" हैं जो "मुजरिस हेरिटेज प्रोजेंक्ट" (एमएसपी) के तहत प्राचीन स्पाइस रूट को पुनर्जीवित करने के लिए भारत सरकार द्वारा समिर्पित हैं। स्पाइस रूट प्रोजेक्ट का उद्देश्य प्राचीन मसाला मार्ग के साथ 31 देशों के साथ समुद्री व्यापार को फिर से स्थापित करना है। जो पर्यटन को बढ़ावा देने और सांस्कृतिक संबंधों को पुनर्जीवित करने में मदद करेगा। केरल के मुजारिस बंदरगाह पर केन्द्रित परियोजना 940 मिलियन रूपये की लागत से शुरू की गई। जो कि सबसे बडी संरक्षण परियोजनाओं में से हैं जिसका उद्देश्य 150 वर्ग किमी के क्षेत्र में 3000 से अधिक वर्षो की संस्कृति को संरक्षित करना हैं। एमएचपी के प्रथम चरण का उद्घाटन फरवरी 2016 में राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी द्वारा किया गया।

भारत की सागर रणनीति

सागर नीति एक सुरक्षित संरचना निर्माण के लिए भारत की दृष्टि को स्पष्ट करती है जिसमें हिन्द महासागर क्षेत्र में मुख्य भूमि और द्वीपों की रक्षा करना, समुद्री पड़ोसियों की क्षमता को मजबूत करना और शांति तथा सुरक्षा को आगे बढ़ाना शामिल हैं। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने 12 मार्च, 2015 को मॉरीशस में 'सिक्योरिटी एण्ड ग्रोथ फॉर ऑल इन द रीजन' (एसएजीएआर) में यह निर्धारित किया कि हिन्द महासागर में सुरक्षा हेतु प्राकृतिक आपदा, अन्य खतरे जैसे आतंकवाद, से निपटने के लिए राज्यों को मिलकर कार्य करना चाहिए।11

सागरमाला परियोजनाः-यह बंदरगाह आधारित प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष विकास को सक्षम करने की पहल है जिसे 2017 में भारत सरकार द्वारा प्रारंभ किया गया है। इस परियोजना का परिकल्पनात्मक आधार बाजपेयी सरकार द्वारा 2003 में रखा गया था। मुख्यतः बंदरगाहों के बुनियादी ढांचे को विकसित करने के उद्देश्य से प्रेरित इस परियोजना में 7500 कि. मी. लंबी समुद्री तट रेखा के निकट बंदरगाहों के आस पास का विकास जैसे तटवर्ती क्षेत्रों में बसे लोगों के सतह विकास को प्रोत्साहित करना, बडे तटवर्ती शहरों को समुद्री, सडक व वायु मार्ग से जोड़ना, बंदरगाहों से माल की आवाजाही के लिए कुशल, बुनियादी, त्वरित तथा किफायती सुविधा उपलब्ध करवाना। नये बंदरगाहों का निर्माण पुरानों का आधुनिकीकरण आदि हैं। इसमें 12 स्मार्ट शहर, और विशेष आर्थिक जोन के साथ 8 तट राज्यों , गुजरात, महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल को शामिल किया गया है।

सागरमाला तथा मौसम दोनों परियोजनाएं क्षेत्रीय एकीकरण के लिए एक व्यापक भारतीय रणनीति के महत्वपूर्ण स्तंभो के रूप में कार्य कर रही है।

नेकलस ऑफ डायमंडः- यह भारतीय रणनीति चीन की मोतियों की माला नीति की एक जवाबी रणनीति है जिसमें भारत अपने नौसैनिक अड्डों का विस्तार कर रहा है तथा हिन्द महासागर के देशों के साथ रणनीतिक साझेदारी बढ़ा रहा हैं। साथ ही यह चीन को हिन्द महासागर में उसके प्रभाव क्षेत्रों के घेरने की कोशिश है।

भारत के सामरिक अड्डेः-

2016 में प्रधानमंत्री नरेन्द्र ने इस बंदरगाह के निर्माण के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किये। ईरान का चाहबहार बंदरगाह अफगानिस्तान तथा मध्य एशिया के लिए कई महत्वपूर्ण व्यापरिक मार्ग प्रदान करता है। साथ ही यह पाकिस्तान के ग्वादर बंदरगाह से काफी करीब है जो चीनी गतिविधियों पर निगरानी रखने के लिए भी उपयोगी होगा।

चांगी नेवल बेस:-भारत-सिंगापुर ने 2018 में नेवी कॉरपोरेशन के लिए द्विपक्षीय समझौते पर हस्ताक्षर किये। इस समझौते ने भारतीय नौ सेना को इस आधार पर सीधी पहुंच प्रदान की हैं इसमें भरतीय नौ सेना के जहाजों को इस अड्डे पर ईधन भरने की सुविधा प्रदान की गई है। यह भारत के लिए काफी लाभदायक माना जा रहा है। क्योंकि मलक्का जलडमरू विश्व में सबसे महत्वपूर्ण सबसे व्यस्त और प्रशान्त महासागर के बीच प्राथमिक शिपिंग लेन है। यह मार्ग वहां भारतीय उपस्थिति के लिए काफी महत्वूपर्ण है।

सबांग पोर्ट, इण्डोनेशिया:-2018 में भरत को सबांग पोर्ट तक सैन्य पहुँचे मिली जो कि मलक्का चैनल के प्रवेश द्वार पर स्थित है।

डुकम पोर्टओमान:-2018 में इण्डोनेशिया में संबंग पोर्ट के बाद भारत को एक और अन्य सैन्य सुविधा मिली है। डुक्म पोर्ट ओमान के दक्षिण पूर्वी समुद्री तट पर स्थित है यह बंदरगाह पारस की खाड़ी से भारत के कच्चे माल आयात को सुगम बनाता हैं साथ ही यह चीन की मोतियों के हार के दो मुख्य मोतियों (बंदरगाहों) अफ्रीका के जिबूती व पाकिस्तान के ग्वादर के बीच स्थित है।

भारत ने 2015 में सेशल्स के साथ अजेक्शन द्वीप पर भी ऐसा ही समझौता किया था जो कि सेशल्स की आन्तरिक राजनीति के कारण फिलहाल रद्द कर दिया गया हैं परन्तु भारत का प्रयास है कि सेशल्स पर भी भरत को नौ सैनिक अधिकार प्राप्त हो क्योंकि सेशल्स हिन्द महासागर का महत्वपूर्ण द्वीपीय राज्य है।

वियतनाम के साथ भारत अपने संबंधों को निरन्तर मजबूत कर रहा हैं अब तक ब्रह्मोस मिसाइल और 4 गरश्ती नौकाएं वियतनाम को विक्रय कर चुका हैं

निष्कर्ष

भारत व चीन दोनों ही हिन्द महासागर की उभरती हुई ऐसी शक्तियाँ है जिनके लिए सामरिक, आर्थिक, व्यापारिक दृष्टि से इस क्षेत्र में अपने आप को शक्तिशाली बनाए रखना आवश्यक है। जहाँ चीन मानता है कि दुनिया बहुध्रुवीय हो और एशिया एक ध्रुवीय वहीं भारत की धारणा है कि दुनिया और एशिया दोनों बहुध्रुवीय हो लेकिन अमेरिका मानता है कि "दुनिया एक ध्रुवीय हो लेकिन एशिया बहुध्रुवीय हो।" चीन अपने व्यापारिक, आर्थिक हितों की सुरक्षा हेतु यहाँ नीतिगत बदलाव ला रहा है। वहीं हिन्द महासागर का सबसे प्रतिष्ठित व

जिम्मेदार देश होने के नाते भारत की भूमिका यहाँ विशेष महत्त्व रखती हैं। चीन व भारत दोनों ही नौ सैनिक, द्विपक्षीय बहुपक्षीय सभी प्रकार से अपने हितों की दिशा में अग्रसर है।

सन्दर्भ सूची

1. डी.एस. राजन, ”चाइनाज इन द इण्डियन ओसनः कॉम्पीटिंग प्रायोरिटीज, ”इन्स्टीट्यूट ऑफपीस एण्ड कॉन्फ्लिक्ट स्टडीज, आर्टिकल-4302, फरवरी 10, 2014. http://www.ipcs.org/article/india/china_in_the_ Indian_Ocean_competing_priorities-4302.html
2. सखुजा विजय, ‘शी जिनपिंग एण्ड मेरिटाइम सिल्क रोडः द इण्डियन डायलमा, इन्स्टीट्यूट ऑफपीस एण्ड कॉन्फिलक्ट स्टडीज, 15 सितम्बर, 2014.
3. शी जिनपिग्स मेरिटाइम सिल्क रोड़ गेट्सय की बैंकिंग अहेड ऑफसाउथ एशिया विजिट, द इकॉनामिक टाइम्स (मुम्बई), 12 सितम्बर, 2014.
4. फ्लोवर चाल्स एण्ड हॉर्नस्बी ल्यूसी, ”चाइनाज ग्रेट गेमः रोड टू ए न्यू एम्पायर, फिनेंशियल टाइम्स, 13 अक्टूबर, 2015.
5. स्कॉट डेविड ”द ग्रेट पॉवर ग्रेट गेम बिटविन इंडिया एण्ड चाइनाः द लॉजिक आॅफ ज्योग्राफी जियोपॉलिटिक्स 13(1), 2008% 1&26 http://www.com/openusl?gennre=article&issu=1465%-21465%2d0045&volume=13&issue = 1& page =1
6. टुडेज मार्केट डाउन ऑफन्यू ऐरा, सीपीईसी ड्रीमस कम टू एज ग्वादर पोर्ट गोज ओपन, डाउन, कॉम 21, जून 2017.
7. इंडिया, यू.एस. टू साइन इंडस्ट्रियल सिक्योरिटी एग्रीमेंट एट 2$2 डायलॉग, द हिन्दू (नई दिल्ली) 24 नवम्बर, 2019.
8. कम्लेमन मिशेल, इंडियाज एक्ट व ईस्ट फॉरेन पॉलिसी 17 मई, 2016
9. इंडिया-म्यांमार ट्रांसपोर्ट प्रोजेक्ट हिट्स रोड़ ब्लॉक द हिन्दू, नई दिल्ली, 2 मई, 2012.
10. मुखर्जी, एम्बेसेडर भास्वती, इंटरनेशनल रिकग्नेशन ऑफइंडियाज, वल्र्ड हैरिटेज न्यू एक्साइटिंग प्रोजेक्अ ऑफनद अनविल, मिनिस्ट्री ऑफ एक्सटरनल अफेयर्स जुलाई 10, 2014. http://www.mea.gov.in/in-focus-article-htm?23601/International+recognation+of+India+World & Heritage news exciting+pojcets+on+anvil.
11. पी.एम. मोदी, स्पीच कमिशनिंग, ‘सागर’ इन द इण्डियन, ओसन, द हिन्दू, 26 मई, 2015.

अध्याय 31

दक्षिण एशिया में भारतीय विदेश नीति के आधारभूत आयाम

प्रो. नावेद जमाल
राजनीति विज्ञान विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

नीतीश कुमार
पीएचडी शोध छात्र
राजनीति विज्ञान विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया

बदलते वैश्विक परिप्रेक्ष में भारत की विदेश नीति का स्वरूप भी व्यापक रूप में उभर कर सामने आया है। प्रारंभ से ही भारत अपने विदेश नीति को काफी प्रभावशाली तरीके से बनाता एवं उसका संचालन करता आ रहा है ताकि अपने 'राष्ट्रीय हितों' को पूरा कर सके। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से भारत विश्व के प्रत्येक देश के साथ अपनी नीतियों को अपने सिद्धान्तों और मूल्यों के अनुरूप निर्धारित करता रहा है, जिसके माध्यम से यह अपने मूल्यों और सिद्धान्तों के साथ बिना समझौता किये अपने राष्ट्रीय हितों की प्रासंगिकता को बनाए रख सका।

भारत अपनी विदेश नीतियों का निर्धारण विश्व के प्रत्येक देश के साथ अपने राष्ट्रीय हितों की प्रकृति के अनुरूप करता रहा है और जब हम दक्षिण एशियाई देशों की बात करते है तो इसमें भारत की विदेश नीति की प्रासंगिकता सबसे ज्यादा है। भौगोलिक दृष्टि से भारत की विदेश नीति के निर्धारण एवं संचालन में दक्षिण एशिया का संदर्भ सबसे व्यापक रूप में उभर कर सामने आता है। भारत एवं दक्षिण एशिया के अन्य देशों के संबंधों एवं इनके बीच परस्पर निर्भरता व सीमाओं का अध्ययन किये बिना भारत की विदेश नीति का सही तरीके से मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। दक्षिण एशिया का प्रत्येक देश राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, भौगोलिक आदि प्रत्येक स्तर पर एक-दूसरे को प्रभावित करता है। कई देशों के बीच आपसी भौगोलिक सीमाओं के जुड़ाव के साथ-साथ इनके इतिहास में भी गहरा अंतःसंबंध है।

इसका प्रत्यक्ष प्रभाव इनकी विदेश नीतियों के ऊपर भी अनिवार्यतः पड़ता है। ये नीतियाँ भारतीय जनमानस को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती हैं । अतः दक्षिण एशिया के संदर्भ में भारत की विदेश नीति का अध्ययन काफी प्रासंगिक हो जाता है।

उद्देश्य और सिद्धान्त

भारतीय विदेश नीति के आधारभूत संरचना को समझने के लिए इसके उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों का मूल्यांकन करना अनिवार्य हो जाता है। इसी के माध्यम से हम दक्षिण एशिया के संदर्भ में विदेश नीति की अवधारणा का सही तरीके से मूल्यांकन कर पायेंगे। भारतीय विदेश नीति के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के निर्धारण में देश के इतिहास, विरासत, व्यक्तित्व, विचारधाराएँ आदि संरचनाओं का अभिन्न योगदान है। इसी के माध्यम से इन मूल्यों का निर्धारण होता है। इस संदर्भ में पं. जवाहर लाल नेहरू ने काफी सार्थक टिप्पणी की है "यह नहीं समझना चाहिए कि भारत ने एकदम नये राज्य के रूप में कार्य आरम्भ कर दिया है। इसकी नीतियाँ हमारे अतीत व वर्तमान तथा राष्ट्रीय आंदोलन के विकास तथा इसके विभिन्न आदर्शों पर आधारित है।"[1] भारतीय विदेश नीति के अध्ययन में दो प्रमुख विचारधाराएँ स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आती हैं जिसका स्पष्ट प्रभाव इसके उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के ऊपर दिखाई देता है। इसमें एक धारा के अन्तर्गत मित्रता, सहयोग, शांति, विश्व-बंधुत्व व अहिंसा के मूल्य आते हैं जिनका संबंध अशोक, महात्मा बुद्ध व गाँधी के विचारों से है। इन मूल्यों में सबसे ज्यादा जोर साध्य के साथ-साथ साधनों की पवित्रता के ऊपर भी है। वहीं इसकी दूसरी धारा यर्थाथवादी मूल्यों के साथ जुड़ी है, जिसमें कौटिल्य के साथ-साथ मैक्यावली के विचारों से काफी निकटता के दर्शन होते है। अतः ये दोनों धाराएँ भारतीय विदेश नीति के उद्देश्य एवं सिद्धान्तों के साथ काफी गहराई के साथ मेल खाती हैं।

[1] विमल प्रसाद, ओरिजन ऑफ इंडियाज फॉरेन पालिसी: दा इडियन नेशनल कांग्रेस एण्ड वल्ड अफैयर्ज, 1885-1945, कलकत्ता, 1965

जब दक्षिण एशिया के संदर्भ में भारतीय विदेश नीति का मूल्यांकन करते हैं तो इसके लक्ष्य के अन्तर्गत विदेश नीति का निर्धारण, राजनीतिक स्वतंत्रता एवं बाह्य सुरक्षा को प्रोत्साहित करने के संदर्भ में राष्ट्रीय हित की रक्षा एवं उसे बढ़ावा देने की बात आती है।

दक्षिण एशियाई देशों में एक समान विशेषता है। वह यह कि इसके लगभग सभी देश काफी लम्बे समय तक औपनिवेशिक शासन के अधीन रहे हैं। इसका काफी गहरा असर इसकी सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं भौगोलिक स्थितियों पर प्रत्यक्षतः पड़ा है। अतः ऐसे में दक्षिण एशिया के अन्तर्गत विदेश नीति के निर्धारण में इसकी सबसे अधिक प्राथमिकता इसी पहलू को दी जाती है कि नीति में निर्धारण किसी देश की संप्रभुता एवं अखण्डता को प्रभावित न किया जाए, हमेशा आपसी सौहार्द व समरसता को बनाए जाए।

अतः भारत की विदेश नीति का प्राथमिक उद्देश्य है कि जब भी यह दक्षिण एशिया के देशों के संबंध में अपने विदेश नीति का निर्धारण करे तो अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा के साथ-साथ इन देशों की भी सुरक्षा का परस्पर रूप से सम्मान करे। दूसरे शब्दों में कहें तो भारत यह कभी नहीं चाहता है कि उसकी सुरक्षा से दक्षिण एशिया के कोई भी देश असुरक्षित महसूस करे। अन्य शब्दों में कहें तो भारतीय विदेश नीति विश्व शांति को प्रोत्साहित करती है।

दक्षिण एशिया के देशों के संदर्भ में भारतीय विदेश नीति का प्रमुख उद्देश्य यह भी रहा है कि इन देशों के आर्थिक विकास को प्रोत्साहन दिया जा सके। भारतीय विदेश नीति का लक्ष्य सिर्फ यही नहीं रहा है कि वह अपना ही विकास करे, बल्कि दक्षिण एशिया के देशों के साथ-साथ विश्व के सभी नवोदित राष्ट्रों की जिन्होंने उपनिवेशवाद की दासता से स्वतंत्रता पाई है उनके भी विकास में अपना योगदान दे सके। अतः एक तरह से भारतीय विदेश नीति का बल एक समता-मूलक विश्व-व्यवस्था स्थापित करने के ऊपर है। जिसमें विश्व के सभी देश आपसी सौहार्द के साथ निज विकास कर सकें।

भारत अपनी विदेश नीति के माध्यम से एवं शांतिपूर्ण, परिपक्व, कानूनपालक और विश्वसनीय स्वयं को प्रतीयमान होना चाहता है, यद्यपि विश्व समुदाय के अन्य राष्ट्रों से मैत्रीपूर्ण संबंध के द्वारा लाभ उठाने की चेष्टा भी करता है।[2]

दक्षिण एशिया के संबंध में जब भारत की विदेश नीति के उद्देश्यों और सिद्धान्तों का मूल्यांकन करते हैं तो यह स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आता है कि प्रत्येक राष्ट्र की विदेश नीति के उद्देश्य अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के अनुरूप तय किये जाते हैं भारत के संदर्भ में भी यह सर्वमान्य है।[3] इसी के साथ ही एम.एस. राजन ने अपने प्रमुख लेख "गोल्ज ऑफ इडियाज फॉरेन पॉलिसी" के अन्तर्गत भारत के विदेश नीति के पाँच प्रमुख उद्देश्यों का उल्लेख किया है- गुटनिरपेक्षता, शांति स्थापना, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, आर्थिक विकास एवं अंतर्राष्ट्रीय संगठन।[4]

इस प्रकार जब भारत दक्षिण एशियाई देशों के साथ अपने विदेश नीतियों का निर्धारण करता है तो उसके सम्मुख निम्न उद्देश्य स्पष्टता के साथ उभर कर सामने आते हैं[5] जिसमें सबसे प्राथमिकता के साथ 'राष्ट्रीय सुरक्षा' का उद्देश्य उभर कर सामने आता है। यह किसी भी देश के लिए सबसे प्रमुख है क्योंकि कोई देश अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा एवं प्रभुसत्ता के साथ किसी भी परिस्थिति में समझौता नहीं कर सकता है। राष्ट्रीय सुरक्षा के संदर्भ में जे. बंधोपाध्याय ने काफी महत्वपूर्ण तर्क दिया है, "सुरक्षा राज्य के अंतर्राष्ट्रीय व्यक्तित्व की गारंटी देता है, राष्ट्रीय विकास उसकी महत्वपूर्ण आवश्यकता होती है, तथा एक सुव्यवस्थित विश्व-व्यवस्था इसके स्वतंत्र अस्तित्व व उन्मुक्त विकास के लिए आवश्यक होता है"।[6] अतः स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् से ही भारत अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा की प्राथमिकता के अन्तर्गत देश की स्वतंत्रता,

---

[2] वही

[3] एम.एस.राजन, "गोल्ज ऑफ इंडियाज फॉरेन पॉलिसी", इन्टरनेशनल स्टडीज, वाल्यू. 35, अंक-1, जनवरी-मार्च, 1998, पृष्ठ 71

[4] वही, पृष्ठ 71-105

[5] आर.एस.यादव, भारत की विदेश नीति, किताब महल, 2005, पृष्ठ 19-27

[6] जे. बंधोपाध्याय, दा मेकिंग ऑफ इंडियाज फारेन पॉलिसी: डिटरमिनैंटस, इंस्टीटूशनज, प्रौसेस एण्ड पर्सनलिटिज, बम्बई, 1970, पृष्ठ 8

विकास, सैन्य गठबंधनों का विरोध, पड़ोसी राज्यों से मैत्री पूर्ण संबंध, साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद के नीतियों के विरोध भी सम्मिलित रहा है।[7]

इसके साथ ही साथ भारत वैश्विक स्तर पर किसी भी देश के भीतर बाहरी हस्तक्षेप एवं शीत युद्ध का विरोधी रहा है।

भारत एक विकासशील देश है जिसके कारण आर्थिक विकास की अवधारणा इसके प्राथमिक उद्देश्यों में रहा है। अतएव जब भी किसी भी दक्षिण एशियाई देशों के साथ अपने विदेश नीति का निर्धारण करता है तो आर्थिक विकास को प्रमुखता के साथ स्थान देता है। इसके संदर्भ में जे. बंधोपाध्याय ने अपना तर्क दिया है कि किसी भी देश को अपनी राष्ट्रीय क्षमता का विकास करना होगा जो मूलतः तीन चीजों पर स्पष्टता के साथ निर्भर करती हैं- जनसंख्या, प्राकृतिक संसाधन एवं तकनीकी ज्ञान।[8] अतः भारत अपने आर्थिक विकास के अन्तर्गत अपनी सुरक्षा को सुनिश्चित करने के साथ-साथ अपनी प्रतिव्यक्ति आय एवं सकल घरेलू उत्पाद को बढ़ाने पर जोर देता है। इसके साथ ही यह दक्षिण एशिया के देशों के साथ अपने आर्थिक-सहायता, पूंजी निवेश, व्यापार तथा अन्य आर्थिक गतिविधियों को बढ़ाने पर जोर देता है। भारत की विदेश नीति की एक प्रमुख विशेषता यह भी रही है कि इसमें अपने-अपने आर्थिक विकास के लिए अपनी नीतियों में आधारभूत परिवर्तन लाने पर जोर दिया गया है। इसके अंतर्गत इसने अपनी आर्थिक नीतियों के बदलाव में उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण को काफी प्राथमिकता के साथ अपनाया है, जिसके माध्यम से यह निजी क्षेत्रों के साकारात्मक योगदान से आर्थिक विकास संभव है।

दक्षिण एशिया के परिपेक्ष्य में जब भारतीय विदेश नीति का मूल्यांकन करते हैं तो इसके उद्देश्यों में उपनिवेशवाद, साम्राज्यवाद और रंगभेद का विरोध आदि प्रमुख बिन्दु है। भारत भी काफी लम्बे समय तक उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद से प्रभावित रहा है। ऐसे में

---

[7] आर.एस. यादव, पृष्ठ 19

[8] जे. बंधोपाध्याय, 'दा इकोनोमिक बेसिस ऑफ फॉरेन पॉलिसी', के.पी. मिश्रा, सम्पा. फॉरेन पॉलिसी ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, 1977, पृष्ठ 37

भारत ने अपने उद्देश्यों में प्राथमिकता के साथ इसको शामिल किया है कि वह दक्षिण एशिया के किसी भी देश के साथ उपनिवेशवाद की नीति को नहीं अपनायेगा। साथ ही अगर किसी देश के साथ ऐसा भेदभाव हो रहा है तो वह पुरजोर तरीके से इसका विरोध करेगा। अतः भारतीय विदेश नीति के अन्तर्गत साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद का विरोध इसके "वैचारिक धारा प्रवाह" का एक अभिन्न हिस्सा है।"[9]

इसके साथ ही साथ दक्षिण एशिया के देशों के अन्तर्गत अपनी विदेश नीति में भारत हमेशा से ही निःशस्त्रीकरण का सर्मथक रहा है। एशियाई-अफ्रीकी देशों के बीच क्षेत्रीय सहयोग को मजबूत करने में अपनी प्रमुख भूमिका निभाता रहा है। भारत संयुक्त राष्ट्र के सिद्धान्तों को अपने विदेश नीति के अन्तर्गत विश्व शांति के प्रारूप के रूप में देखता है। इस प्रकार भारत की विदेश नीति के उद्देश्यों में दक्षिण एशिया के देशों का प्राथमिक स्थान है। भारत का प्रमुख विचार यह है कि जब तक वह अपने क्षेत्रीय राष्ट्रों के बीच सौहार्द का माहौल नहीं स्थापित कर लेता है तब तक वह अपनी सुरक्षा को वास्तविक रूप में सुनिश्चित नहीं कर पायेगा। अतः ऐसे में भारत का दक्षिण एशिया के बीच संबंध सबसे महत्वपूर्ण है।

भारतीय विदेश नीति के सिद्धान्तों पर एक नजर डाले तो दक्षिण एशिया के सन्दर्भ में इसकी भी प्रासंगिकता अनिवार्य रूप में उभर कर आती है। जब भी भारत दक्षिण एशिया के देशों के साथ अपनी विदेश नीति का निर्धारण करता है तो वह इन सिद्धान्तों को कभी हाशिये पर रख कर नहीं करता है। इन सिद्धान्तों में सबसे महत्वपूर्ण स्थान 'गुटनिरपेक्षता एवं पंचशील के सिद्धान्त' उभर कर आता है।[10] भारत अपनी स्वतंत्रता एवं प्रभुसत्ता के महत्व् को काफी गंभीरता से लेता है। इसका मानना है जब हम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से किसी भी सैन्य गुट के साथ समझौता करते हैं तो सबसे पहले हम अपनी स्वतंत्रता एवं प्रभुसत्ता के साथ समझौता करते हैं। भारत एक विकासशील देश है अतः ऐसी स्थिति में वैश्विक सहयोग इसके विकास के

---

[9] पाल.एफ. पावर, "आईडियोलोजिकल करैन्टस इन इडियाज फारेन पॉलिसी", के.पी.मिश्रा, सम्पा. फॉरेन पॉलिसी ऑफ इडिया, नई दिल्ली, 1977, पृष्ठ 21-36

[10] वी.पी. दत्त, 'इडियाज फॉरेन पॉलिसी इन अ चेंजिग वल्ड' नोएडा, 2015, पृष्ठ 23

लिए सबसे प्राथमिक है। ऐसे में किसी भी महाशक्ति के साथ एकतरफा समझौता इसके विकास के लिए उपर्युक्त नहीं होगा। भारत ने अपनी विदेश नीति के सिद्धान्तों के अन्तर्गत स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् गुटनिरपेक्षता को अपनाया। भारत की प्रतिबद्धता अपने सिद्धान्तों के साथ प्रारंभ से ही है जिसको वह दक्षिण एशियाई देशों के साथ भी निभाता है। भारत ने अपनी विदेश नीति के अन्तर्गत दक्षिण एशिया में अपनी सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए कभी भी किसी देश के साथ सैन्य-गुट का निर्माण नहीं किया, भले ही तनाव की स्थिति कितनी भी गंभीर क्यों न हो।

विदेश नीति के सिद्धान्तों में "पंचशील' का सिद्धान्त" का भी प्रारंभ से महत्वपूर्ण स्थान है जिसके अन्तर्गत भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ हमेशा से शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व की बात करता है। भारत ने अपने विदेश नीति के अन्तर्गत पंचशील के सिद्धान्त को औपचारिक रूप से 1954 ई. में अपनाया। इस सिद्धान्त का आधार 19 अप्रैल 1954 ई. में भारत-चीन समझौते के अन्तर्गत तिब्बत क्षेत्र के बीच व्यापार संबंध को सुनिश्चित करने के लिए किया गया। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत निम्न पाँच मूल्यों के ऊपर जोर दिया गया है- एक दूसरे की क्षेत्रीय अखण्डता और संप्रभुता का आदर करना, एक दूसरे के विरुद्ध आक्रमण न करना, एक दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना, समानता और परस्पर मित्रता की भावना का आदर करना तथा शांतिपूर्ण सह अस्तित्व को सदैव बनाये रखना।[11] व्यावहारिक स्तर पर पंचशील का सिद्धान्त सिर्फ चीन के साथ ही नहीं, भारत विदेश नीति के एक सिद्धान्त के रूप दक्षिण एशिया के सभी देशों के साथ अपनाने पर जोर देता है, जिसके माध्यम से आपसी मतभेदों को दूर कर आपसी सामंजस्य की भावना को स्थाई रूप से कायम किया जा सके।

दक्षिण एशिया के संदर्भ में भारतीय विदेश नीति के प्रमुख सिद्धान्तों में 'गुजराल सिद्धान्त' का स्थान सबसे प्रमुखता से उभर कर आता है। गुजराल सिद्धान्त का प्रतिपादन देवगौड़ा सरकार में विदेश मंत्री इन्द्रकुमार गुजराल ने 1996 ई. में किया था। गुजराल सिद्धान्त

---

[11] वी.एन. खन्ना, लिपाक्षी अरोड़ा, भारत की विदेश नीति, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ 48

का प्राथमिक उद्देश्य दक्षिण एशियाई देशों में सबसे बड़ा उपमहाद्वीप होने के नाते पड़ोसी देशों को स्वेच्छा से रियायतें देने को लेकर है। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत भारत ने पाकिस्तान के साथ मधुर संबंध स्थापित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए जिसमें कि भारत एवं पाकिस्तान की जनता का आपस में सीधा संबंध स्थापित हो सके। बांग्लादेश के साथ गंगा नदी जल विवाद के संबंध में भी महत्वपूर्ण समझौता किया। अतः गुजराल सिद्धान्त दक्षिण एशिया में भारत को एक ऐसे बड़े देश के रूप में पेश करता है जो छोटे पड़ोसियों को मैत्री के संकेत देकर उसकी सहायता करने में विश्वास करता है।"[12]

भारत और दक्षिण एशियाई देश

वैश्विक मानचित्र पर दक्षिण एशिया का क्षेत्र काफी महत्वपूर्ण भू-भाग के रूप में उभर कर आता है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान, श्रीलंका, भूटान, नेपाल, मालदीव व अफगानिस्तान आदि देश स्थित है। भारत की विदेश नीति के संदर्भ में यह क्षेत्र काफी महत्वपूर्ण है जिसकी राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक एवं सैन्य दृष्टि से काफी महत्ता है। भारत इस क्षेत्र की 77 प्रतिशत आबादी, 73 प्रतिशत क्षेत्रफल तथा 75 प्रतिशत आर्थिक उत्पाद का मालिक है।[13] भारत की विदेश नीति दक्षिण एशिया के सभी के साथ काफी महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इसने अपनी नीतियों में सबसे ज्यादा जोर 'पड़ोसी प्रथम' की नीति के उपर दी है। प्रारंभ से ही दक्षिण एशिया के देशों के कई साथ भारत के संबंध काफी उतार चढ़ाव भरे भी रहे है।

पाकिस्तान के साथ प्रारंभ से ही संबंध काफी तनाव वाले रहे हैं। इससे दक्षिण एशिया के अन्तर्गत 'सुरक्षा' का प्रश्न संदेह के घेरे में आ जाता है। दक्षिण एशिया में सुरक्षा की दृष्टि से सबसे ज्यादा चिंता इन्हीं दोनों देशों के बीच विद्यमान तनाव को लेकर आती है क्योंकि दोनों देश एक परमाणु सम्पन्न है।

---

[12] वही, पृष्ठ 57

[13] रमेश ठाकुर, दा पॉलिटिक्स एण्ड इंकोनोमिक्स ऑफ इडियाज फॉरिन पॉलिसी, दिल्ली, 1994, पृष्ठ 178

 ISSN: 2321-0443

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत एवं पाकिस्तान की विदेश नीति की नींव तनावों के साथ प्रारंभ हुई। विभाजन की समस्या ने इन दोनों देशों के बीच कई स्थाई समस्याओं को जन्म दिया जिसका प्रभाव आज भी इनकी विदेश नीति पर प्रत्यक्ष है। इन समस्याओं में मुख्यतः अल्पसंख्यक प्रश्न, सिंधु नदी के पानी के बँटवारे की समस्या, सीमा विवाद की समस्या, विस्थापितों की संपत्ति का विवाद, कश्मीर का विवाद आदि आज भी केन्द्र में है।

दक्षिण एशियाई देशों में बांग्लादेश के साथ भारत की विदेश नीति काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत और बांग्लादेश दो पड़ोसी देश होने के साथ-साथ ही इनमें आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक पहलुओं पर कई सारी समानता भी उभर कर आती हैं। बांग्लादेश की उत्पत्ति में भारत ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका भी निभाई है। भारत की इस भूमिका को कई विशेषज्ञों के द्वारा बांग्लादेश के जन्म में एक 'दाई' की भूमिका से तुलना की है।"[14] बांग्लादेश को स्वतंत्रता संग्राम में भारत ने मुक्तिवाहिनी सेना को प्रशिक्षण देना, हथियार मुहैया करना, करोड़ो शरणार्थियों को शरण देने में इसकी भूमिका अद्वितीय रही हो, इसके साथ ही भारत पहला देश था जिसने बांग्लादेश की स्थायी सरकार बनने से पहले ही 6 दिसम्बर 1971 को मान्यता प्रदान कर दी।[15] भारत की विदेश नीति के केन्द्र में बांग्लादेश के साथ निम्न मुद्दा सबसे प्रमुखता के साथ रहा है- प्रवासी बांग्लादेशी, सीमा विवाद, हिंदू विरोधी हिंसा, गंगा जल विवाद, व्यापार विवाद, उपप्लव।[16]

इस प्रकार भारत ने अपने विदेश नीति के अन्तर्गत कई साकारात्मक कदम भी उठाए है जो इन दोनों देशों के बीच संबंधों को काफी मजबूत करता है जिसमें भारत का सीमा सुरक्षा बल तथा बांग्लादेश राइफलस ने संयुक्त रूप से आतंकवाद को समाप्त करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। भारत व बांग्लादेश 2004 से ही 'युक्त व्यापार के समझौते' पर

---

[14] वही, पृष्ठ 18

[15] वी.पी. दत्त, इडियाज फॉरेन पॉलिसी, नई दिल्ली, 1987, पृष्ठ 233

[16] श्री राधा दत्ता, "इंडो-बांग्लादेश रिलेशन्जः एन ओवरव्यू ऑफ लिमिटेशन एण्ड कंस्ट्रेटेस, स्ट्रैटेजिक ऐनेलिसिस, 26(3) जुलाई-सितम्बर 2002, पृष्ठ 427-440

सहमत हो गए है। हालाँकि भारत की विदेश नीति के अन्तर्गत बांग्लादेश के साथ जल विवाद को लेकर एक गंभीर-समस्या रही है। भारतीय एकीकृत जल संसाधन आयोग के सदस्य रामास्वामी आर. अय्यर ने इसके चार प्रमुख केन्द्रों को चिन्हित किया है- जल संसाधन की सामान्य पहल, सहायक नदियों के कटाव से सुरक्षा, फरक्का बांध से पानी छोड़ने और हार्डिंग बांध पर पानी प्राप्त होने में अन्तर तथा गोराय में मिट्टी जमाव के कारण।[17] इस प्रकार बांग्लादेश के साथ भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले कारकों में चकमा शरणार्थियों की समस्या, तस्करी की समस्या, अवैध नागरिकों की समस्या आदि प्रमुखता के साथ उभर कर आती है।

दक्षिण एशिया के क्षेत्र में श्रीलंका भारत की विदेश नीति के केन्द्र में हमेशा से ही काफी प्राथमिकता के साथ रहा है। हालाँकि भारत और श्रीलंका के बीच इतिहास, भूगोल, पुराकथाओं, विश्वासों तथा जातीयता में इतना फर्क है कि बहुत करीबी अंतः संबंध से कतराते हैं।[18] श्रीलंका ने मोनरो सिद्धान्त से संबंधित भारत की व्याख्या को अपने यहाँ लागू करने में अपनी प्रभुसत्ता के लिए न मानने योग्य रुकावट माना।[19]

श्रीलंका भारत को काफी प्रभावशाली राष्ट्र के रूप में मानता है। पर कई मुद्दों पर श्रीलंका भारत की विदेश नीति को अपने हित में संदेह की दृष्टि से मूल्यांकन करता रहा है। श्रीलंका की दृष्टि में भारत की विदेश नीति को एक 'छोटे देश की सुरक्षा के तर्क' को एक जातीय आयाम के संबंधों के साथ जुड़ा मानता है।[20] श्रीलंका भारत द्वारा भेजी गई शांति सेना का इसी रूप में मूल्यांकन करता है। इस प्रकार भारत एवं श्रीलंका के विदेश नीति के संबंध में 'जातीय संघर्ष' का काफी गहरा प्रभाव उभर कर आता है। जिसमें श्रीलंकाई तमिल की समस्या सबसे प्रमुख रही है। भारत एवं श्रीलंका के संबंधों में एक बहुत बड़ा आयाम में प्रधानमंत्री राजीव गांधी

---

[17] रामास्वामी आर. अय्यर, "गंगा वाटर ट्रिटीः गिव इट ए फेयर चांस", टाईम्स ऑफ इंडिया, 15 जुलाई, 1997

[18] वी.पी.दत्त, बदलती दुनिया में भारत की विदेश नीति, भाग-2, 2003, नई दिल्ली, पृष्ठ 213

[19] वही, पृष्ठ 213

[20] अंबोलनावर सिवराजन, इंडो-श्रीलंका रिलेशंस इन कांटेक्सट ऑफ श्रीलंका ज एथनिक क्राइसिस, पी.वी.जे. जयसेकर (सं.) न्यू दिल्ली, 1992, पृष्ठ 506-23

की हत्या है। 10 अक्टूबर, 1992 को श्रीलंका के राष्ट्रपति प्रेमदासा की भारत यात्रा ने भारत-श्रीलंका संबंधों को गंभीरता से प्रभावित किया। भारत ने काफी जोरदार तरीके से श्रीलंका में जातीय संघर्ष के समाधान के प्रश्न को उठाया। बाद के वर्षों में भारत ने अपनी विदेश नीति के अन्तर्गत विकास के प्रश्न को काफी प्रमुखता के साथ रखा। इस प्रकार श्रीलंका भारत के साथ दक्षिण एशिया क्षेत्र में दूसरा सर्वाधिक आयात करने वाला देश था। श्रीलंका के साथ मोदी सरकार के अन्तर्गत भारत की विदेश नीति काफी प्राथमिकताओं वाली है। 8-11 फरवरी, 2020 तक प्रधानमंत्री महिन्दा राजपक्षे ने अपनी पहली भारत यात्रा की। दोनों नेताओं ने अपनी विदेश नीति के अन्तर्गत आतंकवाद का मुकाबला करने तथा व्यापार एवं निवेश संबंधों को बढ़ावा देने के लिए आपसी सहमति दी।

दक्षिण एशिया के अन्य प्रमुख देशों में नेपाल, भूटान, मालदीव व अफगानिस्तान का स्थान है। भारत ने अपनी विदेश नीति में सबसे अधिक प्राथमिकताओं वाले देशों के शामिल किया है। दक्षिण एशिया क्षेत्र के भू-भाग की दृष्टि में छोटे होने के साथ भी भारत की विदेश नीति में सबसे अधिक गंभीरता के साथ लिया जाता है। भारत में 'पड़ोसी प्रथम की नीति' में सबसे ज्यादा जोर इन देशों के ऊपर दिया जाता है। इतिहास, भूगोल, राजनीतिक स्थिति, संस्कृति आदि कई स्तरों पर इसका सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। समकालीन समय में भारत की विदेश नीति का मूल्यांकन करें तो दक्षिण एशिया के इन देशों की स्थिति सबसे मजबूती से उभर कर आती है।

मोदी सरकार की विदेश नीति अत्यंत महत्वपूर्ण है। 23-24 नवम्बर, 2020 को भारत के विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर ने जेनेवा में आयोजित 'अफगानिस्तान सम्मेलन 2020' में भारतीय प्रतिनिधिमण्डल का नेतृत्व किया जिसका प्रमुख उद्देश्य वर्ष 2015-2024 की दूसरी छमाही के दौरान अफगानिस्तान के लिए अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय की प्रतिबद्धता की पुष्टि करना था। इसी प्रकार भारत की विदेश नीति के अंतर्गत प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी व भूटान के प्रधानमंत्री लोटे त्शेरिग ने नवम्बर 2020 में दूसरे चरण का रूपे कार्ड जारी किया। इसके माध्यम से भूटान एवं भारत के बीच आर्थिक लेन-देन की गतिविधि को मजबूत करना है। इसी प्रकार प्रधानमंत्री

नरेन्द्र मोदी के अगस्त 2019 में भूटान में भारत-भूटान जल-विद्युत परियोजना के माध्यम से दोनों देशों के बीच संबंधों को और मजबूती दी।

भारत मालद्वीप के साथ अपने संबंधों को मजबूत करने पर काफी जोर देता रहा है। वर्तमान में भारतीय विदेश सचिव हर्षवर्धन श्रृंगला ने मालद्वीप के साथ द्विपक्षीय संबंधों पर व्यापक चर्चा की है जिसके अन्तर्गत $ 1.3 अरब (लगभग 10000 करोड़ रूपये) के द्विपक्षीय पैकेज के तहत निर्माणाधीन परियोजनाओं की समीक्षा की गई। कोरोना महामारी के दौरान भारत ने पड़ोसी देशों के साथ अपनी प्राथमिकताओं के अन्तर्गत मालद्वीप को $ 250 मिलियन की वित्तीय सहायता दी है। मालद्वीप के साथ अन्य आर्थिक गतिविधियों में भारत ने सम्पर्क परियोजना के कार्यान्वयन के लिए $ 500 मिलियन का वित्तीय पैकज, मछली पकड़ने की सुविधाओं के विस्तार के लिए मालद्वीप सरकार को $ 18 मिलियन की लाइन ऑफ क्रेडिट का विस्तार किया। भारत ने नेपाल के साथ अपने रिश्तों को और मजबूत करने के लिए जयनगर और नेपाल के कुर्था के बीच रेल सेवाएँ जारी करने का महत्वपूर्ण कदम उठाया है।

अतः इस प्रकार भारत की विदेश नीति में दक्षिण एशिया के इन देशों की भूमिका वर्तमान समय में सबसे ज्यादा प्राथमिकताओं के साथ स्पष्ट होती है। भारत की विदेश नीति में 'दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन' (सार्क) की भूमिका एक ऐसे मंच के रूप में हैं जिसके माध्यम से भारत दक्षिण एशिया में एक साकारात्मक भूमिका निभाता है। सार्क की भूमिका दक्षिण एशिया के देशों के बीच आपसी संबंधों को मजबूत करने तथा तनाव को कम करने की है। सार्क के माध्यम से दक्षिण एशियाई देश आपसी सहयोग से विकास की गति को नयी ऊंचाई पर ले जा रहे हैं।

अतः भारत दक्षिण एशिया का एक महत्वपूर्ण देश है तथा वह अपनी विदेश नीति के माध्यम से दक्षिण एशिया को वैश्विक परिप्रेक्ष्य में प्रतिबिम्बित करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

- विमल प्रसाद, *ओरिजन ऑफ इंडियाज फॉरेन पालिसी: दा इडियन नेशनल कांग्रेस एण्ड वर्ल्ड अफैयर्ज*, 1885-1945, कलकत्ता, 1965
- एम.एस.राजन, "गोल्ज ऑफ इंडियाज फॉरेन पॉलिसी", *इन्टरनेशनल स्टडीज, वाल्यू.* 35, अंक-1, जनवरी-मार्च, 1998
- आर.एस.यादव, *भारत की विदेश नीति*, किताब महल, 2005, पृष्ठ 19-27
- जे. बंधोपाध्याय, *दा मेकिंग ऑफ इंडियाज फारेन पॉलिसी: डिटरमिनैंटस*, इंस्टीटूशनज, प्रौसेस एण्ड पर्सनलिटिज, बम्बई, 1970
- जे. बंधोपाध्याय, '*दा इकोनोमिक बेसिस ऑफ फॉरेन पॉलिसी*', के.पी. मिश्रा, सम्पा. फॉरेन पॉलिसी ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, 1977
- पाल.एफ. पावर, '*आईडियोलोजिकल करैन्टस इन इडियाज फारेन पॉलिसी*', के.पी.मिश्रा, सम्पा. फॉरेन पॉलिसी ऑफ इडिया, नई दिल्ली, 1977
- वी.पी. दत्त, *इडियाज फॉरेन पॉलिसी इन अ चेंजिग वर्ल्ड* नोएडा, 2015
- वी.एन. खन्ना, लिपाक्षी अरोड़ा, *भारत की विदेश नीति*, नई दिल्ली, 2009
- रमेश ठाकुर, *दा पॉलिटिक्स एण्ड इंकोनोमिक्स ऑफ इडियाज फॉरेन पॉलिसी*, दिल्ली, 1994
- वी.पी. दत्त, *इडियाज फॉरेन पॉलिसी*, नई दिल्ली, 1987
- श्री राधा दत्ता, "इंडो-बांग्लादेश रिलेशन्जः एन ओवरव्यू ऑफ लिमिटेशन एण्ड कंस्ट्रेटेस, *स्ट्रैटेजिक ऐनेलिसिस*, 26(3) जुलाई-सितम्बर 2002
- रामास्वामी आर. अय्यर, "गंगा वाटर ट्रिटीः गिव इट ए फेयर चांस", *टाईम्स ऑफ इंडिया*, 15 जुलाई, 1997
- वी.पी.दत्त, *बदलती दुनिया में भारत की विदेश नीति*, भाग-2, 2003, नई दिल्ली
- अंबोलनावर सिवराजन, *इंडो-श्रीलंका रिलेशंस इन कांटेक्सट ऑफ श्रीलंका ज एथनिक क्राइसिस*, पी.वी.जे. जयसेकर (सं.) न्यू दिल्ली, 1992, पृष्ठ 506-23

अध्याय 32

भारतीय विदेश नीति के सामयिक आयाम

डॉ. अखलाख अहमद
सहायक प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
ए0 एस0 कॉलेज,
बिक्रमगंज, रोहतास (बिहार)

अंतर्राष्ट्रीय पटल पर प्रत्येक राज्य अपने राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा के लिए विदेश नीति का निर्धारण करते हैं। विदेश नीति और राजनय को अंतर्राष्ट्रीय सम्बंधों की संचालन की प्रक्रिया के यान के दो पहिये कहा जाता है। सभी देशों के लिए राष्ट्रीय हित का दायरा अलग–अलग होता है, फलतः विदेश नीति के सिद्धांत भी परिस्थिति के अनुरूप भिन्न–भिन्न होते है। भारतीय विदेश नीति के मुख्य सिद्धांत–राष्ट्रों की समता, क्षेत्रीय अखण्डता, अन्य देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बंध, विवादों का शांतिपूर्ण समाधान, शांतिपूर्ण सह अस्तित्व, विश्व शांति और सुरक्षा को प्रोत्साहन, गुटनिरपेक्षता, अंतर्राष्ट्रीय कानून एवं संस्थाओं का समर्थन आदि हैं। ये सिद्धांत संयुक्त राष्ट्र संघ चार्टर के साथ–साथ भारतीय संविधान द्वारा भी समर्थित है। संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में वर्णित उद्देश्य है– अंतर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा कायम रखना, अंतर्राष्ट्रीय विवादों का शान्तिपूर्ण समाधान करना; सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय क्षेत्रों में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को प्रोत्साहित एवं पुष्ट करना। भारत के संविधान के अनुच्छेद 51 में कहा गया है कि राज्य (I) अंतर्राष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा की अभिवृद्धि का, (II) राष्ट्रों के बीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण सम्बन्धों को बनाये रखने का, (III) संगठित लोगों के एक–दूसरे से व्यवहारों में अंतर्राष्ट्रीय विधि और सन्धि–वाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का और (IV) अंतर्राष्ट्रीय विवादों को मध्यस्थता द्वारा निपटाने के लिए प्रोत्साहन देने का प्रयास करेगा।

शीत युद्ध के दौरान दुनिया दो गुटों में बंट गयी । एक का नेतृत्व पूंजीवादी अमेरिका तथा दूसरे गुट का नेतृत्व सोवियत संघ ने किया। दोनों गुट के बीच तनाव व विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में प्रभाव के लिए प्रतिद्वन्द्विता तथा यदा–कदा तनाव शैथिल्य की प्रतियोगिता चलती रही। ऐसी परिस्थिति में भारत द्वारा सैनिक गुटबंदी से अलग रहकर स्वतंत्र विदेश नीति अपनाने का फैसला किया गया, जिसे गुटनिरपेक्षता की नीति कहा जाता है। हालांकि आरभ में शीतयुद्ध की पृष्ठभूमि में जन्म के कारण इस नीति को गुटों से अलग रहना समझा गया, जो कि भ्रामक अर्थ है। यह नीति गतिशील एवं आवश्यकतानुसार दोनों गुटों से सहायता लेने में विश्वास रखती है। इस नीति का मूलमर्म है– 'विदेश नीति मामले में स्वतंत्रता'। गुटनिरपेक्षता का अर्थ हैः–शीत युद्ध का विरोध, सैन्य तथा राजनीतिक गठजोड़ और शक्ति–गुटों से दूर रहना तथा अंतर्राष्ट्रीय सम्बंधों में स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने की नीति अर्थात राष्ट्रीय हित तथा वैश्विक समस्याओं पर स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय लेना यह एक सिद्धांत है, जो अंतर्राष्ट्रीय शांति तथा सुरक्षा को महत्व देता है और इसके लिए शीत–युद्ध तथा सन्धियों में निर्लिप्तता की वकालत करता है।

गुटनिरपेक्ष आन्दोलन ने भारत को विकासशील देशों का नेतृत्व करने का मंच प्रदान किया। इसके माध्यम से उपनिवेशवाद, रंगभेद की नीति, बड़ी शक्तियों द्वारा हस्तक्षेप, शस्त्रों की दौड़ नव–उपनिवेशवाद, विश्व राजनीतिक व अर्थव्यवस्था के केन्द्रीकरण आदि के विरूद्ध आवाज उठाने का प्रयास किया गया। बदलते परिवेश में गुटनिरपेक्ष आन्दोलन ने 1970 के दशक में 'समता एवं न्याय' पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग कर अपने आर्थिक एजेण्डे को मूर्त रूप दिया। आज इब्सा (IBSA) तथा ब्रिक्स (BRICS) जैसे संगठनों द्वारा विकासशील देशों के बीच 'दक्षिण–दक्षिण सहयोग' तथा अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं जैसे अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, के लोकतंत्रीकरण की मांग जो उठाई जा रही है वे मांगे लगभग 40 वर्ष पूर्व ही गुटनिरपेक्ष आंदोलन द्वारा उठाई गई थी।

1962 में आयोजित गुटनिरपेक्ष देशों के काहिरा सम्मेलन में सर्वप्रथम नई अंतर्राराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की मांग उठाई गई। नई अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था वर्तमान पक्षपातपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को समाप्त कर नए सिरे से स्थपित करने का मार्ग है ताकि विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों का औपनिवेशिक शोषण रूक जाए और विश्व की आय तथा साधनों का न्यायपूर्ण व समान बंटवारा हो ताकि उत्तर–दक्षिण का अंतर समाप्त हो जाए। इसके लिए विकासशील देशों ने नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के बारे में कुछ सिद्धांत बताएँ है–I) विश्व मुद्रा प्रणाली का सामान्यीकरण करना,II) विकासशील तथा विकसित देशों के बीच विद्यमान तकनीकी भेद को कम करना,III) विकसित देशों द्वारा विकासशील राष्ट्रों के वित्तीय बोझ को कम करना,IV) बहुराष्ट्रीय निगमों तथा अन्य आर्थिक संस्थाओं को तर्कसंगत बनाना,V) विकासशील देशों को विकसित देशों के साथ वरीयता देना,VI) विकासशील देशों द्वारा उत्पादित औद्योगिक माल के निर्यात को प्रोत्साहन देना,VII) कच्चे माल की कीमत घटाने–बढ़ाने की प्रवृत्ति का विरोध तथा कच्चे माल तथा तैयार माल की कीमतों में अन्तर होना,VIII) कच्चे माल तथा समस्त आर्थिक क्रियाकलापों पर राष्ट्रीय संप्रभुता स्वीकार करना।

1981 में केनकुन शिखर वार्त्ता में भी विकासशील तथा विकसित देशों के बीच विश्व अर्थव्यवस्था संबंधी वार्तालाप हुआ। यह वार्ता भी उत्तर–दक्षिण के आर्थिक सम्बंधों पर सर्वमान्य निर्णय तक नहीं पहुँच सकी। 1982 में दक्षिण–दक्षिण सहयोग को बढ़ाने के लिए एक बैठक का आयोजन हुआ। जून 1987 में दक्षिण–दक्षिण सहयोग पर गुटनिरपेक्ष देशों की बैठक हुई। यह नई अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की स्थापना की ओर अच्छा कदम था। इसके बाद मार्च 1988 में दक्षिण–दक्षिण आयोग की बैठक कुआलालम्पुर में हुई। इसमें विकसशील देशों की आर्थिक समस्याओं से लड़ने के लिए एक बहुमुखी रणनीति का निर्माण करने पर विचार हुआ। तत्पश्चात् G–15 की बैठक 1990 में हुई। G–15 विकासशील देशों का एक समूह है। G–15 के काहिरा (2000) सम्मेलन में भी असमान विश्व अर्थव्यवस्था पर विचार किया गया और WTO से अपने उत्तरदायित्वों को विकासशील देशों की समस्याओं के संदर्भ में निर्धारित करने का आवाह्न किया गया। इस तरह G–77 ,दक्षिण–दक्षिण सहयोग, G–15 गुटनिरपेक्ष सम्मेलन आदि द्वारा NIEO की मांग बार–बार उठाई जाती रही है।

1991 में सोवियत संघ के विघटन तथा शीत–युद्ध की समाप्ति का एक तात्कालिक प्रभाव यह हुआ कि विश्व में नव –उदारवादी विचारधारा पर आधारित अर्थव्यवस्था की स्वीकृति तथा वैश्वीकरण की प्रक्रिया तेजी से आगे बढ़ी। भारत ने वैश्वीकृत अर्थव्यवस्था के साथ समन्वयके लिए 1991 में उदारवादी आर्थिक नीतियों को लागू किया जिसका प्रभाव भारत की विदेश नीति पर स्पष्टतः दिखाई दिया। नई आर्थिक नीति के अंतर्गत अपने विकास के अनुरूप ही भारत ने व्यापार एवं निवेश, उर्जा– संसाधनों तथा तकनीकी उपलब्धता आदि को विदेश नीति में विशेष स्थान दिया।

 ISSN: 2321-0443

वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से एक राष्ट्र की अर्थव्यवस्था वैश्विक अर्थव्यवस्था से जुड़ती है। इसी प्रभाव मे भारत की अर्थव्यवस्था को विश्व अर्थवयवस्था के साथ जोड़ने का प्रयास किया गया । यही कारण है कि विदेश नीति में आर्थिक कूटनीति का महत्व बढ़ गया है। आर्थिक कूटनीति का प्रमुख उद्देश्य व्यापार तथा निवेश के नए अवसरों को तलाशना है। जिससे भारत की अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ सके। इस नीति के अंतर्गत विभिन्न राष्ट्रों तथा क्षेत्रीय समूहों के साथ आर्थिक साझेदारी बढ़ाने अथवा मुक्त व्यापार समझौता लागू करने का प्रयास किया गया। इस सम्बंध में 2006 का सार्क देशों का मुक्त व्यापार समझौता तथा 2009 का भारत आसियान मुक्त व्यापार समझौता प्रमुख है। 2005 में भारत विदेशी विकास सहायता पानेवाले देश के साथ–साथ सहायता देनेवाला देश भी बन गया। 2003 में भारत ने दो अन्य देशों ब्राजील तथा दक्षिण अफ्रीका के साथ इब्सा (IBSA) की स्थापना की वर्तमान में यह संगठन 'दक्षिण–दक्षिण सहयोग' का प्रभावशाली मंच है। शीत युद्धोत्तर काल की भारतीय विदेश नीति की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता ' भारत के नए क्षेत्रों के साथ सक्रिय जुड़ाव है। इस संदर्भ में भारत द्वारा 1991 में घोषित ' लुक ईस्ट नीति' सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। भारत 2005 में स्थापित पूर्वी एशिया सम्मेलन का भी संस्थापक सदस्य है, जिसका उद्देश्य पूर्वी एशिया क्षेत्र में एकीकरण को बढ़ावा देना है। 2014 में भारत की 'लुक ईस्ट नीति' का नाम बदलकर ' एक्ट ईस्ट' नीति कर दिया गया । इतना ही नहीं भारत ने सेण्ट्रलएशिया के देशों के साथ भी अपने बहुआयामी सम्बंधों को मजबूत बनाने की प्रक्रिया शुरू की। इस क्रम में उसने 2015 में ' शंघाई सहयोग संगठन' की सदस्यता ग्रहण की। 2008 में भारत– अफ्रीका मंच की शुरूआत की गयी। भारत उभरती हुई अर्थव्यवस्था के नए संगठन BRICS का भी संस्थापक सदस्य है। इसमें भारत के अलावा चीन, रूस, ब्राजील तथा दक्षिण अफ्रीका अन्य सदस्य देश है। ब्रिक्स का उद्देश्य एक खुली तथा बहुपक्षीय विश्वव्यवस्था का विकास करना है।

भारत की विदेशनीति की एक अन्य प्रवृत्ति में ' लोक कूटनीति' को प्रभावी बनाने का प्रयास' शामिल है। लोक कूटनीति का तात्पर्य उन सभी प्रयासों से है जिसके तहत कोई देश अपने हितो तथा विदेश नीति के उद्देश्यों के लिए दूसरे देशों में समर्थन प्राप्त करने का प्रयास करता है। लोकतंत्रीकरण के इस युग में लोक कूटनीति का महत्व और अधिक बढ़ गया है। लोक कूटनीति के प्रयोग के लिए भारत ने 2007 में विदेश मंत्रालय के अंतर्गत एक अलग लोक नीति शाखा की स्थापना की। भारत द्वारा विभिन्न देशों में सांस्कृतिक केन्द्रों की स्थापना, गाँधी अध्ययन केन्द्रों की स्थापना, भारत– महोत्सव का आयोजन, शैक्षणिक आदान प्रदान, जनता से जनता के बीच सम्पर्क आदि भारत की लोक कूटनीति के व्यवहारिक उपकरण है। 2007 में संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा 2 अक्टूबर (महात्मा गाँधी के जन्म दिवस) को अंतर्राष्ट्रीय अहिंसा दिवस के रूप में मनाने का प्रस्ताव पारित करना तथा इसी तरह 2014 में 21 जून को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में मनाने का निर्णय भारतीय मूल्यों की विश्वव्यापी स्वीकार्यता को सिद्ध करता है।

वर्त्तमान में भारत की विदेश नीति के संचालन में कई शैलीगत प्रवृत्तियाँ दृष्टिगत है। पहला, प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अपनी वैयक्तिक शैली के आधार पर भारत की लोक कूटनीति को नया संदर्भ दिया है। यह तथ्य विदेश के शीर्ष नेताओं तथा वहां की जनता के साथ उनकी अन्तः क्रिया में साफ झलक है। दूसरी, प्रवृत्ति यह है कि भारत ने अपने घरेलू विकास लक्ष्यों को विदेश नीति के संचालन में पहले से कही अधिक तन्मयता से जोड़ दिया है। ' मेक इन इण्डिया' कार्यक्रम विदेश नीति के संचालन में शीर्ष प्राथमिकता पर है। इसके साथ ही स्किल इण्डिया, स्मार्ट सिटीज, इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलपमेन्ट, डिजिटल इण्डिया, क्लीन इण्डिया, जैसे विकास कार्यक्रम को भी विदेश नीति माध्यम से आगे बढ़ाने की कोशिश जारी है।

वैश्विक महामारी कोविड–19 के दौर में पूरा विश्व स्वास्थ्य सम्बन्धीचुनौतियों से जुझ रहा है। महाशक्तियों द्वारा वायरस की उत्पत्ति को लेकर आरोप–प्रत्यारोप का दौर जारी है। इसी बीच चीन ने अपनी विस्तारवादी नीति को मूर्तरूप देते हुए भारत की सीमाओं पर लगातार आक्रमण कर तनाव की स्थिति उत्पन्न कर रखी है, वहीं उसकी शह से नेपाल ने नए नक्शे को अपनाकर भारत के साथ सीमा विवाद पुनर्जीवित कर दिया है। नागरिकता (संशोधन) अधिनियम, 2019 के बाद भारत के प्रति बांग्लादेश के रूख में परिर्वतन देखा जा रहा है। इन परिस्थितियों के बावजूद भारत ने विदेश नीति के क्षेत्र में अपनी स्थिति मजबूत की है। वैक्सीन कूटनीति वैश्विक स्वास्थ्य कूटनीति का हिस्सा है, जिसमें एक राष्ट्र अन्य देशों के साथ सम्बंधों को मजबूत करने के लिए टीकों के विकास या वितरण का उपयोग करता है। इसके तहत् जीवन रक्षक टीकों और सम्बंधित तकनीकों का संयुक्त विकास किया जाना भी शामिल है।

भारत ने कोविड–19 वैक्सिन की 56 लाख खुराक दुनिया के विभिन्न देशों को उपहार में दी है वहीं एक करोड़ टीके व्यवसायिक आपूर्ति के रूप में भेजे हैं। अब तक भूटान, मालदीव, बांग्लादेश, नेपाल, म्यांमार, मॉरीशस, सेशेल्स, श्रीलंका, संयुक्त अरब अमीरात (UAE), ब्राजील, मोरक्को, बहरीन, ओमान, मिश्र, अल्जीरिया, कुवैत और दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों को टीके की आपूर्ति कर चुका है। जल्द ही देश में निर्मित वैक्सीन कैरीबियाई मुल्कों, प्रशांत महासागर क्षेत्र के राष्ट्रों, निकारगुआ, अफगानिस्तान और मंगोलिया में भेजी जाएगी। प्रधानमंत्री मोदी ने इसे ''वैक्सीन मैत्री'' का नाम दिया है। भारत के इस कदम की दुनिया भर में तारीफ हो रही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के चीफ ट्रेड्रोस अधानोम भारत के कायल हो गए है और उन्होंने प्रधानमंत्री मोदी की तारीफ की है। नेबरहुड फर्स्ट की नीति का पालन करते हुए भारत ने सबसे पहले भूटान एवं मालदीव को वैक्सीन भेजी थी।

भारत की वर्तमान विदेश नीति की दिशा वर्तमान सरकार द्वारा राष्ट्रीय हितो को बढ़ावा देने के लिए सभी देशों से परस्पर संवाद के माध्यम से विदेश नीति को पुनर्परिभाषित किया जा रहा हैं।

वैश्विक महामारी कोविड–19 के दौर में भारत के विदेश मंत्री, ब्रिक्स (BRICS) देशों के विदेश मंत्रियों के वर्चुअल सम्मेलन में शामिल हुए थे। इस बैठक में ' मेडिसिन कूटनीति' की महत्ता पर बल देते हूए विदेश मंत्री जयशंकर ने कहा कि भारत, कोरोना वायरस की महामारी से लड़ने के लिए लगभग 85 देशों को दवाओं एवं अन्य उपकरण के माध्यम से मदद पहुँचा रहा है। इस दौर में भारत ने 'विश्व का दवाखाना' की अपनी छवि के अनुरूप भूमिका निभाने का भी सतत् प्रयत्न जारी रखा। इसके लिए भारत ने मलेरिया निरोधक दवा ' हाइड्रॉक्सी क्लोरोक्वीन' (HCQ) का निर्यात पूरी दुनिया को किया।

खाड़ी देशों के साथ भारत ने व्यापक स्तर पर अपनी ' मेडिकल कूटनीति' का उपयोग किया। जब कई खाड़ी देशों ने भारत से 'हाइड्रॉक्सी क्लोरोक्वीन' और पैरासीटामॉल दवाओं के निर्यात की अपील की तो भारत ने इन देशों को दोनो दवाओं की पर्याप्त मात्रा में आपूर्ति करने की कोशिश की।

वर्तमान सरकार ने पूर्व में शपथ ग्रहण समारोह में बंगाल की खाड़ी से सटे बहु–क्षेत्रीय तकनीकी एवं आर्थिक सहयोग परिषद यानी बिम्सटेक के सदस्यों को आमंत्रित किया। बंगाल की खाड़ी, दक्षिण–एशिया और दक्षिण–पूर्व एशिया को जोड़ने वाली कड़ी है। इससे भारत की 'प्रथम पड़ोस' और ' एक्ट ईस्ट' नीति भी एकाकार होती है। इसके उलट सार्क का दायरा भारतीय उपमहाद्वीप तक सीमित है, जबकि बिम्सटेक भारत को उसकी धुरियों से जोड़ता है।

वर्तमान परिदृश्य से यह ज्ञात है। कि पाक–चीन मिलकर भारत के सामने बड़ी सामरिक चुनौती पेश कर रहें है। भारत– ईरान को चीन के पाले में न जाने देने के लिए कमर कस रहा है। अमेरिका का ईरान विरोधी रवैये के कारण इस पर असर पड़ रहा है।

यद्यपिभारत के सउदी अरब और इजरायल के साथ अमेरिका से भी बेहतर सम्बंध है लेकिन यह ठीक नहीं होगा कि ईरान चीन के खेमें में चला जाए। बेहतर हो कि भारत अमेरिका के समक्ष यह रेखांकित करे कि उसकी आक्रामक नीतियाँ ईरान को चीन की ओर धकेल रही हैं। यदि ईरान, चीन का वैसा पिछलग्गू बन जाता है, जैसे पाक और उत्तर–कोरिया बन गए है तो एक नयी धुरी बन जाएगी, जो एशिया की शांति के लिए खतरा ही बनेगी। भारत के ईरान से सम्बंध इसलिए भी अच्छे होने जरूरी हैं ताकि चाबहार बंदरगाह के जरिए अफगानिस्तान और मध्य एशिया तक पहुँच आसान हो सके। यदि भारतीय विदेश नीति इस चुनौती का सामना सफलता पूर्वक करती है तो एशिया में शांति एवं विकास संभव सकेगा, जिससे संपूर्ण विश्व लाभांवित होगा।

भारतीय विदेश नीति की सफलता का परिणाम है कि 2023 की जी 20 जैसे संगठन की मेजबानी का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। भारत, रूस–यूक्रेन युद्ध में अपनी परिपक्व कूटनीति का परिचय देते हुए एक तरफ युद्ध को मानव सभ्यता के लिए अहितकर बताते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ में आस्था बनाए रखा वहीं रूस के अनुरूप व्यवहार कर दोस्ती भी बखूबी निभा दी। आज सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों में से 4 हमारे स्थायी सदस्यता के दावे का समर्थन कर रहे हैं। वैश्विक धरातल पर यह एक बड़ी उपलब्धि है।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

1ण अप्पादोराई ए (1983) : द डोमेस्टिक रूट ऑफ इंडियाज फारेन पालिसी, न्यू यार्क, आक्सफोर्ड युनी0 प्रेस।

2. अप्पादोराई एं एण्ड राजन एम0एस0 (1985) : इंडियाज फॉरेन पालिसी एण्ड रिलेशन

3. बंधोपाध्याय एजे0 (2008), द मेकिंग आफ इण्डियाज फारेन पालिसी, डिटरमिनान्ट, अंस्टिट्यूमन, प्रोसेस एण्ड परसानल्टिज, एलाइड पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली

4. पाठक के0के (1984) : न्यूक्लियर पालिसी ऑफ इण्डिया, गिताजली प्रकाशन, नई दिल्ली

5. यादव लीला (1989) : यू0एन0 पालिसी इन साउथ एशिया, हरमन पब्लिकेशन हाउस।

6. श्राजन,एन0एस0 (1997) : स्टडिज इन इण्डियाज फॉरेन पालिसी, कलिंग पब्लिकेशन।

7. शर्मा, पी0एल0 (2000) : इण्डियाज फारेन पालिसी, मंगलदीप पब्लिकेशन, जयपुर

8. यादव, आर0एस0 (2012) : भारत की विदेश नीति, पिर्यसन एजुकेशन।

9. दत्ता, वी0पी0 (1993) : इण्डियाज फॉरेन पालिसी, विकास पब्लिकेशन

10. खन्न एवं अरोड़ा : भारत की विदेश नीति

11. फड़िया, बी0 एल0 (2011): अंतर्राष्ट्रीय राजनीति

12. प्रतियोगिता दपर्ण : जनवरी (2016)

13. दैनिक जागरण, पटना 8 सितम्बर 2020

अध्याय 33

लुक ईस्ट से एक्ट ईस्ट पालिसी : वर्तमान सन्दर्भ में भारतीय विदेश नीति

डॉ. विजय प्रताप सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
राजनीतिक विज्ञान विभाग
डी. ए.वी. कॉलेज, कानपुर

लुक ईस्ट पॉलिसी या पूर्व की ओर देखो नीति पूर्व एशियाई क्षेत्र में अपनी स्थिति सशक्त करने की भारत की सामरिक, आर्थिक नीतियों में से एक महत्त्वपूर्ण कदम है। इस नीति के माध्यम से भारत का यह निरन्तर प्रयास रहता है कि चीन के विस्तारवादी प्रभाव को कैसे रोका जाये। यदि दूसरे शब्दों में कहें तो लुक ईस्ट पॉलिसी दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ व्यापक आर्थिक और सामरिक सम्बन्धों को विकसित करने का प्रयास है, जिससे इस क्षेत्र में क्षेत्रीय शक्ति के रूप में स्वयं को स्थापित कर सकें। इस पॉलिसी की शुरूआत 1991 में भारत के प्रधानमंत्री श्री पी0 वी0 नरसिन्हा राव के शासनकाल से होती है। अपने पाँच वर्षों के कार्यकाल में श्री राव ने भारत की नियति को एक आकार देने की कोशिश की थी। यह उनका सही समय पर सही दिशा में उठाया गया एक सही कदम था। यह एक तरह से 1990 के दशक के प्रारम्भ में भारत में शुरू किये गये उदारीकरण कार्यक्रम का स्वभाविक परिणाम था। इस बात को आसानी से समझा जा सकता है, कि लुक ईस्ट पॉलिसी स्वतन्त्र भारत के इतिहास में एक अद्वितीय नीति रही है, जिसके अपने दार्शनिक परिणाम भी निकले हैं। देश की क्रमिक सरकारों ने बाद में इस नीति का अनुसरण किया और भारत में एशियन टाईगर और टाईगर कब एशियन कब अर्थ व्यवस्थाओं के साथ स्वस्थ एवं मधुर सम्बन्ध स्थापित किये। भारत ने श्रीलंका, थाईलैण्ड और अन्य पूर्वी एशियाई देशों के साथ मुक्त व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर किये। जिनमें सिंगापुर के साथ व्यापक आर्थिक सहयोग करार और थाईलैण्ड के साथ शीघ्र फसल योजना शामिल है। लोकतन्त्र, मानवाधिकार और सामरिक हितों पर बल देते हुए ताईवान, जापान और दक्षिण एशिया के साथ सम्बन्धों को मजबूत किया गया। दक्षिण कोरिया और जापान, भारत

 ISSN: 2321-0443

में भारी विदेशी निवेश का सशक्त स्त्रोत बने हुए हैं। वही दूसरी ओर पूर्व एशियाई अर्थव्यवस्थाएं भी भारत के साथ अपनी रूचि का निरन्तर प्रदर्शन भी करती रहती हैं।

लुक ईस्ट पॉलिसी का जन्म घरेलू और बाहरी मोर्चो पर बाध्यताओं के कारण हुआ। 1991 में श्री राव के सत्ता में आने के पूर्व ही समाजवादी प्रयोग एवं अनुदार आर्थिक नीतियों ने अर्थव्यवस्थाओं के गिरावट के संकेत देने शुरू कर दिये थे। उस समय भारत के महत्वपूर्ण आर्थिक और रणनीतिक साझेदार सोवियत संघ के विघटन के बाद भारत एक तरह से मित्रविहीन हो गया था और विश्व पटल पर हाशिए पर चला गया था। पूर्व के राष्ट्रों को जिन्हें भारत अमेरीकी साम्राज्यवाद का पिट्ठू कहकर खारिज कर देता था, लेकिन उन्हीं राष्ट्रों ने नाट्कीय आर्थिक सुधारों के माध्यम से अपनी जनता एवं राष्ट्रों को अभूतपूर्ण तरीके से सम्पन्न कर उस दौर में एक उदाहरण प्रस्तुत किया।

शीत युद्ध के बाद की अवधि में विश्व के बदलते हुए आर्थिक और रणनीतिक परिदृश्य ने भारत को अपने विदेश एवं आर्थिक नीतियों की समीक्षा करने के लिये बाध्य कर दिया। इन विषम परिस्थितियों में भारत ने लुक ईस्ट पॉलिसी नामक एक नवीन नीति की पहल करने का एक साहसिक प्रयास किया।

लुक ईस्ट पॉलिसी का उद्देश्य व्यापार एवं निवेश, राजनीतिक एवं रणनीतिक हितों को विस्तार देते हुए भारत और विस्तृत एशिया प्रशान्त क्षेत्र के मध्य एक नये तरह के सम्बन्ध बनाना था। लुक ईस्ट पॉलिसी राष्ट्रीय हितों को आगे बढ़ाने और एक सुसंगत राजनीतिक, आर्थिक और रणनीतिक एशियाई ढांचे के निर्माण में भारत को सशक्त एवं सक्षम बनाने की नीति एवं युक्ति थी। प्रधानमंत्री श्री राव ने 08 अगस्त, 1994 को सिंगापुर में दिये अपने एक ऐतिहासिक भाषण में एशिया प्रशान्त देशों से निवेश एवं सहयोग आमन्त्रित करते हुए कहा "मैं इस सभा को भरोसा देता हूँ कि भारत न केवल आपके समय और पैसे का स्वागत करता है बल्कि वह इसके योग्य भी है। भारत में निवेश, भविष्य का निवेश है- वह भविष्य जो न केवल निवेशकों के लिये है, बल्कि सौ करोड. जनता का भी है। यह जनता दुनिया में स्थितरता की ताकत बनी रहेगी। इसके एवज में एशिया प्रशान्त क्षेत्र के देश भारत के रूप में एक विश्वसनीय देश एक

विशाल बाजार पायेंगे, जिसके विकास की प्रक्रिया में एक महान और उत्कृष्ट सभ्यता का पुर्नजागरण शामिल होगा। इस सभ्यता में हम सभी लोगों की कुछ न कुछ भागीदारी है"।

यद्यपि लुक ईस्ट पॉलिसी का लक्षित क्षेत्र सम्पूर्ण एशिया प्रशान्त था। किन्तु आसियान अपनी भौगोलिक समीपता, साम्य और सम्बन्धों के कारण लुक ईस्ट पॉलिसी का आधार बनने का हकदार था। इसलिये आसियान को पूर्व में भारत का द्वार माना जाता है।

भारत की रणनीतिक योजना में आसियान को उत्तर पूर्वी क्षेत्र के बाजारों को बाकी भारत और आसियान के साथ जोड़ने में एक महती भूमिका का भी निर्वाहन करना था। भूतपूर्व केन्द्रीय विकास मंत्री मणिशंकर अय्यर ने ठीक ही कहा था 'दक्षिणपूर्वी एशिया पूर्वोत्तर भारत से शुरू होता है।' उधर आसियान भी भारत के साथ व्यवहारिक रिश्ते बनाने के लिये उत्सुक था। और भारत की आसियान देशों के माल और सेवाओं के लिए अरब लोगों का एक विशाल बाजार खोलना था। सहयोग, प्रौद्योगिकी और सुरक्षा, सहायता के विश्वसनीय स्रोत भारत एवं चीन के प्रभाव के संतुलन के लिये वांछनीय एवं सक्षम कारक भी माने गये। परस्पर जुड़कर भारत एवं आसियान पीछे मुड़कर देखना नहीं चाहते थे। फलस्वरूप 1993 में आसियान ने भारत को सेक्टोरल डायलॉग स्टेट्स का प्रस्ताव दिया और ठीक दो वर्षों में ही भारत पूर्ण डायलॉग पार्टनर बन गया।

भारत 1996 में चीन से पहले आसियान रीजनल फोरम (ए.आर.एफ.) का सदस्य बन गया। ए.आर.एफ. समूचे एशिया प्रशान्त क्षेत्रों के लिये एकमात्र सुरक्षा मेकैनिज्म था। सन् 2002 में प्रारम्भ हुई शिखर वार्ता भारत की बढ़ती हैसियत और आसियान के साथ उसके बहुआयामी सम्बन्धों को दर्शाती थी। भारत और आसियान ने संयुक्त नौसेनिक गश्त तथा समन्वित थल, वायु एवं नौसेना युद्धाभ्यासों में भाग लेकर रणनीति एवं सुरक्षा के क्षेत्रों में भी परस्पर सहयोग किया। इसका उद्देश्य समुद्री डकैती तथा अन्य समुद्री सुरक्षा खतरों से निपटना था। सन् 2003 में भारत ने आसियान के साथ व्यापक आर्थिक सहयोग के लिये एक फ्रेमवर्क समझौते पर हस्ताक्षर किये। इस समझौते ने 2011 एवं 2016 के मध्य माल सेवाओं और निवेश के लिये, 'आसियान फ्री ट्रेड एग्रीमेंन्ट' (भारत आसियान एफ.टी.ए.) के पूर्ण क्रियान्वयन का

आधार उपलब्ध कराया। भारत आसियान एफ.टी.ए. के महत्व पर प्रकाश डालते हुए राजदूत सीकरी ने एक प्रमुख टिप्पणी की "यदि भारत इस क्षेत्र में खिलाड़ी बनना चाहता है तो उसके लिये आसियान के साथ एफ.टी.ए. अनिवार्य था। अन्यथा भारत शुरूआती ब्लाक में ही शामिल नहीं होता है"। आसियान एफ.टी.ए. के बिना भारत, अमेरिका और यूरोपीय संघ के साथ सम्भावित एफ.टी.ए. को आन्तरिक सुधारों में तेजी लाने का माध्यम मानता है।

दक्षिण चीन सागर में चीन की बढ़ती भूमिका के बाद भारत, आसियान रिश्तों का कूटनीतिक महत्व भी काफी बढ़ गया है। दक्षिणपूर्वी एशिया के कई देश इस बात पर अधिक जोर देने लगे हैं कि भारत इस क्षेत्र में बढ़ चढ़कर भूमिका निभाए। चीनी हस्तक्षेप के कारण इस क्षेत्र में अमेरिकी सक्रियता भी बहुत बढ़ गयी और आसियान, विश्व कूटनीति का एक मंच बन गया। अमेरिका, भारत को इस क्षेत्र में अपनी सश्क्त भूमिका निर्वाहन के लिये प्रेरित करता है और वह इसे स्वंय हिन्द प्रशान्त (इन्डोपेसिफिक) क्षेत्र कहता है। भारत और आसियान देशों के मध्य मुख्यतः इलेक्ट्रानिक्स, टेक्सटाइल्स, रसायन और मशीनरी का व्यापार होता है। 'भारत वाणिज्य, सम्पर्क और संस्कृति' का सूत्र लेकर आसियान देशों के साथ सामरिक और राजनीतिक क्षेत्रों में अपने सम्बन्धों को और मजबूत बनाना चाहता है।

भारत में 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी', एशिया प्रशान्त क्षेत्रों में मौजूद देशों के साथ सहभागिता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से लायी गयी थी। इस नीति में पूर्व सरकारों की ओर से 'लुक ईस्ट नीति' को एक कदम आगे बढ़ाने का कार्य किया। इस नीति का प्रारम्भ एक आर्थिक पहल के रूप में किया गया। लेकिन समय के साथ अब इस नीति ने एक राजनीतिक, रणनीतिक एवं सांस्कृतिक अहमियत भी प्राप्त कर ली है। इसके माध्यम से देशों के साथ आपसी सहयोग को बढ़ाने के लिये एक तंत्र का शुभारम्भ कर दिया गया है। भारत ने इस नीति के माध्यम से इण्डोनेशिया, वियतनाम, मलेशिया, जापान, रिपब्लिक ऑफ कोरिया, आस्ट्रेलिया, सिंगापुर तथा आसियान राष्ट्रों के साथ ही एशियाई प्रशान्त क्षेत्र में स्थित देशों के साथ अपने सम्पर्क को निरन्तर बढ़ाने और मजबूत करने की ओर अग्रसर है।

एक्ट ईस्ट पॉलिसी, ने भारत और आसियान देशों ने संयुक्त रूप से मौजूदा इन्फ्रास्ट्रक्चर, मैन्युफैक्चरिंग , व्यापार, स्किल डेवलेपमेंट, शहरी विकास और स्मार्ट सिटी के साथ मेक इन इण्डिया जैसी पहल पर जोर दिया है। इसके साथ ही साथ तमाम देशों के साथ अन्य तरह की कनेक्टिविटी प्रोजेक्ट, अन्तरिक्ष और नागरिकों के मध्य सम्पर्क बढ़ाना भी इसका उद्‌देश्य रहा है। जिससे इस क्षेत्र का विकास हो सके और लोग समृद्‌ध हो सकें। एक्ट ईस्ट पॉलिसी का उद्‌देश्य आर्थिक सहयोग, सांस्कृतिक सम्बन्धों को आगे बढ़ाना तथा रणनीतिक साझेदारी को और ठोस बनाना है। विदेश मंत्रालय के अनुसार इस पॉलिसी में नार्थ ईस्ट एक प्राथमिकता है। हाल ही में केन्द्रीय मंत्री निर्मला सीतारमण ने कहा है कि परिधान, कृषि उपकरण, औषधि और वाहन जैसे क्षेत्रों में भारतीय कम्पनियों के लिये कंबोडिया लाओस और म्यांमार जैसे दक्षिणपूर्व एशियाई देशों में विनिर्माण इकाईयां स्थापित करने के काफी अच्छे अवसर हैं। जिससे कि भारत की 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' को बल मिलेगा।

एक्ट ईस्ट पॉलिसी अरुणाचल प्रदेश एवं दक्षिण पूर्वी एशियाई राष्ट्र संघ (आसियान) क्षेत्र सहित उत्तर पूर्वी भारत के बीच एक इंटरफेस प्रदान करती है। एक्ट ईस्ट पॉलिसी मूलतः आसियान देशों + आर्थिक एकीकरण + पूर्वी एशियाई देशों + सुरक्षा सहयोग पर केंद्रित है। एक्ट ईस्ट पॉलिसी के चार C प्रमुख हैं।

1. कल्चर
2. कॉमर्स
3. कनेक्टिविटी
4. कैपेसिटी बिल्डिंग

असम सरकार ने समयबद्‌ध तरीके से एक्ट ईस्ट पॉलिसी के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए एक्ट ईस्ट पॉलिसी विभाग भी खोला है यह विभाग राज्य में निवेश और तेजी से औद्‌योगिकीकरण के लिए एक वातावरण की सुविधा प्रदान करता है।

शीत युद्ध की समाप्ति और उसके बाद चीन के उदय ने भारत आसियान संबंधों की प्रकृति को महत्वपूर्ण रूप से बदल दिया है। लेकिन आर्थिक संबंधों और सुरक्षा सहयोग के माध्यम से परस्पर संबंधों में और मजबूती होने की उम्मीद की जा सकती है। दक्षिण पूर्वी क्षेत्र और हिंद महासागर क्षेत्र में निरंतर बढ़ता चीनी प्रभाव एक्ट ईस्ट पॉलिसी को मजबूत करने का एक प्रमुख कारक है।

क्वैड (QUAD) के साथ भारत की भागीदारी भी हिंद महासागर क्षेत्र में इस सुरक्षा को प्राप्त करने का ही एक विस्तार है। एक्ट ईस्ट पॉलिसी आसियान के साथ सहयोग की मांग कर रही है जो एशिया में क्षेत्रीय प्रभुत्व की मांग करने वाले चीन के तेजी से मुखर होने पर एवं उस पर संभावित नियंत्रण स्थापित रखने के लिए भारत की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण कदम है। भारत के लिए एक ईस्ट पॉलिसी अपने पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए एवं अपने दीर्घकालिक विकास लक्ष्यों को पूरा करने और बढ़ती चीनी आक्रामकता का मुकाबला करने के लिए तथा अपनी आर्थिक वृद्धि में तेजी लाने के लिए एक अतिरिक्त अवसर खोलने का प्रयास करती है।

कनेक्टिविटी को बढ़ाने तथा उससे सुदृढ़ता प्राप्त करने के लिए भारत ने एक्ट ईस्ट पॉलिसी के तहत कई पहल की हैं उनमें से कुछ अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

1. भारत और बांग्लादेश के मध्य अगरतला - अखौरा रेल लिंक।

2. इंटरमॉडल ट्रांसपोर्ट लिंक और बांग्लादेश के माध्यम से अंतर्देशीय जलमार्ग।

3. भारत जापान एक्ट ईस्ट फोरम के तहत सड़क पुल और पनबिजली जैसी परियोजनाओं के उन्नयन जैसी पहल की गई है।

4. भारत द्वारा महामारी के दौरान आसियान देशों को दवाओं/ चिकित्सा आपूर्ति के रूप में अनेक सहायता प्रदान की गई है।

5. भारत शिक्षा जल संसाधन स्वास्थ्य आदि के क्षेत्रों में जमीनी स्तर के समुदायों को विकास सहायता प्रदान करने के लिए कंबोडिया, लाओस ,म्यामार और वियतनाम में त्वरित प्रभाव परियोजनाओं को भी क्रियान्वित कर रहा है ।

6. 2015 से भारत ने आसियान देशों के साथ अनेक सैन्य अभ्यास भी किए जिससे उनके परस्पर विश्वास में भी निरंतर वृद्धि हुई है।

वर्तमान में भारत की 'लुक ईस्ट नीति' और 'एक्ट ईस्ट नीति' में बौद्ध कूटनीति के माध्यम से एक निश्चित परिवर्तन लाने पर अतिरिक्त बल दिया जा रहा है। भारत बुद्ध के धम्म का मूल स्थान होने की वजह से पूर्वी क्षेत्रों के देशों में इसका प्रभाव डालने की निरन्तर कोशिश कर रहा है।

'बौद्ध कूटनीति' दक्षिण एशिया, दक्षिण पूर्व एशिया, पूर्वी एशिया, चीन और यहाँ तक रूस के साथ भारत की भागीदारी के लिये एक प्रभावी उपकरण और नरम शक्ति हो सकता है। बढ़ते जनसम्पर्क और सांस्कृतिक आदान-प्रदान से निकट भविष्य में विवादास्पद राजनीतिक मुद्दों का एक सुनियोजित समाधान भी निकाला जा सकता है।

Reference

1. Mohan C. Raja: "A star in the east" The New Indian Express, Nov. 28, 2004.

2. For text of Prime Minister Narsimha Rao's Singapur speech on September 8, 1994, see Stategic Digest, October 1994, Pp-1411-18.

3. Gupta Ranjit Myanmar in the china- India Evacuation" in S.D. Muni(ed) Asian strategic Review 2008. P-317.

4. The Hindi, 15 Sep. 2017.

5. Rao.P.V. Narasimha : India and the Asia pacific: forging a New Relationship. oct. 1994-P-1412.

6. Dubey Ajay (ed) Indian Diaspora: Global Identity Kaling publication on 2003, P-141.

7. World focus Jan - 2012.

अध्याय 34

कोरोना काल में भारत की विदेश नीति

डॉ॰ सुरेन्द्र प्रसाद सिंह
सहायक प्रोफ़ेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
बहरागोड़ा महाविद्यालय, बहरागोड़ा
कोल्हान विश्वविद्यालय, चाईबासा

वर्तमान समय में भारत ने अपनी विदेश नीति के सिद्धान्तों को गतिशीलता और व्यवहारिकता प्रदान की है। भारत की विदेश नीति का लक्ष्य मानव कल्याण और विश्व कल्याण तथा पर्यावरणीय सुरक्षा रहा हैं। भारत हमेशा आतंकवाद विरोधी रहा है। विशेषकर कोरोना काल में भारत की विदेश नीति पड़ोसी देशों के कटुतापूर्ण रवैये तथा विस्तारवादी देशों के प्रति सख्त कदम, और आतंकवाद के विरूद्ध कार्यवाही, गुजराल डॉक्ट्रिन के तहत पड़ोसी देशों के साथ संबंध सुधारना तथा वैश्विक समाज में शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में उभरना और वैक्सीन डिप्लोमेसी के अन्तर्गत लगभग 155 देशों को कोरोना वैक्सीन मुहैया कराना प्राथमिकता है। कोरोना काल में भारत की विदेश नीति का मुख्य लक्ष्य राष्ट्रीय हित के साथ – साथ विश्व हित है, जिसकी जड़ों को सम्राट अशोक के शांति और अहिंसा के सिद्धान्त व लोक कल्याण या मानव कल्याण से जोड़ा जा सकता है। कोरोना काल में भारत की विदेश नीति शांतिपूर्ण सह अस्तित्व और मानवीय मूल्यों की रक्षा व विश्व के मानव कल्याण को समर्पित है।

समकालीन विश्व उदारीकारण और वैश्वीकरण की आकांक्षा रखती है। भारत में आर्थिक विकास प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, विदेशी व्यापार का विस्तार, ब्रिक्स संगठनों की भूमिका, आसियान, सार्क, बिम्बस्टेक, आदि के द्वारा तीव्र गति से हुआ है। इस मुक्त बाजार व्यवस्था और स्वतंत्र व्यापार के कारण वैश्वी करण को काफी बढ़ावा मिला है। वर्तमान भारत में **आत्मनिर्भर भारत** के अन्तर्गत बहुत सारी योजनाएँ चल रही हैं। यह आर्थिक विकास और कोरोना काल में व्यापार विदेश नीति का प्रमुख केंन्द्र बन गए है। जब भारत में

कोरोना वैक्सीन बना जो प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने वैश्विक समाज में मानव कल्याण हेतु सभी देशों की वैक्सीन देने की बात कही।

भू–राजनीतिक तथा भू–आर्थिक कारक भारत की विदेश नीति निर्धारण में न केवल महत्वपूर्ण योगदान रहा है, बल्कि इस क्षेत्र में उसकी सुदृढ़ अवस्थिति को भी व्यक्त करता है। भारत की भू–राजनीतिक वर्तमान में भारत की विदेश नीति की विशेषता बन गयी है। भू–राजनीतिक तत्वों के अन्तर्गत इसकी भौगोलिक अवस्थिति, हिमालय, हिन्द महासागर आदि राष्ट्रीय शक्ति के प्रमुख स्रोत हो जाता हैं, ठीक इसी प्रकार भू–आर्थिक कारक जैसेः सार्क, आसियान, यूरोपीयसंघ, पूर्व की ओर देखों नीति, विश्व व्यापार संगठन आदि भारत की विदेश नीति के निर्धारण में अहम भूमिका है। जब जनवरी 2020 में चीन के वुहान शहर के फूड मार्केट से कोरोना वायरस पूरी दुनिया में तेजी से फैला तो विश्व के लगभग देशों की आर्थिक व्यवस्था चरमरा गयी। भारत की नीति आत्मनिर्भर भारत की वजह से पुनः संभलने की ओर कदम भी बढ़ा चुका है। भारत की विदेश नीति का समयान्तर्गत महत्वपूर्ण विशेषताएं परिलक्षित होता है। भारत अपनी राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों, अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों, सूचना व संचार संसाधनों, पर्यावरणीय सुरक्षा, मानवाधिकारों की रक्षा तथा आतंकवाद विरोधी कार्यवाही के पक्षघर है, जिसकों भारत की विदेश नीति में शामिल किया गया है। वैश्विक समाज में भारत की विदेश नीति की प्रमुख बाते है– गुट निरपेक्षता की नीति, उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद का विरोध, रंगभेद या नस्लीय भेदभाव का विरोध, पंचशील, राष्ट्रमंडल में गहरी आस्था, क्षेत्रीय सहयोग संगठन में दिलचस्पी, निःशस्त्रीकरण का मानवीय हितों में समर्थन, स्पष्ट परमाणु नीति तथा विश्व की विशालतम संस्था संयुक्त राष्ट्रसंघ में आस्था व विश्वास आदि। इन बातों के आधार पर भारत की विदेश नीति की निरंतरता को बनाये रखा है। भारत समय–समय पर अपने पड़ोसी देशो के साथ संबंध बनाकर लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप कार्य किया है। परन्तु समाजवादी चीन व तख्तापलटपाकिस्तान कभी–कभी सैनिक शासन को इशारे पर सरकार चलाती है, जिससे भारत को अशांति के दौड़ से गुजरना पड़ता है। फिर भी भारत सुहढ़ इच्छाशक्ति के कारण भविष्य में वैश्विक शक्ति बनने में कामयाब आवश्य होगा, इसका जिता – जगता उदाहरण कोरोना काल में परिलक्षित हुआ है

कोरोना काल में मानवीय जीवन में तनावं बढ़ा है। भारत सार्वभौमिक स्वास्थ्य के लिए विश्व समुदाय से आह्वान किया है कि तनाव प्रबंधन के लिए योग करना अनिवार्य है। भारत की कोरोना से लड़ने की क्षमतां कई गुनां बढ़ने का कारण यहाँ की परम्परागत योग विद्या का प्रसार हुआ है। विश्व समुदाय योग आधारित जीवन शैली अपनाकर स्वास्थ्य लाभ ले सकता है और कोरोना को जड़ से समाप्त भी कर सकता है।

भारत महामारी के संकट के समय टेस्टिंग किट, वेंटीलेटर और पीपीई के लिए काफी चिंतित था, इसको चीन से आयात किया गया जो घटिया किस्म का था। अमेरिका से स्वास्थ्य प्रणाली को मजबूत करने हेतु आवश्यक सामग्री आयात किये, लेकिन भारत स्वदेशीपन पर बल देकर दुनिया के समक्षमुसीबंत की घड़ी में मुस्तैद बनकर खड़ा रहा और कोरोना वायरस से लड़ता रहा। जिसकी सराहना विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी किया है। भारत चेचक, टेटनस, पोलियों, और गिनिया कृमि रोग के उन्मूलन में सफल रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भारत को सचेत भी किया और कोरोना वायरस से लड़ने में यह सम्पूर्ण कदम की प्रशंसा भी किया है, जो दुनिया के देशों के लिए एक नया संदेश है।

वर्तमान विश्व में स्वास्थ्य सेवाओं से संबंधित विश्व के देशों का व्यापार जुड़ा है। वैश्विक सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली की सावधानी से जाँचपड़ताल करना वक्त की जरूरत है। भारत विश्व स्वास्थ्य संगठन के साथ मिलकर सदस्यं देशों का ध्यान स्वास्थ्य सेवाओं की ओर खींचा, जिससे विश्वं व्यापार को बढावा देने की ओर भारत की तरफ कदम बढ़ा सके और भारत भी मानव श्रम का उपयोग अधिक से अधिक करने में सक्षम हो सकें।

कोरोना काल में भारत अपनी विदेश नीति में नए आयाम शामिल करके गुटनिरपेक्षता की उदघोषणा के वगैरं अपने मित्रों और सहयोगियों से प्रगाढ़ संबंध बनाने पर तत्पर है। भारतीय प्रधानमंत्री का अमेरिका दौड़ा व अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप का भारत आना, इसका उदाहारण है। भारत का लक्ष्य है– निर्यात भागीदार के बीच तनाव कम करना और पूँजी निवेश को बढ़ाना। भारत ने हिंद, प्रशांत तथा मध्य–पूर्व देशों के साथ–साथ दक्षिण एशिया और हिन्द महासागर क्षेत्र में नये संबंधों को नयी दिशा दिया है। भारत की इस बढ़ती वैश्विक हैसियत से परिवर्तित विश्व व्यवस्था में मजबूत भागीदारी हो रहीं है।

इस काल के विदेश नीति में कूटनीति नये रूपों में दृष्टिगत हुई। भारत ने यूएई, सऊदीअरब, कतर, ईरान, अफ्रीका आदि देशों में डाक्टरों, चिकित्सा टीमों, दवाओं, पीपीई तथा अन्य जीवन रक्षक उपकरणों को भेजकर भानव कल्याण का कार्य किया है। इसके साथ ही विश्व के विभिन्न देशों चीन, अमेरिका, ब्रिटेन, जापान, जर्मनी, आस्ट्रेलिया आदि में भारतीय समुदायं के साथ सम्पर्क कर भारत ने कोरोना काल में विदेश नीति का महत्वपूर्ण परिचय दिया है।

कोरोना काल में भारत संयुक्त राष्ट्र आर्थिक और सामाजिक परिषद की उच्च स्तरीय आभासी बैठक में प्रधानमंत्री ने पोस्ट कोविड–19 पीरियड' में बहुपक्षीय संस्थाओं में सुधार की आवश्यकताओं पर बल दिया तथा वैश्विक व्यवस्था में परिवर्तन के साथ उत्पन्न समस्याओं के समाधान में अनिवार्य बदलाव लाया है।

इसलिए कोविड–19 के समय भारत की वैश्विक कार्य प्रणाली व भूमिका से ही वर्ष 2021–2022 के लिए सुरक्षा परिषद का गैर–स्थायी सदस्य चुना गया है।

प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने वैदेशिक संबंधों को मजबूती प्रदान करने हेतु छोटे–छोटे पड़ोसी देशों को भरोसा दिलाया कि भारत पड़ोसी देशों के साथ समानता के आधार पर मैत्री धर्म निभाएगा। श्री मोदी जी ने शपथ ग्रहण समारोह में इसी कारण दक्षेस देशों के नेताओं को आमंत्रित किया था। उन्होने भूटान, नेपाल, श्रीलंका, बंग्लादेश और चीन की यात्रा करके पड़ोसी देशों से मधुर संबंधों की शुरूआत की। जब नेपाल में भूकंप आया था, तो तुरन्त बचाव और राहत कार्य सुनिश्चित करके दुनिया का ध्यान अपनी ओर खीचा। प्रधानमंत्री ने कूटनीतिक संबंधों की शुरूआत जापान से की और ''कम मेक इन इण्डिया'' को प्रारंभ किया। प्रधानमंत्री अमेरिका की यात्रा करके नये संबंधों की शुरूआत की, वही पाकिस्तान सैनिक और आतंकवादी गठबंधन करके भारत के शरीर को सहुलुहान करता रहा। इधर चीन लगातार भारतीय सीमा पर उत्पात मचाता रहा, जिसका प्रस्फुटन कोरोना काल में गलवान घाटी में सैनिकों के झड़प में दृष्टिगत हुआ। हमारे 20 वीर सपूत ने शहादत देकर चीन को भारी क्षति पहुँचाया। विगत वर्षों में चीन पाकिस्तान के साथ मिलकर भारत के खिलाफ षडयंत्र रचता रहा। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने वैश्विक समाज के समक्ष यथार्थवादी तरीके से भारत की विदेश नीति को रखा तथा राष्ट्रहित के साथ देश को आगे बढ़ाने का संकल्प लिया। 26 जनवरी 2015 को गणतंत्र दिवस के सुअवसर पर अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित कर भारत ने नयी संबंधों की शुरूआत की तथा रूस की यात्रा करके प्रधानमंत्री ने नई दिशा देने का प्रयास किया। भारतीय प्रधानमंत्री ने दोनों देशों के बीच संतुलित ढंग से भारत की मंशा को रखा। इसके साथ ही खाड़ी और अफ्रीकी देशों की यात्रा भी सफलता के साथ किया। वर्तमान में मोदी सरकार सबका साथ, सबका विकास मंत्र के साथ ही वैश्विक स्तर पर लुक ईस्ट पॉलिसी की बजाय एक्ट एशिया नीति को प्रमुखता दी। कोरोना काल में नई विश्व व्यवस्था उमर कर सामने आया। प्रधानमंत्री मोदी जी ने विश्व के प्रमुख शक्तियों के साथ संबंधों की शुरूआत किये है। विश्व के देशों की गरीबी, प्रवासन, जलवायु परिवर्तन, आतंकवाद और परम्परागत अस्त्रों की समस्याओं को पीछे छोड़कर नयी आपातकालीन स्वास्थ्य जैसी समस्याएँ सामने आयी और भारत नई भूमिका में प्रकट हुआ। भारत की विदेश नीति के मूल सिद्धान्त ' 'वसुधैव कुटुम्बकम – सारी दुनिया एक परिवार है। प्रधानमंत्री ने कहा, ''पूरी दुनिया में भारत के प्रतिभा बल, विशेष रूप से भारतीय प्रौद्योगिकी , उद्योग और तकनीकी पेशेवरों के योगदान को अत्यधिक मान्यता दी जाती है।''[1] प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने कहा है, '' भारत को प्रतिभा का पॉवर हाउस बताया, जो योगदान देने के लिए उत्सुक है।''[2]

इस महाभारी के समय भारत ने 155 देशों से अधिक देशों में चिकित्सा साजों समान भेजा तथा विभिन्न देशों में रैपिड रिस्पांस टीम (टी आर टी) की तैनाती की और लगभग 100 से अधिक देशों में वर्चुअल डिप्लोमेटिक मीटिंग्स की बैठके आयोजित की। भारत ब्रिक्स, शंघाई सहयोग संगठन और आई आर सी की मंत्री स्तरीय बैठकों में भाग लिया। इस कोरोना काल में भी हम अपने विदेश नीति को स्फूर्ति के साथ जारी रखा। कोरोना काल में भारत की विदेश नीति प्रतिबद्ध और बहुपक्षवादी है। प्रधानमंत्री ने G-20 को अपने संबोधन में कहा था, ''वैश्वीकरण को मानव जाति के सामूहिक हितों को आगे बढ़ाना चाहिए। यह मानव केन्द्रित प्रक्रिया होनी चाहिए।'' जी20 के 19 सदस्य देशों में अर्जेटीना, ऑस्ट्रेलिया, ब्राजील, कनाडा, चीन, जर्मनी, फ्रांस, इंडोनेशिया, इटली, जापान, मेक्सिको, रूसी संघ, सऊदी अरब, दक्षिण अफ्रीका, दक्षिण कोरिया, तुर्की, यूके, अमेरिका और भारत शामिल हैं। बैठक के दौरान स्वास्थ्य मंत्री डॉ हर्षवर्धन ने कहा, '' मैं कोविड–19 के खिलाफ हमारी लड़ाई में अपने देशों में हालात को संभालने और उसका प्रबंधन करने के लिए आप सभी को बधाई देता हूँ।''[3] उन्होंने कहा,'' दुनिया के सामने मौजूद वैश्विक स्वास्थ्य संकट ने एक ऐसा अवसर प्रदान किया है जिसमें हमें गहराई से सोचने की जरूरत है कि हम कैसे एक दूसरे से जुड़ सकते है। साथ ही हमें सामूहिक ताकत और बुद्धिमत्ता के साथ काम पूरा करने का मौका भी मिला है।''[4]

प्रधानमंत्री ने सार्क देशों के वर्चुअल शिखर सम्मेलन में कहा, '' सबका साथ ...... सबका बचाव। हमारे संबंध पुराने और आपस में जुड़े हुए है। इसलिए हमें साथ रहना होगा और मिलकर काम करना होगा।'' इस प्रकार वैश्विक अवधारणा को आकार देने और कोरोना काल में महामारी से बचाव हेतु प्रयास जारी रहा। पुनः प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने गुटनिरपेक्ष आंदोलन वर्चुअल शिखर सम्मेलन, ग्लोबल वैक्सीन शिखर सम्मेलन तथा संयुक्त राष्ट्र आर्थिक एवं सामाजिक परिषद के उच्च स्तरीय बैठक में भाग लेकर मानव कल्याण हेतु भारत की भूमिका के निर्वाह का आह्वान किया। भारत वैशिक समुदाय का एक जिम्मेदार सदस्य है। वर्तमान वैशिक महासंकट में विभिन्न देशों की स्थिति काफी दयनीय थी। महामारी की मार से जनता त्रस्त है। कोरोना काल में वैश्विक महामारी से बचने हेतु उपचार के लिए कोई समान नीति नहीं है। परन्तु मास्क पहनना, हैडं सेनिटाइजर का प्रयोग, सामाजिक दूरी आदि से वैश्विक समाज को बचाया जा सकता है। प्रधानमंत्री ने कहा है, ''दो गज दूरी बहुत जरूरी,''[5] जिसका पालन विश्व के देशों ने स्वभावतः ही किया है। इसी बीच अमेरिका, ब्राजील, नेपाल, ब्रिटेन आदि देशों को भारत में उत्पादित हाइड्रोक्सीक्लोरोक्वीन और पेरासिटामोल जैसी दवाओं को मानव जाति की रक्षा हेतु भारत ने भेजकर विश्व विरादरी की रक्षा की।

इस कोरोना काल में भारत ने आंतकवाद की व्यूहरचना को खत्म करने की माँग विश्व समुदाय से की हैं, पाकिस्तान ने कोरोना काल में लगभग 1400 बार सीजफायर का उलंधन किया। भारत ने मुँहतोड़

जवाब देकर आतंकवाद की कमर तोड़ दी और अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद पर एक व्यापक सम्मेलन को भी अंतिम रूप दी। भारत शांतिपूर्ण सहअस्तित्व वाला देश है। चीन और पाकिस्तान को इसका पाठ कोरोना काल में भी पढ़ाने के लिए भारत ने मजबूर कर दिया है।

भारत की विदेश नीति अंतरिक्ष, साइबरवर्ल्ड तथा जैविक क्षेत्रों में भी चुनौतियों से मुकाबला कर रहा है। यह अपनी कौशल विकास से पूरी दुनिया को सुरक्षित रखने में तत्परता दिखाई है। आत्मनिर्भर भारत भी इसी कड़ी का हिस्सा है, जिससे भारत संकट के दौड़ से उभरने का मंत्र अख्तियार किया है, जिसका उद्देश्य वैश्विक प्रतिस्पर्धा का मुकाबला और सक्षम अर्थव्यवस्था का निर्माणहोना चाहिए, जो अर्थव्यवस्था भारतीय व्यापारियों और उद्योगपतियों का देश में निवेश करने में विश्वास बढ़ाएगी तथा विदेशी निवेशकों को भी आकर्षित कर पाएगी।

प्रधानमंत्री श्री मोदी ने भारत की विदेश नीति में एक नया आयाम जोड़ा है। उन्होने विदेश नीति में आदर्शपरक तथा यथार्थपरक का सामंजस्य करके व्यवहारिक तरीके से देश के विकास के लिए प्रयास किया है। कोरोना काल के कुछ महीने पूर्व दुनिया भर जैसेः अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी, कनाडा, मलेशिया, चीन, पाकिस्तान, रूस आदि देशों का दौड़ा करके वहाँ के नेताओं से व्यक्तिगत रिश्ते की बुनियाद को रखा व ताजा किया है। लेकिन कुछ देश जैसे चीन व पाकिस्तान इस महामारी में भी अपने पूर्ण सर्वसत्तावादी शासन प्रणाली के अंध में पड़े रहे और विस्तारवादी रवैया अपनाता रहा। भारत ने चीन के इस करतूतें को पूर्व की भाँति समझता रहा और सहनशीलता का परिचय देता रहा। चीन ने गलवान घाटी, पैगौंग झील, पूर्वी लद्वाख में अपनी सैनिक जमावड़ा बढ़ाकर घुसपैट करने की सीनाजोड़ी किया, लेकिन भारत काफी सजग व सतर्क सैनिकों की बदोलत उसे पीछे हटने पर मजबूर कर दिया।

इसी प्रकार जब अमेरिका व चीन के बीच संबंधों में कड़वाहटमहामारी की वजह से हुई तो दक्षिण चीन सागर में शक्ति प्रयोग की राजनीति शुरू हो गयी। दक्षिण चीन सागर में चीन की घेराबंदी से चीन बौखला उठा। चीन ने महामारी फैलाकर दुनिया को गुमराह करके आर्थिक महाशक्ति की ओर तेजी से कदम बढ़ाया और एशिया में भारत को रोकने की कोशिश भी की। परन्तु भारत ने कोरोना काल में अमेरिका के साथ देकर नयी रिश्तों की शुरूआत कर डाली। वर्तमान समय में भारत की विदेश नीति निरंतरता के साथ – साथ परिवर्तनशील है, जो वास्तव में कोरोना जैसे महामारी के समय भारत के लिए बड़ी उपलब्धि है।

निष्कर्षः–

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में द्वितीय विश्व युद्ध के बाद चीन के वुहान शहर से फैला कोरोना वायरस के कारण वैश्विक समाज में दहशत का माहौल है। वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय चुनौतीपूर्ण माहौल में जीने को विवश है। भारत की विदेश नीति कोरोना काल में चुनौनियों को स्वीकार कर इसके समाधान में सक्षम और उत्तरदायी पूर्ण है। कोरोना काल में भारत की विदेश नीति वसुधैव कुटूम्बकम की भावना और संवेदना के साथ मानव कल्याण के साथ–साथ विश्व कल्याण पर आधारित है। भारत ने इस काल में भू–राजनीतिक, भू–आर्थिक, आतंकवाद, दवाई भेंजकर, महामारी पर नियंत्रण व टीकाकरण करके, वैक्सीन डिप्लोमेसी, विभिन्न वर्चुअल सम्मेलन करके तथा वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं से जुड़कर विश्व कल्याण जैसी महती कार्य किया है। वर्तमान में भारत की विदेश नीति राष्ट्रीय हित के साथ–साथ विश्व हित के कार्यो को सम्पादित करने में सक्षम है। कोरोना काल में भारत की विदेश नीति का यह नैतिक आधार है। यह गाँधी जी के सपनों की नीति है, जैसा कि 1924 में गाँधी जी लिखा था, '' मेरी अभिलाषा है कि मै भारत के प्रयासों के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय मामलों के नैतिक आधार प्रदान कर सकूँ।''[6] पुनः उन्होने 1925 में यंग इंडिया में लिखा,'' राष्ट्रवादी हुए बिना किसी का अन्तर्राष्ट्रीयवादी होना असंभव है।''[7] भारत की विदेश नीति कोरोना काल में ही नहीं बल्कि अन्य परिस्थितियों में भी विश्व की अगुवाईकरेगा।

संदर्भ ग्रंथ

1. कुरूक्षेत्र, अगस्त 2020, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली पृ०– 05
2. कुरूक्षेत्र, अगस्त 2020, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली पृ०– 05
3. योजना, जी 20 के स्वास्थ्य मंत्रियों की बैठक, मई 2020
   प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, पृ०– 47
4. योजना, जी 20 के स्वास्थ्य मंत्रियों की बैठक, मई 2020
   प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, पृ०– 47
5. योजना, भारत में कोरोना के खिलाफ लड़ाई में देश का हर नागरिक सिपाही – प्रधानमंत्री
   मई 2020, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली, पृ०– 41
6. संपादकीय, ''नई विश्व व्यवस्था'', योजना, अक्टूबर 2020
   प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली पृ०– 05

7. वही पृ०– 05

8. कपूर, हरीश; चाइना इन वर्ल्डपॉलिटिक्स,
इन्डिया इन्टरनेशनल सेन्टर, नई दिल्ली, 1975

9. चिनॉय, अनुराधा; इंडिया एण्ड एशिया, अलायंस इ नद इंटरनेशनल पॉलिटिकल सिस्टम,
इण्डिया– एशिया स्ट्रैटजिक पार्टनरशिपः दं कोमन पर्सपैक्टिन. संपादित पी. स्टोदान 2010.
प्रकाशकः इंस्टीटयूट ऑफ डिफेस स्टडी एण्ड एनालिसिस।

10. दिक्षित, जे.एन.; इन्डिया फौरेन पॉलिसी एण्ड इट्स नाइभर,
ज्ञान पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2001

11. ग्रिन एण्ड व्यूहरमन, लूरा, कम्पेरेटिव पॉलिटिक्स ऑफ द थर्ड वर्ल्डः लिकिंग कन्सेप्ट एण्ड केसेसं
विवा बुक प्राईवेट लिमिटेट, नई दिल्ली – 2004

12. खिलानी, निरंजन. एम.; न्यू डाइमेन्सन ऑफ इन्डियन फौरेन पॉलिसी,
वेस्टविल्ला पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1995

13. शर्मा, राजीव,'' हवाई मोदी पिक्ड भूटान फॉर हिज फर्स्ट फौरेन बिजिट एज मोदी ''
फर्स्ट पोस्ट 7 जून 2014

14. भेदीशेट्टी, कमल, ''मोदीज नाईभरहूड फर्स्ट पौलिसी मस्ट मार्च ऑन, विद और विदाउट पाकिस्तान''
16 मार्च 2017, सी एल ए डब्ल्यू एस,

15. कोरा, विनय; ग्रेंडिग इण्डिया नाईभरहूड डिण्लोमेसी''
1 जनवरी 2018, दें डिण्लोमेट।

16. दैनिक जागरण, नई दिल्ली, 13 दिसम्बर 2015

17. नव भारत टाइम्स, नई दिल्ली, 24 दिसम्बर 2015

18. हिन्दुस्तान, नई दिल्ली, 5 जनवरी 2020

19. जनसत्ता, नई दिल्ली, 10 मार्च, 2020

अध्याय 35

हरित शासन और भारत की विदेश नीति का विश्लेषण

प्रो. नावेद जमाल
राजनीति विज्ञान विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

मो मुकर्रम बदर खान
शोध छात्र
राजनीति विज्ञान विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया

हाल के वर्षों में भारत की विदेश नीति में तेजी से हरित शासन (Green Governance) की अनिवार्यताओं को ध्यान में रखा गया है। यह जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, जैव विविधता की हानि, और वायु और जल प्रदूषण सहित दुनिया के सामने आने वाली पर्यावरणीय चुनौतियों की पहचान से प्रेरित है।
इस संदर्भ में भारत की विदेश नीति का एक प्रमुख पहलू वैश्विक जलवायु वार्ताओं के साथ इसका जुड़ाव रहा है। भारत जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसी -UNFCCC) का एक हस्ताक्षरकर्ता है और वैश्विक जलवायु समझौते के लिए वार्ता में सक्रिय भागीदार रहा है। भारत ने ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए विकसित देशों की अगुवाई करने की आवश्यकता पर बल दिया है, जबकि भारत जैसे विकासशील देशों को कम कार्बन वाले विकास मार्गों को आगे बढ़ाने के लिए अधिक समर्थन दिया जाना चाहिए। हरित शासन के संदर्भ में भारत की विदेश नीति का एक अन्य पहलू पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने के लिए क्षेत्रीय और वैश्विक साझेदारी बनाने का प्रयास है।
घरेलू स्तर पर, भारत ने हरित शासन को बढ़ावा देने के लिए कई पहल शुरू की हैं। इनमें जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC-2008) शामिल है, जो जलवायु परिवर्तन को कम करने और अनुकूल बनाने के लिए भारत की रणनीति को रेखांकित करती है, और स्वच्छ भारत अभियान, जिसका उद्देश्य शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता और सफाई में सुधार करना है।

हरित शासन (Green Governance) की अवधारणा

हरित शासन एक अवधारणा है जो सरकार के निर्णय लेने, नीतियों और संचालन में पर्यावरणीय रूप से स्थायी और सामाजिक रूप से जिम्मेदार प्रथाओं के उपयोग को संदर्भित करती है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि पर्यावरण की सुरक्षा और संरक्षण आर्थिक विकास, सामाजिक कल्याण और राजनीतिक निर्णय लेने सहित शासन के सभी पहलुओं का अभिन्न अंग है। पर्यावरण और भावी पीढ़ियों

 ISSN: 2321-0443

पर सरकारी नीतियों और कार्यों के दीर्घकालिक प्रभाव को ध्यान में रखते हुए हरित शासन पर्यावरण संरक्षण और सामाजिक-आर्थिक विकास के बीच संतुलन बनाना चाहता है।

संयुक्त राष्ट्र (यूएन) हरित शासन के महत्व को सतत विकास प्राप्त करने के साधन के रूप में पहचानता है और इसे अपने वैश्विक विकास एजेंडे में शामिल किया है। हरित शासन के लिए यूएन का विजन उसके 2030 एजेंडा फॉर सस्टेनेबल डेवलपमेंट में रखा गया है, जो 2030 तक हासिल किए जाने वाले 17 सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) की रूपरेखा तैयार करता है। इनमें से कई एसडीजी सीधे हरित शासन से संबंधित हैं, जिनमें शामिल हैं:

लक्ष्य 7: सस्ती और स्वच्छ ऊर्जा - ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और जलवायु परिवर्तन को कम करने के लिए स्वच्छ और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के विकास और उपयोग को बढ़ावा देना।

लक्ष्य 9: उद्योग, नवोन्मेष और बुनियादी ढाँचा - टिकाऊ बुनियादी ढाँचे के विकास को बढ़ावा देना, जिसमें परिवहन प्रणालियाँ और भवन शामिल हैं, जो ऊर्जा-कुशल और पर्यावरण के अनुकूल हैं।

लक्ष्य 11: टिकाऊ शहर और समुदाय - ऐसे शहरों और समुदायों के विकास को बढ़ावा देना जो समावेशी, सुरक्षित, लचीला और टिकाऊ हों, हरित स्थानों और स्वच्छ हवा और पानी तक पहुंच के साथ।

लक्ष्य 12: जिम्मेदार खपत और उत्पादन - स्थायी खपत और उत्पादन पैटर्न को बढ़ावा देना जो कचरे को कम करता है, संसाधनों का संरक्षण करता है और पर्यावरणीय प्रभावों को कम करता है।

लक्ष्य 13: जलवायु कार्रवाई - शमन और अनुकूलन उपायों सहित जलवायु परिवर्तन और इसके प्रभावों से निपटने के लिए तत्काल और महत्वाकांक्षी कार्रवाई करना।

संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन पर पेरिस समझौते को प्राप्त करने में हरित शासन के महत्व को भी पहचानता है, जिसका उद्देश्य वैश्विक तापमान वृद्धि को पूर्व-औद्योगिक स्तरों से 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे सीमित करना है। पेरिस समझौता सरकारों से राष्ट्रीय स्तर पर निर्धारित योगदान के रूप में जानी जाने वाली राष्ट्रीय जलवायु कार्य योजनाओं को विकसित और कार्यान्वित करने का आह्वान करता है, जो ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को अपनाने के लिए उनकी प्रतिबद्धताओं को रेखांकित करती हैं। ग्रीन गवर्नेंस इन एनडीसी का एक महत्वपूर्ण घटक है, जिसके लिए नीतियों, विनियमों और प्रथाओं की आवश्यकता होती है जो सतत विकास को बढ़ावा देती हैं और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करती हैं।

हरित शासन भारत में शासन का एक महत्वपूर्ण पहलू बन गया है, क्योंकि देश अपने प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन और पर्यावरण संबंधी चिंताओं को दूर करने में बढ़ती चुनौतियों का सामना कर रहा है। भारत की विदेश नीति भी पर्यावरणीय स्थिरता के प्रति अपनी प्रतिबद्धता से प्रभावित हुई है, क्योंकि यह वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दों को संबोधित करने के लिए अन्य देशों के साथ काम करना चाहता है। इस लेख में, हम

भारत के हरित शासन प्रयासों की जांच करेंगे और देखेंगे कि वे देश की विदेश नीति को कैसे आकार दे रहे हैं।

भारत के हरित शासन के प्रयास

भारत ने हाल के वर्षों में सतत विकास और हरित शासन को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं। देश ने कार्बन उत्सर्जन को कम करने, नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देने और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में सुधार लाने के उद्देश्य से कई नीतियों और पहलों की स्थापना की है।

इस संबंध में प्रमुख पहलों में से एक जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC) है, जिसे 2008 में लॉन्च किया गया था। यह योजना सतत विकास को बढ़ावा देने और जलवायु परिवर्तन को संबोधित करने के उद्देश्य से आठ राष्ट्रीय मिशनों की रूपरेखा तैयार करती है। इनमें ऊर्जा दक्षता बढ़ाने, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के उपयोग को बढ़ावा देने और स्थायी कृषि और जल प्रबंधन प्रथाओं को बढ़ावा देने की पहल शामिल हैं।

भारत ने अक्षय ऊर्जा के उपयोग को बढ़ाने में भी महत्वपूर्ण प्रगति की है। देश ने 2022 तक 175 GW अक्षय ऊर्जा क्षमता हासिल करने का लक्ष्य रखा है, जिसमें 100 GW सौर ऊर्जा, 60 GW पवन ऊर्जा, 10 GW जैव ऊर्जा और 5 GW लघु जल विद्युत शामिल है। 2021 तक, भारत ने इस क्षमता के बहुमत के लिए सौर ऊर्जा लेखांकन के साथ, 93 GW की कुल नवीकरणीय ऊर्जा क्षमता हासिल कर ली थी।

इन पहलों के अलावा, भारत ने अपने प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में सुधार के लिए भी कदम उठाए हैं। देश ने अपने वनों के संरक्षण, स्थायी कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने और अपने जल संसाधनों के प्रबंधन में सुधार लाने के उद्देश्य से पहल शुरू की है।

हरित शासन के प्रति भारत की प्रतिबद्धता इसकी विदेश नीति में परिलक्षित होती है, क्योंकि देश वैश्विक पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने के लिए अन्य देशों के साथ काम करना चाहता है। इस संबंध में फोकस के प्रमुख क्षेत्रों में से एक जलवायु परिवर्तन है, जिसमें भारत अंतर्राष्ट्रीय जलवायु वार्ताओं में सक्रिय भूमिका निभा रहा है।

भारत अंतर्राष्ट्रीय जलवायु वार्ताओं में विकासशील देशों के लिए एक मुखर वकील रहा है, यह तर्क देते हुए कि विकसित देशों को कार्बन उत्सर्जन को कम करने और विकासशील देशों को वित्तीय और तकनीकी सहायता प्रदान करने का नेतृत्व करना चाहिए। देश ने विकासशील देशों के बीच सर्वोत्तम प्रथाओं और प्रौद्योगिकियों को साझा करने के उद्देश्य से जलवायु परिवर्तन पर दक्षिण-दक्षिण सहयोग को बढ़ावा देने के लिए भी काम किया है।

जलवायु परिवर्तन के अलावा, भारत की विदेश नीति सतत विकास और पर्यावरणीय स्थिरता को बढ़ावा देने पर भी ध्यान केंद्रित करती है। देश ने नवीकरणीय ऊर्जा को बढ़ावा देने, स्थायी कृषि प्रथाओं को बढ़ावा

देने और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन में सुधार लाने के उद्देश्य से अन्य देशों के साथ साझेदारी स्थापित की है।

भारत हरित पर्यावरण को बढ़ावा देने के उद्देश्य से विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संधियों और पहलों में सक्रिय भागीदार रहा है। भारत ने जिन कुछ उल्लेखनीय संधियों और पहलों में भाग लिया है, वे हैं:

1. पेरिस समझौता: भारत 2015 में पेरिस समझौते के हस्ताक्षरकर्ताओं में से एक था, जिसका उद्देश्य वैश्विक तापमान वृद्धि को पूर्व-औद्योगिक स्तरों से 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे सीमित करना है। भारत ने 2030 तक अपने ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन की तीव्रता को 2005 के स्तर से 33-35% कम करने के लिए प्रतिबद्ध किया है।

2. मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल: भारत 1987 में मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल को अपनाने के बाद से एक पक्ष रहा है। प्रोटोकॉल का उद्देश्य क्लोरोफ्लोरोकार्बन (सीएफसी) जैसे ओजोन-क्षयकारी पदार्थों के उत्पादन और खपत को चरणबद्ध करना है।

3. जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यूएनएफसीसीसी): भारत 1992 से यूएनएफसीसीसी का एक पक्ष है। सम्मेलन का उद्देश्य वातावरण में ग्रीनहाउस गैस सांद्रता को एक स्तर पर स्थिर करना है जो जलवायु प्रणाली के साथ खतरनाक मानवजनित हस्तक्षेप को रोक सके।

4. जैविक विविधता पर सम्मेलन (सीबीडी): भारत 1994 से सीबीडी का एक पक्ष है। सम्मेलन का उद्देश्य जैव विविधता के संरक्षण और सतत उपयोग को बढ़ावा देना है, साथ ही आनुवंशिक संसाधनों के उपयोग से होने वाले लाभों का उचित और न्यायसंगत बंटवारा करना है।

5. स्वच्छ ऊर्जा मंत्रिस्तरीय (सीईएम): भारत सीईएम का सदस्य है, जो स्वच्छ ऊर्जा को बढ़ावा देने के लिए एक वैश्विक मंच है। पहल 2010 में शुरू की गई थी और इसमें ऐसे देश शामिल हैं जो वैश्विक स्वच्छ ऊर्जा निवेश का 90% और वैश्विक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन का 75% हिस्सा हैं।

6. मिशन इनोवेशन: भारत मिशन इनोवेशन का सदस्य है, जो स्वच्छ ऊर्जा नवाचार में तेजी लाने के उद्देश्य से एक वैश्विक पहल है। यह पहल 2015 में शुरू की गई थी और इसमें 24 देश शामिल हैं जो स्वच्छ ऊर्जा अनुसंधान और विकास में वैश्विक सार्वजनिक निवेश का 90% हिस्सा रखते हैं।

7. अंतर्राष्ट्रीय सौर गठबंधन (आईएसए): भारत ने फ्रांस के साथ साझेदारी में 2015 में आईएसए लॉन्च किया था। गठबंधन का उद्देश्य सौर ऊर्जा को अपनाने को बढ़ावा देना है।आईएसए का लक्ष्य 2030 तक वैश्विक स्तर पर सौर ऊर्जा की बड़े पैमाने पर तैनाती के लिए 1 ट्रिलियन डॉलर से अधिक का निवेश जुटाना है। गठबंधन का उद्देश्य विकासशील देशों को सौर ऊर्जा परियोजनाओं के लिए कम लागत वाले वित्त का उपयोग करने, सौर ऊर्जा प्रौद्योगिकियों के अनुसंधान और विकास को बढ़ावा देने और सदस्य देशों में क्षमता निर्माण के लिए तकनीकी सहायता और प्रशिक्षण प्रदान करना है। मार्च 2023 तक, आईएसए

के 99 सदस्य देश हैं, जिनमें ऑस्ट्रेलिया, बांग्लादेश, ब्राजील, चीन, फ्रांस, जर्मनी, भारत, जापान, केन्या, नाइजीरिया, सऊदी अरब, यूनाइटेड किंगडम और संयुक्त राज्य अमेरिका शामिल हैं।

हरित शासन को प्राप्त करने में विश्व समुदाय की विफलता को कई कारकों के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है, जिनमें शामिल हैं:

1.राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी: कई राजनेता दीर्घकालिक पर्यावरणीय स्थिरता पर अल्पकालिक आर्थिक लाभ को प्राथमिकता देते हैं, जिससे पर्यावरणीय नीतियां कमजोर हो सकती हैं या पर्यावरणीय पहलों के लिए अपर्याप्त धन मिल सकता है। उदाहरण के लिए, वर्ष 2017 में, डोनाल्ड ट्रम्प के नेतृत्व वाली तत्कालीन संयुक्त राज्य अमेरिका (यूएसए) सरकार ने जलवायु परिवर्तन पर पेरिस सन्धि से यूएसए को वापस ले लिया। हालाँकि, संयुक्त राज्य अमेरिका बाद में समझौते में शामिल हो गया, लेकिन संधि से हटने की ट्रम्प की कार्रवाई जलवायु परिवर्तन से निपटने के अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों में एक झटका थी।

2.अंतर्राष्ट्रीय सहयोग का अभाव: जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता के नुकसान जैसी वैश्विक पर्यावरणीय चुनौतियों के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है, लेकिन कई देश महत्वपूर्ण कार्रवाई करने या आवश्यक त्याग करने के लिए अनिच्छुक हैं।

3.सीमित सार्वजनिक जागरूकता और जुड़ाव: पर्यावरणीय मुद्दे जटिल और तकनीकी हो सकते हैं, जो जनता के लिए पर्यावरण नीतियों को समझने और उनसे जुड़ने को चुनौतीपूर्ण बना सकते हैं। इससे सरकारों के लिए पर्यावरण संरक्षण में निवेश को उचित ठहराना या नियमों को लागू करना मुश्किल हो सकता है।

4.कॉर्पोरेट हित: कई निगमों का नीति-निर्माण पर महत्वपूर्ण प्रभाव होता है, और उनके हित हमेशा पर्यावरण संरक्षण के साथ संरेखित नहीं होते हैं। उदाहरण के लिए, जीवाश्म ईंधन उद्योग उन पर्यावरण नीतियों के खिलाफ पैरवी करने के लिए जाना जाता है जो उनके मुनाफे को सीमित कर सकती हैं।

5.संसाधनों की कमी: हरित शासन को प्राप्त करने के लिए वित्तीय संसाधनों, प्रौद्योगिकी और कुशल कर्मियों सहित महत्वपूर्ण संसाधनों की आवश्यकता होती है। कई विकासशील देशों में इन संसाधनों की कमी है, जिससे प्रभावी पर्यावरण नीतियों को लागू करना चुनौतीपूर्ण हो जाता है।

5.परस्पर विरोधी प्राथमिकताएं: सरकारों को प्रतिस्पर्धी प्राथमिकताओं का सामना करना पड़ सकता है, जैसे आर्थिक विकास, गरीबी में कमी और राष्ट्रीय सुरक्षा, जो पर्यावरण संरक्षण को प्राथमिकता देना चुनौतीपूर्ण बना सकती है।

कुल मिलाकर, हरित शासन को प्राप्त करने के लिए व्यक्तिगत कार्यों से लेकर अंतर्राष्ट्रीय सहयोग तक, समाज के सभी स्तरों से समन्वित और निरंतर प्रयास की आवश्यकता होती है। इन अंतर्निहित कारकों को संबोधित करने से सफल पर्यावरण शासन के लिए आवश्यक परिस्थितियों का निर्माण करने में मदद मिल सकती है।

भारत में हरित शासन को अपनाने वाले शहरों के सफल उदाहरण

1.पिंपरी चिंचवाड़ नगर निगम (पीसीएमसी) और संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम, भारत ने देश् का पहला सामाजिक प्रभाव बांड बनाने के लिए एक समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए। एक सामाजिक प्रभाव बांड को पे-फॉर-सक्सेस बॉन्ड या पे-फॉर-सक्सेस फाइनेंसिंग भी कहा जाता है। सामाजिक प्रभाव बॉण्ड मूल रूप से सार्वजनिक क्षेत्र प्राधिकरण के साथ एक अनुबंध है जहां यह बेहतर सामाजिक परिणामों के लिए भुगतान करता है। यह परिणाम-आधारित अनुबंध का एक रूप है। इसका उद्देश्य नागरिकों के एक विशिष्ट समूह के लिए सामाजिक परिणामों में सुधार करना है।

2.गाजियाबाद और यह ग्रीन बांड-

गाजियाबाद नगर निगम ने बीएसई बॉन्ड प्लेटफॉर्म का उपयोग करके निजी प्लेसमेंट के आधार पर नगरपालिका बांड के माध्यम से 150 करोड़ रुपये जुटाए। यह 31 मार्च, 2021 को सदस्यता के लिए खोला गया। कर योग्य बांड की कूपन दर 8.1% प्रति वर्ष तय की गई थी और इसे इंडिया रेटिंग्स द्वारा एए और ब्रिकवर्क्स द्वारा एए (सीई) का दर्जा दिया गया है और इसकी परिपक्वता 10 साल की है, जिसमें कंपित मोचन है। इसके अतिरिक्त, कंपनी को नगरपालिका बांड जुटाने के लिए सरकार से 19.5 करोड़ रुपये का प्रोत्साहन मिला।

ये शहर और कस्बे हरित प्रशासन प्रथाओं को लागू करने के इच्छुक अन्य समुदायों के लिए मॉडल के रूप में काम करते हैं। स्थिरता पर ध्यान केंद्रित करके और कार्बन उत्सर्जन को कम करके, ये समुदाय वैश्विक स्तर पर पेरिस समझौते-2015 के माध्यम से शुरू किए गए सतत विकास लक्ष्यों (SDGs)) की समय पर उपलब्धि और हम सभी के लिए एक अधिक टिकाऊ भविष्य बनाने में मदद कर रहे हैं।

संक्षेप में, भारत की विदेश नीति हरित शासन के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को दर्शाने के लिए विकसित हो रही है, और यह वैश्विक पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान करने की दिशा में एक सकारात्मक कदम है। हालाँकि, यह सुनिश्चित करने के लिए और अधिक सुधार किए जाने की आवश्यकता है कि भारत की हरित शासन नीतियों को प्रभावी ढंग से लागू किया जाए और अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में एकीकृत किया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. https://www.unep.org
2. प्रेस सूचना ब्यूरो; पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
3. https://isolaralliance.org
4. https:www.pcmcindia.gov.in
5. http:// ghaziabadnagarnigam.in
6. https://sdgs.un.orgn

7. पर्यावरण: पुष्पेत पंत, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, 2009

8. पर्यावरण अध्ययन: दयाशंकर त्रिपाठी, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, 2005

9. पर्यावरण अध्ययन: एराच बरूचा, ऑरियंट ब्लैक स्वान, 2015

10. अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध: तपन बिसवाल, ऑरियंट ब्लैक स्वान, 2016

11. The Environment and International Relations, Kate O'Neill, Cambridge University Press, 2012

© भारत सरकार
Government of India

आज़ादी का अमृत महोत्सव

ISSN : 2321-0443
UGC Care Listed Journal

Digital India
Power To Empower

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग
शिक्षा मंत्रालय (उच्चतर शिक्षा विभाग)
पश्चिमी खंड-VII, रामकृष्णपुरम, सेक्टर-1
नई दिल्ली-110066
दूरभाष: +91-11- 20867172
वेबसाइट : www.cstt.education.gov.in

COMMISSION FOR SCIENTIFIC AND TECHNICAL TERMINOLOGY
MINISTRY OF EDUCATION
(DEPARTMENT OF HIGHER EDUCATION)
West Block-VII, Ramakrishnapuram, Sector-1
New Delhi-110066
Telephone : +91-11- 20867172
Website : www.cstt.education.gov.in